ayurvedaoasis.in

अगदतन्त्र

Text Book of Ayurvedic Toxicology

(आयुर्वेदीय विषविज्ञान)

भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद, नई दिल्ली
द्वारा स्वीकृत नवीन पाठ्यक्रमानुसार

लेखक

डॉ. अयोध्या प्रसाद 'अचल'
पी-एच्. डी., आयुर्वेदबृहस्पति

Revised & Edited by

डॉ. रमेश चन्द्र तिवारी
एसोसिएट् प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष
अगदतंत्र विभाग, ऋषिकुल कैम्पस,
उत्तराखण्ड आयुर्वेद विश्वविद्यालय, हरिद्वार

श्री साहित्य सदन बुक सेंटर
स्वामी विवेकानंद मार्केट, शाम चौक,
अमरावती. Ph. 0721-2575450

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

Scanned with CamScanner

© All right reserved. No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopying, recording or any information storage or retrieval system, without prior permission in writing from the publisher.

चौखम्बा आयुर्विज्ञान ग्रन्थमाला - 35

प्रकाशक :

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)

के-37/117 गोपाल मंदिर लेन, पोस्ट बॉक्स न. 1129

वाराणसी-221001

दूरभाष : (0542) 2335263

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

संस्करण : 2019

ISBN : 978-93-81484-22-7

अन्य प्राप्तिस्थान :

चौखम्बा पब्लिशिंग हाऊस

4697/2, भू-तल (ग्राउण्ड फ्लोर)

गली न. 21-ए, अंसारी रोड़, दरियागंज

नई दिल्ली - 110002

दूरभाष: (011) 32996391, टेलीफैक्स: (011) 23286537

*

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38. यू. ए. बंग्लो रोड़, जवाहर नगर,

पोस्ट बॉक्स न. 2113, दिल्ली-110007

*

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)

पोस्ट बॉक्स न. 1069, वाराणसी-221001

मुद्रक

डीलक्स ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली

Scanned with CamScanner

संपादकीय

(द्वितीय संस्करण)

डॉ. अयोध्या प्रसाद अचल द्वारा रचित अगदतन्त्र (आयुर्वेदीय विषविज्ञान) एक अद्वितीय कृति है, छात्र-छात्राओं के मध्य इस ग्रन्थ हेतु विशेष लगाव को परखने के पश्चात लेखक ने नवीनतम परिवर्तित पाठ्यक्रमानुसार इस ग्रन्थ को परिष्कृत व परिमार्जित करने का प्रयास किया है ताकि छात्र-छात्राओं को एक ही ग्रन्थ में आयुर्वेदिक व आधुनिक विष विज्ञान का ज्ञान प्राप्त हो सके। आधुनिक विष विज्ञान की उसकी समग्रता में जानकारी प्राप्त करने के लिए आधुनिक विष विज्ञान के मानक ग्रन्थों का अवलोकन आवश्यक है।

ग्रन्थ में नव्य साहित्य से सम्बन्धित तकनीकी शब्दों के यथा सम्भव हिन्दी तत्सम व आयुर्वेदिक साहित्य के वैज्ञानिक शब्दों के आधुनिक तत्सम प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है जिससे छात्र दोनों पद्धतियों के तकनीकी एवं वैज्ञानिक पक्ष से अवगत हो सकें।

इस पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें प्राय: सभी विषयों को प्राचीन तथा आधुनिक दोनों ही मतों से प्रस्तुत किया गया है एवं प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में वर्णित विषयवस्तु का उल्लेख किया है जिससे छात्रों को अगदतन्त्र के विभिन्न विषयों को समझने में आसानी होगी। प्रस्तुत ग्रन्थ को इस रूप में प्रस्तुत करने के लिए विभिन्न आयुर्वेद एवं आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के ग्रन्थों की सहायता ली गई है। लेखक उन सभी के प्रति अपना आभार व्यक्त करता है।

डॉ० अचल द्वारा लिखित अगद तन्त्र का संशोधन एक कठिनतम कृत्य है एवं भगवत् कृपा के बिना सम्भव नहीं है। हरिद्वार की पावन नगरी में माँ गंगा के सानिध्य में भगवान नीलकण्ठ (जिन्होंने स्वयं विश्व के कल्याण हेतु विष को अपने कण्ठ में ध ारण किया एवं जिनके कारण ही पृथ्वी पर स्थावर व जंगम विष की उत्पत्ति हुई) के आशीर्वाद से इस परिष्कृत व परिमार्जित ग्रन्थ को छात्र-छात्राओं हेतु प्रस्तुत करना सम्भव हो पाया है।

मैं अपने माता-पिता, गुरुजनों, समस्त कुटुम्बगणों एवं मित्रों के आशीर्वाद, सहयोग व प्रेरणा हेतु हृदय से आभारी हूँ। मैं अपनी धर्मपत्नी श्रीमती संगीता तिवारी पुत्री कनिष्का व हिया के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ जिनके सहयोग से यह कार्य सहजरूप से पूर्ण हो सका।

प्रस्तुत ग्रंथ को परिष्कृत व परिमर्जित करने में परोक्ष/अपरोक्ष रूप से सहयोग प्रदान करने वाले सभी मित्रों का हृदय से धन्यवाद। आशा है कि छात्र इससे अधिकाधिक लाभान्वित होंगे, यह ग्रन्थ हमारे छात्रों की आवश्यकता की पूर्ति करेगी और एक अच्छी पाठ्यपुस्तक सिद्ध होगी।

मैं चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी का कृतज्ञ हूँ, जिनके सत्प्रयास से इस ग्रन्थ के प्रकाशन का कार्य सम्भव हो सका।

अन्त में मैं अपने सभी छात्रों तथा नवीन ग्रन्थ के भावी पाठकों का अभिनन्दन करता हूँ जिनके हित साधन के प्रति हम कर्त्तव्यबद्ध हैं और इस ग्रन्थ के विषय में उनके सुझाव हमें सदा अनुग्रहित करेंगे।

विजयदशमी (दशहरा)
11 अक्टूबर, 2016

डॉ. रमेश चन्द्र तिवारी

Scanned with CamScanner

प्राक्कथन

(प्रथम संस्करण)

अगदतन्त्र आयुर्वेद की एक महत्त्वपूर्ण शाखा है। यह आयुर्वेद के आठ प्रधान अंगों में से एक हैं। इसमें विष, विष के स्वरूप, विष की उत्पत्ति, विष के भेद; आत्महत्यार्थ, परहत्यार्थ, पशुवध आदि के लिए विष के प्रयोग; विष के सामरिक प्रयोग; तत्कालीन रूप में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के स्थावर एवं जंगम विषों के स्वरूप, लक्षण, निदान तथा चिकित्सा का विस्तार से वर्णन किया गया है।

यद्यपि आजदिन अगदतन्त्र पर कोई स्वतन्त्र संहिता उपलब्ध नहीं है, फिर भी आयुर्वेद की बृहत्त्रयी, लघुत्रयी और बाद के संग्रह-ग्रन्थों में इससे सम्बन्धित प्रचुर सामग्री उपलब्ध है।

प्रस्तुत पुस्तक में अगदतन्त्र के इन्हीं बिखरे हुए प्रसूनों को सुव्यवथित रूप में संजोकर एक सुन्दर माला का रूप देने का प्रयास किया गया है। लेखक को इस कार्य में कितनी सफलता मिल पाई है– इसका निर्णय तो सुविज्ञ पाठक ही करेंगे।

लेखक का ध्येय आयुर्वेदीय विष-विज्ञान को उसकी समग्रता में प्रस्तुत करना है। तुलनात्मक दृष्टि से विषय को और भी अधिक सुग्राह्य बनाने के लिए इसमें आधुनिक विषविज्ञान के केवल उन्हीं अंशों एवं पक्षों का सहयोग लिया गया है—जो आयुर्वेदीय विष-विज्ञान को समझने में सहायक हो सकते हैं। आधुनिक विष-विज्ञान की, उसकी समग्रता में जानकारी प्राप्त करने के लिए पाठकों को आधुनिक विष-विज्ञान के मानक ग्रन्थों का अवलोकन करना चाहिए।

प्रस्तुत पुस्तक की रचना भारतीय केन्द्रीय चिकित्सा परिषद्, नई दिल्ली द्वारा आयुर्वेदाचार्य (बी०ए०एम०एस०) की परीक्षा में अगदतन्त्र के लिए निर्धारित नवीनतम पाठ्यक्रम के आधार पर की गई है। हिन्दी और अहिन्दीभाषी दोनों ही प्रकार के छात्रों एवं आयुर्वेद-प्रेमी पाठकों को ध्यान में रखते हुए पुस्तक की भाषा यथासाध्य सरल और सुग्राह्य बनाये रखने की पूरी कोशिश की गई है। तकनीकी शब्दों-शीर्षकों के अंगरेजी पर्याय भी दे दिये गये है। जो भी नया तकनीकी शब्द पहली बार आया है, उसे परिभाषित कर दिया गया है। विषय के सुग्राह्य बनाने के लिए प्रर्याप्त चित्रों एवं सारणियों की सहायता ली गई है।

पुस्तक को उसके वर्तमान स्वरूप में प्रस्तुत करने के लिए मुझे अनेक देशी-विदेशी विद्वानों की विष-विज्ञान सम्बन्धी पुस्तकों का अध्ययन करना पड़ा। मैं ऐसे सभी विद्वानों के प्रति नतमस्तक हूँ, जिनके भावों एवं विचारों ने मुझे जाने-अनजाने प्रभावित किया है। अतः उनकी छाया या यत्र-तत्र प्रतिबिम्बित होना स्वाभाविक है।

मैं अपनी पत्नी श्रीमती विमला अचल, बी०ए० एम० एस० तथा अपने पुत्र आनन्द प्रकाश अचल बी० ए० एम० एस० (च०व०) के प्रति भी अपनी कोमल भावनाएँ व्यक्त करना अपना कर्तव्य समझता हूँ, जिन्होंने न केवल मुझे लेखन के लिए अनुकूल परिवेश प्रदान किया, प्रत्युत पुस्तक की पाण्डुलिपि तैयार करने में भी सक्रिय सहयोग दिया।

मैं चौखम्बा सुरभारती परिवार, वाराणसी के सदस्यों का भी अत्यधिक आभारी हूँ जिनकी लगन एवं उत्साह से पुस्तक का हिन्दी-संस्करण इतना शीघ्र और इतने आकर्षक रूप में आपके सामने आ सका।

Scanned with CamScanner

सबसे अन्त में किन्तु सबसे अधिक मैं अपने छात्रों, अपने उन अगणित आयुर्वेद-प्रेमी पाठकों-प्रशंसकों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ, जो मुझे बराबर इसी प्रकार आयुर्वेद-साहित्य के भण्डार को अपने यत्किंचित् योगदान से भरते रहने की प्रेरणा देते रहते हैं। उनका प्रोत्साहन ही मेरी शक्ति है, सम्बल है।

रामनवमी
11 अप्रैल, 1992

अयोध्याप्रसाद अचल

Scanned with CamScanner

विषयानुक्रम

संपादकीय (द्वितीय संस्करण) v

प्राक्कथन (प्रथम संस्करण) vii

1. विषय प्रवेश (Introduction) 1
2. विष का स्वरूप Nature of Poison 8
3. विष के गुण और कर्म Characteristic and Action of Poison 19
4. विष का अवचारण Administration of Poison 31
5. विष का निदान Diagnosis of Poison 40
6. विष का सामान्य चिकित्सा क्रम General Treatment of Visha - Poisoning 50
7. विष के उपद्रव और उनकी चिकित्सा Supervenient Symptoms or Complication of Poisoning & their Management 63
8. स्थावर विष Inanimate or Static Poisons 69
9. उपविष Mild Poisons 88
10. दूषी विष एवं गर विष Slow Acting/ Polluting Poisons and Swallowing Poisons 104
11. खनिज या धातुविष Mineral or Metallic Poisons 111
12. मद्यज विषाक्तता Alcohol Poisoning 119
13. जंगम विष (1) Animal Poison - I 136
14. जंगम विष (2) Animal Poison - II 170
15. आहार विष एवं आहार विषाक्तता Food Poisoning 194
16. भारत में विषाक्तता Poisoning in India 203

परिशिष्ट Appendix 1 208

परिशिष्ट Appendix 2 222

परिशिष्ट Appendix 3 224

परिशिष्ट Appendix 4 225

परिशिष्ट Appendix 5 228

• • •

Scanned with CamScanner

AGADTANTRA, TOXICOLOGY

50 Marks

1. Derivation of visha (8), definition of Visha (10); derivation of Agadatantra (1) and definition of Agadatantra (2). Scope of Agada tantra (5). Visha Utpatti (8), Visha Prabhava (22), Visha Pranaharana Kriya (), Visha Guna (19-21), Visha Gati (16), Visha Vega (24-30), Visha Sankata (38), Shanka Visha (38).
2. Definition of toxicology (4-5), Definition of poison (17), suicidal and homicidal poisons (17); Classification of poisons (17-18), their action (23-24, 34) and route of administration (32-33, 35), absorption (34), excretion, metabolism (34), diagnosis (40-49) and general principles of treatment (57-62), duties of a medical practitioner in case of suspected poisoning (48-49).
3. Origin (8) and Classification of Visha (11-12); its sources (12-13). Difference between Visha, Madya and Oja gunas (21-22). Visha Upadrava (39, 63-68) and Visha Mukta Lakshana (39, 68).
4. Tests for detection of Visha, and Modern Toxicological Techniques of detection of poisons, Visha Data Lakshana (31-32), Visha Peeta Lakshana (38), Signs and symptoms of Visha afflicted organs and personal effects (200-201). (Poisoning with Anjana, Lepa paduka, Abharana etc. (32-33)
5. Introduction to Environmental Toxicology - Samuhika Vishaprayoga (206-208); effect of chemical and nuclear warfare.
6. Vishopakrama described by Charaka (51-57); General principles of Management of poisoning (57-62).
7. Manifestation of poisoning due to poisons of plant origin, their fatal dose, fatal period, management of poisoning, post mortem appearance and its medico legal importance.

   Visha and Upavisha - Arka (97-98), Snuhi (98-99), Langali (99-100), Karaveera (100-101), Gunja (95-96), Ahiphena (90-92), Dhattura (93-94), Bhallataka (96-97), Vatsanabha (77-78), Kupeelu (89-90), Jayapala (92-93), Bhanga (94-95) & Tobacco (101), Parthenium hysteriphorus (101-102), Chitraka (102), Eranda (102-103), Digitalis (103) and Cerebra Odallam (103).
8. Garavisha (107-110), Dooshi visha (104-107), Viruddhahara (195-197). Food adulteration and poisoning – classification, diagnosis, management and contemporary significance (194-202).
9. Jangama Visha (136 - 193) - Detailed study of Sarpa (139-169), Keeta (182), Loota (176-182), Vrischika (170-175), Mooshika (182-191), Alarka –Visha (191-193); Lakshana, Bheda, Chikitsa and their Sadhya-asadhyata (contemporary and classical views).
10. Introduction to poisoning due to acids, alkalis, metals, non-metals, asphyxiants and others, their fatal dose, fatal period, manifestation, management, medico legal importance and postmortem appearance of poisoning due to:
    (a) Acid and Alkalis – Sulphuric acid (80-81), Hydrochloric acid (81), Nitric acid (81), Hydrocyanic acid, Oxalic acid (82), Carbolic acid (81), Formic acid (82), alkalis in general (83).
    (b) Asphyxiants (85-87) – Carbon monoxide (86), Carbon dioxide (86), Hydrogen sulphide (86)
    (c) Nonmetallic poisons – Phosphorous (83-84), Iodine (83)

    Metallic poisoning – Arsenic (116-117), Mercury (112-114), Lead (114-115), Copper (117-118), Zinc (118), Tin (115-116).
    (d) Others - Petroleum – Kerosene; Organo-phosphorus compounds -Aluminum phosphate (84), Organo Chlorinated Compounds (85), Household poisons (222-223).
11. Madya and Madatyaya (119-134). Alcohol poisoning (Ethanol and Methanol) (134-135).
12. Introduction to Narcotic drugs and Psychotropic substances Act 1985.

* Numbers are in () are page numbers.

• • •

Scanned with CamScanner

1 विषय प्रवेश Introduction

विषय

- परिचय (Introduction)
- अगद (Agada)
- अगद के पर्याय (Synonyms of Agada)
- तन्त्र (Tantra)
- अगदतन्त्र की परिभाषा (Definition of Agada-tantra)
- अगदतन्त्र की विविध संज्ञायें (Synonyms of Agadatantra)
- अष्टांग आयुर्वेद एवं अगदतन्त्र (Ashtanga Ayurveda and Agada-tantra)
- Toxicology
- अगदतन्त्र तथा विषविज्ञान का क्षेत्र (Scope of Agadatantra)
- अगदतन्त्र का प्रयोजन और उसकी उपयोगिता (Aim of Agadatantra and its utility)
- आयुर्वेद में अगदतन्त्र सम्बन्धी साहित्य (Literature of Agadatantra)
- अगदतन्त्र पर प्रकाशित ग्रन्थों की सूची (Literature published on Agadatantra)

1.1 परिचय (Introduction)

'अगदतन्त्र' दो शब्दों से मिलकर बना है 'अगद' + 'तन्त्र'। अगदतन्त्र के मर्म को समझने के लिए इन दोनों शब्दों को समझना आवश्यक है।

1.2 अगद (Agada)

गद शब्द 'गद्' धातु में अच् प्रत्यय लगकर बना है जिसका अर्थ होता है – रोग पीड़ा या विष। गद में 'अ' उपसर्गपूर्वक लगकर अगद बना है। इसकी दो प्रकार से व्याख्या की जा सकती है-

1. **'नास्ति गदो यस्य'**

अर्थात् नीरोग या रोगरहित और

2. **'नास्ति गदो यस्मात्'**

अर्थात् ओषध, स्वास्थ्य या विषनाश करने का विज्ञान।

आयुर्वेद में अगद शब्द को प्रधानतया अन्तिम अर्थ में ही व्यवहार में लाया गया है। अगद शब्द का अधिकांश व्यवहार प्रतिविष (antibody) या विषघ्न औषध के लिए किया गया है।

आचार्य प्रियव्रत शर्मा ने अगद शब्द की निरुक्ति करते हुए कहा है :

गा इन्द्रियाणि सद्यो घ्नन्तीत्येते गदाः बुधैः प्रोक्ता।
विषमिति विषादजननानादगदस्तेषां प्रतीकारः।। (षोडशांगहृदयम् 14/1)

अर्थात् इन्द्रियों में विकार उत्पन्न करने के कारण 'गद' संज्ञा हुई तथा विषाद उत्पन्न करने के कारण विष कहलाता है और उसका प्रतिकार करने वाला द्रव्य 'अगद' कहलाता है।

1.3 अगद के पर्याय (Synonyms of Agada)

आचार्य अमरसिंह विरचित अमरकोष में अगद शब्द के लिए निम्न पर्याय आये हैं :

भेषजौषधभैषज्यान्यगदो जायुरित्यपि। (अमरकोष 2.6.50)

भेषजम्	औषधम्	भैषज्यम्	अगदः	जायुः

Scanned with CamScanner

आचार्य नरहरि पण्डित के अनुसार

भैषज्यं भेषजं जैत्रमगदो जायुरौषधम्।
आयुर्योगो गदारातिरमृतं च तदुच्यते।।

(रा.नि. रोगादिवर्ग 36)

भैषज्य	भेषज	जैत्र
अगद	जायु	औषध
आयुर्योग	गदाराति	अमृत

1.4 तन्त्र (Tantra)

'तन्त्र' शब्द की व्याख्या करते हुए कहा गया है –

त्रायते शरीरमननेति तन्त्रम्।

अर्थात् जिसके द्वारा शरीर की रक्षा की जाये, उसे तन्त्र कहते हैं। शरीर की रक्षा शास्त्र और चिकित्सा दोनों के द्वारा की जाती है। शास्त्र मनुष्य को ज्ञान प्रदान कर उसके मानसिक एवं नैतिक पक्ष की रक्षा करता है और चिकित्सा उसके मनोदैहिक तन्त्र को आरोग्य प्रदान करती है।

अतः शाब्दिक अर्थ को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि :

'अगदतन्त्र चिकित्साशास्त्र की वह शाखा है, जो प्राणी के मनोदैहिक-तन्त्र की विषों से रक्षा कर उसे आरोग्य प्रदान करती है।'

1.5 अगदतन्त्र की परिभाषा (Definition of Agada-tantra)

1. आचार्य सुश्रुत मतेन

आचार्य सुश्रुत (सुश्रुतसंहिता के प्रसिद्ध रचनाकार एवं 'Father of Surgery' उपाधि द्वारा अलंकृत) ने इसकी परिभाषा निम्न शब्दों में दी है –

अगदतन्त्रं नाम सर्पकीटलूतामूषकादिदष्टविषव्यञ्जनार्थं विविधविषसंयोगोपशमनार्थं च। (सु सू 1.6)

अगदतन्त्र (Toxicology) आयुर्वेद की उस शाखा का नाम है, जिसमें सर्प, कीट (कीड़े), लूता (मकड़ी) आदि से दंष्ट हुए तथा अन्य विविध प्रकार के स्वाभाविक, कृत्रिम एवं संयोगज विष से उपहत प्राणियों की पीड़ा के उपशमन, निदान एवं चिकित्सा का विधान किया गया हो।

2. आचार्य हारित मतेन

आचार्य हारित (पुनर्वसु आत्रेय के शिष्य, आचार्य अग्निवेश के सहध्यायी तथा हारीतसंहिता के रचनाकार) ने विषतन्त्र की परिभाषा निम्न शब्दों में की है –

सर्पवृश्चिकलूतानां विषोपशमनी तु या।
सा क्रिया विषतन्त्रञ्च नाम्ना प्रोक्ताः मनीषिभिः।।

(हा.सं.प्र. 2.18)

सॉप, बिच्छू और मकड़ी के विषों का नाश करने वाली क्रियाविशेष को विषतन्त्र कहते हैं। यहाँ सॉप, बिच्छू आदि के विष को सभी विषों का प्रतिनिधि मानना चाहिए। क्योंकि आगे तृतीय स्थान के 56वें अध्याय, जिसका शीर्षक विषतन्त्र है, का प्रारम्भ ही इन शब्दों के साथ होता है –

आत्रेय उवाच – द्विविधं विषमुद्दिष्टं स्थावरं जंगमं भिषक्।

1.6 अगदतन्त्र की विविध संज्ञायें (Synonyms of Agadatantra)

आचार्य चरक ने इसे विषगरवैरोधिकप्रशमन और आचार्य वाग्भट ने दंष्ट्राचिकित्सा तथा आचार्य चाणक्य (चन्द्रगुप्त मौर्य के प्रधान मन्त्री) ने कौटिल्य अर्थशास्त्र में जांगलि की संज्ञा दी है।

1. आचार्य चरक के अनुसार

तस्यायुर्वेदस्यांगान्यष्टौ; तद्यथा – कायचिकित्सा, शालाक्यं, शल्यापहर्तृकं, विषगर- वैरोधिकप्रशमनं, भूतविद्या, कौमारभृत्यकं, रसायनं, वाजीकरणमिति।।

2. आचार्य वाग्भट के अनुसार

कायबालग्रहोर्ध्वांगशल्यदंष्ट्राजरावृषान्।।
अष्टावंगानि तस्याहुश्चिकित्सा येषु संश्रिता।

3. आचार्य चाणक्य के अनुसार

तस्मादस्य जांगलिविदो भिषजश्चासन्नाः स्युः।।

(कौ.अर्थशास्त्र)

4. आचार्य अमरसिंह के अनुसार

विषवैद्यो जाङ्गुलिकः। (अमरकोश 1.8.11)

'विषगरवैरोधिकप्रशमन' का औचित्य दर्शाते हुए आचार्य प्रियव्रत शर्मा ने कहा है –

संयोगजञ्च प्रायः कृत्रिमेतद् गराह्वया विदितम्।
वैरोधिकमपि काये जनयति विषवत्प्रभावॉस्तु।।
तद् विषगरवैरोधिकशमनं चरकोक्तमस्त्यगदतन्त्रम्।

(षोडशांगहृदयम् 14.3-4)

संयोगज विष प्रायः कृत्रिम और गर संज्ञा से प्रसिद्ध है। वैरोधिक द्रव्य भी (यथा – सम मात्रा में घृत और मधु) शरीर पर विषाक्त प्रभाव उत्पन्न करते हैं। इसी कारण आचार्य चरक ने अगदतन्त्र को **'विषगरवैरोधिकप्रशमन'** की संज्ञा दी है।

'जांगुलि' शब्द का अर्थ है – सँपेरा या विषवैद्य। अतः सभी शब्द प्रकारान्तर से एक ही अर्थ के वाचक हैं।

Scanned with CamScanner

'दंष्ट्रा' का अर्थ है - डंक या विषदन्त। विषपान में भी लगभग उसी प्रकार की पीड़ा की अनुभूति होती है, जिस प्रकार की पीड़ा विषैले जीव-जन्तुओं से डॅसे जाने के बाद होती है। दूसरे जिस काल में इन संहिताओं की रचना की गई थी, उस समय जनसंख्या बहुत ही कम थी। जंगम अधिक थे। अत: स्वाभाविक है कि जंगली जीव-जन्तु अधिक होंगे और उससे काटे या डॅसे की घटनाएँ अधिक होती होंगी। वैद्यों के पास ऐसे ही केस चिकित्सार्थ अधिक आते होंगे। इसीलिए इस शाखा का नाम 'दंष्ट्राचिकित्सा' पड़ गया होगा।

1.7 अष्टांग आयुर्वेद एवं अगदतन्त्र (Ashtanga Ayurveda and Agada-tantra)

प्राचीन अष्टांगायुर्वेद और नवीन षोडशांगायुर्वेद (आचार्य प्रियव्रत शर्मा प्रणीत) में भी अगदतन्त्र को आयुर्वेद की एक प्रधान शाखा माना गया है।

आचार्य सुश्रुत ने सूत्रस्थान के वेदोत्पत्ति अध्याय में आयुर्वेद के अष्टांग विभाजन के हेतु का स्पष्टीकरण किया है। यथा -

इह खलु आयुर्वेदं नामोपांगमथर्ववेदस्यानुत्पाद्यैव प्रजाः श्लोकसहस्रमध्यायसहस्त्रं च कृतवान् स्वयम्भूः; ततोऽल्पायुष्ट्वमल्पमेधस्त्वं चालोक्य नराणां भूयोऽष्टधा प्रणीतवान्।। (सु.सू. 1/5)

अर्थात् यह आठ अंगों वाला आयुर्वेद अथर्ववेद का उपांग है। स्वयम्भू ने प्रजा की सृष्टि करने से पूर्व ही आयुर्वेद की रचना कर दी थी। उसमें एक लाख श्लोक और एक हजार अध्याय थे। तदनन्तर मनुष्यों में आयु की अल्पता तथा बुद्धि की कमी को देखकर पुन: आयुर्वेद को आठ भागों में विभक्त कर दिया।

1.7.1 चरक संहिता मतानुसार

आचार्य चरक ने सूत्रस्थान के अर्थेदशमहामूलीय अध्याय में आयुर्वेद के आठ अंगों का वर्णन किया है। यथा -

तस्यायुर्वेदस्यांगान्यष्टौ; तद्यथा - कायचिकित्सा, शालाक्यं, शल्यापहर्तृकं, विषगरवैरोधिकप्रशमनं, भूतविद्या, कौमारभृत्यकं, रसायनं, वाजीकरणमिति।।
(च.सू. 30/28)

अर्थात् कायचिकित्सा, शालाक्य तन्त्र, शल्यापहर्तृक (शल्य तन्त्र), विषगरवैरोधिकप्रशमन (अगदतन्त्र), भूतविद्या, कौमारभृत्य, रसायन तन्त्र और वाजीकरण तन्त्र; ये आयुर्वेद के आठ अंग हैं।

1.7.2 सुश्रुत संहिता मतानुसार

आचार्य सुश्रुत ने सूत्रस्थान के प्रथमोऽध्याय में आयुर्वेद के आठ अंगों का विस्तारेण वर्णन किया है। यथा -

तद्यथा - शल्यं, शालाक्यं, कायचिकित्सा, भूतविद्या, कौमारभृत्यम्, अगदतन्त्रं, रसायनतन्त्रं, वाजीकरण-तन्त्रमिति। (सु.सू. 1/6)

अर्थात् शल्यतन्त्र, शालाक्यतन्त्र, कायचिकित्सा, भूतविद्या, कौमारभृत्य, अगदतन्त्र, रसायनतन्त्र और वाजीकरण तन्त्र; ये आयुर्वेद के आठ अंग हैं।

1.7.3 अष्टांग हृदय मतानुसार

आचार्य वाग्भट ने सूत्रस्थान के प्रथमोऽध्याय आयुष्कामीय अध्याय में आयुर्वेद के आठ अंगों का वर्णन किया है। यथा -

कायबालग्रहोर्ध्वांगशल्यदंष्टधजरावृषान्।।
अष्टावंगानि तस्याहुश्चिकित्सा येषु संश्रिता।
(अ.हृ.सू. 1/5)

अर्थात् कायचिकित्सा, बालचिकित्सा, ग्रहचिकित्सा, ऊर्ध्वांग (शालाक्य तन्त्र), शल्यतन्त्र, दंष्ट्रा (अगदतन्त्र), जरा (रसायन चिकित्सा) और वृष (वाजीकरण चिकित्सा); ये आयुर्वेद के आठ अंग हैं।

1.7.4 काश्यप संहिता मतानुसार

काश्यप संहिता में आचार्य काश्यप ने विमानस्थान के शिष्योपक्रमणीय अध्याय में अष्टांग आयुर्वेद का वर्णन किया है। यथा - कौमारभृत्य, कायचिकित्सा, शल्यहरण (शल्यचिकित्सा), शालाक्य, विषतन्त्र, भूततन्त्र, अगदतन्त्र तथा रसायनतन्त्र; ये आठ अंग हैं।

इन आठ अंगों में वाजीकरण का उल्लेख नहीं है तथा विष चिकित्सा का विषतन्त्र और अगदतन्त्र नाम से दो बार वर्णन किया गया है। ऐसा संभवत: प्रकाशन के भ्रम से हुआ होगा।

1.7.5 राजनिघण्टु मतानुसार

नरहरि पण्डित प्रणीत राजनिघण्टु में वर्णीत अष्टांग आयुर्वेद में रसायन तन्त्र एवं वाजीकरण तन्त्र का समावेश नहीं किया गया है; इनके स्थान पर द्रव्यगुण विज्ञान और रोग विज्ञान का समावेश किया गया है। यथा -

द्रव्याभिधानगदनिश्चयकायसौख्यं शाल्यादिभूतविषग्रह-बाल- वैद्यम्। विद्याद्.....।।

अर्थात् द्रव्याभिधान (द्रव्यों को बतानेवाला) तन्त्र, गदनिश्चय (रोगविज्ञान), कायसौख्य (कायचिकित्सा), शल्यतन्त्र, शालाक्यतन्त्र, भूतविद्या, ग्रहबाधा और बालवैद्य (बालचिकित्सा)।

1.7.6 आचार्य प्रियव्रत शर्मा मतेन

कायकुमारविषोर्ध्वगवृष्यरसप्राप्तिभूतशल्यहरैः।
आयुर्वेदः प्रोक्तो धात्राऽऽम्नातस्तु सोऽष्टांगः।।

Scanned with CamScanner

आयुर्वेदोऽष्टांगः क्रमशो विज्ञानबृंहितावयवः।
अधुना द्विगुणितकायः सञ्जातः षोडशांगोऽसौ।।
सिद्धान्ताः शारीरं द्रव्यगुणं कल्पनौषधानाञ्च।
रसशास्त्रञ्च निदानं कायचिकित्साविधानञ्च।।
सद्वृत्तं स्वस्थानां मानसरोगो रसायनं वृष्यम्।
विषविज्ञानं शल्यं शालाक्यं बालभृत्यञ्च।।
सस्त्रीप्रसूतितन्त्रं षोडश विदितानि वैद्यकांगानि।
ज्ञातव्यानि सुशिष्यैः गुरूपदेशात् प्रयतमानैः।।

(षोडशांग यम् 14-18)

आचार्य प्रियव्रत शर्मा प्रणीत **षोडशांगहृदयम्** (Essentials of Ayurveda) में आयुर्वेद के षोडश अंगों का उल्लेख किया गया है। यथा –

1. कायचिकित्सा (Medicine)
2. कौमारभृत्य (Pediatrics)
3. अगदतन्त्र (Toxicology)
4. शल्यतन्त्र (Surgery)
5. शालाक्यतन्त्र (Medicine and Surgery pertaining to supraclavicular ailments)
6. वाजीकरण तन्त्र (Aphrodisiac therapy)
7. रसायन तन्त्र (Rejuvenation therapy)
8. सिद्धान्त (Basic Principles of Ayurveda)
9. शारीर (Anatomy & Physiology)
10. द्रव्यगुण विज्ञान (Pharmacology)
11. भैषज्यकल्पना विज्ञान (Pharmacy)
12. रसशास्त्र (Ayurvedic Pharmaceutics)
13. निदान / रोगविज्ञान (Pathology)
14. स्वस्थवृत्त (Preventive & Social Medicine)
15. मानसरोग (Psychiatry)
16. प्रसूतितन्त्र एवं स्त्रीरोग विज्ञान (Obstetrics & Gynaecology)

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि सभी आचार्यों ने 'अगदतन्त्र' को विविध नामों से उल्लिखित करते हुए इस अंग को अष्टांगायुर्वेद में स्थान प्रदान किया है।

अष्टांग आयुर्वेद

क्र. सं.	चरक संहिता	सुश्रुत संहिता	अष्टांग हृदय	काश्यप संहिता	राजनिघण्टु
	च.सू. 30/28	सु.सू. 1/6	अ.हृ.सू. 1/5	का.वि.	20/42
1.	कायचिकित्सा	शल्यम्	कायचिकित्सा	कौमारभृत्य	द्रव्यगुण
2.	कौमारभृत्यक्	शालाक्यम्	बालचिकित्सा	कायचिकित्सा	निदान
3.	भूतविद्या	कायचिकित्सा	ग्रहचिकित्सा	शल्याहर्तृक	कायचिकित्सा
4.	शालाक्यम्	भूतविद्या	ऊर्ध्वांग	शालाक्य	शल्य
5.	शल्यापहर्तृकम्	कौमारभृत्यम्	शल्य	विषतन्त्र	शालाक्य
6.	विषगरवैरोधिकप्रशमन	अगदतन्त्र	दंष्ट्रा	भूततन्त्र	भूतविद्या
7.	रसायन	रसायनतन्त्र	जरा	अगदतन्त्र	अगदतन्त्र
8.	वाजीकरण	वाजीकरणतन्त्र	वृष चिकित्सा	रसायनतन्त्र	कौमारभृत्यक्

1.8 Toxicology

1.8.1 Etymology

The word 'Toxicology' is formed by union of two words - 'toxic' and 'logy'. Toxic is an adjective of the word 'toxin'. 'Toxin' is a poisonous substance; and 'logy' is the science/ study of. Therefore, Toxicology is the science/ study of poisonous substances.

Scanned with CamScanner

1.8.2 Definitions

1. The science of poisons, their source, chemical composition, action, tests and antidotes. - Stedman: Medical Dictionary
2. Toxicology deals with diagnosis, symptoms and treatment of poisons and the methods of detecting them. -
   Modi, J.P. Medical Jurisprudence and Toxicology
3. Toxicology is that branch of medical science which deals with poisons with reference to their sources, characters and properties, the symptoms which they produce, the lethal dose, the nature of the fatal results, the remedial measures which should be employed to combat their actions or effects, the methods of their detection and estimation, and autopsy findings. It also concerns law regarding their sale and prescription.
   - Parikh, C.K.: Textbook of Medical Jurisprudence and Toxicology

1.8.3 Branches of Toxicology

1. Forensic Toxicology
2. Pharmacological Toxicology
3. Clinical Toxicology
4. Regulatory Toxicology

1.8.4 Important Facts about Toxicology

1. Paracelsus (1493 - 1541) said - "All things are poison, and nothing is without poison; only the dose permits something not to be poisonous."
2. Father of Toxicology - Mathieu Joesph Orfila (1787-1853)
3. Toxinology - The science dealing with toxins produced by living organisms, including plants, animals and microbes.

1.9 अगदतन्त्र तथा विषविज्ञान का क्षेत्र (Scope of Agadatantra)

अगदतन्त्र का क्षेत्र बड़ा ही व्यापक है। विष का स्वरूप, उसके स्रोत, भेदोपभेद, गुणधर्म, लक्षण एवं चिह्न, प्राणियों पर उसकी प्रतिक्रिया, वेग, वेगान्तर, वेगगत विशिष्ट लक्षण, विषपान एवं विषदान से सम्बन्धित समस्याएँ, उनका निदान तथा उपचार, नैदानिक एवं उपचारात्मक विधियों की खोज, विषपान एवं विषदान से उत्पन्न नैतिक एवं वैधानिक समस्याएँ, संदिग्ध विषाक्तता में चिकित्सक के कर्तव्य, विष का चिकित्सात्मक उपयोग, चिकित्सात्मक एवं मारक मात्राओं का निर्धारण, उनके क्रय-विक्रय, उपलब्धि तथा व्यवस्था पत्रों में उनकी अनुशंसा पर नियन्त्रण, उनसे सम्बन्धित कानून, विषाक्तता से उत्पन्न वैयक्तिक एवं सामुदायिक समस्याएँ आदि सभी इसके अन्तर्गत आ जाती हैं।

आज के युग में नये-नये विषों का आविष्कार हो रहा है। रचनात्मक एवं ध्वंसात्मक दोनों ही प्रकार के कामों में उनका व्यापक रूप से प्रयोग बढ़ रहा है। औषधियों, सौन्दर्य-प्रसाधनों, कीट-नाशकों, घर की सफाई में उपयोग में आनेवाले रसायनों तथा उद्योगों में व्यापक रूप से इनका उपयोग किया जा रहा है। इससे नई-नई समस्याएँ खड़ी हो रही हैं। प्राणियों पर अनेक प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहे हैं। भोपाल की गैस-त्रासदी की घटना हमारे सामने है। युद्धों में ऐटमी तथा रासायनिक अस्त्रों का उपयोग अपनी विनाशलीला से किस प्रकार मानव-जीवन को नारकीय बना दे रहा है। इसका ज्वलन्त उदाहरण अभी कुछ ही महीनों पूर्व हम ईराक और कुवैत तथा ईराक और विश्व की महाशक्तियों के बीच हुए युद्ध में देख चुके हैं। पृथ्वी का वायुमण्डल प्रदूषित होता जा रहा है। विकिरण, जहरीली गैसों तथा मादक द्रव्यों का प्रभाव गर्भस्थ शिशुओं तथा मानव के वंशलक्षण बीजों (जीन्स व क्रोमोसोम्स) तक को प्रभावित कर रहा है। नए-नए रोग पैदा हो रहे हैं। रोगों के रूप बदल रहे हैं। उनके उपद्रव एवं जटिलताएँ बढ़ती जा रही हैं। इन सारी समस्याओं ने विष-वैज्ञानिकों के दायित्व और विषविज्ञान के अध्ययन-क्षेत्र की सीमाओं को और भी बढ़ा दिया है।

1.10 अगदतन्त्र का प्रयोजन और उसकी उपयोगिता (Aim of Agadatantra and its utility)

आयुर्वेद के समान ही अगदतन्त्र के दो मुख्य प्रयोजन हैं -

1. स्वस्थ प्राणियों की विष के प्रभावों से रक्षा।
2. विषाक्तता से ग्रस्त प्राणियों का कष्ट-निवारण कर उन्हें आरोग्य प्रदान करना।

स्वस्थ प्राणियों के स्वास्थ्य की रक्षा के लिए आवश्यक है कि उन्हें विष और विष के स्रोतों की प्रारम्भिक जानकारी दी जाये। विषैले एवं मादक पदार्थों के सेवन से होनेवाली हानियों से परिचित कराया जाये। विषदान के तरीकों और विषाक्त अन्नपान को पहचानने की विधियों से अवगत कराया जाये। विरुद्ध अन्नपान

Scanned with CamScanner

तथा शरीर में आमविष उत्पन्न करनेवाले कारकों की जानकारी दी जाये। पीड़ाहर, शामक, अवसादक एवं नींद लाने वाली गोलियों-टिकियों - जिनका आज बिना समझे-बूझे धड़ल्ले से प्रयोग किया जा रहा है - के अमात्रा में, अनावश्यक और बिना किसी विशेषज्ञ की सलाह के सेवन से होने वाले खतरों एवं घातक परिणामों के प्रति आगाह किया जाये। नींद की गोलियों के मस्तिष्क पर पड़ने वाले स्थायी प्रतिकूल प्रभावों के कारण इधर बीच कुछ पाश्चात्य देशों में इनके उपयोग पर रोक लगा दी गई है। रासायनिक खाद, कीटनाशक औषधों, फलों को कृत्रिम रूप से पकाने वाली गैसों, भाँति-भाँति के कार्बनिक तथा अकार्बनिक परिरक्षकों से युक्त अनाजों, डिब्बाबन्द, बोतलबन्द अथवा पैक किये हुए खाद्य पदार्थों एवं पेयों को प्रयोग में लाने से पहले बरती जाने वाली सावधानियों से पूरी तौर पर अवगत कराया जाये। वायुमण्डल और जल में उत्पन्न होने वाले प्रदूषणों से रक्षा करने की विधियों की जानकारी दी जाये। प्राणी आहार-विहार एवं आचार-विचार में सावधानी एवं सतर्कता बरत कर द्रव्यों के विषाक्त प्रभावों से अपने स्वास्थ्य एवं प्राणों की रक्षा कर सकते हैं। आयुर्वेदीय सद्वृत्त इस परिप्रेक्ष्य में उनका मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है।

आजकल मादक द्रव्यों तथा व्यसनकारी औषधों (drugs) के व्यापक पैमाने पर उपयोग, उद्योगों में रसायनों तथा युद्धों में विकिरण, विषैली गैसों तथा रासायनिक आयुधों के उपयोग ने विषाक्तता की अनेक सामुदायिक समस्याओं को जन्म दिया है। कभी-कभी प्राकृतिक विपदाएँ भी आग में घी का काम करती हैं। चरक ने विमानस्थान के जनपदोद्ध्वंस प्रकरण में वायु, जल, देश और काल को व्यापक रूप में विकृत करने वाले ऐसे कारणों का उल्लेख किया है जो सामूहिक रूप से विनाश का कारण बनते हैं। इन परिस्थितियों से रक्षा के लिए लोक-शिक्षण की सबसे बड़ी आवश्यकता है। जन-मानस के जागरूक हुए बिना अच्छी से अच्छी व्यवस्था एवं नियम-कानून सफल नहीं हो सकते। अत: सामुदायिक विषाक्तता से रक्षा के प्रति लोक-मानस को प्रशिक्षित करने का काम भी विष-वैज्ञानिक ही सफलतापूर्वक कर सकता है।

विषाक्तता से ग्रस्त प्राणियों के रोग - निवारण के लिए विष - वैज्ञानिक उपचार की नई - नई विधियों, यन्त्रों, उपकरणों एवं औषधियों की खोज करता है। प्राचीन विधियों को अपने अनुभव के आधार पर सुधारता है, और उन्हें नया रूप देता है।

1.11 आयुर्वेद में अगदतन्त्र सम्बन्धी साहित्य (Literature of Agadatantra)

भारत में विष और निर्विषीकरण के अध्ययन की परम्परा अति प्राचीन है। वैदिक (वेदों में आयुर्वेद- रामगोपाल शास्त्री, विष प्रकरण) (विशेषरूप से अथर्ववेद) और वेदोत्तर साहित्य में इसके अनेक उदाहरण देखने को मिल सकते हैं। महाभारत में काश्यप और तक्षक के तथा ब्रह्मवैवर्तपुराण में धन्वन्तरि और नागदेवी मनसा के संवाद-प्रकरण तत्कालीन विषवैद्यक की स्थिति के परिचायक हैं।

आयुर्वेद के इतिहास के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में आयुर्वेद के आठों अंगों से सम्बन्धित अलग-अलग संहिताएँ थीं। पर कालान्तर में उनमें से अधिकांश लुप्त हो गईं। आचार्य वाग्भट द्वारा अष्टांगसंग्रह के उत्तरस्थान में वेगों के वर्णन के क्रम में पुनर्वसु आत्रेय के मत के साथ-साथ नग्नजीत, विदेहपति (जनक), आलम्बायन ऋषि आदि के मतों का उल्लेख करना इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि उनके काल में अगदतन्त्र सम्बन्धी अन्य साहित्य भी उपलब्ध थे जो अब अप्राप्य हैं। आजकल अगदतन्त्र पर कोई भी प्राचीन संहिता या स्वतन्त्र ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। उपलब्ध प्राचीन संहिताओं और संग्रह ग्रन्थों में इस विषय का कहीं-कहीं क्रमबद्ध और कहीं विकीर्ण विवरण देखने को मिलता है। इस सम्बन्ध में प्रस्तुत ग्रन्थों के निम्न निर्दिष्ट अंश विशेष रूप से द्रष्टव्य हैं -

चरक संहिता	चिकित्सास्थान	अध्याय 23
सुश्रुतसंहिता	कल्पस्थान सम्पूर्ण	अध्याय 1 से 8 तक
अष्टांगसंग्रह	उत्तरस्थान	अध्याय 40 से 48 तक
काश्यपसंहिता	सर्वविधिविषप्रतिपादिका	
हारीतसंहिता	तृतीयस्थान	अध्याय 56
माधवनिदान		अध्याय 69
भावप्रकाश	चिकित्सास्थान	अध्याय 67
शार्गधर संहिता	यत्र-तत्र	
वसवराजीयम्		प्रकरण 21 एवं 22
भैषज्यरत्नावली	विषरोगचिकित्साप्रकरण	
योगरत्नाकर	उत्तरार्ध	विषाधिकार
चिकित्साकलिका	विषचिकित्सा	
वंगसेन संहिता	विषरोगाधिकार	पृष्ठ संख्या 885 से 907
चक्रदत्त	विषचिकित्सा	
वृन्दमाधव अथवा सिद्धयोग	अध्याय 68 (विषाधिकार)	
रसतरंगिणी	तरंग संख्या 24	

Scanned with CamScanner

सुश्रुत संहिता कल्पस्थान के अध्याय

1	अन्नपानरक्षाकल्प अध्याय	5	सर्पदष्टविषचिकित्सितकल्प अध्याय
2	स्थावरविषविज्ञानीय अध्याय	6	दुन्दुभिस्वनीयकल्प अध्याय
3	जंगमविषविज्ञानीय अध्याय	7	मूषिककल्प अध्याय
4	सर्पदष्टविषविज्ञानीय अध्याय	8	कीटकल्प अध्याय

अष्टांग हृदय के अगदतन्त्र सम्बन्धित उत्तरस्थान के अध्याय

35	विषप्रतिषेध अध्याय	37	कीटलूतादिविषप्रतिषेध अध्याय
36	सर्पविषप्रतिषेध अध्याय	38	मूषिकालर्कविषप्रतिषेध अध्याय

अष्टांग संग्रह के अगदतन्त्र सम्बन्धित उत्तरस्थान के अध्याय

40	विषप्रतिषेध अध्याय	45	प्रत्येकलूताविषप्रतिषेध अध्याय
41	सर्पविषविज्ञान अध्याय	46	मूषिकालर्कविषविज्ञानप्रतिषेध अध्याय
42	सर्पविषप्रतिषेध अध्याय	47	विषोपद्रवप्रतिषेध अध्याय
43	कीटविषविज्ञानप्रतिषेध अध्याय	48	विषोपयोगी अध्याय
44	लूताविषविज्ञानप्रतिषेध अध्याय		

1.12 अगदतन्त्र पर प्रकाशित ग्रन्थों की सूची (Literature published on Agadatantra)

1 अगदतन्त्र – डॉ. अयोध्याप्रसाद 'अचल'

2. व्यवहारायुर्वेद विज्ञान – डॉ. इन्द्रमोहन झा 'सच्चन'

3. व्यवहारायुर्वेद, विषविज्ञान एवं अगदतन्त्र – डॉ. युगलकिशोर गुप्त

4. व्यवहारायुर्वेद एवं विधिवैद्यक – डॉ. अयोध्याप्रसाद 'अचल'

5. विधि वैद्यक, व्यवहारायुर्वेद विज्ञान - चारुचन्द्र पाठक

6. अगदतन्त्र-विष चिकित्सा - डॉ. अजयकुमार शर्मा

7. अगदतन्त्र – डॉ. एच.सी. गुप्त एवं डॉ. वी.के. वर्मा

8. A Textbook of Agada Tantra - Dr. U.R. Sekhar Namburi

9. Textbook of Agada Tantra - Dr. Nitin Urmaliya

10. Agada-Tantra & Vyavahara Ayurveda - Prof. K. Nishteswar & Dr. A. Anil Kumar

11. Textbook of Agada Tantra - Dr. Ashwinkumar S. Bharati

12. Illustrated Agada Tantra - Dr. P.V.N.R. Prasad

• • •

Scanned with CamScanner

2

विष का स्वरूप
Nature of Poison

विषय

- विष की निरुक्ति
  (Etymology of Visha - poison)
- विष की प्रागुत्पत्ति
  (First origin / Mythological origin of poison)
- विष की परिभाषा
  (Definition of Poison)
- विष के पर्याय
  (Synonyms of Poison)
- विष का वर्गीकरण
  (Classification of poison)
- विष के नाना वीर्य होने के कारण
  (Reason for multi-rasa nature of visha)
- विष योनि
  (Abode of / form-of-existence of poisons)
- विष अधिष्ठान
  (Site of poisons)
- विष की गति
  (Movement of poison)
- Poison

2.1 विष की निरुक्ति (Etymology of Visha - Poison)

विष शब्द 'विष्' धातु में 'क' प्रत्यय लगकर बना है। विष का अर्थ है – घेरना, छा जाना अथवा व्याप्त हो जाना या फैलना। अत: विष का व्युत्पत्ति – लब्ध अर्थ हुआ – वह द्रव्य जो शरीर में जाकर शीघ्रता से व्याप्त हो जाये।

वत्सनाभ आदि विषैले द्रव्य शरीर में जाकर शीघ्रता से व्याप्त हो जाते हैं। इसीलिए विष शब्द इन्हीं का वाचक बन गया है।

2.2 विष की प्रागुत्पत्ति (First Origin/ Mythological Origin of Poison)

पौराणिक परम्परा के अनुसार विष की सर्वप्रथम उत्पत्ति क्षीरसागर या समुद्र से हुई।

2.2.1 आचार्य चरक मतेन

अमृतार्थं समुद्रे तु मथ्यमाने सुरासुरैः।
जज्ञे प्रागमृतोत्पत्तेः पुरुषो घोरदर्शनः।।

दीप्ततेजाश्चतुर्दंष्ट्रो हरिकेशोऽनलेक्षणः।
जगद्विषण्णं तं दृष्ट्वा तेनासौ विषसंज्ञितः।।

जंगमस्थावरायां तद्योनौ ब्रह्मा न्ययोजयत्।
तदम्बुसम्भवं तस्माद् द्विविधं पावकोपमम्।। (च.चि. 23/4-6)

अमृत को प्राप्त करने की इच्छा से जब देव और दानव मिलकर क्षीरसमुद्र का मन्थन कर रहे थे, तब अमृत की उत्पत्ति होने के पूर्व उसमें से एक भयानक स्वरूपवाला पुरुष प्रकट हुआ। वह अत्यन्त तेजस्वी था। उसके चार बड़े-बड़े दाँत थे। हरित वर्ण के केश थे। उसके नेत्रों से अग्नि के समान ज्वालाएँ निकल रहीं थीं। उसे देखकर सम्पूर्ण जगत् अर्थात् वहाँ उपस्थित सभी लोग विषादयुक्त हो गये। इसीलिए उसकी विष संज्ञा हुई। जब ब्रह्माजी ने देखा कि उस भयानक विष-पुरुष को देखकर सभी प्राणी अत्यन्त दु:खी हो रहे हैं तो उन्होंने अग्नि के समान दाहक उस विष पुरुष को स्थावर और जंगम दो योनियों में स्थापित कर दिया।

Scanned with CamScanner

2.2.2 आचार्य सुश्रुत मतेन

प्रजामिमामात्मयोनेर्ब्रह्मणः सृजतः किल।
अकरोदसुरो विघ्नं कैटभो नाम दर्पितः।।

तस्य क्रुद्धस्य वै वक्त्राद्ब्रह्मणस्तेजसो निधेः।
क्रोधो विग्रहवान् भूत्वा निपपाततिदारुणः।।

स तं ददाह गर्जन्तमन्तकाभं महाबलम्।
ततोऽसुरं घातयित्वा तत्तेजोऽवर्धताद्भुतम्।।

ततो विषादो देवानामभवत्तं निरीक्ष्य वै।
विषादजननत्वाच्च विषमित्यभिधीयते।।

ततः सृष्ट्वा प्रजाः शेषं तदा तं क्रोधमीश्वरः।
विन्यस्तवान् स भूतेषु स्थावरेषु चरेषु च।।

(सु.क. 3/18-22)

जब स्वयम्भू ब्रह्मा सृष्टि की रचना कर रहे थे, उस समय दर्प में चूर कैटभ नाम का दैत्य आकर विघ्न उपस्थित करने लगा। तेज के पुंज ब्रह्माजी अत्यधिक क्रुद्ध हो गये। क्रोध स्वयं अत्यधिक दारुण रूप धारण कर उनके मुख से प्रकट हुआ। इस क्रोधरूपी पुरुष ने उस महाबली गर्जन-तर्जन करने वाले राक्षस का वध कर डाला। उस राक्षस का वध करने के उपरान्त शरीरधारी क्रोध का वह तेजस्वी स्वरूप विचित्र रूप में बढ़ने लगा। उसे देखकर देवता विषादयुक्त हो गये। विषाद उत्पन्न करने के कारण ही उसका नाम विष पड़ा। फिर शेष प्राणियों की सृष्टि कर लेने के उपरान्त ब्रह्मा जी ने उस क्रोध को स्थावर एवं जंगम भूतों में स्थापित कर दिया।

वाग्भट-युगल का वर्णन लगभग समान और आचार्य चरक से मिलता-जुलता है।

2.2.3 आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन

पुरा खल्वमृतार्थं सुरासुरैः सलिलनिधेर्विमथ्यमानात् क्रोध इव रूपवान् सत्वं समुद्बभूव कृष्णमनलनयनमूर्ध्वप्रदीप्त केशं दंष्ट्राकरालं भैरवारावरूपम्। तद्दर्शनादेव यतो देवदानवाश्च विषण्णास्तस्मात्तद्विषसंज्ञामवाप।।

तत् सहसैव सर्वभूतानि निर्दग्धुकाममुपयोगविशेषैर्विष-मृततां विनयमानो ब्रह्मानुनीयौषधिषु न्यस्तवान्।।

(अ.सं. उत्तरस्थान 40/2-3)

प्राचीन काल में देवताओं और दानवों द्वारा अमृत प्राप्ति की इच्छा से समुद्र के मथे जाने पर पहले उससे क्रोध के समान काले और लाल वर्ण का सत्त्व उत्पन्न हुआ। उस सत्त्व का रंग काला, आँखें अंगारों के समान लाल, बाल खड़े, चमकीले और जलते हुए-से तथा दाँढ़ें विकराल थीं। उसका रूप बड़ा ही डरावना था। उसे देखकर देवता और दैत्य दोनों ही विषादयुक्त हो गये। उत्पन्न होते ही वह सब प्राणियों को जलाने की इच्छा करने लगा। इसीलिए ब्रह्मा ने युक्ति से उसे अमृत बनाने की इच्छा से औषधियों में स्थापित कर दिया।

2.2.4 आचार्य वाग्भट मतेन

मथ्यमाने जलनिधावमृतार्थं सुरासुरैः।
जातः प्रागमृतोत्पत्तेः पुरुषो घोरदर्शनः।।

दीप्ततेजाश्चतुर्दंष्ट्रो हरिकेशोऽनलेक्षणः।
जगद्विषण्णं तं दृष्ट्वा तेनासौ विषसंज्ञितः।।

हुंकृतो ब्रह्मणा मूर्तौ ततः स्थावरजंगमे।
सोऽध्यतिष्ठन्निजं रूपमुज्झित्वा वञ्चनात्मकम्।।

(अ.हृ.उ. 35/1-3)

प्राचीन काल में अमृतप्राप्ति के लिए देव-दानव मिलकर समुद्रमन्थन कर रहे थे, तब उसमें से अमृत की उत्पत्ति से पहले एक भयानक पुरुष निकला, जो महान् तेजस्वी थी। उसके चार बाहर की ओर निकले दाँत थे, पिंगल वर्ण के केश थे, अग्नि के समान आँखें थीं। उसे देखकर सम्पूर्ण संसार दुःखी हो गया, अतएव उसको 'विष' कहा गया। ब्रह्माजी ने उसका तिरस्कार किया, तब उसने अपने उस छलनेवाले रूप को छोड़कर वह स्थावर (वृक्ष-लता-मूल) तथा जंगम (साँप-बिच्छू आदि) में व्याप्त हो गया।

2.2.5 श्रीमद्भागवत मतेन

अमृत प्राप्त करने की इच्छा से जब देवता और दैत्य दोनों मिलकर समुद्रमन्थन कर रहे थे तो उससे अमृत के पूर्व विष की उत्पत्ति हुई। विष से देवता और दैत्य सभी सन्तप्त होने लगे। आर्त होकर उन्होंने आशुतोष भगवान् शिव की प्रार्थना की और उनके प्रसन्न हो जाने पर विश्व की रक्षा एवं कल्याण के लिए उनसे उस हालाहल विष का पान करने का आग्रह किया। भगवान् शिव उनकी प्रार्थना स्वीकार कर जब हालाहल विष का पान कर रहे थे तो उससे छिटक कर कुछ बूँदें पृथ्वी पर भी गिरीं। उसी को ग्रहण कर साँप, बिच्छू, विषौधियाँ तथा अन्य सरीसृप जन्तु विषाक्त हो गये -

प्रस्कन्नं पिबतः पाणेर्यत् किञ्चिज्जगृहुः।
वृश्चिकादिविषौषध्यो दन्तशूकाश्च येऽपरे।।

(श्रीमद्भागवत 8/7/46)

उक्त कथाओं की रोचक एवं आलंकारिक भाषा में संहिताकारों ने विष के अनेक गुणधर्मों और साथ ही उसके ध्वंसात्मक एवं रचनात्मक पक्षों को भी व्यक्त कर दिया है।

Scanned with CamScanner

2.3 विष की परिभाषा (Definition of Poison)

'जो द्रव्य प्राणी के मनोदैहिक तन्त्र के सम्पर्क में आकर अथवा उसके शरीर में प्रवेश कर विषाद उत्पन्न करे या प्राणों को हर ले, उसे **विष** कहते हैं।'

आचार्य सुश्रुत मतेन

विषादजननत्वाच्च विषमित्यभिधीयते।। (सु.क. 3/21)

विषाद उत्पन्न करने के कारण उसे 'विष' कहा जाता है।

आचार्य चरक मतेन

जगद्विषण्णं तं दृष्ट्वा तेनासौ विषसंज्ञितः।।

(च.चि. 23/5)

जिसे देखकर जगत् के सभी प्राणि-विशेष विषादग्रस्त/खिन्न हो जाते हैं, उसे 'विष' कहते हैं।

आचार्य सदानन्द शर्मा (रसतरंगिणीकार) मतेन

दृष्ट्वै तद् यद्विषीदन्ति जनास्तस्माद्विषं मतम्।
नरं वा विषिणीत्येतन्मृत्युपाशैस्ततो विषम्।।

(र.त. 24/1)

जिसको देखने मात्र से मनुष्य, पक्षी तथा पशु अत्यन्त दुःखी हो जाते हैं वह 'विष' है। यह विष मनुष्य को मृत्युपाश द्वारा (बन्धन) नष्ट-भ्रष्ट कर देता है।

विमर्श - वस्तुतः विष की कोई सर्वमान्य और सुनिश्चित परिभाषा नहीं हो सकती। विष कहलाने वाले द्रव्यों का भी यदि शोधन कर, उचित मात्रा में एवं उचित अनुपान के साथ सेवन किया जाये तो वे अमृत का काम कर सकते हैं; और शरीर का पोषण करने वाले भोज्य पदार्थ भी यदि अन्नपान के नियमों की अवहेलना कर यथा - गुणविरुद्ध, कालविरुद्ध, मात्राविरुद्ध और स्वभावविरुद्ध तथा बिना सोचे-समझे खाये-पिये जायें तो वे भी विष का काम करते हैं। वत्सनाभ के संयोग से निर्मित योग विषरसायन एवं अमृतरसायन (रसतरंगिणी) जहाँ एक ओर बल और आयुष्य की वृद्धि करते हैं, वहीं दूसरी ओर यदि उसका अमात्रा में सेवन कर लिया जाये तो वह प्राणों का हरण कर सकता है। इसी प्रकार घृत और मधु असम मात्रा में औषधि का काम करते हैं और सम मात्रा में सेवन किये जाने पर विषाक्त प्रभाव उत्पन्न करते हैं। अन्न स्वतः प्राणों का पोषक है, परन्तु यदि उससे निर्मित मदिरा का सेवन किया जाये तो वह मदोन्मत्तता उत्पन्न करने का कारण बन जाता है। अतः स्पष्ट है कि विष और औषधि द्रव्यों अथवा खाद्य पदार्थों के बीच कोई स्पष्ट सीमारेखा नहीं खींची जा सकती।

2.4 विष के पर्याय (Synonyms of Poison)

आचार्य अमरसिंह मतेन

अमरकोश में विष के दो पर्यायों का उल्लेख है

क्ष्वेडस्तु गरलं विषम्। (अमरकोश 1/9/9)

कविराज सदानन्द शर्मा मतेन

रसतरंगिणी में विष के तीन पर्यायों का उल्लेख है

विषं क्ष्वेडञ्च गरलं कालकूटञ्च तन्मतम्। (र.त. 14/2)

आचार्य कैयदेव पण्डित मतेन

कैयदेव निघण्टु में विष के पाँच पर्यायों का उल्लेख है

विषं क्ष्वेडो रसं तीक्ष्णं गरलं जीवितापहम्।

(कै.नि. मिश्रकवर्ग/218)

आचार्य रमानाथ द्विवेदी मतेन

आचार्य रमानाथ द्विवेदी ने विष के सात पर्यायों का उल्लेख किया है - क्ष्वेड, गरल, गर, गद, मूगर, कलाकुल और कालकल्प। (अगदतन्त्र पृ. 5)।

तालिका - विभिन्न आचार्यों द्वारा उल्लिखित विष के पर्याय

आचार्य अमरसिंह मतेन	कविराज सदानन्द शर्मा मतेन	आचार्य कैयदेव पण्डित मतेन	आचार्य रमानाथ द्विवेदी मतेन
क्ष्वेड	क्ष्वेड	क्ष्वेड	क्ष्वेड
गरल	गरल	गरल	गरल
	कालकूट		
		रस	
		तीक्ष्ण	
		जीवितापहम्	
			गर
			गद
			मूगर
			कलाकुल
			कालकल्प

Scanned with CamScanner

2.5 विष का वर्गीकरण (Classification of Poison)

आचार्य सुश्रुत मतेन

स्थावरं जंगमं चैव द्विविधं विषमुच्यते।
दशाधिष्ठानमाद्यं तु द्वितीयं षोडशाश्रयम्।।

(सु.क 2/3)

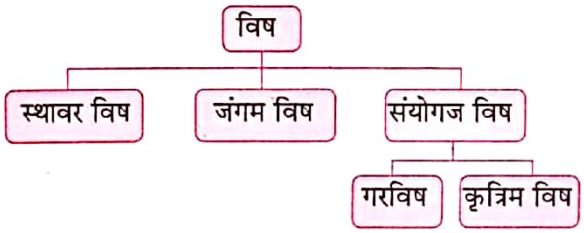

आचार्य चरक मतेन

जंगमस्थावरायां तद्योनौ ब्रह्मा न्ययोजयत्।
तदम्बुसम्भवं तस्माद् द्विविधं पावकोपमम्।।

(च.चि. 23/5)

आचार्य वाग्भट मतेन

स्थावरं जंगमं चेति विषं प्रोक्तमकृत्रिमम्।।
कृत्रिमं गरसंज्ञं तु क्रियते विविधौषधैः। (अ.ह.उ 35/5)

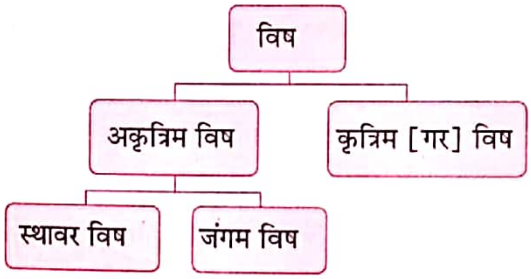

आचार्य कैयदेव पण्डित मतेन

स्थावरं जंगमं दूषीविषं चेति विषं त्रिधा।

(कै.नि. मिश्रकवर्ग/219)

विष तीन प्रकार का होता है

1. स्थावर (वानस्पतिक विष)
2. जंगम (प्राणिज) विष तथा
3. दूषीविष।

आचार्य नरहरि पण्डित मतेन (राजनिघण्टु के रचनाकार)

आचार्य नरहरि पण्डित ने अपने निघण्टु ग्रन्थ 'राजनिघण्टु' में विष को महापञ्चविष और उपविष इन दो वर्गों में विभाजित किया है। यथा

शृंगिकः कालकूटश्च मुस्तको वत्सनाभकः।
सक्तुकश्चेति योगोऽयं महापञ्चविषाभिधः।।
स्नुह्यर्ककरवीराणि लांगली विषमुष्टिका।
एतान्युपविषाण्याहु पञ्च पाण्डित्यशालिनः।।

(रा.नि. मिश्रकादिवर्ग/42-43)

महापञ्चविष	उपविष
1. शृंगिक	1 स्नुही
2. कालकूट	2. अर्क
3. मुस्तक	3. करवीर
4. वत्सनाभ	4. लांगली
5. सक्तुक	5. विषमुष्टिक

कविराज सदानन्द शर्मा मतेन

कविराज सदानन्द शर्मा ने विषों को दो वर्गों में बाँटा है - विष और उपविष। उपविष विष की अपेक्षा अल्प वीर्य एवं अल्प प्रभाव वाले होते हैं। विष के नौ भेद माने गये हैं -

हालाहलः कालकूटः शृंगकश्च प्रदीपनः।
सौराष्ट्रिको ब्रह्मपुत्रो हारिद्रः सक्तुकस्तथा।।
वत्सनाभ इति ज्ञेयो विषभेदा अमी नव।
रसे रसायनादौ च वत्सनाभः प्रशस्यते।।

(र.त. 24/7-8)

1. हालाहल	2. कालकूट	3. शृंगक
4. प्रदीपन	5. सौराष्ट्रिक	6. ब्रह्मपुत्र
7. हारिद्रक	8. सक्तुक और	9. वत्सनाभ

इन नौ विषों में से रसक्रिया और रसायन-प्रयोग में वत्सनाभ सर्वोत्तम माना जाता है।

उपविषों की संख्या ग्यारह मानी गई है -

विषतिन्दुकबीजं च त्वहिफेनञ्च रेचकम्।
धत्तूरबीजं विजया गुञ्जा भल्लातकाह्वयः।।
अर्कक्षीरं स्नुहीक्षीरं लांगली करवीरकम्।
समाख्यातो गणोऽयं तु बुधैरुपविषा भिधः।।

(र.त. 24/163-164)

1. विषतिन्दुक के बीज	2. अहिफेन	3 रेचक (जमालगोटा) के बीज
4. धत्तूर के बीज	5. भंगा	6. गुञ्जा 9. स्नुहीक्षीर
7. भल्लातक	8. अर्कक्षीर	
10. लांगली	11. करवीर	

Scanned with CamScanner

– ये वैद्यों में उपविष गण के नाम से विख्यात हैं।

विष	
विष	**उपविष**
संख्या – 9	संख्या – 11
1. हालाहाल	1. विषतिन्दुक बीज
2. कालकूट	2. अहिफेन
3. शृंगक	3. रेचक
4. प्रदीपन	4. धत्तूर बीज
5. सौराष्ट्रिक	5. विजया
6. ब्रह्मपुत्र	6. गुञ्जा
7. हारिद्रक	7. भल्लातक
8. सक्तुक	8. अर्क क्षीर
9. वत्सनाभ	9. स्नुही क्षीर
	10. लांगली
	11. करवीर

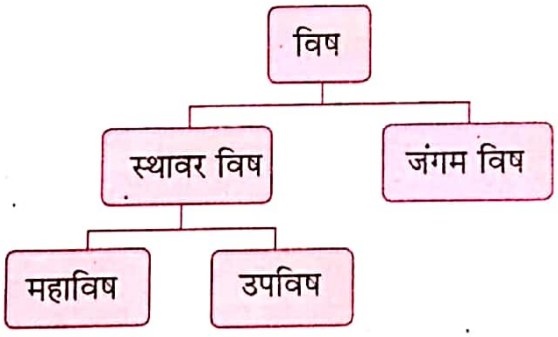

सारांश (Summary) – उत्पत्ति के स्रोत के आधार पर आयुर्वेद में विषों को दो वर्गों में बाँटा गया है –

1. अकृत्रिम या स्वाभाविक (original or natural) – जो अपने मूल रूप में पाये जाते हैं; तथा
2. कृत्रिम या संयोगज (chemically prepared) – जो दो या दो से अधिक द्रव्यों के भौतिक या रासायनिक संगठनो मिलकर बनते या बनाये जाते हैं।

अकृत्रिम विष पुनः दो प्रकार के माने गये हैं –

1. स्थावर 2. जंगम।

स्थावर उन्हें कहते हैं जो स्थावर रूप में या स्थावर वस्तुओं में पाये जाते हैं। इनकी पुनः दो कोटियाँ मानी जा सकती हैं –

1. वानस्पतिक (vegetative) – पेड़-पौधों से प्राप्त होनेवाला विष, यथा – वत्सनाभ, कुचला आदि; तथा
2. खनिज या धातुज (Mineral) – यथा पारा, वंग आदि।

जंगम उन्हें कहते हैं जो जीव-जन्तुओं, यथा – साँप, बिच्छू आदि में पाये जाते हैं (animal poison)।

कृत्रिम विष भी दो प्रकार के माने गये हैं –

1. गरविष (chemically prepared swallowing poison)
2. दूषी विष (deficient, mild or slow acting poisons)।

गर विष एकाधिक द्रव्यों के संयोग से बनते हैं। इसीलिए इनको संयोगज विष भी कहा गया है। ये भी दो प्रकार के होते हैं –

1. विषरहित द्रव्यों के संयोग से उत्पन्न, यथा – मधु और घृत का सम मात्रा में संयोग, मछली के मांस और दूध का संयोग।
2. दो या दो से अधिक सविष अथवा सविष एवं निर्विष द्रव्यों के संयोग से निर्मित।

इनमें से प्रधानतया प्रथम को ही गरविष की संज्ञा दी जाती है।

दूषीविष स्थावर, जंगम या कृत्रिम विष का वह अंश है, जो शरीर में पड़ा रहकर धीरे-धीरे शरीरस्थ धातुओं विशेषरूप से रक्त को दूषित कर प्राणान्त कर देता है।

2.6 विष के नाना वीर्य होने के कारण (Reason for Multi-Rasa Nature of Visha)

आचार्य सुश्रुत ने कल्पस्थान के 3रे अध्याय में विष के नाना वीर्य होने के कारणों का निम्न शब्दों में उल्लेख किया है –

यथाऽव्यक्तरसं तोयमन्तरीक्षान्महीगतम्।
तेषु तेषु प्रदेशेषु रसं तं तं नियच्छति।।
एवमेव विषं यद्यद्द्रव्यं व्याप्यावतिष्ठते।
स्वभावादेव तं तस्य रसं समनुवर्तते।। (सु.क.3/23-24)

जिस प्रकार अव्यक्त रसवाला जल आकाश से जिन-जिन प्रदेशों में बरसता है, उन-उन प्रदेशों का रस ग्रहण कर उसी स्वभाव वाला हो जाता है; उसी प्रकार विष भी जिन-जिन द्रव्यों का आश्रय लेता है, स्वभावतः वह उसी द्रव्य के रस वाला हो जाता है।

2.7 विष योनि (Abode of/ form-of-existence of Poisons)

विष की दो योनियाँ (abode/ form-of-existence) मानी गई हैं –

1. स्थावर (vegetable origin)
2. जंगम (animal origin)।

Scanned with CamScanner

विष की प्रागुत्पत्ति के सन्दर्भ में आचार्य चरक ने कहा है –

जंगमस्थावरायां तद्योनौ ब्रह्मा न्ययोजयत्।

(च.चि. 23/6)

अर्थात् ब्रह्मा ने उसे (विष को) स्थावर और जंगम दोनों योनियों में स्थापित कर दिया।

2.8 विष अधिष्ठान (Site of Poisons)

अधिष्ठान (site) का अर्थ है – योनियों के वे अंग या अंश जिनमें रहकर या जिनके माध्यम से विष व्यक्त होता है।

2.8.1 स्थावर विष के अधिष्ठान (Site of Vegetable Poisons)

आयुर्वेद में स्थावर विष के दस अधिष्ठान माने गये हैं।

- संख्या – 10
- अधिष्ठान –

आचार्य सुश्रुत मतेन

मूलं पत्रं फलं पुष्पं त्वक् क्षीरं सार एव च।
निर्यासो धातवश्चैव कन्दश्च दशमः स्मृतः।।

(सु.क. 2/3)

1. मूल (root)
2. पत्र (leaves)
3. फल (fruit)
4. पुष्प (flower)
5. त्वक् (bark)
6. क्षीर (sap)
7. सार (heart-wood)
8. निर्यास (extract)
9. धातु (minerals)
10. कन्द (bulb)

– ये दस स्थावर विष के अधिष्ठान हैं।

तालिका – आचार्य सुश्रुत द्वारा वर्णित स्थावर विष

क्र.	विषाधिष्ठान	विष संख्या	नाम
1	**मूलविष**	8	1. क्लीतक, 2. कनेर, 3. गुञ्जा, 4. सुगन्ध, 5. गर्गरक, 6. करघाट, 7. विद्युत्शिखा, 8. विजयानी
2	**पत्रविष**	5	1. विषपत्रिका, 2. लम्बा, 3. करम्भ, 4. महाकरम्भ, 5. वरदारु
3	**फलविष**	12	1. कुमुद्वती, 2. वेणुका, 3. करम्भ, 4. महाकरम्भ, 5. कर्कोटक, 6. रेणुक, 7. खद्योतक, 8. चर्मरी, 9. इभगन्धा, 10. सर्पघाती, 11. नन्दन, 12. सारपाक
4	**पुष्पविष**	5	1. वेत्र, 2. कादम्ब, 3. वल्लीज, 4. करम्भ, 5. महाकरम्भ
5-6-7	**त्वक्विष, सारविष, निर्यासविष**	7	1. अन्त्रपाचक, 2. कर्तरीय, 3. सौरीयक, 4. करघाट, 5. करम्भ, 6. नन्दन, 7. नाराचक
8	**क्षीरविष**	3	1. कुमुदघ्नी, 2. स्नुही, 3. जालक्षीरी
9	**धातुविष**	2	1. फेनाश्म, 2. हरताल
10	**कन्दविष**	13	1. कालकूट, 2. वत्सनाभ, 3. सर्षप, 4. पालक, 5. कर्दमक, 6. वैराटक, 7. मुस्तक, 8. शृंगीविष, 9. प्रपुण्डरीक, 10. मूलक, 11. हालाहल, 12. महाविष, 13. कर्कटक
	कुल	**55**	

Scanned with CamScanner

यथा -

तत्र, क्लीतकाश्वमारगुञ्जासुगन्धगर्गरककरघाट-विद्युच्छिखाविजयानीत्यष्टौ मूलविषाणि; विषपत्रिकाल-म्बावरदारुकरम्भमहाकरम्भाणि पञ्च पत्रविषाणि; कुमुद्वतीवेणुकाकरम्भमहाकरम्भककर्कोटकरेणुकखद्योत कचर्मरीभगन्धासर्पघातिनन्दनसारपाकानीति द्वादश-फलविषाणि; वेत्रकादम्बवल्लीजकरम्भमहाकरम्भाणि-पञ्च पुष्पविषाणि; अन्त्रपाचककर्तरीयसौरीयककरघा-करम्भनन्दननाराचकानि सप्त त्वक्सारनिर्यासविषाणि; कुमुदघ्नीस्नुहीजालक्षीरीणि त्रीणि क्षीर (सु.क. 2/5)

कन्दविषों के अवान्तर भेद

चत्वारि वत्सनाभानि मुस्तके द्वे प्रकीर्तिते।
षट् चैव सर्षपाण्याहुः शेषाण्येकैकमेव तु।।

(सु.क. 2/6)

कन्दविषों में वत्सनाभ के चार, मुस्तक के दो और सर्षपक के छः अवान्तर भेद होते हैं। शेष कन्दविष एक-एक प्रकार के हैं।

आचार्य चरक मतेन

मुस्तकं पौष्करं क्रौञ्चं वत्सनाभं बलाहकम्।
कर्कटं कालकूटं च करवीरसंज्ञकम्।।

पालकेन्द्रायुधं तैलं मेचकं कुशपुष्पकम्।
रोहिषं पुण्डरीकं च लांगल्यक्यञ्जनाभकम्।।

संकोचं मर्कटं शृंगीविषं हालाहलं तथा।
एवमादीनि चान्यानि मूलजानि स्थिराणि च।।

(च.चि. 23/11-13)

1. मुस्तक	2. पौष्कर	3. क्रौञ्च
4. वत्सनाभ	5. बलाहक	6. कर्कट
7. कालकूट	8. करवीर	9. पालक
10. इन्द्रायुध	11. तैल	12. मेचक
13. कुशपुष्पक	14. रोहिष	15. पुण्डरीक
16. लांगली (कलिहारी)	17. अञ्जनाभ	18. संकोच
19. मर्कट	20. शृंगीविष (सींगिया)	21. हालाहल

तथा इसी तरह के अन्य विष जो मूल में विषयुक्त होते हैं, उन्हें स्थावर विष कहा जाता है।

2.8.2 जंगम विष के अधिष्ठान (Site of Animal Poisons)

आयुर्वेद में जंगम विष के सोलह अधिष्ठान माने गये हैं।

- संख्या - 16
- अधिष्ठान -

आचार्य सुश्रुत मतेन

जंगमस्य विषस्योक्तान्यधिष्ठानानि षोडश।
समासेन मया यानि विस्तरस्तेषु वक्ष्यते।।

तत्र, दृष्टिनिःश्वासदंष्ट्रानखमूत्रपुरीषशुक्रलालार्तव-मुखसन्दंशविशर्धिततुण्डास्थिपित्तशूकशवानीति।।

सु.क 3/3-4

1. दृष्टि (sight)	2. निःश्वास (breath)
3. दंष्ट्रा (fangs)	4. नख (nails)
5. मूत्र (urine)	6. पुरीष (feces)
7. शुक्र (semen)	8. लालास्राव (saliva)
9. आर्तव (menstrual blood)	10. मुख संदंश (mouth-bite)
11. विशर्धित (गुदा) (flatus)	12. तुण्ड (beak)
13. अस्थि (bone)	14. पित्त (bile)
15. शूक (bristles)	16. शव (cadaver)

तालिका - आचार्य सुश्रुत द्वारा वर्णित जंगमविष

क्र.	विषाधिष्ठान	नाम
1.	दृष्टि एवं निःश्वास	1. दिव्य सर्प (दिवि भवा: दिव्या:)
2.	दंष्ट्रा	1. भौम सर्प (भूमौ भवा भौमा:)
3	दंष्ट्रा एवं नख	1. मार्जार, 2. श्व, 3. वानर, 4. मकर, 5. मण्डूक, 6. पाकमत्स्य, 7. गोधा, 8. शम्बूक, 9. प्रचलाक, 10. गृहगोधिका, 11. चतुष्पाद, 12. कीटा तथा इसी तरह के अन्य कीट
4.	मल एवं मूत्र	1. चिपिट, 2. पिच्चिटक, 3. कषायवासिक, 4. सर्षपक, 5. तोटक, 6. वर्चकीट, 7. कौण्डिन्यक

Scanned with CamScanner

क्र.	विषाधिष्ठान	नाम
5.	शुक्र	1. मूषिक
6.	लाला, मूत्र, पुरीष, मुखसन्दंश,नख, शुक्र एवं आर्तव	1. लूता
7	आर	1. वृश्चिक, 2. विश्वम्भर, 3. वरटी, 4. राजीवमत्स्य, 5. उच्चिटिंग, 6. समुद्रवृश्चिक
8.	मुखसन्दंश, विशर्धित, मूत्र एवं पुरीष	1. चित्रशिर, 2. सराव, 3. कुर्दिशत, 4. दारुकारि, 5. मेदक, 6. सारिकामुख
9.	मुखसन्दंश	1. मक्षिका, 2. कणभ, 3. जलौका
10.	अस्थि	1. विषहतास्थि, 2. सर्प कण्टक, 3. वरटी, 4. मत्स्यास्थि
11.	पित्त	1. शकुलीमत्स्य, 2. रक्तराजि, 3. वरकी(टी), 4. मत्स्य
12.	शूक एवं तुण्ड	1. सूक्ष्मतुण्ड, 2. उच्चिटिंग, 3. वरटी, 4. शतपदी, 5. शूक, 6. वलभिका, 7. शृंगि, 8. भ्रमर
13.	शव	1. कीट, 2. सर्प

जो कीट शेष रह गये हैं उनका समावेश 'मुखसन्दंश विषों' में किया जाता है। यथा -

तत्र, दृष्टिनिःश्वासविषा दिव्याः सर्पाः, भौमास्तु दंष्ट्राविषाः, मार्जारश्ववानरमकरमण्डूकपाकमत्स्य-गोधाशम्बूकप्रचलाक गृहगोधिकाचतुष्पादकीटास्तथा-ऽन्ये दंष्ट्रानखविषाः, चिपिटपिच्चिटककषायवासिकस-र्षपकतोटवर्चःकीटकौण्डिन्यकाः शकृन्मूत्रविषाः, मूषिकाः, शुक्रविषाः, लूता लालामूत्रपुरीषमुखसन्दंश-नखशुक्रार्तवविषाः, वृश्चिकविश्वम्भरवरटीराजीव-मत्स्योच्चिटिंगाः समुद्रवृश्चिकाश्चाल(र)विषाः, चित्रशिरःसरावकुर्दिशतदारुकारिमेदकसारिकामुखा मुखसन्दंशविशर्धितमूत्रपुरीषविषाः, मक्षिकाकण-भजलायुका मुखसन्दंशविषाः, विषहतास्थि सर्पकण्टकवरटीमत्स्यास्थि चेत्यस्थिविषाणि, शकुलीमत्स्यरक्तराजिवरकी(टी)मत्स्याश्च पित्तविषाः, सूक्ष्मतुण्डोच्चिटिंगवरटीशतपदीशूकवलभिकाशृंगि-भ्रमराः शूकतुण्डविषाः, कीटसर्पदेहा गतासवः शवविषाः; शेषास्त्वनुक्ता मुखसन्दंशविषेष्वेव गणयितव्याः।। (सु.क. 3/5)

आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन

आचार्य वृद्धवाग्भट ने भी जंगम विष के 16 अधिष्ठान माने हैं परन्तु किञ्चित् परिवर्तन के साथ -

जंगमस्यत्वाश्रयाः षोडशदृष्टिनिश्वासस्पर्शदंष्ट्रा मुखन खास्थिमूत्रपुरीषशुक्लार्तव लालाशूकपित्तशोणित-शवानि। तानि पुनः सर्पकीटकणभाद्याश्रितानि।

अ.सं.उ 40/11

1. दृष्टि (sight)
2. निश्वास (breath)
3. स्पर्श (touch)
4. दंष्ट्रा (fangs)
5. मुख (mouth)
6. नख (nails)
7. अस्थि (bone)
8. मूत्र (urine)
9. पुरीष (feces)
10. शुक्ल (semen)
11. आर्तव (menstrual blood)
12. लाला (saliva)
13. शूक (bristles)
14. पित्त (biles)
15. शोणित (blood)
16. शव (cadaver)।

आचार्य चरक मतेन

आचार्य चरक ने जंगम विष के अधिष्ठानों का उल्लेख न कर सोलह से अधिक जंगम प्राणियों का नामोल्लेख किया। यथा -

सर्पाः कीटोन्दुरा लूता वृश्चिका गृहगोधिकाः।
जलौकामत्स्यमण्डूकाः कणभाः सकृकण्टकाः।।

श्वसिंहव्याघ्रगोमायुतरक्षुनकुलादयः।
दंष्ट्रिणो ये विषं दंष्ट्रोत्थं जंगमं मतम्।।

(च.चि. 23/9-10)

Scanned with CamScanner

1. सर्प	2. कीट	3. उन्दुर
4. लूता	5. वृश्चिक	6. गृहगोधिका
7. जलौका	8. मत्स्य	9. मण्डूक
10. कणभा	11. कृकण्टक	12. श्वान
13. सिंह	14. व्याघ्र	15. गोमायु
16. तरक्षु	17. नकुल	

उपरोक्त सत्रह आदि दँतैले जीवों के दाँत से उत्पन्न विष को जंगम विष कहा जाता है।

तालिका - जंगम विष के अधिष्ठान

आचार्य सुश्रुत मतेन	आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन	आचार्य चरक मतेन
संख्या - 16	संख्या - 16	संख्या - 17+
1. दृष्टि (sight)	1. दृष्टि (sight)	1. सर्प
2. निःश्वास (breath)	2. निःश्वास (breath)	2. कीट
3. दंष्ट्रा (fangs)	3. दंष्ट्रा (fangs)	3. उन्दुर
4. नख (nails)	4. नख (nails)	4. लूता
5. मूत्र (urine)	5. मूत्र (urine)	5. वृश्चिक
6. पुरीष (feces)	6. पुरीष (feces)	6. गृहगोधिका
7. शुक्र (semen)	7. शुक्र (semen)	7. जलौका
8. लालास्राव (saliva)	8. लालास्राव (saliva)	8. मत्स्य
9. आर्तव (menstrual blood)	9. आर्तव (menstrual blood)	9. मण्डूक
10. मुख संदंश (mouth-bite)	10. मुख संदंश (mouth-bite)	10. कणभा
11. विशर्धित (गुदा (flatus)	11. स्पर्श (touch)	11. कृकण्टक
12. तुण्ड (beak)	12. तुण्ड (beak)	12. श्वान
13. अस्थि (bone)	13. अस्थि (bone)	13. सिंह
14. पित्त (bile)	14. पित्त (bile)	14. व्याघ्र
15. शूक (bristles)	15. शूक (bristles)	15. गोमायु
16. शव (cadaver)	16. शव (cadaver)	16. तरक्षु
		17. नकुल आदि

2.9 विष की गति (Movement of Poison)

जंगमं स्यादधोभागमूर्ध्वभागं तु मूलजम्। (च.चि. 23/17)

जंगम विष के शरीर के सम्पर्क में आने पर (साँप, बिच्छू आदि से डसे जाने पर) उसकी गति ऊपर की ओर होती है। मूलज या स्थावर विष को खा लेने पर या खिला दिये जाने पर उसकी गति नीचे की ओर होने लगती है।

Scanned with CamScanner

2.10 POISON

2.10.1 Definition

1. A substance which, on digestion, inhalation, absorption, application, injection or development within the body, in relatively small amounts, produces injury to the body by its chemical action. - Dorland: Pocket Medical Dictionary
2. Broadly speaking a poison may be defined as a substance of the nature of a drug which is administered in a way and in an amount in which it is likely to be administered, will produce deleterious effects of a serious nature. - Modi, J.P: Medical Jurisprudence and Toxicology
3. A poison is commonly defined as a substance which when administered, inhaled or swallowed is capable of acting deletirously on the body. - Parikh, C.K.: Textbook of Medical Jurisprudence and Toxicology

2.10.2 Classification of Poison

According to purpose of intention (Medico-legal classification) :

1. Suicidal
2. Homicidal
3. Cattle poisons
4. Stupefying
5. Food poisoning
6. Drug dependence
7. Abortifacients

Examples of each is given in the following table :

S. No.	Medico-legal classification	Examples
1.	Suicidal poisons	Opium, Arsenic, Potassium cyanide
2.	Homicidal poisons	Arsenic, Aconite, Opium, Strychnos, Mercury, Copper etc.
3.	Cattle poisons	Arsenic, Aconite, Strychnos, Oleander
4.	Stupefying agents	Dhattura, Bhanga, Chloral hydrate
5.	Food poisoning	—
6.	Drug dependence	—
7	Abortifacients	Ergot, Cotton root's bark, Chitraka,

According to Symptoms or Effect

1. Corrosives

a. Mineral acids - Sulphuric acid, Nitric acid etc.
b. Organic acids - Oxalic acid, Carbolic acid etc.
c. Vegetable acids - Hydrocyanic acid
d. Concentrated alkalis - Caustic soda, Potash etc.

Scanned with CamScanner

2. Irritants

a. Inorganic

i. Non-metallic - Phosphorus, chlorine etc.

ii. Metallic - Mercury, Tin, Copper etc

b. Organic

i. Vegetable poisons - Castor seed, Croton seed etc.

ii. Animal poisons - Snake, Venom, Spider etc.

c. Mechanic - hair, diamond dust etc

3. Neurotics

a. Cerebral

i. Somaniferous - opium etc

ii. Inebriant - Alcolhol etc

iii. Deliriant - Dhatura

b. Spinal - Nux vomica

c. Peripheral - conium, curare

4. Cardiac - Digitalis, Aconite etc.

5. Asphyxiants Co, Co_2, H_2S etc.

6. Others

a. Analgesics and anti-pyretics

b. Anti-histaminics

c. Tranquillisers

d. Anti-depressants

e. Stimulants - Amphetamines

f. Hallucinogens

• • •

Scanned with CamScanner

3

विष के गुण और कर्म
Characteristic and Action of Poison

विषय

- विष के गुण (Characteristics of Poison)
- दसों गुणों से युक्त विष सर्वाधिक घातक (Poisons with all the ten attributes is most fatal)
- विष के गुणों की ओज के गुणों से तुलना (Comparison of attributes of ojas and poison)
- विष के गुणों की कार्मुकता (Pharmacological action of qualities inherited in the poison)
- विष की सर्वदोष-प्रकोपता (All doshas-aggravating action of visha)
- विष की क्रिया (Action of poison)
- विष के वेग (Velocity/ Impetuosity of poison)
- पशु-पक्षियों में वेगों के सामान्य लक्षण (Symptoms of poison vegas among animals and birds)

3.1 विष के गुण (Characteristics of Poison)

आयुर्वेद में विष के दस गुण या विशेषताएँ (characteristics/qualities) बतलाई गई हैं।

आचार्य चरक मतेन

लघु रूक्षमाशु विशदं व्यवायि तीक्ष्णं विकासि सूक्ष्मं च।
उष्णमनिर्देश्यरसं दशगुणमुक्तं विषं तज्ज्ञैः।। (च.चि. 23/24)

विष के दश गुण हैं -

1. लघु (light)
2. रूक्ष (rough)
3. आशु (rapidly spreading)
4. विशद (non-slimy)
5. व्यवायी (quickly absorbing)
6. तीक्ष्ण (sharp)
7. विकासी (depressing)
8. सूक्ष्म (subtle)
9. उष्ण (hot)
10. अनिर्देश्य रस (जिसके रस को न बतलाया जा सके disguising taste)।

आचार्य सुश्रुत मतेन

रूक्षमुष्णं तथा तीक्ष्णं सूक्ष्ममाशुव्यवायि च।।
विकाशि विशदं चैव लघ्वपाकि च तत् स्मृतम्। (सु.क. 2/19)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार दश गुण हैं -

1. रूक्ष (rough)
2. उष्ण (hot)
3. तीक्ष्ण (sharp)
4. सूक्ष्म (subtle)
5. आशु (rapidly spreading)
6. व्यवायि (quickly absorbing)

Scanned with CamScanner

7. विकाशि (depressing)
9. लघु (light) तथा
8. विशद (non-slimy)
10. अपाकि (non-digesting)

आचार्य सुश्रुत ने 9 गुण तो वे ही माने हैं; मात्र अनिर्देश्य रस (disguising taste) के स्थान पर अपाकी (non-digesting) का पाठ किया है।

आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन

आचार्य वृद्ध वाग्भट ने अपनी गणना में अपाकी या अविपाकी और अनिर्देश्य रस इन दोनों को सम्मिलित कर लिया है।

आचार्य वाग्भट मतेन

तीक्ष्णोष्णरूक्षविशदं व्यवाय्याशुकरं लघु।।
विकाषि सूक्ष्ममव्यक्तरसं विषमपाकि च।

(अ.हृ.उ. 35/7-8)

आचार्य वाग्भट के अनुसार विष के निम्न गुण हैं –

1. तीक्ष्ण (sharp)
2. उष्ण (hot)
3. रूक्ष (rough)
4. विशद (non-slimy)
5. व्यवायी (quickly absorbing)
6. आशुकारी (rapidly spreading)
7. लघु (light)
8. विकाषि (विकासि) (depressing)
9. सूक्ष्म (subtle)
10. अव्यक्तरस (disguising taste) तथा
11. अपाकी (जठराग्नि से जैसे अन्य भुक्त पदार्थों का परिपाक हो जाता है, उस प्रकार इसका पाक नहीं होता – non-digesting) होता है।

आचार्य शार्गधर मतेन

आचार्य शार्गधर ने विष की परिभाषा ही गुणों के माध्यम से दी है–

व्यवायि च विकाशि स्यात्सूक्ष्मं छेदि मदावहम्।।
आग्नेयं जीवितहरं योगवाहि स्मृतं विषम्।

(शा.पू. 4/22-23)

अर्थात् जो द्रव्य 1. व्यवायी (quickly absorbing), 2. विकासी (depressing), 3. सूक्ष्म (subtle), 4. छेदी (penetrating), 5. मदकारी (intoxicating), 6. आग्नेय गुणवाला (hot), 7. प्राणनाशक (life-threating) और 8. योगवाही (adapting) हो, उसे विष कहते हैं।

इसलिए यह आवश्यक है कि विषय के मर्म तक पहुँचने के लिए इन गुणों का थोड़ा विस्तृत परिचय प्राप्त कर लिया जाये।

- **लघु (light)** – लघु उसे कहते हैं जो शरीर में जाकर लघुता उत्पन्न करे। ऐसे द्रव्य शरीर में जाकर शीघ्र पच जाते हैं और शरीर की क्रियाओं में तीव्रता लाते हैं।
- **रूक्ष (rough)** – जो द्रव्य शरीर में जाकर द्रव का शोषण करने वाले, रूक्षता उत्पन्न करने वाले, जड़ता, बलवर्ण का ह्रास, स्तम्भन और खरत्व पैदा करने वाले होते हैं, उन्हें रूक्ष कहते हैं।
- **आशु (rapidly spreading)** – जो द्रव्य शरीर में जाकर शीघ्रता से फैल जायें, उसे आशु या आशुकारी कहते हैं।
- **विशद (non-slimy)** – जो द्रव्य शरीर में जाकर दोष, धातु तथा मलों को शुचिता और विमलत्व प्रदान करें, उसे विशद कहते हैं।
- **व्यवायी (quickly absorbing)** – जो द्रव्य पहले बिना पके ही सारे शरीर में फैल जाते हैं और फिर पचते हैं, उन्हें व्यवायी कहते हैं।
- **तीक्ष्ण (sharp)** – जो द्रव्य शरीर में जाकर शीघ्रता से अपना काम करे; दाह, पाक, स्रावण और लेखन का कार्य करे, उन्हें तीक्ष्ण कहते हैं।
- **विकासी (depressing)** – जो द्रव्य समस्त शरीर में व्याप्त होकर रहने वाले ओज धातु को सुखाकर शरीर के रस से लेकर वीर्य पर्यन्त धातुओं से अलग करके सन्धिबन्धनों को ढीला करता है, उसे विकासी कहते हैं।
- **सूक्ष्म (subtle)** – जो द्रव्य शरीर के सूक्ष्म से सूक्ष्म छिद्रों में भी प्रवेश कर अपनी क्रिया तेजी से करता है, उसे सूक्ष्म कहते हैं।
- **उष्ण (hot)** – जो द्रव्य शरीर में जाकर उष्णता उत्पन्न करे; सारक, पाचक, तृषा, दाह एवं स्वेदजनक हो, उसे उष्ण कहते हैं।
- **अनिर्देश्य रस (disguising taste)** – जिसके रस को प्रायः न बतलाया जा सके।
- **अपाकी या अविपाकी (non-digesting)** – जो शरीर में जाकर न पचे।

गुणों की और भी अधिक विस्तृत जानकारी के लिए देखें – डॉ. अयोध्या प्रसाद 'अचल' द्वारा रचित 'आयुर्वेदीय पदार्थ विज्ञान' का गुण-कर्म प्रकरण।

Scanned with CamScanner

तालिका - विभिन्न आचार्यों के अनुसार विष के गुण

क्र.	आचार्य चरक मतेन	आचार्य सुश्रुत मतेन	आचार्य वाग्भट मतेन	आचार्य शार्गधर मतेन
1.	लघु (light)	लघु (light)	लघु (light)	-
2.	रूक्ष (rough)	रूक्ष (rough)	रूक्ष (rough)	-
3.	आशु (rapidly spreading)	आशु (rapidly spreading)	आशुकारी (rapidly spreading)	-
4.	विशद (non-slimy)	विशद (non-slimy)	विशद (non-slimy)	-
5.	व्यवायी (quickly absorbing)	व्यवायि (quickly absorbing)	व्यवायी (quickly absorbing)	व्यवायी (quickly absorbing)
6.	तीक्ष्ण (sharp)	तीक्ष्ण (sharp)	तीक्ष्ण (sharp)	-
7.	विकासी (depressing)	विकाशि (depressing)	विकाषि (विकासि) (depressing)	विकासी (depressing)
8.	सूक्ष्म (subtle)	सूक्ष्म (subtle)	सूक्ष्म (subtle)	सूक्ष्म (subtle)
9.	उष्ण (hot)	उष्ण (hot)	उष्ण (hot)	आग्नेय गुणवाला (hot)
10.	अनिर्देश्य रस (disguising taste)	-	अव्यक्तरस (disguising taste)	-
11.	-	अपाकि (non-digesting)	अपाकी (non-digesting)	-
12.	-	-	-	छेदी (penetrating)
13.	-	-	-	मदकारी (intoxicating)
14.	-	-	-	प्राणनाशक (life-threating)
15.	-	-	-	योगवाही (adapting)

3.2 दसों गुणों से युक्त विष सर्वाधिक घातक (Poisons with all the ten Attributes is Most Fatal)

आचार्य सुश्रुत ने दस गुणों से युक्त विष की मारकता का वर्णन करते हुए कहा है -

स्थावरं जंगमं यच्च कृत्रिमं चापि यद्विषम्।
सद्यो व्यापादयेत्तत्तु ज्ञेयं दशगुणान्वितम्।। (सु.क. 2/24)

स्थावर, जंगम तथा कृत्रिम सभी विषों में ये गुण पाये जाते हैं। जिस विष में ये गुण जितनी ही अधिक संख्या और जितनी ही अधिक मात्रा में पाये जाते हैं, वह उतना ही अधिक उग्र प्रभाव वाला और घातक होता है। जो विष शरीर में जाते ही प्राणों का हरण कर ले, उसे पूर्णरूपेण दसों गुणों से युक्त समझना चाहिए।

3.3 विष के गुणों की ओज के गुणों से तुलना (Comparison of Attributes of 'Ojas' and Poison)

3.3.1 ओज परिचय

ओज को आयुर्वेद में बल (strength), तेज (complexion), आन्तरिक शक्ति (immunity), सर्वधातुसार या जीवनी-शक्ति के रूप में ग्रहण किया गया है।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

तत्र रसादीनां शुक्रान्तानां धातूनां यत् परं तेजस्तत् खल्वोजस्तदेव बलमित्युच्यते, स्वशास्त्रसिद्धान्तात्।। (सु.सू. 15/20)

अर्थात् रस से लेकर शुक्र पर्यन्त जो धातुएँ हैं, उनके उत्कृष्ट सारभूत अंश (essence) को ओज कहते हैं; और उसे ही हम अपने शास्त्रों के सिद्धान्त के अनुसार बल भी कहते हैं।

Scanned with CamScanner

वास्तव में ओज और बल में अन्तर है। ओज कारण (cause) है और बल उसका कार्य (effect)। चिकित्साशास्त्र की दृष्टि से दोनों को भले ही एक कहा जा सकता है।

3.3.2 ओज का स्वरूप और उसके कार्य (Nature and Functions of Ojas)

ओज के स्वरूप और कार्यों पर प्रकाश डालते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है

ओजः सोमात्मकं स्निग्धं शुक्लं शीतं स्थिरं सरम्।
विविक्तं मृदु मृत्स्नं च प्राणायतनमुत्तमम्।।
देहः सावयवस्तेन व्याप्तो भवति देहिनः।
तदभावाच्च शीर्यन्ते शरीराणि शरीरिणाम्।।

(सु.सू. 15/22-23)

ओज सौम्य (soothing natured), स्निग्ध (unctuous), शीत (cold), श्वेत (whitish), शरीरस्थैर्यकारक (responsible for stability), प्रसरणशील (spreading), निर्मल (pure), कोमल (tender), पिच्छिल (slimy) और प्राणों का श्रेष्ठ आधार (best substratum of life) है। शरीर का एक-एक अवयव इस ओज से व्याप्त रहता है और इसके अभाव में प्राणियों के शरीर धीरे-धीरे नष्ट हो जाते हैं।

3.3.3 ओज के गुण (Attributes of ojas)

आचार्य चरक ने ओज के दस गुण बतलाए हैं -

गुरु शीतं मृदु श्लक्ष्णं बहलं मधुरं स्थिरम्।
प्रसन्नं पिच्छिलं स्निग्धमोजो दशगुणं स्मृतम्।।

(च.चि. 24/31)

ओज के निम्न दस गुण हैं

1. गुरु (heavy)	2. शीत (cold)
3. मृदु (soft)	4. श्लक्ष्ण (smooth)
5. बहल (dense)	6. मधुर (sweet)
7. स्थिर (stable)	8. प्रसन्न (clear)
9. पिच्छिल (slimy)	10. स्निग्ध (unctuous)

आगे की सारिणी में आप देखेंगे कि ओज में पाये जाने वाले ये गुण विष तथा मद्य में पाये जाने वाले गुणों के ठीक विपरीत हैं। मद्य में भी वे ही गुण पाये जाते हैं जो विष में होते हैं।

तालिका - विष, मद्य एवं ओज के गुणों की तुलना

क्र.	विष	मद्य	ओज
1.	लघु	लघु	गुरु
2.	रूक्ष	रूक्ष	स्निग्ध
3.	उष्ण	उष्ण	शीत
4.	तीक्ष्ण	तीक्ष्ण	मृदु
5.	सूक्ष्म	सूक्ष्म	बहल
6.	आशुकारी	आशुकारी	प्रसाद
7	व्यवायी	व्यवायी	स्थिर
8.	विकासी	विकासी	श्लक्ष्ण
9.	विशद	विशद	पिच्छिल
10.	अनिर्देश्य रस	अम्ल	मधुर

विष के शरीर में प्रवेश करने के बाद उसका एक-एक गुण ओज के अपने विपरीत गुण को नष्ट करना आरम्भ कर देता है; यथा - लघु गुरु को, रूक्ष स्निग्ध को तथा उष्ण शीत को आदि। जिस विष में जो गुण जितनी ही न्यूनाधिक मात्रा में पाये जाते हैं, वे अपने विपरीत गुणों को भी उसी अनुपात में न्यूनाधिक मात्रा में नष्ट करते हैं। तदनुरूप ही बलहानि होती है। ओज का विनाश ही रोगी में मृत्यु का कारण बनता है।

3.4 विष के गुणों की कार्मुकता (Pharmacological Action of Qualities Inherited in the Poison)

विष के शरीर में प्रविष्ट होने पर उसमें विद्यमान गुणों की शरीर पर क्या प्रतिक्रिया होती है अर्थात् कौन-कौन सा गुण किस-किस दोष, धातु आदि को प्रभावित करता है, इसका आचार्यों ने सूत्ररूप में निर्देश किया है; यथा

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

तद्रौक्ष्यात् कोपयेद्वायुमौष्ण्यात् पित्तं सशोणितम्।।
मतिं च मोहयेत्तैक्ष्ण्यान्मर्मबन्धान् छिनत्ति च।
शरीरावयवान् सौक्ष्म्यात् प्रविशेद्विकरोति च।।
आशुत्वादाशु तद्धन्ति व्यवायात् प्रकृतिं भजेत्।
क्षपयेच्च विकाशित्वाद्दोषान्धातून्मलानपि।।
वैशद्यादतिरिच्येत दुश्चिकित्स्यं च लाघवात्।
दुर्हरं चाविपाकित्वात्तस्मात् क्लेशयते चिरम्।।

(सु.क. 2/20-23)

Scanned with CamScanner

- **रूक्ष (rough) एवं उष्ण (hot) गुण** – विष रूक्ष होने से वायु को तथा उष्ण होने के कारण रक्त के साथ पित्त को प्रकुपित करता है।
- **तीक्ष्ण (sharp) गुण** – तीक्ष्णता से बुद्धि को मोहग्रस्त करता और मर्म-बन्धनों को काट देता है।
- **सूक्ष्म (subtle) गुण** – सूक्ष्म होने के फलस्वरूप शरीरावयवों में शीघ्रता से प्रवेश कर विकार उत्पन्न करता है।
- **आशुकारी (rapidly spreading) गुण** – आशुकारी होने से शरीर में तेजी से फैलकर प्राणों का हनन करता है।
- **व्यवायी (quickly absorbing) गुण** – व्यवायी होने से सम्पूर्ण शरीर में पाचन से पूर्व फैल जाता है।
- **विकासी (depressing) गुण** – विकासी होने के कारण दोष, धातु एवं मलों को नष्ट करता है।
- **विशद (non-slimy) गुण** – विशद होने के कारण कहीं भी रुकता-चिपकता नहीं।
- **लघु (light) गुण** – लघु होने के कारण दुश्चिकित्स्य होता है।
- **अविपाकी (non-digesting) गुण** – अविपाकी होने के कारण शरीर में बहुत दिनों तक बना रहकर कष्ट देता है। उसे आसानी से शरीर से निकाला नहीं जा सकता।

3.5 विष की सर्वदोष-प्रकोपता (All Doshas-Aggravating Action of Visha)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

विषे यस्माद्गुणाः सर्वे तीक्ष्णाः प्रायेण सन्ति हि।
विषं सर्वमतो ज्ञेयं सर्वदोषप्रकोपणम्।।
ते तु वृत्तिं प्रकुपिता जहति स्वां विषार्दिताः।
नोपयाति विषं पाकमतः प्राणान् रुणद्धिः च।।
श्लेष्मणाऽऽवृतमार्गत्वादुच्छ्वासोऽस्य निरुध्यते।
विसंज्ञः सति जीवेऽपि तस्मात्तिष्ठति मानवः।।

(सु.क 3/25-27)

यद्यपि विष में प्रायः सभी गुण तीक्ष्ण रूप में वर्तमान रहते हैं, इसलिए इसे सभी दोषों का प्रकोपक समझना चाहिए। ये वातादि दोष प्रकुपित होकर विष से पीड़ित होने के फलस्वरूप अपने स्वभाव को त्याग देते हैं। इसी कारण विष का पाचन नहीं होने पाता और वह प्राणों के लिए घातक सिद्ध होता है। कफ द्वारा मार्ग के अवरुद्ध हो जाने के कारण श्वास-प्रश्वास की क्रिया अवरुद्ध होने लगती है। मनुष्य जीवित रहते हुए भी संज्ञारहित होकर मृत के समान पड़ा रहता है।

3.6 विष की क्रिया (Action of Poison)

विष की प्रक्रिया का आचार्य वृद्धवाग्भट ने विस्तार से वर्णन प्रस्तुत किया है –

विषं हि देहं सम्प्राप्य प्राग्दूषयति शोणितम्।।
कफपित्तानिलांश्चानु समदोषं सहाशयान्।
ततो हृदयमास्थाय देहोच्छेदाय कल्पते।।

(अ.सं.उ. 40/17)

- विष शरीर में प्रवेश कर सर्वप्रथम रक्त को दूषित करता है।
- इसके बाद वात, पित्त और कफ – इन तीनों दोषों और सभी आशयों को एक साथ दूषित करता है।
- फिर हृदय में प्रवेश कर वहीं स्थित होकर मृत्यु का कारण बनता है।

आगे उन्होंने इस प्रक्रिया का और भी विस्तार से वर्णन करते हुए कहा है –

शरीरं दूषिते रक्ते सर्वं चिमिचिमायते।
कोठः समण्डलः स्वेदो रोमहर्षश्च जायते।।
क्षुद्रकीटा इवांगेषु विसर्पन्तीति मन्यते।
विनामयति गात्राणि जृम्भते शिशिरप्रियः।।
व्यापिनस्तस्य दुष्टस्य दुतस्य विषतेजसा।
वातादयो वशं यान्ति बलिनोप्यबला इव।।

(अ.सं.उ. 40/18-19)

- रक्त के दूषित होने से पूरे शरीर में चिमचिमाहट (चुनचुनाहट) होने लगती है।
- त्वचा में कोठ और चकत्ते उभर आते हैं।
- पसीना आने लगता है।
- रोमाञ्च होने लगता है।
- ऐसा लगता है जैसे सारे शरीर पर चींटे चल रहे हों।
- रोगी अंगों को तोड़ता – मरोड़ता, झुकाता और जम्भाई लेता है।
- रोगी शीत वस्तुओं की इच्छा करता है।
- बलवान् वातादि दोष भी विष के प्रभाव से दूषित और शीघ्रगामी होकर सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त इस रक्त के आधीन

Scanned with CamScanner

होकर उसी प्रकार असहाय एवं अक्षम हो जाते हैं, जिस प्रकार कोई निर्बल और असहाय व्यक्ति बलवान् के आधीन होने पर हो जाता है।

यूँ तो सभी विष त्रिदोष-प्रकोपक माने गये हैं, फिर भी जिस विष में जिस दोष के प्रकोपक गुण अधिक होते हैं, वह पहले उसी को प्रकुपित करता है। यथा –

विषं यद्दोषभूयिष्ठं तं दोषं प्राक् प्रपद्यते।
आशये यस्य यस्यैव ततस्तदवतिष्ठते।
तज्जान् विकारान् कुरुते यान् सर्वेषूपदेक्ष्यति।।

(अ.सं.उ. 40/21)

जिस विष में जिस दोष की प्रधानता रहती है, वह पहले उसी को दूषित करता है। इसी प्रकार जिस विष की जिस आशय से समानता होती है, वह शरीर में जाकर उसी आशय में अवस्थित होता है। और वह जिस दोष को पहले प्रकुपित करता है उसी की प्रधानता वाले और जिस आशय में अवस्थित हो जाता है, उसी से सम्बन्धित विकारों को उत्पन्न करता है।

वाताशयस्थं कुरुते ततो श्लेष्मामयानपि।
पित्तश्लेष्माशयगतं तद्वत् पित्तकफोद्भवान्।।

(अ.सं.उ. 40/22)

वाताशय में स्थित विष वातजन्य रोगों के साथ-साथ कफजन्य रोगों को भी, पित्ताशय में स्थित विष पित्तजन्य रोगों के साथ-साथ कफजन्य रोगों को भी और कफाशय में स्थित विष कफजन्य रोगों के साथ-साथ पित्तजन्य रोगों को भी उत्पन्न करता है।

तत्रापि चोत्तमांगस्थे सकोठं शूयते शिरः।
विशेषादक्षिकूटौष्ठनासास्यं हृष्टदन्तता।
तालुशोषो रुजा मूर्ध्नि वक्त्रे चिमिचिमायनम्।।
अर्थेषु चक्षुरादीनामप्रवृत्तिर्हनुग्रहः।
इत्यन्यत्रापि च विषं स्थितमंगेऽभिलक्षयेत्।।

(अ.सं.उ. 40/23-24)

- इसमें भी विष यदि शरीर के उत्तमांग में प्रवेश कर जाये तो सिर में कोठ हो जाते हैं।
- सिर सूज जाता है।
- अक्षिकोट, नासा, ओठ और मुख में विशेष रूप से सूजन आ जाती है।
- दाँतों में हर्ष (अत्यधिक खट्टा खा लेने के बाद की सी प्रतीति) हो जाता है।
- तालू सूखने लगता है, सिर में पीड़ा होने लगती है और मुख में चिमचिमाहट होने लगती है।
- इन्द्रियों की क्रियाकारिता समाप्त होने लगती है, जिससे वे अपने-अपने विषयों को ग्रहण करने में असमर्थ होने लगती हैं।

इसी प्रकार दूसरे अंगों में स्थित विष को तत्तत् अंगों में उत्पन्न लक्षणों से पहचानना चाहिए।

व्याप्यैवं सकलं देहमुपरुध्य च वाहिनीः।
विषं विषमिव क्षिप्रं प्राणानस्य निरस्यति।।

(अ.सं.उ. 40/25)

अन्ततोगत्वा विष सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त होकर शिरा, धमनी, स्रोतस् आदि सभी वाहिनियों – सभी मार्गों को अवरुद्ध कर प्राणों का अन्त कर देता है।

3.7 विष के वेग (Velocity/ Impetuosity of Poison)

3.7.1 वेग की परिभाषा (Definition of Vega)

आचार्य सुश्रुत ने वेग का विवरण प्रस्तुत करते हुए कहा है

धात्वन्तरेषु याः सप्त कलाः संपरिकीर्तिताः।
तास्वेकैकामतिक्रम्य वेगं प्रकुरुते विषम्।।

(सु.क. 4/40)

अर्थात् धात्वाशयान्तरमर्यादा की जो सात कलाएँ वर्णित की गयी हैं उनमें एक-एक का आश्रय लेकर विष के सात **'वेग'** होते हैं।

स्पष्टीकरण (Explanation) – रस, रक्त, मांस, मेद आदि सात धातुएँ हैं। इनमें से प्रत्येक धातु के बीच में एक-एक कला होती है। विष क्रम से इन धातुओं में प्रवेश करता है। एक धातु से दूसरी धातु में प्रविष्ट होने के क्रम में उसे इन धातुओं के मध्य कलाओं से होकर गुजरना पड़ता है। इसमें कुछ समय लगता है। जब-जब विष एक धातु से दूसरी धातु में प्रविष्ट होकर उसको दूषित करता है, तब-तब विष का एक वेग उठता है। बोलचाल की भाषा में इसे **'लहर'** कहते हैं। और विष जिस धातु या आशय में प्रविष्ट होकर उसे दूषित करता है, उसी से सम्बन्धित लक्षण प्रकट होने लगते हैं। रस से आरम्भ कर क्रमशः ओज तक पहुँचने में उसे सात कलाओं को पार करना पड़ता है। इसीलिए आचार्य सुश्रुत और वाग्भट द्वय ने विष के सात वेग माने हैं। अन्ततोगत्वा ओज के विनष्ट होने पर प्राणी की मृत्यु हो जाती है। आचार्य चरक ने मृत्यु को अन्तिम वेग का परिणाम मानकर वेगों की संख्या आठ मानी है।

अब स्थावर, जंगम, दूषी आदि जैसा विष शरीर में प्रवेश करता है, उसी के अनुरूप वेग के मन्द या साधारण अथवा तीव्र या उग्र लक्षण प्रकट होते हैं। आचार्यों ने स्थावर, जंगम आदि विषों का वर्णन करते समय उनके वेगों के लक्षणों का अलग-अलग निर्देश

Scanned with CamScanner

किया है। इस पुस्तक में भी वे यथास्थान सम्बन्धित प्रकरणों में देखे जा सकते हैं।

3.7.2 वेगान्तर (Vegantara)

वेगान्तर की परिभाषा देते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है

येनान्तरेण तु कलां कालकल्पं भिनत्ति हि।
समीरणेनोह्यमानं तत्तु वेगान्तरं स्मृतम्।। (सु.क. 4/41)

वायु से प्रेरित हुआ विष एक धातु से दूसरी धातु में प्रविष्ट होते समय धातुओं के मध्य स्थित कला को पार करने में जितना समय लगता है, उसे 'वेगान्तर' कहते हैं।

3.7.3 मानवेतर प्राणियों में वेगों के भेद (Vega of Pioson - Among other Living Creatures)

आचार्य चरक ने पशुओं में चार और पक्षियों में मात्र तीन विष-वेग ही माने हैं। इसका तात्पर्य यह हुआ कि मानवेतर प्राणियों में क्रमानुसार जीवनीशक्ति की कमी हो जाती है। विष के प्रभाव से मानव जहाँ आठवें वेग में, वहीं पशु चौथे और पक्षी तीसरे वेग में ही मर जाते हैं।

तालिका - विभिन्न आचार्यों के मतानुसार वेगों की संख्या

	आचार्य चरक मतेन	आचार्य सुश्रुत मतेन
मनुष्यों में	8	7
पशुओं में	4	4
पक्षियों में	3	3

3.7.4 मानव प्राणियों में वेगों के सामान्य लक्षण (Symptoms of Poison Vegas - Among Human Beings)

आचार्य चरक मतेन

आचार्य चरक ने वेगों के सामान्य लक्षणों का निरूपण करते हुए कहा है -

तृष्णामोहदन्तहर्षप्रसेकवमथुक्लमा भवन्त्याद्ये।
वेगे रसप्रदोषादसृक्प्रदोषाद्द्वितीये तु।।
वैवर्ण्यभ्रमवेपथुमूर्च्छाजृम्भांगचिमिचिमातमकाः।
दुष्टपिश्चितात्तृतीये मण्डलकण्डूश्वयथुकोठाः।।
वातादिजाश्चतुर्थे दाहच्छर्द्यंगशूलमूर्च्छाद्याः।
नीलादीनां तमसश्च दर्शनं पञ्चमे वेगे।।
षष्ठे हिक्का, भंगः स्कन्धस्य तु सप्तमेऽष्टमे मरणम्।
(च.चि. 23/18-21)

- **प्रथम वेग के लक्षण** - पहले वेग में रस धातु की विकृति से :
  1. तृष्णा (thirst)
  2. मोह (आंशिक संज्ञाहीनता) (stupor)
  3. दन्तहर्ष (increased sensitivity of teeth)
  4. प्रसेक (profuse salivation)
  5. वमन (vomiting)
  6. क्लम (सुस्ती) (fatigueness) आदि के लक्षण प्रकट होते हैं।
- **द्वितीय वेग के लक्षण** - दूसरे वेग में रक्त की विकृति हो जाने से :
  1. शरीर में विवर्णता (discoloration)
  2. भ्रम (vertigo)
  3. वेपथु (tremors)
  4. मूर्च्छा (fainting)
  5. जृम्भा (excessive yawning)
  6. सारे अंगों में चुनचुनाहट (generalized tingling sensation) तथा
  7. तमक श्वास (asthma) के लक्षण प्रकट होते हैं।
- **तृतीय वेग के लक्षण** - तीसरे वेग में मांस धातु की विकृति से :
  1. शरीर में मण्डल अर्थात् गोल-गोल चकत्ते उभर आना (urticaria),
  2. कण्डू (itching),
  3. श्वयथु (swelling),
  4. कोठ (skin rashes) आदि लक्षण प्रकट होते हैं।
- **चतुर्थ वेग के लक्षण** - चौथे वेग में वातादि दोषों के अधिक कुपित हो जाने के कारण :
  1. दाह (burning sensation),
  2. छर्दि (vomiting),
  3. अंगों में शूल (malaise),
  4. मूर्च्छा (fainting) आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं।
- **पञ्चम वेग के लक्षण** - पाँचवें वेग में दृष्टिमण्डलों के दूषित हो जाने से :
  1. कोई भी वस्तु नील वर्ण (bluish colored) की दीखती है तथा
  2. तमःप्रवेश (black-outs) होने लगता है।

Scanned with CamScanner

- **षष्ठ वेग के लक्षण** – छठे वेग में (मृत्युसूचक) हिक्का (hiccups) आना प्रारम्भ हो जाती हैं।
- **सप्तम वेग के लक्षण** – सातवें वेग में स्कन्धभंग (drooping shoulders) हो जाता है।
- **अष्टम वेग के लक्षण** – आठवें वेग में प्राणी की मृत्यु (death) हो जाती है।

आचार्य सुश्रुत मतेन

स्थावरस्योपयुक्तस्य वेगे तु प्रथमे नृणाम्।
श्यावा जिह्वा भवेत्स्तब्धा मूर्च्छा श्वासश्च जायते।।
द्वितीये वेपथुः सादो दाहः कण्ठरुजस्तथा।
विषमामाशयप्राप्तं कुरुते हृदि वेदनाम्।।
तालुशोषं तृतीये तु शूलं चामाशये भृशम्।
दुर्वर्णं हरिते शूने जायेते चास्य लोचने।।
पक्वामाशययोस्तोदो हिक्का कासोऽन्त्रकूजनम्।
चतुर्थे जायते वेगे शिरसश्चातिगौरवम्।।
कफप्रसेको वैवर्ण्यं पर्वभेदश्च पञ्चमे।
सर्वदोषप्रकोपश्च पक्वाधाने च वेदना।।
षष्ठे प्रज्ञाप्रणाशश्च भृशं चाप्यतिसार्यते।
स्कन्धपृष्ठकटीभंगः सन्निरोधश्च सप्तमे।।

(सु.क. 2/34-39)

- **प्रथम वेग के लक्षण** – मनुष्यों में स्थावर विष की विषाक्तावस्था के 'प्रथम वेग' में :
  1. जीभ श्याववर्ण (bluish discoloration) और जकड़ाहट (stiffiness) से युक्त हो जाती है तथा
  2. मूर्च्छा (fainting) एवं
  3. श्वास (dyspnea) होते हैं।
- **द्वितीय वेग के लक्षण** – इसमें :
  1. कम्प (tremors)
  2. अंगों में शैथिल्य (laxity)
  3. दाह (burning sensation)
  4. गले में पीड़ा (throat pain)
  5. आमाशय में पहुँचने पर विष से हृदयप्रदेश में वेदना (pain in cardiac region) होने लगती है।
- **तृतीय वेग के लक्षण** – विषाक्तावस्था के तृतीय वेग में:
  1. तालुशोष (dryness of palate)
  2. आमाशय में तीव्र शूल (severe abdominal pain) और
  3. नेत्रों में विवर्णता (discoloration), हरापन (greenish discoloration तथा शोथ (edema) हो जाती है।
- **चतुर्थ वेग के लक्षण** – इसमें पक्वाशय और आमाशय में पहुँचने पर विष से :
  1. सूचीवेधवत् वेदना (pricking pain)
  2. हिक्का (hiccup)
  3. कास (cough)
  4. आँतों में गुड़गुड़ाहट (borborgymi) और
  5. शिर में भारीपन (heaviness of head) हो जाते हैं।
- **पञ्चम वेग के लक्षण** – इस वेग में :
  1. कफ का स्राव (secretion of mucus),
  2. विवर्णता (pallor),
  3. सन्धिशूल (arthralgia),
  4. सर्वदोषप्रकोप और
  5. पक्वाशय में वेदना (lower abdominal pain) होते हैं।
- **षष्ठ वेग के लक्षण** – इसमें :
  1. बुद्धिविभ्रंश (stupor),
  2. तीव्र अतिसार (profuse diarrhea) में ये दो लक्षण होते हैं।
- **सप्तम वेग के लक्षण** – इस वेग में :
  1. कन्धे (shoulders), पीठ (back) और कमर (waist) का टूटना (pain) तथा
  2. श्वासावरोध (dyspnea) होते हैं।

आचार्य वाग्भट मतेन

स्थावरस्योपयुक्तस्य वेगे पूर्वे प्रजायते।
जिह्वायाः श्यावता स्तम्भो मूर्च्छा त्रासः क्लमो वमिः।।
द्वितीये वेपथुः स्वेदो दाहः कण्ठे च वेदना।
विषं चामाशयं प्राप्तं कुरुते हृदि वेदनाम्।।
तालुशोषस्तृतीये तु शूलं चामाशये भृशम्।
दुर्बले हरिते शूने जायेते चास्य लोचने।।
पक्वाशयगते तोदहिध्माकासान्त्रकूजनम्।
चतुर्थे जायते वेगे शिरसश्चातिगौरवम्।।
कफप्रसेको वैवर्ण्यं पर्वभेदश्च पञ्चमे।
सर्वदोषप्रकोपश्च पक्वाधाने च वेदना।।

Scanned with CamScanner

षष्ठे संज्ञाप्रणाशश्च सुभृशं चातिसार्यते।
स्कन्धपृष्ठकटीभंगो भवेन्मृत्युश्च सप्तमे।।

(अ.ह.उ. 35/11-16)

- **प्रथम वेग के लक्षण** - पहले वेग में :
  1. जीभ में कालापन (blackishness of tongue)
  2. स्तब्धता (जकड़न) (stiffness)
  3. बेहोशी (fainting)
  4. घबड़ाहट (anxiety)
  5. क्लम (confusion) तथा
  6. वमन (vomiting) आने लगती हैं।
- **द्वितीय वेग के लक्षण** -
  1. कॅपकपी (tremors) का होना
  2. पसीना (sweating)
  3. शरीर में जलन (burning sensation)
  4. गले में पीड़ा (throat pain) होना लक्षण होते हैं और
  5. जब विष आमाशय में पहुँच जाता है तब हृदय में पीड़ा (pain in cardiac region) होती है।
- **तृतीय वेग के लक्षण** -
  1. तालु सूखने लगता है (dryness of palate) जिसके कारण रोगी को प्यास (thirst) लगती है
  2. आमाशय में असह्य शूल (severe abdominal pain) होता है
  3. ऑखें दुर्बल हो जाती हैं अर्थात् कम दिखाई देने लगता है (loss of visual acuity)
  4. नेत्रगोलक हरे दिखाई देते हैं (greenish discoloration of eyes) तथा
  5. ऑखों पर सूजन (orbital edema) हो जाती है।
  6. यदि विष का प्रभाव पक्वाशय पर पड़ गया हो तो :
     - सुई चुभने की-सी पीड़ा (pricking pain)
     - हिक्का (हिचकी) (hiccups)
     - कास (खॉसी (cough)) तथा
     - अंतड़ियों में गुड़गुड़ाहट (borborgymi) होने लगती हैं।
- **चतुर्थ वेग के लक्षण** - इसमें :
  1. शिर:प्रदेश में अत्यन्त भारीपन (heaviness of head region) का अनुभव होने लगता है।
- **पञ्चम वेग के लक्षण** -
  1. मुख से निरन्तर लार का चूना (profuse salivation),
  2. शरीर का विशेषकर मुखमण्डल का वर्ण विकृत हो जाता है (loss of complexion),
  3. पर्वों (जोड़-जोड़ों) में फटने की जैसी पीड़ा का होना (breaking pain in the joints),
  4. वात आदि तीनों दोषों का प्रकुपित होना तथा
  5. मलाशय में पीड़ा (colic) होना ये लक्षण होते हैं।
- **षष्ठ वेग के लक्षण** - इसमें :
  1. बेहोशी (fainting) तथा
  2. बार-बार अतिसार (दस्त) (diarrhea) होते हैं।
- **सप्तम वेग के लक्षण** - इसमें :
  1. कन्धे (shoulders), पीठ (back) और कटिप्रदेश (waist) टूट (severe pain/ dislocation) जाते हैं तथा
  2. रोगी मर (death) जाता है।

तालिका - बृहत्त्रयी के अनुसार मनुष्यों में पाये जाने वाले विष के वेगों के लक्षण

वेग	आचार्य चरक मतेन	आचार्य सुश्रुत मतेन	आचार्य वाग्भट मतेन
प्रथम वेग (रसरक्तयोरन्तरस्थां कलामतिक्रम्य रक्ते प्रथमवेग:। डल्हण)	रस धातु की विकृति से - • तृष्णा (thirst) • मोह (आंशिक संज्ञाहीनता (stupor) • दन्तहर्ष (increased sensitivity of teeth)	• जीभ श्यावर्ण (bluish discoloration) और जकड़ाहट (stiffiness) से युक्त • मूर्च्छा (fainting)	• जीभ में कालापन (blackishness of tongue) एवं स्तब्धता (stiffness) • बेहोशी (fainting) • घबड़ाहट (anxiety)

Scanned with CamScanner

वेग	आचार्य चरक मतेन	आचार्य सुश्रुत मतेन	आचार्य वाग्भट मतेन
	• प्रसेक (profuse salivation) • वमन (vomiting) • क्लम (सुस्ती) (fatigueness) आदि	• श्वास (dyspnea)	• क्लम (confusion) • वमन (vomiting)
द्वितीय वेग (रक्तमांसयोरन्तरस्थां कलामति-क्रम्य द्वितीयः। डल्हण)	रक्त की विकृति से – • शरीर में विवर्णता (discoloration) • भ्रम (vertigo) • वेपथु (tremors) • मूर्च्छा (fainting) • जृम्भा (excessive yawning) • सारे अंगों में चुनचुनाहट (generalized tingling sensation) • तमक श्वास (asthma)	• कम्प (tremors) • अंगों में शैथिल्य (laxity) • दाह (burning sensation) • गले में पीड़ा (throat pain) • आमाशय में पहुँचने पर विष से हृदयप्रदेश में वेदना (pain in cardiac region) होना	• कँपकपी (tremors) • पसीना (sweating) • शरीर में जलन (burning sensation) • गले में पीड़ा (throat pain) • आमाशयप्राप्त विष में हृदय में पीड़ा (pain in cardiac region)
तृतीय वेग (मांसमेदसोरन्तरस्थां कलामतिक्रम्य तृतीयः। डल्हण)	मांस धातु की विकृति से – • शरीर में मण्डल उभर आना (urticaria) • कण्डू (itching) • श्वयथु (swelling) • कोठ (skin rashes) आदि	• तालुशोष (dryness of palate) • आमाशय में तीव्र शूल (severe abdominal pain) • नेत्रों में विवर्णता (discoloration) • हरापन (greenish discoloration) • शोथ (edema)	• तालु सूखना (dryness of palate) • प्यास (thirst) • आमाशय में असह्य शूल (severe abdominal pain) • आँखें दुर्बल होना (loss of visual acuity) • नेत्रगोलक हरे रंग के दिखाई देना (greenish discoloration of eyes) • आँखों पर सूजन (orbital edema) • पक्वाशय प्राप्त विष में सुई चुभने की-सी पीड़ा (pricking pain) • हिक्का (हिचकी) (hiccups) • कास (खाँसी) (cough) • अंतड़ियों में गुड़गुड़ाहट (borborgymi)

Scanned with CamScanner

वेग	आचार्य चरक मतेन	आचार्य सुश्रुत मतेन	आचार्य वाग्भट मतेन
चतुर्थ वेग (मेद:कफयोरन्त-रस्थां कलामति-क्रम्य चतुर्थ:। डल्हण)	वातादि दोषों के अधिक कुपित हो जाने से – • दाह (burning sensation) • छर्दि (vomiting) • अंगों में शूल (malaise) • मूर्च्छा (fainting) आदि	• पक्वाशय और आमाशय में पहुँचने पर विष से सूचीवेधवत् वेदना (pricking pain) • हिक्का (hiccup) • कास (cough) • आँतों में गुड़गुड़ाहट (borborgymi) • शिर में भारीपन (heaviness of head)	• शिर:प्रदेश में अत्यन्त भारीपन (heaviness of head region) का अनुभव
पञ्चम वेग (कफपुरीषयोरन्त-रस्थां कलामतिक्रम्य पञ्चम:। डल्हण)	दृष्टिमण्डलों के दूषित हो जाने से – • कोई भी वस्तु नील वर्ण (bluish colored) की दिखाई देना • तम:प्रवेश (black-outs)	• कफ का स्राव (secretion of mucus) • विवर्णता (pallor) • सन्धिशूल (arthralgia • सर्वदोषप्रकोप • पक्वाशय में वेदना (lower abdominal pain)	• मुख से निरन्तर लार का चूना (profuse salivation) • शरीर का विशेषकर मुखमण्डल का वर्ण विकृत हो जाना (loss of complexion) • पर्वों में फटने की जैसी पीड़ा का होना (breaking pain in the joints) • वात आदि तीनों दोषों का प्रकुपित होना • मलाशय में पीड़ा (colic) होना
षष्ठ वेग (पुरीषपित्तयोरन्त-रस्थां कलामतिक्रम्य षष्ठ:। डल्हण)	हिक्का (hiccups)	• बुद्धिविभ्रंश (stupor) • तीव्र अतिसार (profuse diarrhea) • कन्धे (shoulders), पीठ (back) और कमर (waist) का टूटना (pain) • श्वासावरोध (dyspnea)	• बेहोशी (fainting) • बार-बार अतिसार (दस्त) (diarrhea) • कन्धे (shoulders), पीठ (back) और कटिप्रदेश (waist) का टूटना (severe pain/ dislocation • मृत्यु (death)
सप्तम वेग (पित्तशुक्रयोरन्त-रस्थां कलामति-क्रम्य सप्तम इति। डल्हण)	स्कन्धभंग (drooping shoulders)		
अष्टम वेग	मरण (death)		

Scanned with CamScanner

3.8 पशु-पक्षियों में वेगों के सामान्य लक्षण (Symptoms of Poison Vegas Among Animals and Birds)

3.8.1 पशुओं में वेग के लक्षण (Symptoms of poison vegas among animals)

आचार्य चरक मतेन

सीदत्याद्ये भ्रमति च, चतुष्पदो वेपते, ततः शून्यः।
मन्दाहारो म्रियते श्वासेन हि चतुर्थवेगे तु।।

(च.चि. 23/22)

- **प्रथम वेग के लक्षण** – पशुओं में प्रथम वेग में
  1. शरीर में पीड़ा (malaise) होती है और
  2. चक्कर (vertigo) आने लगते हैं।
- **द्वितीय वेग के लक्षण** – दूसरे वेग में रोगी
  1. कॉपने (tremors) लगता है।
- **तृतीय वेग के लक्षण** – तीसरे वेग में
  1. निष्क्रियता (loss of movements) और
  2. भोजन के प्रति उदासीन (anorexia) हो जाता है।
- **चतुर्थ वेग के लक्षण** – चौथे वेग में
  1. श्वास की गति में वृद्धि (dyspnea) होकर मृत्यु (death) हो जाती है।

3.8.2 पक्षियों में वेग के लक्षण (Symptoms of poison vegas among birds)

आचार्य चरक मतेन

ध्यायति विहगः प्रथमे वेगे, प्रभ्राम्यति द्वितीये तु।
स्रस्तांगश्च तृतीये विषवेगे याति पञ्चत्वम्।।

(च.चि. 23/23)

- **प्रथम वेग के लक्षण** – पक्षी प्रथम वेग में उद्विग्न (restless) हो जाता है।
- **द्वितीय वेग के लक्षण** – दूसरे में पक्षी चक्कर (incoherent motion) लगाने लगता है।
- **तृतीय वेग के लक्षण** – तीसरे वेग में पक्षी के समस्त अंग-प्रत्यंग ढीले पड़ जाते हैं (laxity of body-parts) और वह पञ्चत्व (death) को प्राप्त हो जाता है।

तालिका – मानवेतर प्राणियों में वेगों के लक्षण

वेग	पशुओं में वेग के लक्षण	पक्षियों में वेग के लक्षण
प्रथम वेग	• शरीर में पीड़ा • भ्रम	• उद्विग्नता
द्वितीय वेग	• वेपन अर्थात् कम्पन	• भ्रम
तृतीय वेग	• निष्क्रियता • मन्दाहार अर्थात् अल्प भोजन करना	• सभी अंगों का स्रस्त होना • पञ्चत्व अर्थात् मृत्यु
चतुर्थ वेग	• श्वासवृद्धि • मृत्यु	

• • •

Scanned with CamScanner

4 विष का अवचारण
Administration of Poison

विषय

- विषदाता के लक्षण (Characteristic behavior of the person administering poison)
- विष के अवचारण के माध्यम या साधन (Means of administration of poison)
- Routes of administration of poison
- विष कन्या (Poisonous girl)
- Accumulation of poison in the body
- Channels for elimination of poison
- Actions of poison
- Factors modifying the action of poisons
- Quantity of poisons
- State or form of poison
- Methods of administration
- Physical condition
- विष संकट (Emergency in poisoning)
- विष-पीत लक्षण (Features of visha-pita)
- शंका विष (Doubt of being poisoned)
- विष-वृद्धि के कारण (Factors enhancing the effect of poisons)
- विष की असाध्यता (Incurable feature of poisons)
- विषमुक्त के लक्षण (Signs of visha-mukta)

4.1 विषदाता के लक्षण (Characteristic Behavior of the person Administering Poison)

किसी भी प्राणी को शारीरिक या मानसिक रूप से क्षति पहुँचाने या उसकी हत्या करने के प्रयोजन से उसे विष देना एक जघन्य कुकृत्य है। आवेश में आकर या किसी के बहकावे में आकर स्वार्थवश मनुष्य ऐसा करने पर न केवल आत्मग्लानि और अपराध-भावना से भर जाता है, प्रत्युत जिस क्षण से भी वह ऐसा कार्य करने की सोचता या करता है उसी क्षण से पकड़े जाने की आशंका और भय से त्रस्त रहने लगता है। उसके व्यवहार में स्पष्ट परिवर्तन लक्षित होने लगते हैं।

आचार्य सुश्रुत ने ऐसे प्राणी का जितना सुन्दर चित्र उपस्थित किया है, उतना तत्कालीन साहित्य में निश्चय ही अन्यत्र दुर्लभ होगा। स्वयं उन्हीं के शब्दों में देखिए –

इंगितज्ञो मनुष्याणां वाक्चेष्टामुखवैकृतैः।।
विद्याद्विषस्य दातारमेभिर्लिंगैश्च बुद्धिमान्।
न ददात्युत्तरं पृष्टो विवक्षन् मोहमेति च।।
अपार्थं बहु संकीर्णं भाषते चापि मूढवत्।
स्फोटयत्यंगुलीर्भूमिमकस्माद्विलिखेद्धसेत्।।
वेपथुर्जायते तस्य त्रस्तश्चान्योऽन्यमीक्षते।
क्षामो विवर्णवक्त्रश्च नखैः किञ्चिच्छिनत्त्यपि।।
आलभेतासकृद्दीनः करेण च शिरोरुहान्।
निर्यियासुरपद्वारैर्वीक्षते च पुनः पुनः।।
वर्तते विपरीतं तु विषदाता विचेतनः। (सु.क. 1/18-23)

- मनुष्यों के संकेतों को समझने वाला चतुर एवं बुद्धिमान् मनुष्य वाणी, चेष्टा और मुख की भाव-भंगिमा को देखकर विषदाता को आसानी से पहचान सकता है।
- विष देनेवाला मनुष्य पूछने पर उत्तर नहीं देता।
- बोलने की चेष्टा एवं इच्छा करता हुआ घबड़ा जाता है।

Scanned with CamScanner

- व्यर्थ की निरर्थक बातें करता है।
- मूर्खों की भाँति बोलता है।
- अँगुलियाँ चटखाता है।
- नखों और तिनकों से भूमि को कूरेदता है।
- अकारण हँसता है।
- रह-रहकर काँपने लगता है।
- भयभीत-सा इधर-उधर ताकता है।
- मुँह सूखता है।
- चेहरा म्लान हो जाता है।
- नखों से कुछ तोड़ता है।
- अकारण बालों का स्पर्श करता रहता है।
- मुद्रा में स्थिरता नही रहती।
- न जाने योग्य या अनजाने मार्गों से जाने का प्रयास करता है।
- जाते समय पीछे मुड़-मुड़ कर देखता जाता है।
- पैर लड़खड़ाते हैं।
- चेष्टाओं में विपरीतता लक्षित होती है।
- अपने होशो-हवास खो देता है।
- अज्ञानी तथा मूढ़ के समान आचरण करने लगता है।

विशेष (Important) - कभी-कभी मानसिक रोगियों, विशेष रूप से चिन्ता, मनोस्नायु - विकृति (anxiety neurosis) से ग्रस्त रोगियों में भी इसी प्रकार की घबड़ाहट या अधीरता (nervousness) के लक्षण पाये जाते हैं। कहीं भ्रमवश किसी मानसिक रोगी या दुर्बल मन वाले मनुष्य के विषदाता समझकर उसे अकारण दण्डित न किया जाये, इसीलिए इस मामले में आचार्य सुश्रुत ने पूरी सतर्कता बरतने का आदेश दिया है। इस सम्बन्ध में खूब सोच-समझ कर ही निर्णय लेना चाहिए। स्वयं उन्हीं के शब्दों में -

केचिद्भयात् पार्थिवस्य त्वरिता वा तदाज्ञया।।
असतामपि सन्तोऽपि चेष्टां कुर्वन्ति मानवाः।
तस्मात् परीक्षणं कार्यं भृत्यानामदृतैर्नृपैः।।

(सु.क. 1/23-24)

कभी-कभी राजा या स्वामी के भय से, शीघ्रता के कारण या राजा की आज्ञा से घबड़ाकर सज्जन एवं निरपराध मनुष्य भी अपराधी या असाधु पुरुष की भाँति आचरण करने लगते हैं। इसलिए विषदाता की आशंका होने पर इनकी परीक्षा समुचित आदर और सावधानी के साथ करनी चाहिए।

आचार्य चरक मतेन

अत्यर्थशंकितः स्यादबहुवागथवाऽल्पवाग्विगतलक्ष्मी।
प्राप्तः प्रकृतिविकारं विषप्रदाता नरो ज्ञेयः।।

(च.चि. 23/107)

- विष देने वाला व्यक्ति बहुत घबराया-सा शंकित रहता है या तो वह बहुत बढ़-चढ़कर बातें करता है या चुप रहता है।
- उसके चेहरे पर उदासीनता छा जाती है और
- उसके स्वभाव में परिवर्तन दिखाई देता है।

आचार्य वाग्भट मतेन

विषदः श्यावशुष्कास्यो विलक्षो वीक्षते दिशः।।
स्वेदवेपथुमांस्त्रस्तो भीतः स्खलति जृम्भते।

(अ.हृ.सू. 7/12-13)

- विषदाता का मुख गोरा होने पर भी काली छाया युक्त चेहरा शुष्क हुआ-सा कान्तिहीन हो जाता है।
- वह लज्जित होकर इधर-उधर दूर तक दिशाओं की ओर देखता रहता है।
- उसके शरीर में पसीना तथा कम्पन होने लगता है।
- वह घबड़ा जाता है तथा डर जाता है।
- चलने में उसके पैर लड़खड़ाने लगते हैं और बार-बार जँभाइयाँ लेता रहता है।

4.2 विष के अवचारण के माध्यम या साधन (Means of Administration of Poison)

प्रायः दुर्भाग्यवश जब किसी पर विष का प्रयोग किया जाता है तो उसे ऐसी चीजों में मिलाकर दिया जाता है, जिससे ग्रहण करने वाले को आसानी से इसका पता न चलने पाये। सामान्यतया जिन चीजों में मिलाकर या जिनके माध्यम से विष दिया जाता है, उन पर प्रकाश डालते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है -

अन्ने पाने दन्तकाष्ठे तथाऽभ्यंगेऽवलेखने।
उत्सादने कषाये च परिषेकेऽनुलेपने।।
स्रक्षु वस्त्रेषु शय्यासु कवचाभरणेषु च।
पादुकापादपीठेषु पृष्ठेषु गजवाजिनाम्।।
विषजुष्टेषु चान्येषु नस्यधूमाञ्जनादिषु।
लक्षणानि प्रवक्ष्यामि चिकित्सामप्यनन्तरम्।।

(सु.क. 1/25-27)

भोज्य वस्तुओं, पेयों, दातुन (टूथ-ब्रश, मंजन), शरीर पर मलने-लगाये जाने वले उबटन-तेल (अन्य प्रसाधन सामग्री),

Scanned with CamScanner

अवलेखन (कंघी, झामा आदि), स्नान के लिए प्रयुक्त किये जाने वाले जल, कषाय (अन्य तरल औषधि - पेय), परिषेक (सींचने अथवा छिड़के जाने वाले सुगन्धित पदार्थ), चन्दन आदि लेप, माला, वस्त्र, शय्या, कवच, आभूषण, जूते, आसन, हाथी का हौदा, घोड़े की जीन या इनकी पीठ, नस्य, धूम (बीड़ी-सिगरेट आदि भी) अञ्जन आदि में विष मिश्रित कर उनका उपयोग किया जाता है।

इसे सूचीबद्ध कर निम्न रूप से व्यक्त कर सकते हैं -

1. अन्नपान (food articles)
2. दन्तकाष्ठ (brush)
3. अभ्यंग (massage)
4. अवलेखन (comb etc.)
5. उत्सादन (cosmetics)
6. कषाय (decoction)
7. परिषेक (sprinkling of water)
8. अनुलेपन (anointments)
9. माला (garlands)
10. वस्त्र (clothing)
11. शय्या (beds)
12. कवच (body protectors)
13. आभरण (jewelleries)
14. पादुका (footwears)
15. पादपीठ (seats)
16. गजादि प्राणियों का पृष्ठ (back of riding animals)
17. नस्य (nasal applications)
18. धूम (smokes)
19. अञ्जन (collyrium) आदि।

4.3 Routes of Administration of Poison

1. Enteral route
2. Parenteral route (this includes the bite of venomous creatures)
   a. Intra-venous
   b. Intra-muscular
   c. Intra-arterial
   d. Intra-peritoneal
   e. Sub-cutaneous etc.
3. Inhalation
4. Through natural orifices
5. Sublingual route
6. External application

4.4 विष कन्या (Visha Kanya - Poisonous Girl)

प्राचीन काल में इसी प्रकार शत्रुओं की हत्या कराने के लिए विष कन्याओं का भी प्रयोग किया जाता था। किंवदन्ती है कि इस काम के लिए रूपवती कन्याओं को चुनकर जन्म से ही उन्हें विष का पान कराया जाता था। अत्यल्प मात्रा से प्रारम्भ कर (यथा - पत्थर पर विष की एक छोटी रेखा मात्र खींच कर उसे मधु से चट्य देना) धीरे - धीरे उसकी मात्रा बढ़ाई जाती थी। इस प्रकार पली कन्याएँ बड़ी होकर इतनी जहरीली हो जाती थीं कि इनकी श्वास तथा उनका आलिंगन - चुंबन आदि भी घातक सिद्ध होते थे।

आचार्य वृद्ध वाग्भट ने विषकन्या के लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए कहा है

आजन्मविषसंयोगात् कन्या विषमयीकृता।।
स्पर्शोच्छ्वासादिभिर्हन्ति तस्यास्त्वेतत्परीक्षणम्।
तद्धस्तकेशसंस्पर्शान्म्लायते पुष्पपल्लवैः।।
शय्यायां मत्कुणैर्वस्त्रे यूकाभिः स्नानवारिणि।

अ.सं.सू 8/54-56

जन्मकाल से विष का संयोग कराकर कन्या को विषमयी बनाते हैं। ऐसी कन्या स्पर्श, उच्छ्वास आदि से ही मनुष्य को मार देती हैं। उसकी परीक्षा इस प्रकार है - उसके मस्तक या सिर के स्पर्श से ही पुष्प एवं कोमल पत्र कुम्हला जाते हैं। उसकी शय्या के खटमल मर जाते हैं। वस्त्रों की जुएँ मर जाती हैं। स्नान के जल से मक्खियाँ आदि मर जाती हैं।

मुद्राराक्षस में चाणक्य ने विषकन्या द्वारा ही पर्वतेश्वर की हत्या करायी है।

आचार्य प्रियव्रत शर्मा के अनुसार

'विषकन्या का क्या स्वरूप था यह स्पष्ट नहीं होता। ऐसा प्रतीत होता है कि किसी सुन्दरी कन्या के योनि प्रदेश, अधरों, स्तनों आदि पर विष का लेप कर देते थे, जिसके सम्पर्क से भोक्ता पुरुष के शरीर में विष का सञ्चार हो जाता था'। - आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास (संक्षिप्त संस्करण) पृष्ठ 368।

इनके अतिरिक्त अस्त्र-शस्त्रों के अग्रभाग को विष में बुझाकर या उन पर विष लगाकर शत्रुओं को मारने के लिए उनका उपयोग किया जाता था।

Scanned with CamScanner

4.5 Accumulation of Poison in the Body

- Poisons can get absorbed in various systems of the body and remain accumulated there for prolonged duration. Some are accumulated in their original form while others undergo chemical or biochemical changes before accumulation.
- Liver and kidneys are the main organs for accumulation of poisons. Some poisons are also accumulated in the skin, fat etc.

4.6 Channels for Elimination of Poison

When poison is administered in the body, the body itself tries to eliminate it through the following routes –

1. Through vomiting
2. Through purgation
3. Through urination
4. Through salivation
5. Through sweat etc.

Some poisons are eliminated in their original form and some undergo chemical or biochemical changes before getting eliminated.

4.7 Actions of Poison

The actions of poison is categorized into following four types -

1. Local action
2. Remote action
3. Local and remote action
4. General action

Local Action of Poison

On contact with the skin surface poison presents with certain local symptoms; these include

- Edema,
- Burning sensation,
- Ulceration,
- Discoloration etc.

E.g. smoke from burning marking nut causes edema at the site of contact, sulphuric acid burns the site, atropine causes dilatation of the pupils etc.

Remote Action of Poison

Ingested poison presents with remote action within the body; this is of two kinds -

1. Specific and
2. Non-specific.
   - Specific remote action - Certain poisons have effect on specific organs or systems of the body. E.g. aconite, digitalis affect the heart; opium and its alkaloids affect the nervous system; strychnine affects the spinal cord etc.
   - Non-specific remote action - Certain poisons affect remote organs of the body; e.g. corrosive poison. These poisons result in shock etc.

Local and Remote Action of Poison

Certain poisons have both local and remote actions. E.g. carbolic acid, oxalic acid, phosphorus etc.

General action of poison

Certain poisons, after being absorbed within the body tissues, simultaneously affect numerous systems of the body. E.g. mercury, arsenic, DDT etc.

4.8 Factors Modifying the Action of Poisons

Many external and internal factors modify the action of poison; these are -

1. Dose of poison
2. Form of poison
3. Method of administration
4. Physical condition of the patient
5. Mental condition
6. Physical environment.

4.9 Quantity of Poisons

Quantity or doses of poisons also play a vital role in manifestation of toxicity. Mild poisons, when ingested in large quantity, cause no significant damage to the body; whereas, strong poisons, even in minute dosage, can be fatal.

Certain poisons when taken in prescribed

Scanned with CamScanner

dosage act like medicines; the same when taken in minute dose have no major effect and may kill when taken in large dose.

There are certain factors that can alter the above said rules; these are -

1. Habit/ addiction
2. Allergy
3. Synergism
4. Differently affecting doses and
5. Cummulative poison.

- **Habit/ addiction -** Some individuals, due to prolonged use of certain poisonous ingredients, become habituated or addicted for the same. E.g. tobacco, alcohol, opium, cannabis etc. The toxic dosage of these ingredients in habituated/ addicted individuals is more than those not habituated/ addicted.
- **Allergy -** Allergy is a hyper-sensitivity reaction of individuals towards specific substances; e.g. Penicillin is an excellent drug for numerous infections but it is intolerable to many individuals and causes life-threatening reactions when administered.
- **Synergism -** Combination of two or more non-poisonous substances produces toxic reaction in certain individuals; this is known as 'Synergism'. E.g mixing of ghee and honey in equal quantity. At times, combination of two or more poisonous substances in non-toxic dosage causes toxicity; e.g. copper and dhattura or cannabis.
- **Differently affecting doses -** Blue vitriol, being emetic in nature, when taken in large quantity causes vomiting; this reduces its toxic effect. Arsenic, in small quantity, causes gastro-intestinal excitation; but in large quantity, causes severe toxicity and shock and resultant death.
- **Cummulative poison -** Toxins in smaller quantities, when ingested, are excreted through the urine, feces, sweat etc. But aconite, mercury, tin etc. accumulate in the body and get deposited in the organs; these toxins present with delayed toxicity.

4.10 State or form of Poison

Three states or forms of poison are -

1. Physical state,
2. Chemical combination and
3. Mechanical combination.

1. **Physical state -** Poisons in gaseous state are more fatal than those in liquid state which are more fatal than solids. At times, poisons in solid state (tablets, pills) are excreted through the rectal route in intact form. e.g. strychnos
2. **Chemical combination -** Chemical combination of two or more substances, at times, changes the dilution of them. Poisons in diluted form are more toxic than non-diluted form. Chemical combination of substances may be more or less effective; example of more effective are - copper arsenite + lead carbonate; example of less effective are - acids + alkalies.
3. **Mechanical combination -** If poisons are given with mechanical substances their toxicity is significantly altered. When alkaloids are given with animal charcoal, they become ineffective. Absorption of poison is slow on full stomach and when the diet is rich in fatty/oily substances.

4.11 Methods of Administration

Following are the routes or methods of administering poison in the body of an individual -

1. Inhalation
2. Intra-venous injection
3. Intra-muscular injection
4. Sub-cutaneous injection
5. Oral (ingestion) route
6. Contact through skin and cuts
7. Other anatomical routes (e.g. rectum, vagina, urethra etc.)

4.12 Physical Condition

Physical condition plays a vital role in ascertaining the effect of poison on the body. For this following factors should be considered -

Scanned with CamScanner

1. Age
2. Health
3. प्रकृति
4. Mental condition
5. Sleep and intoxication
6. Place and time.

1. **Age** - Medicinal dose of poisonous drugs for adult will not be tolerated by pediatrics patients. The best option for these pediatric patients is to avoid prescribing drugs with poisonous contents. The same rule applies for geriatric patients because they have poor strength etc.
2. **Health** - Effect of poison is reduced in healthy and fit individuals whereas it is fatal for diseased patients. Similarly, certain medical conditions also play a role in ascertaining the effect of poison on the individual. Patients with poor hepatic and renal functions will be more affected by poison than the healthy ones. Cardio-toxic poisons will have devastating effect on cardiac patients. On the other hand, some medical conditions downsize the effect of poison on the body. Patients of mania or delirium tremens can tolerate hypnotics and opiates in much higher dose than other patients.
3. **प्रकृति** - आयुर्वेद में प्रधानतया तीन प्रकार की प्रकृति मानी गई है - वातज, पित्तज और कफज। विष और पित्त दोनों ही आग्नेय गुण युक्त हैं, अतः पित्तज प्रकृतिवाले व्यक्ति में विष सर्वाधिक प्रभावी होता है। उसमें उसका वेग तीव्रतम होता है। उससे कम वातज और वातज से कम कफज प्रकृति में होता है। इतना ही नहीं शरीर में प्रविष्ट विष पित्तज प्रकृतिवाले व्यक्ति के पित्ताशय में अवस्थित होकर वातज प्रकृतिवाले व्यक्ति के वाताशय में और कफज प्रकृतिवाले व्यक्ति के कफाशय में अवस्थित होकर तदनुकूल भिन्न-भिन्न प्रकार के लक्षणों को उत्पन्न करता है।

आचार्य चरक ने विष के गुणों के प्रभाव का समावर्तन करते हुए इस सम्बन्ध में स्पष्ट कहा है

दोषस्थानप्रकृतीः प्राप्यान्यतमं ह्युदीरयति।

(च.चि. 23/27)

अर्थात् विष यद्यपि त्रिदोषप्रकोपक है फिर भी दोषों के स्थान और मनुष्य की प्रकृति के अनुसार ही इनका न्यूनाधिक प्रकोप देखा जाता है। आगे उन्होंने तीनों ही प्रकार की प्रकृतियों के अनुसार दोष-प्रकोप पर विस्तार से प्रकाश डाला है। पाठकों की जानकारी के लिए उसे यहाँ उद्धृत किया जा रहा है -

- **वात प्रकृतिवाले व्यक्तियों में दोष-प्रकोप का स्वरूप -**

आचार्य चरक के अनुसार

स्याद्वातिकस्य वातस्थाने कफपित्तलिंगमीषत्तु।
तृष्मोहारतिमूर्च्छागलग्रहच्छर्दिफेनादि।। (च.चि. 23/28)

वात प्रकृतिवाले व्यक्तियों के वातस्थान (पक्वाशय) में पहुँचकर विष कफ और पित्त के लक्षणों को तो कम किन्तु वात-प्रधान लक्षणों, यथा -

- तृष्णा (thirst)
- मोह (stupor)
- अरति (anxiety)
- मूर्च्छा (fainting)
- गलग्रह (chocking of throat)
- छर्दि (vomiting)
- मुख से फेनागम (frothy discharge from mouth) आदि को अधिक मात्रा में प्रकट करता है।

- **पित्त प्रकृतिवाले व्यक्तियों में दोष-प्रकोप का स्वरूप -**

आचार्य चरक के अनुसार

पित्ताशयस्थितं पैत्तिकस्य कफवातयोर्विषं तद्वत्।
तृट्कासज्वरवमथुक्लमदाहतमोतिसारादि।।

(च.चि. 23/29)

पित्त प्रकृतिवाले व्यक्ति के पित्ताशय में पहुँच कर पित्त भूयिष्ट विष कफ और वात के लक्षणों को तो कम, परन्तु पैत्तिक लक्षणों, यथा -

- तृष्णा (thirst),
- कास (cough),
- ज्वर (fever),
- वमन (vomiting),
- क्लम (lassitude),
- दाह (burning sensation),
- तम (black outs)
- अतिसार (diarrhea) आदि को अधिक प्रकट करता है।

- **कफ प्रकृतिवाले व्यक्तियों में दोष-प्रकोप का स्वरूप -**

Scanned with CamScanner

आचार्य चरक के अनुसार

कफदेशगं कफस्य च दर्शयेद्वातपित्तयोश्चेषत्।
लिंगं श्वासगलग्रहकण्डूलालावमथ्वादि।।

(च.चि. 23/30)

कफ प्रकृतिवाले व्यक्ति के कफाशय में स्थित विष वात और पित्त के अपने लक्षणों को तो कम परन्तु कफ-प्रधान लक्षणों, यथा -

- श्वास (dyspnea),
- गलग्रह (chocking of throat),
- कण्डू (itching),
- लालास्राव (salivation),
- वमन (vomiting) आदि को अधिक प्रकट करता है।

तालिका - प्रकृति के अनुसार व्यक्तियों में दोष-प्रकोप का स्वरूप

वातज प्रकृति	पित्तज प्रकृति	कफज प्रकृति
1. तृष्णा (thirst)	1. तृष्णा (thirst)	1. श्वास (dyspnea)
2. मोह (stupor)	2. कास (cough)	2. गलग्रह (chocking of throat)
3. अरति (anxiety)	3. ज्वर (fever)	3. कण्डू (itching)
4. मूर्च्छा (fainting)	4. वमन (vomiting)	4. लालास्राव (salivation)
5. गलग्रह (chocking of throat)	5. क्लम (lassitude)	5. वमन (vomiting) आदि
6. छर्दि (vomiting)	6. दाह (burning sensa-tion)	
7. मुख से फेनागम (frothy dis-charge from mouth) आदि	7. तम (black outs)	
	8. अतिसार (diarrhea) आदि	

प्रकृति-वैशिष्ट्य के कारण ही कुछ लोगों में जन्म से ही कुछ द्रव्यों के प्रति अत्यधिक संवेदनशीलता पायी जाती है। वे उन द्रव्यों को रंचमात्र भी सहन नहीं कर सकते। अल्प से अल्प मात्रा में भी वे द्रव्य उनके शरीर में पहुँच कर उग्र लक्षणों को उत्पन्न कर देते हैं। अवसर आने पर अहिफेनासव (morphine), कोकीन, कुनीन, एस्प्रिन आदि द्रव्यों का उन पर प्रयोग किये जाने पर यह बात सामने आती है। कुछ लोगों में तो कुछ भोज्य पदार्थों यथा - कोई दाल विशेष, क्षत्रक (mush-rooms), अण्डे, केकड़े या मत्स्य विशेष आदि के प्रति भी इसी प्रकार असात्म्यता देखने को मिलती है

4. **Mental condition -** Psychological factors such as fear, concern, doubt, anxiety etc. can enhance the action of poison on the body. Shanka visha and sarpangabhihata are excellent examples for explaining the role of mental condition on toxicity of toxins/ poisons. On the other hand, individuals with strong mental faculty are less harmed by poisons. Thus, mental condition plays a crucial role in manifestation and toxicity of poisons.
5. **Sleep and intoxication -** Sleep and intoxication slow down the metabolic processes of the body; therefore spreading of poison is also slow among these individuals.
6. **Place and time -** We shall come across, in the chapter on snake-bite, that certain snakes of certain habitat are more poisonous than others. Likewise, snake-bite on certain part of body is comparatively more fatal than other part and vice-versa. This rule also applies to other toxic creatures and plants.

काल की दृष्टि से वर्षा ऋतु में विष सर्वाधिक प्रभावी होता है। इसके कारण पर प्रकाश डालते हुए आचार्य चरक ने कहा है।

तद्वर्षास्वम्बुयोनित्वात् संक्लेदं गुडवद् गतम्।।
सर्पत्यम्बुधरापाये तदगस्त्यो हिनस्ति च। प्रयाति मन्दवीर्यत्वं विषं तस्माद् घनात्यये।। (च.चि. 23/7-8)

आयुर्वेद में विष की उत्पत्ति जल से मानी गई है। अम्बु-योनि होने के कारण वर्षाऋतु में वह गुड़ के समान क्लिन्नता को प्राप्त होकर सम्पूर्ण शरीर में शीघ्रता से व्याप्त हो जाता है। फलतः उसका प्रभाव शीघ्र और उग्र होता है। वर्षा कालीन मेघों के समाप्त हो जाने पर जब अगस्त नामक तारे का उदय होता है तो वह विष के प्रभाव को कम कर देता है। इसीलिए इसके बाद विष कम प्रभावी होता है।

Scanned with CamScanner

4.13 विष संकट (Emergency in Poisoning)

जब विष के प्रभाव को बढ़ानेवाले सभी अथवा अधिकांश कारक एक साथ मिल जाते हैं तो विष-संकट की अवस्था उत्पन्न हो जाती है।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

विषप्रकृतिकालान्नदोषदूष्यादिसंगमे।
विषसंकटमुद्दिष्टं शतस्यैकोत्र जीवति।।

(अ.सं.उ. 40/160)

विष-प्रकृति (पित्तप्रकृति), विष-काल (वर्षाकाल तथा ग्रीष्मकाल), अन्न (कटु एवं तिक्त यथा - तिल, कुलथी, सरसों आदि), दोष (पित्त), दूष्य (रक्त) आदि (यथा - भूख, प्यास, सात्म्य इत्यादि) - इन सबके विष के साथ मिल जाने पर विष-संकट की अवस्था उत्पन्न हो जाती है। इन अवस्थाओं को प्राप्त हो जाने पर सौ में से कोई एक ही प्राणी जीवित बचता है।

4.14 विष-पीत लक्षण (Features of Visha-Pita)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

सवातं गृहधूमाभं पुरीषं योऽतिसार्यते।।
आध्मातोऽत्यर्थमुष्णास्रो विवर्णः सादपीडितः।
उद्गमत्यथ फेनं च विषपीतं तमादिशेत्।।
न चास्य हृदयं वह्निर्विषजुष्टं दहत्यपि।
तद्धि स्थानं चेतनायाः स्वभावाद्व्याप्य तिष्ठति।।

(सु.क. 3/35-37)

जो व्यक्ति (विषाक्तता के कारण) गृहधूम के रंग का मल (पुरीष) अधिक मात्रा में (अधो) वायु के साथ त्याग करता है, जो आध्मान-पीड़ित है तथा जिसके उष्ण रक्त अधिक मात्रा में आ रहा हो, जो विवर्ण हो गया हो तथा जो अंगग्लानि (साद) से ग्रस्त है और झागदार वमन करता है उसे **'विषपीत'** (जिसने जहर पिया हो) समझना चाहिए। विषपीत व्यक्ति के हृदय को आग भी नहीं जलाती है, क्योंकि हृदय स्वभावतः चेतना का स्थान है और विष इसे व्याप्त कर स्थित होता है।

4.15 शंका विष (Shanka Visha - Doubt of Being Poisoned)

आचार्य चरक मतेन

दुरन्धकारे विद्धस्य केनचिद्विषशंकया।
विषोद्वेगाज्ज्वरश्छर्दिर्मूर्च्छा दाहोऽपि वा भवेत्।।
ग्लानिर्मोहोऽतिसारश्चाप्येतच्छंकाविषं मतम्।

(च.चि. 23/221-222)

घोर अन्धकार में किसी काँटे आदि के चुभ जाने से या किसी कारणवश चोट लग जाने से जब किसी मनुष्य को विषैले जन्तु द्वारा काटे जाने का सन्देह हो जाता है, तो भी मानसिक विष के प्रभाव की आशंका से जो उद्विग्नता होती है, उससे ज्वर (fever), वमन (vomiting), मूर्च्छा (fainting), दाह (burning sensation), ग्लानि (restlessness), मोह (stupor) और अतिसार (diarrhea), ये लक्षण हो जाते हैं। इसे **'शंकाविष'** माना जाता है।

शंकाविष के लक्षण

- ज्वर (fever)
- वमन (vomiting)
- अतिसार (diarrhea)
- ग्लानि (restlessness)
- मूर्च्छा (fainting)
- मोह (stupor)
- दाह (burning ensation)।

4.16 विष-वृद्धि के कारण (Factors Enhancing the effect of Poisons)

आचार्य वाग्भट ने विषाक्तता में वृद्धि के कारणों पर संक्षेप में प्रकाश डालते हुए कहा है

क्षुत्तृष्णाघर्मदौर्बल्यक्रोधशोकभयश्रमैः।
अजीर्णवर्चोद्रवतापित्तमारुतवृद्धिभिः।।
तिलपुष्पफलाघ्राणभूबाष्पघनगर्जितैः।
हस्तिमूषिकवाद्यनिःस्वप्नैर्विषसंकटैः।।
पुरोवातोत्पलामोदमदनैर्वर्धते विषम्।

(अ.हृ.उ. 35/61-63)

1. क्षुधा (hunger)
2. तृष्णा (thirst)
3. घर्म (sun)
4. दुर्बलता (weakness)
5. क्रोध (anger)
6. शोक (depression)
7. भय (fear)
8. श्रम (fatigueness)
9. अजीर्ण (indigestion)
10. अतिसार (diarrhea) से;
11. पित्त की और वायु की वृद्धि से
12. तिलपुष्प या फल (मदनफल) को सूँघने से
13. पृथ्वी से निकलने वाली बाष्प से
14. बादलों के गरजने से
15. हाथी, चूहे और वाद्य यन्त्रों के शब्द से
16. विष-संकट की अवस्था से
17. पूर्व दिशा की वायु से
18. कमल को सूँघने से तथा
19. कामोद्दीपक वस्तुओं के संयोग से

- इन उपरोक्त कारणों से विष में वृद्धि होती है।

Scanned with CamScanner

4.17 विष के असाध्यता (Incurable feature of Poisons)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

शस्त्रक्षते यस्य न रक्तमेति राज्यो लताभिश्च न संभवन्ति।।

शीताभिरद्भिश्च न रोमहर्षो विषाभिभूतं परिवर्जयेत्तम्। जिह्वा सिता यस्य च केशशातो नासावभक्तगश्च सकण्ठभंगः।।

कृष्णः सरक्तः श्वयथुश्च दंशे हन्वोः स्थिरत्वं च स वर्जनीयः। वर्तिर्घना यस्य निरेति वक्त्राद्रक्तं स्रवेदूर्ध्वमधश्च यस्य।।

दंष्ट्रानिपाताः सकलाश्च यस्य तं चापि वैद्यः परिवर्जयेत्तु। उन्मत्तमत्यर्थमुपद्रुतं वा हीनस्वरं वाऽप्यथवा विवर्णम्।। सारिष्टमत्यर्थमवेगिनं च जह्यान्नरं तत्र न कर्म कुर्यात्।।

(सु.क. 3/40-44)

1. जिस विषाक्त व्यक्ति के शरीर को शस्त्र से काटने पर रक्त न निकले उसकी चिकित्सा नहीं करनी चाहिए।
2. जिसके शरीर पर लतादि से प्रहार करने पर रेखाएँ न पड़ती हों,
3. जिस पर शीतल जल छिड़कने पर रोमहर्ष न हो उसे अचिकित्स्य समझें।
4. जिसकी जीभ श्वेतवर्ण की हो गयी हो,
5. वचन अनुनासिक (नाक से बोलना) हो गया हो तथा
6. शरीर के बाल झड़ गये हों और
7. कण्ठभंग अर्थात् आवाज बैठ गयी हो;
8. यदि दंशस्थल पर काले रंग का रक्त युक्त शोथ उपस्थित हो और
9. हनुसन्धि स्थिर हो गयी हो तो ऐसा विषाक्त व्यक्ति चिकित्सा के अयोग्य (वर्जनीय) है।
10. इसी प्रकार जिसके मुख से गाढ़े कफ की वर्ति निकल आयी हो तथा
11. जिसके ऊर्ध्व एवं अधः स्रोतों (मुख, नासा, कर्ण, शिश्न, गुद) से रक्त आ रहा हो (जैसा कि वाइपर श्रेणी के साँपों के दंश के बाद देखा जाता है);
12. जिसके सभी दाँत गिर गये हों, ऐसे विषाक्त व्यक्ति भी त्याज्य हैं।
13. उन्मत्त एवं
14. उपद्रव-बहुल,
15. हीन स्वर वाला या
16. विवर्ण और
17. मरण लक्षणों (सारिष्टम्) से युक्त तथा
18. वेगरहित विषाक्त व्यक्ति भी विवर्जनीय (अचिकित्स्य) हैं।

4.18 विषमुक्त के लक्षण (Signs of Vishamukta)

आचार्य सुश्रुत मतेन

प्रसन्नदोषं प्रकृतिस्थधातुमन्नाभिकांक्षं सममूत्रजिह्वम्। प्रसन्नवर्णेन्द्रियचित्तचेष्टं वैद्योऽवगच्छेदविषं मनुष्यम्।।

(सु.क. 6/32)

इसका वर्णन इस प्रकार है -

1. प्रसन्नदोष, अर्थात् जिस व्यक्ति के रसादि धातुएँ तथा मल एवं वातादि दोष स्वभाव-स्थित हैं।
2. प्रकृतिस्थ धातु,
3. अन्नाभिकांक्षा अर्थात् समाग्नि के कारण जिसकी भोजन में रुचि (अभिलाषा हो),
4. सममूत्रजिह्व, अर्थात् जिसके मल-मूत्रादि का त्याग स्वाभाविक रूप से होता हो तथा जिसकी जिह्वा रसवेदिनी हो
5. **'प्रसन्नवर्णेन्द्रियचित्तचेष्टम्'** अर्थात् जिसके शरीर का वर्ण, जिसकी इन्द्रियाँ, चित्त एवं शारीरिक एवं मानसिक क्रियाएँ स्वस्थ (प्रसन्न) हों

ऐसे व्यक्ति को वैद्य अविष अर्थात् विष के प्रभाव से मुक्त समझे।

• • •

Scanned with CamScanner

5

विष का निदान
Diagnosis of Poison

विषय

- परिचय (Introduction)
- विष का पाञ्चभौतिक निदान (Panchabhautika diagnosis of visha)
- विषाक्तता का निदान (Diagnosis of poisoning)
- जीवितावस्था में विषाक्तता का निदान (Diagnosis of poisoning in the living)
- उग्र विषाक्तता (Acute poisoning)
- विषाक्तता के सामान्य लक्षण (General symptoms of poisoning)
- General symptoms of poisoning, as per Modern Toxicology
- Specific symptoms of poisoning
- चिरकारी विषाक्तता (Chronic poisoning)
- Diagnosis of poisoning in the dead
- Duty of the Medical practioner in suspected poisoning
- विषाक्तता, चिकित्सक और विधि (कानून) (Poisoning, Practitioner and the Law)

5.1 परिचय (Introduction)

संसार के अन्य द्रव्यों के समान ही विष भी पाञ्चभौतिक है। उसकी उत्पत्ति जल से मानी गई है। वह **आप्य** है। वीर्य में वह अग्नि के सदृश तीव्र है। यह उसकी आग्नेयता की ओर इंगित करता है। उसका भार तथा शरीर में जाकर जड़त्व को उत्पन्न करना **पार्थिवता** का प्रतीक है। शरीर में जाकर तेजी से फैल जाना उसके **वायव्य** स्वरूप का परिचायक है। शरीर में जाकर सूक्ष्म से सूक्ष्म अंगों-अवयवों में भी प्रविष्ट हो जाना **आकाशीय** वृत्ति का द्योतक है। विष में **अग्नितत्त्व** की प्रधानता अनुभवसिद्ध है। फिर भी इस बात का पता लगाने के लिए विष में अथवा किस विष में किस तत्त्व की कितनी प्रधानता है, विष की पाञ्चभौतिक-परीक्षा आवश्यक हो जाती है।

5.2 विष का पाञ्चभौतिक निदान (Panchabhautika Diagnosis of Visha)

विष का पाँचभौतिक निदान उसमें पाये जाने वाले गुणों के आधार पर और गुणों का निदान उनके द्वारा व्यक्त लक्षणों के आधार पर किया जाता है। इसके लिए आवश्यक होगा कि हम विष में पाये जाने वाले प्रधान गुणों के भौतिक स्वरूप, भौतिक संगठन, दोष-प्रभाव और उनके कर्मों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर लें। इन्हें नीचे की तालिका में देखा जा सकता है -

गुण का नाम	भौतिक स्वरूप	भौतिक संगठन	दोष प्रभाव	कर्म
1. रूक्षता	रूखा या रूखड़ापन	तेज + वायु + पृथ्वी	• वातकर • कफघ्न	• शोषण • रूक्षता • बलवर्ण का नाश • अवृष्यता, • स्तम्भन और • खरता
2. उष्णता	गर्मी	तेज	• पित्तकर • वातश्लेष्महर	• स्वेदन • मूर्च्छा

Scanned with CamScanner

गुण का नाम	भौतिक स्वरूप	भौतिक संगठन	दोष प्रभाव	कर्म
				• तृषा • दाह • स्वेद की उत्पत्ति • रसरक्तादि का प्रवर्तन और • पाचन
3. तीक्ष्णता	तेजी	तेज	• पित्तकर • कफघ्न	• शोधन • दाह-पाक-स्रावकर तथा • लेखन
4. सूक्ष्मता	छोटापन, अणुता	तेज + वायु + आकाश	• वातकर	• विवरण • लघुपाक • मलशोषण और • सूक्ष्म स्रोतस-प्रवेश
5. विशदता	स्वच्छता	तेज + वायु + आकाश + पृथ्वी	• वातकर	• क्षालन • क्लेदशोषण तथा • व्रणरोपण
6. लघुता	हलकापन	तेज + वायु + आकाश	• कफकर • वातहर	• लंघन • उत्साह • स्फूर्ति • मलक्षय • अतृप्ति • दौर्बल्य • कृशता आदि

पूर्व तालिका के अनुसार विष के प्रधान गुणों का विश्लेषण करने पर स्पष्ट प्रतीत होता है कि विष की उत्पत्ति तेज महाभूत की प्रधानता से हुई है। उसके बाद क्रमशः वायु, आकाश, पृथ्वी और जल (नगण्य) का स्थान आता है।

इसी के आधार पर किसी विष विशेष में किस महाभूत की प्रधानता है इसका पता रोगी में व्यक्त लक्षणों के आधार पर लगाया जा सकता है। लक्षणों से गुणों का और गुणों से महाभूतों का अनुमान सहज ही किया जा सकता है।

जिस विष में जितने गुण जितनी न्यूनाधिक मात्रा में विद्यमान होते हैं, रोगी में उसी के अनुरूप लक्षण व्यक्त होते हैं। जिस विष में सभी लक्षण अपने सम्पूर्ण रूप में वर्तमान होते हैं, वह सद्यः मारक होता है।

5.3 विषाक्तता का निदान (Diagnosis of Poisoning)

विषाक्तता का निदान न केवल चिकित्सा प्रत्युत वैधानिक दृष्टि से भी विशेष महत्त्व रखता है। जितनी जल्दी यह पता लग जाये कि रोगी को कौन-सा विष, कितनी मात्रा में और किस माध्यम से दिया गया है, उतनी ही जल्दी उसकी विधिवत् चिकित्सा आरम्भ की जा सकती है। रोगी के प्राण बचाना चिकित्सक का सर्वप्रथम कर्तव्य है। साथ ही यह पता लगाना भी आवश्यक है कि रोगी ने विष स्वयं आत्महत्यार्थ या आकस्मिक रूप से धोखे से ग्रहण कर लिया है या किसी ने उसकी हत्या करने के लिए उसे खिला-पिला दिया है। आत्महत्या और हत्या दोनों ही कानून की दृष्टि में अपराध हैं। इसीलिए ऐसे मामलों में रोगी के सम्बन्धी, सेवा करनेवाले तथा हितैषी सभी घबड़ाए हुए से, आशंकित और सतर्क प्रतीत होते हैं। कोई भी कुछ बोलने-बताने से कतराता है। यदि रोगी की मृत्यु हो गई है तो उनकी कोशिश यही होती है कि जल्दी से जल्दी रोगी के मृतक शरीर के आवश्यक संस्कार कर उसे ठिकाने लगा दिया जाये। साथ ही, चिकित्सक के लिए यह पता लगाना भी आवश्यक होता है कि विषाक्तता की घटना वैयक्तिक है या सामूहिक है। जहरीली शराब पीने-पिलाने अथवा उत्सव विशेष के अवसर पर भोज्य में विषाक्त भोजन करने से अनेकों में

Scanned with CamScanner

एक साथ विषाक्तता उत्पन्न हो जाती है। सामूहिक विषाक्तता के मामले में जनहित में चिकित्सक का कर्तव्य हो जाता है कि वह सम्बन्धित अधिकारियों को तुरन्त इसकी सूचना दे, ताकि समय रहते उसी प्रकार के अन्य रोगियों की भी प्राणरक्षा की जा सके।

विषाक्तता का निदान जीवित तथा मृत दोनों अवस्थाओं में किया जाता है। मृत व्यक्ति की विषाक्तता का सुनिश्चित निदान कानूनी दृष्टि से भी विशेष महत्त्व रखता है।

5.4 जीवितावस्था में विषाक्तता का निदान (Diagnosis of Poisoning in the Living)

विषाक्तता वैयक्तिक भी हो सकती है और सामूहिक भी। सामूहिक विषाक्तता में एक ही प्रकार की शराब, औषधि, भोजन, पेय आदि लेने वालों में प्राय: एक ही प्रकार के लक्षण उत्पन्न होते देखे जाते हैं।

5.5 उग्र विषाक्तता (Acute Poisoning)

विषाक्तता उग्र (acute) एवं जटिल तथा जीर्ण अथवा चिरकालिक (chronic) भी हो सकती है। उग्र विषाक्तता में विषाक्त द्रव्य को ग्रहण करने के तत्काल या थोड़ी देर बाद ही लक्षण आकस्मिक रूप में एकबारगी प्रकट होते हैं और देखते ही देखते जटिल रूप धारण कर लेते हैं। दूसरे, विषाक्तता के लक्षण अथवा लक्षण-समूह किसी ज्ञात बीमारी से पूरी तरह मेल नहीं खाते। सामूहिक विषाक्तता में प्राय: लक्षण उग्र रूप में प्रकट होते हैं और बड़ी तेजी से गम्भीर रूप धारण कर लेते हैं, जिनकी परिणति शीघ्र ही मृत्यु या फिर स्वास्थ्य में क्रमश: सुधार की ओर होती है।

5.6 विषाक्तता के सामान्य लक्षण (General Symptoms of Poisoning)

5.6.1 आचार्य चरक मतेन

- **जंगम विष के सामान्य लक्षण –**

निद्रां तन्द्रां क्लमं दाहं सपाकं लोमहर्षणम्।
शोफं चैवातिसारं च जनयेज्जंगमं विषम्।।

(च.चि. 23/15)

1. निद्रा (excessive sleep)
2. तन्द्रा (lassitude)
3. क्लम (अकारण थकावट) (fatigueness)
4. दाह (burning sensation)
5. पाक (suppuration)
6. लोमहर्ष (रोंगटे खड़े हो जाना (horripilation)
7. शोथ (edema)
8. अतिसार (diarrhea)।

5.6.2 आचार्य चरक मतेन

स्थावर विष के सामान्य लक्षण –

स्थावरं तु ज्वरं हिक्कां दन्तहर्षं गलग्रहम्।
फेनवम्यरुचिश्वासमूर्च्छाश्च जनयेद्विषम्।।

(च.चि. 23/16)

1. ज्वर (fever)
2. हिक्का (hiccups)
3. दन्तहर्ष (dental sensitivity)
4. गलग्रह (गले की जकड़ाहट (chocking of throat)
5. मुँह से फेन निकलना (frothing from mouth)
6. वमन (vomiting)
7. अरुचि (anorexia)
8. श्वास (dyspnea)
9. मूर्च्छा (fainting)

तालिका – आचार्य चरक मतेन स्थावर एवं जंगम विषों के सामान्य लक्षण

स्थावर विष के सामान्य लक्षण	जंगम विष के सामान्य लक्षण
1. ज्वर (fever)	1. निद्रा (excessive sleep)
2. हिक्का (hiccups)	2. तन्द्रा (lassitude)
3. दन्तहर्ष (dental sensitivity)	3. क्लम (अकारण थकावट) (fatigueness)
4. गलग्रह (गले की जकड़ाहट) (chocking of throat)	4. दाह (burning sensation)
5. मुँह से फेन निकलना (frothing from mouth)	5. पाक (suppuration)
6. वमन (vomiting)	6. लोमहर्ष (रोंगटे खड़े हो जाना) (horripilation)
7. अरुचि (anorexia)	7. शोथ (edema)
8. श्वास (dyspnea)	8. अतिसार (diarrhea)
9. मूर्च्छा (fainting)	

Scanned with CamScanner

5.6.3 आचार्य सुश्रुत मतेन

आचार्य सुश्रुत ने जंगमविष के सामान्य लक्षणों का वर्णन नहीं किया है तथा स्थावर विष के सामान्य लक्षणों का वर्णन न करते हुए इनके अधिष्ठानों के अनुसार लक्षणों का उल्लेख किया है। यथा –

उद्वेष्टनं मूलविषैः प्रलापो मोह एव च।
जृम्भांगोद्वेष्टनश्वासा ज्ञेयाः पत्रविषेण तु।।
मुष्कशोफः फलविषैर्दाहोऽन्नद्वेष एव च।
भवेत् पुष्पविषैश्छर्दिराध्मानं मोह एव च।।
त्वक्सारनिर्यासविषैरुपयुक्तैर्भवन्ति हि।
आस्यदौर्गन्ध्यपारुष्यशिरोरुक्कफसंस्रवाः।।
फेनागमः क्षीरविषैर्विड्भेदो गुरुजिह्वता।
हृत्पीडनं धातुविषैर्मूर्च्छा दाहश्च तालुनि।।
प्रायेण कालघातीनि विषाण्येतानि निर्दिशेत्।

(सु.क. 2/7–11)

1. मूलविष

- उद्वेष्टन (twisting pain),
- प्रलाप (delirium)
- मोह (stupor)।

2. पत्रविष

- जृम्भा (yawning),
- अंग-उद्वेष्टन (twisting pain)
- श्वास (dyspnea)।

3. फलविष

- वृषणशोथ (orchitis),
- दाह (burning sensation)
- अन्नद्वेष (anorexia)।

4. पुष्पविष

- छर्दि (vomiting),
- आध्मान (borborgymi)
- मोह (stupor)

5–7. त्वक् विष, सार विष और निर्यास विष

- मुख से दुर्गन्ध आना (halitosis),
- पारुष्य (hardness),
- शिरोवेदना (headache)
- कफस्राव (mucus secretion)।

8. क्षीरविष

- फेनागम (frothing from the mouth),
- अतिसार (dirrhea)
- जिह्वा में भारीपन (heaviness of tongue)।

9. धातुविष

- हृत्प्रदेश में वेदना (cardiac pain),
- मूर्च्छा (fainting)
- तालु में दाह (burning sensation of palate)

इन विषों से प्रायः दिन, पक्ष या मास में मृत्यु हो जाती है।

10. कन्दविषों के लक्षण

स्पर्शाज्ञानं कालकूटे वेपथुः स्तम्भ एव च।
ग्रीवास्तम्भो वत्सनाभे पीतविण्मूत्रनेत्रता।।
सर्षपे वातवैगुण्यमानाहो ग्रन्थिजन्म च।
ग्रीवादौर्बल्यवाक्संगौ पालकेऽनुमताविह।।
प्रसेकः कर्दमाख्येन विड्भेदो नेत्रपीतता।
वैराटकेनांगदुःखं शिरोरोगश्च जायते।।
गात्रस्तम्भो वेपथुश्च जायते मुस्तकेन तु।
शृंगीविषेणांगसाददाहोदरविवृद्धयः।।
पुण्डरीकेण रक्तत्वमक्ष्णोर्वृद्धिस्तथोदरे।
वैवर्ण्यं मूलकैश्छर्दिर्हिक्काशोफप्रमूढता।।
चिरेणोच्छ्वसिति श्यावो नरो हालाहलेन वै।
महाविषेण हृदये ग्रन्थिशूलोद्गमौ भृशम्।।
कर्कटेनोत्पतत्यूर्ध्वं हसन् दन्तान् दशत्यपि।

(सु.क. 2/12–18)

1. कालकूट

- स्पर्शाज्ञान (loss of sensation),
- वेपथु (tremors)
- स्तम्भ (stiffness)।

2. वत्सनाभ

- ग्रीवास्तम्भ (torticollis/ stiffness of neck)
- मल, मूत्र तथा नेत्रों का रंग पीला पड़ जाना (yellowish discoloration of feces, urine and eyes)।

3. सर्षप

- वायु की विगुणता (mis-peristalsis),
- आनाह (distention)
- शरीर पर ग्रन्थियों का निकल आना (blisters)।

Scanned with CamScanner

4. पालक

- ग्रीवा की दुर्बलता (weakness in the neck region)
- वाक्संग (loss of speech)।

5. कर्दम

- प्रसेक (लालास्राव (profuse salivation),
- अतिसार (diarrhea)
- आँखों में पीलापन (yellowish discoloration of eyes)।

6. वैराटक

- शरीर में पीड़ा (malaise)
- शिर में व्याधि (diseases afflicting head region)।

7. मुस्तक

- शरीर का अकड़ जाना (tetany)
- कम्प (tremors)।

8. शृंगीविष

- अंगों का दुखना (bodyache),
- दाह (burning sensation)
- उदर की वृद्धि (abdominal enlargement)।

9. पुण्डरीक

- आँखों का लाल होना (redened eyes)
- उदरवृद्धि (abdominal enlargement)।

10. मूलक

- विवर्णता (discoloration),
- वमन (vomiting),
- हिक्का (hiccough),
- शोफ (edema)
- अचेतनता (syncope)।

11. हालाहल

- साँस विलम्ब से लेना (delayed inspiration)
- शरीर का रंग श्याव (काला) होना (blackish discoloration)।

12. महाविष

- हृत्प्रदेश में ग्रन्थि (cyst-like eruptions in cardiac region)
- तीव्र शूल (acute pain)।

13. कर्कटक

- रोगी उछलता है (irrelevant jumping)
- हँसता हुआ दाँतों को कटकटाना (bruxism)।

5.7 General Symptoms of Poisoning as per Modern Toxicology

As per modern Toxicology, there are no confirmed symptoms or group of symptoms for an acute poisoning. Some general symptoms that we encounter in acute poisoning are -

1. Vomiting
2. Diarrhea
3. Convulsions and
4. Fainting/ syncope.

Other symptoms that are commonly associated with acute poisoning are -

1. Acute colic
2. Borborgymi
3. Excessive salivation
4. Deformed pupils
5. Buzzing in the ears
6. Hyperthermia
7. Sweating
8. Bluish discoloration
9. Coldness of body-parts
10. Delirium
11. Neurological symptoms
12. Respiratory distress
13. Anxiety
14. Restlessness etc.

The vagueness of symptoms, associated with poisoning, calls for thorough and meticulous examination of the patient and surrounding he is in. Therefore, the physician should carefully examine all the aspects before confirming the diagnosis.

Scanned with CamScanner

5.8 Specific Symptoms of Poisoning

Inspite of generalized features there are certain specific symptoms associated with specific poisonous substances. This information is useful in ascertaining the nature of poison. These specific symptoms are listed below -

S. No.	Specific Symptom	Probable poison
1.	Sudden death	• Potassium cyanide • Hydrocianic acid • Carbon monoxide • Carbon dioxide • Ammonia • Oxalic acid
2.	Loss of consciousness	• Morphine • Alcohol • Camphor • Chloroform • Choral hydrate
3.	Heart failure	• Acids • Alkalies • Arsenic • Garcinia morella • Aconitum ferox • Antimony • Antipyretics
4.	Paleness of the face	• Antifebrin
5.	Delerium	• Cannabis sativa • Thorn apple • Alcohol • Camphor • Henbane • Atropa belladona
6.	Tetanus like convulsions	• Nux vomica • Arsenic
7.	Paralysis	• Aconite • Arsenic • Lead • Conium
8.	Dilatation of the pupils	• Thorn apple • Atropa belladona • Aconite • Alcohol • Chloroform • Henbane • Opium (last stage)
9.	Constriction of pupils	• Morphine • Carbolic acid • Chloral hydrate
10.	Dryness of the skin	• Thorn apple • Henbane • Atropa belladona
11.	Humidity of the skin	• Opium • Aconite • Alcohol • Tobacco • Antimony • In cardiac depression due to other poions
12.	Bleached face	• Corrosive acids and alkalis • Calomel • Carbolic acid
13	Vomiting	• Arsenic • Antimony • Aconite • Digitalis • Ammonia • Phosphorus etc.

Along with these above mentioned symptoms the pulse, heart rate, respiration, state of consciousness, mental faculties etc. of the patient should be closely observed for reaching a correct diagnosis.

5.9 चिरकारी विषाक्तता (Chronic Poisoning)

5.9.1 आयुर्वेदानुसार

आयुर्वेद में इसी को दूषीविष की संज्ञा दी गई है।

आचार्य वाग्भट के अनुसार

वीर्याल्पभावादविभाव्यमेतत् कफावृतं वर्षगणानुबन्धि।
तेनार्दितो भिन्नपुरीषवर्णो दुष्टास्रयोगी तृडरोचकार्तः।।
मूर्च्छन् वमन् गद्गदवाक् विमुह्यन् भवेच्च दूष्योदर-लिंगजुष्टः। (अ.ह.उ. 35/34-35)

Scanned with CamScanner

अल्प वीर्य होने के कारण यह तत्काल नहीं मारता। कफावृत होने (न पचने) के कारण सम्बन्धित शरीर में वर्षों पड़ा रहता है। इसी दूषीविष से पीड़ित मनुष्य अतिसारी प्रवृत्ति, नाना वर्णों के मलों से युक्त, दूषित रक्तवाला, प्यास, अरुचि, मूर्च्छा, वमन, भर्राई आवाज, मोह और पेट के विकारों से ग्रस्त रहता है।

5.9.2 As per Modern Toxicology

In chronic poisoning the signs and symptoms develop gradually and these, at times, present themselves and on certain occasions remain concealed. At times the course of chronic poisoning is so slow that its signs and symptoms represent themselves very mildly or as symptoms of another disease/ illness; due to this mildness of course diagnosis of chronic poisoning is completely missed. Here is a list of some extremely common signs and symptoms presented in chronic poisoning -

- sense of ill-being
- feeling of sickness
- restlessness/ anxiety
- continuous or abrupt manifestation of ill feeling
- weakness
- loss of weight
- on and off presentation of gastro-intestinal symptoms etc.

5.10 Diagnosis of Poisoning in the Dead

For diagnosis of poisoning in the dead following four measures are adopted -

1. Post-mortem examination
2. Chemical analysis
3. Experiments on animals and
4. Moral and circumstantial evidence.

5.10.1 Post-Mortem Examination

For diagnosis of poisoning the cadaver should be thoroughly examined from outside and later the internal organs and related structures should be examined by meticulously dissecting the body. Some organs should be specifically checked for any traces of poison.

विष से मृत प्राणी के जिन अंगों में विष के मिलने की सम्भावना होती है, उस पर प्रकाश डालते हुए आचार्य वृद्धवाग्भट ने कहा है -

पीतं मृतस्य हृदये जग्धदिग्धाभिविद्धयोः।
दंशे तिष्ठति भूयिष्ठं सर्वतः पिण्डितं विषम्।

(अ.सं.उ. 40/26)

- द्रव रूप में पिया हुआ विष मृत व्यक्ति के हृदय (अन्तरांगों) में रहता है।
- दाँतों से खाया हुआ विष दाढ़ों में मिलता है।
- विषैले अस्त्र-शस्त्र से मारे गये प्राणी के विद्ध स्थान में मिलता है।
- विषैले साँप-कीट आदि से काटे-डसे गये प्राणी के दंश स्थान में विष संचित हो जाता है।

External Examination

आयुर्वेद की संहिताओं में विषाक्तता के असाध्य लक्षणों और उससे मरने वालों के लक्षण-चिह्नों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इनके आधार पर शव के बाह्य निरीक्षण द्वारा भी विषाक्तता का बहुत कुछ अनुमान लगाया जा सकता है।

आचार्य सुश्रुत ने इन लक्षणों का सुस्पष्ट वर्णन किया है

शस्त्रक्षते यस्य न रक्तमेति राज्यो लताभिश्च न संभवन्ति।।

शीताभिरद्भिश्च न रोमहर्षो विषाभिभूतं परिवर्जयेत्तम्।
जिह्वा सिता यस्य च केशशातो नासावभक्तगश्च सकण्ठभंगः।।

कृष्णः सरक्तः श्वयथुश्च दंशे हन्वोः स्थिरत्वं च स वर्जनीयः। वर्तिर्घना यस्य निरेति वक्त्रादक्तं सवेदूर्ध्वमधश्च यस्य।।

दंष्ट्रानिपाताः सकलाश्च यस्य तं चापि वैद्यः परिवर्जयेत्तु।
उन्मत्तमत्यर्थमुपद्रुतं वा हीनस्वरं वाऽप्यथवा विवर्णम्।।
सारिष्टमत्यर्थमवेगिनं च जह्यान्नरं तत्र न कर्म कुर्यात्।।

(सु.क. 3/40-44)

- शस्त्र से क्षत होने (काटने) पर भी जिसका रक्त नहीं निकलता, लताओं से मारने या बाँधने पर भी जिसकी त्वचा पर रेखाएँ नहीं उभरतीं (निशान नहीं पड़ते), तथा शीतल जल के छींटे मारने पर भी जिसमें रोमहर्ष नहीं होता, चिकित्सक को उस विषयुक्त रोगी की चिकित्सा नहीं करनी चाहिए।
- जिसका मुँह टेढ़ा हो गया हो, जिसके बाल झड़ गए हों या उखाड़ने पर सीधे हाथ में चले आते हों, नासा भंग हो गई हो, आवाज भर्रा गई हो, जिसके दंशस्थान पर लालिमायुक्त कृष्णवर्ण का शोथ हो और जिसकी हनु स्तम्भित हो गई हो

Scanned with CamScanner

(जबड़े जकड़ गये हों), उस रोगी को भी असाध्य मानकर उसका परित्याग कर देना चाहिए।

- जिसके मुख से मोटी बत्ती के समान लालास्राव होता हो, जिसके निम्न एवं ऊर्ध्व मार्गों से रक्त का स्राव हो रहा हो तथा जिसके दंशस्थान पर चार दंष्ट्राओं के चिह्न हों, उसे भी असाध्य मानकर उसकी चिकित्सा नहीं करनी चाहिए।
- इसी प्रकार जो उन्मत्त हो, जिसके लक्षण जटिल एवं उपद्रवग्रस्त हों, जिसकी आवाज बैठ गई हो, जिसका वर्ण विकृत हो गया हो (मुख, ओठ, त्वचा, नाखून आदि काले पड़ गये हों), जिसमें किसी प्रकार का वेग (मल-मूत्र आदि) न हो, गमनागमन (हाथ-पैर हिलाने-चलाने) शक्ति न हो तथा अन्य अरिष्ट लक्षण वर्तमान हों, उसे भी असाध्य समझना चाहिए।

5.10.2 Internal Examination

This is considered as the actual examination of the cadaver. Surgical incision is made on the body starting from thorax till the pelvis. The exposed viscera and organs are carefully examined and if required small specimen of organs are preserved for bio-chemical analysis.

Post-mortem examination should be done with utmost care and alertness. Special attention should be given while examining the gastro-intestinal tract because its here that signs of corrosive and irritant poisons can be found. Signs that should be specifically looked for are -

1. hyperaemia
2. softness
3. ulceration
4. perforation etc.

Viscera or abdominal contents should be preserved for histopathological and biochemical analysis respectively.

Chemical Analysis

Chemical analysis is useful for diagnosing suspected poisoning in patients either alive or dead. In living patient the food, drinks, vomitus, urine, feces and other secretions should be sent for chemical analysis. In dead individuals, following parts or substances should be sent -

1. Stomach, intestines etc.
2. Materials found in stomach, intestines etc.
3. Skin, hair, nails, bones, teeth etc. and
4. Urine and feces.

These substances should be sent to concerned laboratories with utmost care and safety. Among all the specimen examination of parenchyma is considered very important and therefore it should also be sent for laboratory analysis. Presensce of poison in parenchyme is considered a vital sign in diagnosis of poisoning.

5.10.3 Experiments on Animals

Food-articles, medicines, vomitus etc. of patient of suspected poisoning is fed to dogs, cats and other domesticated animals. These animals are also affected by the poison in the same manner. Therefore, the animals are fed with the suspected articles and the signs are closely observed. Similarity of signs in humans and animals confirms the poisoning.

But it should be noted that some animals are immune to certain poisonous substances. E.g. Pigeon is not affected by opium and similarly rabbit is immune to stramonium.

Also certain poisons affect certain animals in unique way; e.g. datura and belladona cause prolonged dilatation of pupils (for a week) in cats.

5.10.4 Moral and Circumstantial Evidence

Visiting the site of crime provides one with food-articles, medicines, alcohol, empty or half-empty bottles, needle and syringes, fecal waste, vomitus etc. of the patient. These can prove vital in diagnosis of poisoning.

Relatives, friends, acquaintances, co-workers etc. also provide with vital clues for confirming the case of poisoning. Restlessness of relatives to cremate the body etc. should raise doubt about some wrong-doing.

All these factors prove vital in diagnosis of poisoning.

Scanned with CamScanner

5.11 Duty of the Medical Practioner in Suspected Poisoning

- The responsibility of physician increases in case of suspected poisoning. He has to, along with medical care, be alert to circumstances and legal procedings. Therefore, the physician should note the name, address, sex, age, occupation, date and time of arrival, accompanying members and complete case history of the patient. Dying declaration, in case of dying patient, should be noted immediately.
- Along with collection of above mentioned facts, the physician should promptly diagnose the suspected poisoning. Confirming the source of poisoning, nature of poison and its effect on the human body is the duty of the physician; once the nature of poison is confirmed the physician should promptly treat the patient and abate the spreading of poison at the earliest. In case of doubt, the physician should stick to general line of treatment and manage the patient symptomatically.
- If the physician is a private practitioner and he learns that the poisoning is suicidal or accidental then he is not bound by law to inform the investigating officers about the same. But if the investigating officers or judicial system asks to assist then he should do the same on moral grounds.
- In case of sudden or accidental poisoning, if the physician feels that there can be a mass poisoning then he should promptly inform the concerned authorities about the same. This can help in immediate measures to stop spreading of poisoning and thus saving valuable lives.
- In case of suspected homicidal poisoning, the physician should immediately consult an expert Toxicologist and Forensic Science experts. On confirmation of homicidal poisoning, the physician should inform the Police and other concerned authorities. If the patient is about to die then the dying declaration of the patient should be quickly recorded.
- The patient should be immediately removed from the location of poisoning and it is always judicious to admit him in a hospital or a nursing home. The staff of the concerned hospital should also be informed about the whole scenario and should be asked to vigil the food, medicines, relatives of the patient. If shifting of the patient, in case, is not possible from the location of poisoning then an expert and reliable nursing staff should be apointed and asked to vigil the patient and his surroundings. If this arrangement is also not possible, due to financial constraints, then the reliable and faithful friends or close relatives should be deployed for the same and then should also be made aware of the whole situation.
- All the documents and evidences, in case of suspected poisoning, should be carefully preserved. Gastric contents, vomitus, fecal matter, blood samples etc. should be stored in containers and appropriately labelled. Documents or reports of bio-chemical or histo-pathological analysis should be preserved. Sources or modes of poisoning like needles, syringes, bottles, food-articles, medicines etc. should be collected from the site and preserved after labelling them. These might be of use in legal matter in future.
- In case of death due to suspected poisoning death certificate should not be issued immediately. For investigation the information should be forwarded to legal authorities.
- Physician should be careful while expressing his views about the suspected poisoning. He should be well-equipped with evidences to prove his views. Even if he is confident about the diagnosis it is required that he expresses views only at the appropriate place, at the appropriate time and to the appropriate authority.
- In case of survival after poisoning the place, time and authority to whom the physian discloses his views changes from case to case. This should be done only after thorough consultation with the medico-legal experts.

Scanned with CamScanner

- Cases of accidental poisoning are comparatively easier. Usually individuals visiting the physician are aware of the situation and this helps in diagnosis of the poisoning. The physician can immediately begin with therapeutic measures.
- Cases of suicidal poisoning are also without much complication. The circumstantial evidences are pretty much clear. In case of death the duty of the physician is to inform the legal authorities and in case of survival the patient should be counseled to express himself.
- The difficulty arises in case of homicidal poisoning. It is difficult for both medical and medico-legal experts. Individuals related to the dead also refrain from saying anything. Circumstantial evidences are also altered, misplaced or totally removed to confuse the investigating team.
- Medical officers of Government and public hospitals, in case of poisoning - suicidal/ accidental/ homicidal etc., should immediately inform the legal authorities about the same.

5.12 विषाक्तता, चिकित्सक और विधि (कानून) (Poisoning, Practitioner and the Law)

- प्रस्तुत संदर्भ में भारतीय दण्ड-संहिता की धाराएँ 39, 175, 176, 193, 201, 202 तथा 309 महत्त्वपूर्ण हैं।
- इनमें से प्रमुख हैं धारा 39 और 309 जिनका सम्बन्ध क्रमशः मानव-वध और आत्महत्या से है।
- धारा 39 के अनुसार चिकित्सक पर-हत्यार्थ विषाक्तता (मानव-वध) के हर केस के बारे में सम्बद्ध न्यायाधिकारियों को सूचना देने के लिए बाध्य है। परन्तु यदि गॉव का मुखिया या सरपंच अथवा अन्य सम्बद्ध व्यक्ति - जिनके लिए भी उक्त धारा के अन्तर्गत ऐसी ही बाध्यता है - पहले ही आरक्षी अधिकारियों को घटना की सूचना दे चुके हैं, तो चिकित्सक सूचना नहीं भी दे सकता है। चिकित्सक द्वारा इसकी अवहेलना भा.द.सं. की धारा 176 के अन्तर्गत एक दण्डनीय अपराध माना गया है।
- भा.द.सं. की धारा 309 का सम्बन्ध आत्महत्या से है। इसके अन्तर्गत आत्महत्या का प्रयास एक दण्डनीय अपराध माना गया है। परन्तु इसे धारा 39 में समाहित नहीं किया गया है। इसलिए चिकित्सक इस मामलें में स्वतः आरक्षी या दण्डाधिकारियों को अपने से सूचना देने के लिए बाध्य नहीं है। फिर भी यदि अन्वेषक आरक्षी या दण्डाधिकारी उसे औपचारिक ढंग से सूचना देने के लिए बुलाते हैं तो वह भा.द.सं. 175 के अन्तर्गत सूचना देने के लिए बाध्य है। उसके द्वारा इसकी अवहेलना करना या सूचना अथवा उसके किसी अंश को दबाना-छिपाना भा.द.सं. की धारा 202 के अन्तर्गत एक दण्डनीय अपराध है। अथवा गलत सूचना देना भी भा.द.सं. की धारा 193 के अन्तर्गत एक दण्डनीय अपराध है।
- जैसा कि गत पृष्ठों में कहा जा चुका है, चिकित्सक का यह दायित्व है कि वह संदिग्ध विषाक्तता के हर संभावित साक्ष्य को अपने पास सुरक्षित रखे। जानबूझ कर अपराधी को बचाने के लिए सप्रयोजन उसके द्वारा ऐसा न किया जाना भी भा.द.सं. की धारा 201 के अन्तर्गत एक दण्डनीय अपराध माना गया है।

• • •

Scanned with CamScanner

6

विष का सामान्य चिकित्सा क्रम
General Treatment of Visha - Poisoning

विषय

- विष चिकित्सा का परिचय (Introduction to treatment of poisoning)
- विष का सामान्य चिकित्सा क्रम (Treatment modules for Visha)
- Management of Poisoning
- Resuscitation
- Induction of vomiting
- Gastric lavage (stomach wash)
- Use of antidotes
- Elimination of absorbed poison
- Maintenance of general health of the patient

6.1 विष चिकित्सा का परिचय (Introduction to Treatment of Poisoning)

विष-चिकित्सा के दो भेद माने जाते हैं –

1. सामान्य चिकित्सा-क्रम
2. विशिष्ट चिकित्सा-क्रम।

- **सामान्य चिकित्सा**-क्रम के अन्तर्गत उन विधियों का निर्देश किया गया है जिनको आवश्यकतानुसार सभी प्रकार की विषाक्तता में अपनाया जा सकता है। जहाँ विषाक्तता के स्वरूप का स्पष्ट पता नहीं चल पाता वहाँ भी सामान्य चिकित्सा-क्रम का ही आश्रय लिया जाता है।
- **विशिष्ट चिकित्सा**-क्रम प्रत्येक प्रकार की विषाक्तता के लिए अलग-अलग होता है, यथा – वत्सनाभ की विषाक्तता का उपचार, कुचले की विषाक्तता का उपचार, सर्पदंश की विषाक्तता का उपचार आदि। जहाँ जिस प्रकार की विषाक्तता होती है, उसी के अनुरूप विशिष्ट चिकित्सा-क्रम का वर्णन किया जायेगा। विशिष्ट चिकित्सा-क्रम का वर्णन सम्बन्धित अध्यायों में देखने को मिलेगा।

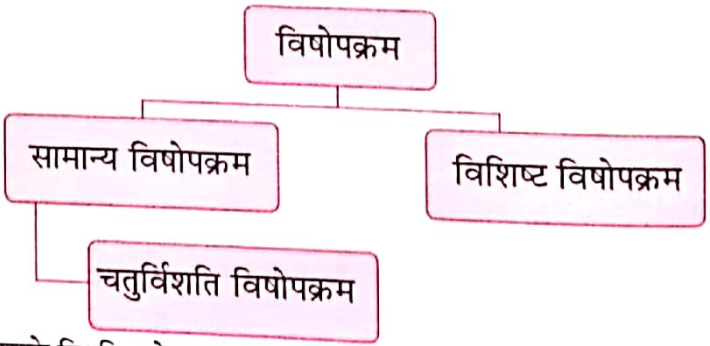

पूर्व इसके कि विष के सामान्य चिकित्सा-क्रम का वर्णन प्रस्तुत किया जाये हमारे लिए यह जान लेना भी आवश्यक है कि विष की चिकित्सा में हमें सामान्य रूप से किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए। इन बिन्दुओं की ओर संकेत करते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है –

देशप्रकृतिसात्म्यर्तुविषवेगबलाबलम्।
प्रधार्य निपुणं बुद्धया ततः कर्म समाचरेत्।। (सु.क. 5.34)

Scanned with CamScanner

देश, प्रकृति, सात्म्य, ऋतु, वेग, बल, अबल आदि पर भली प्रकार विचार कर ही चिकित्सा कार्य को आरम्भ करना चाहिए।
इनमें से अधिकांश कारकों का गत पृष्ठों मे यथास्थान वर्णन प्रस्तुत किया जा चुका है।

6.2 विष का सामान्य चिकित्सा क्रम (Treatment modules for Visha)

आचार्य चरक ने विष-चिकित्सा की चौबीस प्रकार की विधियाँ बतलाई हैं –

मन्त्रारिष्टोत्कर्तननिष्पीडनचूषगणाग्निपरिषेकाः।
अवगाहरक्तमोक्षणवमनविरेकोपधानानि।।
हृदयावरणाञ्जननस्यधूमलेहौषधप्रशमनानि।
प्रतिसारणं प्रतिविषं संज्ञासंस्थापनं लेपः।।
मृतसञ्जीवनमेव च विंशतिरेते चतुर्भिरधिकाः।
स्युरुपक्रमा यथा ये यत्र योज्याः शृणु तथा तान्।।

(च.चि. 23.35-37)

क्रमांक	उपक्रम	Modern Correlate	उपक्रम की उपयोगिता
1.	मन्त्र	inchantations	विष प्रतिरोधन
2.	अरिष्टबन्धन	binding, Application of torniquette	विष प्रवेश और सञ्चरण में
3.	उत्कर्तन	incision	बाधन
4.	निष्पीडन	compression	
5.	चूषण	sucking	
6.	अग्निकर्म	cauterization	
7.	परिषेक	irrigation	
8.	अवगाह	immersion	
9.	रक्तमोक्षण	blood letting	शोधन
10.	वमन	emesis	
11.	विरेचन	purgation	
12.	उपधान	application of medicines over the incised scalp	विष शमन
13.	हृदयावरण	cardio-protection	लाक्षणिक उपक्रम
14.	अञ्जन	collyrium	विष शमन
15.	नस्य	snuffing	विष शोधन
16.	धूम	fumigation	विष शमन
17.	लेह	linctus	
18.	औषध	medication	विष प्रतिरोधन
19.	प्रशमन / प्रधमन	poison pacifying/ blowing	विष शमन
20.	प्रतिसारण	scrubbing	
21.	प्रतिविष	antidote	विष प्रतिरोधन
22.	संज्ञास्थापन	resuscitation	लाक्षणिक उपक्रम
23.	लेप	ointment	विष शमन
24.	मृतसंजीवन	revival	लाक्षणिक उपक्रम

इन विधियों का परिचय संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

6.2.1. मन्त्र (Inchantations)

मन्त्र उस शब्द या शब्द-समूह को कहते हैं जिसका विधि-विधान के अनुसार जाप कर किसी देवता की सिद्धि या अलौकिक शक्ति प्राप्त की जाती है। आचार्य सुश्रुत ने मन्त्र-शक्ति के अधिकारी और उसके महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए कहा है –

Scanned with CamScanner

देवब्रह्मर्षिभिः प्रोक्ता मन्त्राः सत्यतपोमयाः।
भवन्ति नान्यथा क्षिप्रं विषं हन्युः सुदुस्तरम्।।
विषं तेजोमयैर्मन्त्रैः सत्यब्रह्मतपोमयैः।
यथा निवार्यते क्षिप्रं प्रयुक्तैर्न तथौषधैः।।

(सु क 5.9-10)

सत्यवादी, तपस्वी और ज्ञानी द्वारा कहे गये मन्त्र व्यर्थ नहीं जाते। ये मन्त्र भयानक से भयानक विष को भी शीघ्र ही नष्ट कर देते हैं। सत्यवादी, ब्रह्मज्ञानी तथा तपस्वियों द्वारा प्रयुक्त मन्त्र जितनी शीघ्रता से विष का नाश करते हैं, उतनी जल्दी औषधि-प्रयोग से उसका नाश नहीं हो सकता।

मन्त्र की सिद्धि अपने-आप में एक कठोर साधना है। मन्त्रों की सिद्धि के लिए क्या करना पड़ता है; इस पर प्रकाश डालते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है -

मन्त्राणां ग्रहणं कार्यं स्त्रीमांसमधुवर्जिना।
मिताहारेण शुचिना कुशास्तरणशायिना।।
गन्धमाल्योपहारैश्च बलिभिश्चापि देवताः।
पूजयेन्मन्त्रसिद्धयर्थं जपहोमैश्च यत्नतः।।

(सु क 5.11-12)

मन्त्रों की सिद्धि के लिए साधक को साधना काल में स्त्री, मांस और मदिरा का परित्याग कर देना चाहिए, अल्पाहार करना चाहिए, पवित्र जीवन व्यतीत करना चाहिए और कुशा के आसन पर सोना चाहिए। गन्ध, माला, उपहार और बलि आदि के द्वारा देवताओं का पूजन, हवन और मन्त्रों का जाप करना चाहिए।

सिद्ध हो जाने के बाद भी यदि मन्त्रों का यथाविधि प्रयोग न किया जाये तो वे निष्फल हो जाते हैं। आचार्य सुश्रुत के कथनानुसार -

मन्त्रास्त्वविधिना प्रोक्ता हीना वा स्वरवर्णतः।
यस्मान्न सिद्धिमायान्ति तस्माद्योज्योऽगदक्रमः।।

(सु.क. 5/13)

बिना विधि के तथा स्वर अथवा वर्ण से हीन उच्चरित मन्त्र सफल नहीं होते। इसीलिए अगदों आदि का भी प्रयोग साथ-साथ करना चाहिए।

मन्त्रों का प्रयोग विशेष रूप से सर्पदंश में किया जाता है। अभी भी भारत के अनेक प्रदेशों में ऐसे मन्त्र-सिद्ध पुरुष मिलते हैं, जो मन्त्रों के द्वारा सर्पविष की चिकित्सा करते हैं और उन्हें सफलता भी मिलती है। कई मन्त्रविद् तो ऐसे भी होते हैं जो सर्पदंश की सूचना देनेवाले दूत की आकृति, प्रकृति और देश-कालादि का विचार कर ही बतला देते हैं कि रोगी को किस सर्प ने काटा है और वह बचेगा कि नहीं आदि। किसी-किसी के बारे में ऐसी भी किंवदन्ती है कि वह दूत को झाड़-फूँक कर ही रोगी को चंगा कर देता है। ऐसी चमत्कारिक घटनाओं को जिनके प्रत्यक्ष-द्रष्ट वर्तमान हैं, यदि आज का विज्ञान नहीं मानता तो दो ही बातें कहीं जा सकती हैं - पहली विज्ञान का क्षेत्र बाह्य भौतिक जगत् है, अध्यात्म नहीं और दूसरी विज्ञान की प्रगति अभी उस सीमा तक नहीं हो पाई है।

6.2.2. अरिष्टा-बन्धन (Application of Ligature)

अरिष्ट का अर्थ है अनिष्ट या मृत्युसूचक। विष के वेग का बढ़ना निश्चय ही अरिष्ट-सूचक होता है। विष रक्त का आश्रय लेकर जैसे-जैसे शरीर में आगे की ओर बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे वह अन्तरांगों को आक्रान्त करता जाता है। शरीर में विष के प्रसार को रोकने के लिए ही अरिष्टा-बन्धन का सहारा लिया जाता है। इसका विवरण प्रस्तुत करते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है -

सर्वैरेवादितः सर्पैः शाखादष्टस्य देहिनः।
दंशस्योपरि बध्नीयादरिष्टाश्चतुरंगुले।।
प्लोतचर्मान्तवल्कानां मृदुनाऽन्यतमेन वै।
न गच्छति विषं देहमरिष्टाभिर्निवारितम्।।

(सु.क. 5.3-4)

सभी प्रकार के साँपों द्वारा शाखाओं (हाथ-पैर आदि) में डस लिए जाने पर दंशस्थान से चार अंगुल ऊपर 'अरिष्टा' बन्धन करना चाहिए। यह अरिष्टा कपड़े को चीर कर, चर्मपट, वृक्ष की अन्तः छाल अथवा अन्य किसी भी कोमल वस्तु (यथा - रेशम की डोरी, रबर की नलिका आदि) की बनाई जा सकती है। अरिष्ट द्वारा रोका गया विष ऊपर की ओर नहीं जा पाता। आचार्य चरक ने इस सन्दर्भ में अरिष्टा के स्थान पर **'वेणिका'** शब्द का प्रयोग किया है। वेणिका या वेणी शब्द सामान्यतया स्त्रियों की चोटी के लिए प्रयुक्त होता है। वेणिका भी यहाँ अरिष्टा के अर्थ को ही व्यक्त करता है।

अरिष्टा-बन्धन वस्तुतः तात्कालिक चिकित्सा (first-aid) का एक अंग है। सर्पदंश के बाद तुरन्त इसे बाँधना चाहिए अन्यथा विष के फैल जाने के बाद बाँधने से कोई लाभ न होगा। बाँधने के बाद तत्काल अन्य चिकित्साएँ आरम्भ कर देनी चाहिए। आचार्य चरक ने इसके बाद यथा आवश्यक दंशस्थान के निष्पीडन, छेदन, दहन, रक्तमोक्षण आदि कर्मों को करने का निर्देश दिया है। इनका वर्णन आगे के पृष्ठों में किया जायेगा।

अरिष्टा-बन्धन के सम्बन्ध में कुछ अन्य बातों का भी ध्यान रखना चाहिए। अरिष्टा दो प्रकार की मानी गई है -

- एक तो रस्सी आदि से बाँधना और
- दूसरी मन्त्र से अभिमन्त्रित करके बाँधना।

Scanned with CamScanner

आचार्य सुश्रुत ने अरिष्ट-बन्धन को मन्त्र से अभिमन्त्रित करके बाँधने के लिए कहा है -

अरिष्टामपि मन्त्रक्रैव बध्नीयान्मन्त्रकोविदः।

(सु.क.5.8)

अरिष्ट का जहाँ तक विष चढ़ चुका है, उससे चार अंगुल ऊपर बाँधना चाहिए। कुछ ने एक स्थान पर 4, 8 और 12 अंगुल की दूरी पर 3 अरिष्टाएँ बाँधने की अनुशंसा की है।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार अरिष्ट को स्थान का ध्यान रखते हुए (यथा - उसकी कोमलता, कठोरता, मर्मस्थान आदि) ही बाँधना चाहिए। उसे न तो बहुत कसकर और न बहुत ढीला बाँधना चाहिए। कसकर बाँधने से दंशस्थान पर शोथ उत्पन्न हो जायेगा और वह सड़ने लगेगा। ढीला होने से वह विष के प्रसार को रोकने में असमर्थ होगा।

अरिष्ट-बन्धन से दूषित रक्त की चिकित्सा - आचार्य सुश्रुत के अनुसार यदि अरिष्ट-बन्धन के कारण उस स्थान का रक्त दूषित हो गया हो तो अरिष्ट को खोल कर और उस स्थान को पोछकर उसे तुरन्त जला देना चाहिए, अन्यथा वहाँ पर जमा हुआ रक्त पुनः विषवेग उत्पन्न कर सकता है।

6.2.3. उत्कर्तन (Incision)

उत्कर्तन का अर्थ है - काटना या चीरा लगाना।

आचार्य चरक ने इसके महत्त्व का सुन्दर वर्णन किया है -

तरुरिव मूलच्छेदाद्दंशच्छेदान्न वृद्धिमेति विषम्।

(च.चि. 23.44)

अर्थात् जिस प्रकार जड़ से काट देने पर वृक्ष फिर नहीं पनप पाता, उसी प्रकार दंशस्थान के काट देने पर विष का वेग आगे नहीं बढ़ पाता। चीरा लगाते समय मर्मस्थान का ध्यान अवश्य रखना चाहिए। यदि दंशस्थान मर्मस्थल पर ही है तो उससे थोड़ा आगे हटकर छेदन करना चाहिए। (च.चि. 23.16 पर गंगाधर)

6.2.4. निष्पीडन (Compression)

निष्पीडन का अर्थ है - दबाना, दबा-दबा कर निचोड़ना। सर्पदंश को चीरने के बाद उसके चारों ओर दबा-दबा कर वहाँ का रक्त बाहर निकाल दिया जाता है। रक्त के साथ ही अधिकांश विष के निकल जाने से उसका वेग आगे नहीं बढ़ पाता। आचार्य वृद्धवाग्भट के शब्दों में -

निष्पीड्य चोद्धरेद्दंशमर्मसन्धिगतं तथा।
न जायते विषावेगो बीजनाशादिवांकुरः।

(अ.सं.उ. 42.8)

मर्मस्थान तथा सन्धिस्थान में स्थित विष को दबा-दबा कर बाहर निकाले। ऐसा करने से विष का वेग ठीक उसी प्रकार से नहीं चढ़ता, जिस प्रकार बीज के नाश हो जाने से अंकुर नहीं पनपता।

6.2.5. चूषण (Suction)

चूषण का अर्थ है - चूसना, चूस-चूस कर निकालना। सर्पदंश का छेदन करने के उपरान्त उसके रक्त को चूस-चूस कर बाहर निकालने का निर्देश है। इस क्रिया द्वारा रक्त के साथ आस-पास गया हुआ विष दंशस्थान तक लाकर बाहर निकाल दिया जाता है। यह एक प्रयोगात्मक कर्म है; अतः जिसने गुरु के सान्निध्य में रहकर इस कर्म का भली प्रकार अभ्यास किया है, उसी को इसे सम्पादित करना चाहिए। आचार्य सुश्रुत ने इस विधि पर संक्षेप में प्रकाश डालते हुए कहा है -

प्रतिपूर्यं मुखं वस्त्रैर्हिंतमाचूषणं भवेत्।
स दष्टव्योऽथवा सर्पो लोष्टो वाऽपि हि तत्क्षणम्।।

(सु.क. 5.6)

चूषण कर्म करनेवाले को भली प्रकार आश्वस्त हो जाना चाहिए कि उसके मुँह में कोई घाव या छाला आदि तो नहीं है, अन्यथा उसमें भी विषाक्तता के उत्पन्न हो जाने का खतरा रहेगा। चूसने के पहले चूसे जानेवाले स्थान को धोकर साफ कर लेना चाहिए। अपने मुँह में घी का लेप करना चाहिए। मुँह को जौ के आटे, वस्त्र अथवा बालू से भरकर ही चूषण कर्म करना चाहिए और चूषित रक्त को अविलम्ब थूककर विषनाशक औषधि से गण्डूष कर लेना चाहिए।

प्राचीन काल में चूषण कर्म सिंगी आदि से भी किया जाता था। आज दिन उनका स्थान चूषित या चूषण-यन्त्रों (suction pumps) ने ले लिया है। यन्त्रों का व्यवहार निक्रित रूप से अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित है।

6.2.6. अग्निकर्म या दहन (Cauterization)

दहन का अर्थ है - जलाना, दागना। आचार्य सुश्रुत ने सर्पदंश को छेदने एवं चूसने के बाद उसका दहन करने का भी निर्देश दिया है। परन्तु मण्डली सर्प द्वारा काटे जाने पर दहन का निषेध किया है -

अथ मण्डलिना दष्टं न कथंचन दाहयेत्। (सु.क. 5.7)

दहनकर्म स्वर्ण अथवा लोहे की शलाका को आग में तपाकर अथवा पीपल की डण्ठल आदि को जलाकर उससे किया जाता है। जिन परिस्थितियों या स्थानों पर अरिष्ट-बन्धन सम्भव न हो, वहाँ दहनकर्म ही अधिक उपयुक्त होता है। दहन करते समय भी मर्मस्थान का ध्यान अवश्य रखना चाहिए।

आजकल दहन-कर्म में भी विद्युत् यन्त्रों (electric cauterization) का सहारा लिया जाता है।

Scanned with CamScanner

6.2.7. परिषेचन (Irrigation)

परिषेचन का अर्थ है - सींचना, छिड़काव करना या छींटे मारना। यथा - रोगी के संज्ञानाश को रोकने अथवा उसे होश में लाने के लिए मुँह पर ठण्डे पानी के छींटे लगाना। (च.चि. 23.42)

6.2.8. अवगाहन (Immersion)

अवगाहन का अर्थ है - निमज्जन, स्नान। यथा - रोगी को शीत जल से स्नान कराना, शीत जल में तौलिया भिगोकर उसके शरीर पर रखना, पोछना तथा सिर पर बरफ की थैली रखना आदि।

6.2.9. रक्तमोक्षण (Blood letting)

रक्त मोक्षण की विधियों और उससे होनेवाले लाभ पर प्रकाश डालते हुए आचार्य चरक ने कहा है -

प्रच्छनशृंगजलौकाव्यधनैः स्राव्यं ततो रक्तम्।।
रक्ते विषप्रदुष्टे दुष्येत् प्रकृतिस्ततस्त्यजेत् प्राणान्।
तस्मात् प्रघर्षणैरसृगवर्तमानं प्रवर्त्यं स्यात्।।

(च.चि. 23.39-40)

रक्तके विष से दूषित हो जाने से मनुष्य की प्रकृति दूषित हो जाती है, अतः वह मर जाता है। इसीलिए रोगी की प्राणरक्षा के लिए दूषित रक्त का विस्रावण भी एक महत्त्वपूर्ण उपाय माना जाता है। प्राचीन काल में इसके लिए प्रच्छन्न, शृंगी, जलौका, व्यधन आदि क्रियाओं का उपयोग किया जाता था।

प्रच्छन को ही बोलचाल की भाषा में पछ लगाना भी कहते हैं। इसके अन्तर्गत पहले किसी तेज धार वाले शस्त्र से दंशस्थान को या फिर जिस स्थान से रक्तमोक्षण कराना हो उसे थोड़ा-सा काट दिया जाता है। फिर शृंगी, जलौका आदि के द्वारा रक्तमोक्षण कराया जाता है। शृंगी गाय, बैल आदि के सींग की बनाई जाती है। इसके दोनों ओर छेद होता है। चौड़े ओर के बड़े छेद को घाव पर लगाकर दूसरी ओर मुख द्वारा रक्त को चूसा जाता है। जलौका या जोंकें दो प्रकार की होती हैं - सविष और निर्विष। निर्विष जोंकों को चिकित्सक स्वयं पालते थे। जहाँ से रक्तमोक्षण कराना होता है, वहाँ थोड़ा-सा घाव करके जोंक को लगा दिया जाता है। वह लगते ही दूषित रक्त को पीना शुरू कर देती है। रक्त पी लेने के बाद उसे वहाँ से हटा दिया जाता है। फिर शिरावेध द्वारा दंशस्थान से रक्तस्राव करा दिया जाता है।

रक्तमोक्षण के योग्य रोगी के लक्षणों का वर्णन करते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है -

विवर्णे कठिने शूने सरुजेऽङ्गे विषान्विते।
तूर्णं विस्रवणं कार्यमुक्तेन विधिना ततः।।

(सु.क. 5.36)

विषान्वित अंग में विवर्णता, काठिन्य, शोथ और पीड़ा उत्पन्न होने पर तुरन्त रक्तमोक्षण कराना चाहिए।

6.2.10. वमनकर्म (Emesis)

वमन और विरेचन विष को शरीर से बाहर निकालने के महत्त्वपूर्ण उपाय हैं। हृदय की रक्षा करते हुए इनका विधिवत् (अर्थात् पूर्वकर्मों और पश्चात् कर्मों का यथावश्यक पालन करते हुए) उपयोग करना चाहिए। आज की चिकित्सा में व्यवहृत उदर-प्रक्षालन (stomach wash) और एनिमा इन्हीं क्रियाओं के आधुनिक और परिष्कृत रूप हैं। इनका वर्णन आगे आधुनिक चिकित्सा-विधियों के अन्तर्गत किया जायेगा।

वमन के योग्य रोगी के लक्षणों का वर्णन करते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है -

शीते शीतप्रसेकार्तं श्लैष्मिकं कफकृद्विषम्।
वामयेद्वमनैस्तीक्ष्णैस्तथा मूर्च्छामदान्वितम्।।

(सु.क. 5.39)

शीतकाल में, शीतप्रसेक से पीड़ित होने पर तथा कफ प्रकृति के रोगी में कफकारक विष के प्रकोप होने की अवस्था में तीक्ष्ण वमन-योगों से वमन करायें। इसी प्रकार मूर्च्छा तथा मद से ग्रस्त रोगी को भी वमन कराना चाहिए।

6.2.11. विरेचनकर्म (Purgation)

विरेचन के योग्य रोगी की अवस्था का वर्णन करते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है -

कोष्ठदाहरुजाध्मानमूत्रसंगरुगन्वितम्।
विरेचयेच्छकृद्वायुसंगपित्तातुरं नरम्।। (सु क 5.40)

जिस रोगी के कोष्ठ (उदर) में दाह, पीड़ा, आध्मान हो; जो मूत्रावरोधजन्य वेदना से ग्रस्त हो, जो वायु के अवरोध से पीड़ित हो तथा जो पिषा प्रकृति का हो उसे विरेचन देना चाहिए।

6.2.12. उपधान (Application of medicines over the incised scalp)

उपधान का शाब्दिक अर्थ है - सहारे की वस्तु; वह वस्तु जिस पर कोई चीज रखी या टिकाई जाये। विष का प्रसार मस्तिष्क तक हो जाने पर रोगी की संज्ञा का नाश होकर वह मरणासन्न अवस्था में पहुँच जाता है। इस अवस्था में प्राचीन काल में रोगी के सिर पर काकपद के आकार का चीरा लगाकर रक्तमोक्षण कराया जाता था और फिर उसी के ऊपर सातले का कल्क रख दिया जाता था। इसी को उपधान कहते हैं।

आचार्य चरक के अनुसार

विषदूषितकफमार्गः स्रोतःसंरोधरुद्धवायुस्तु।
मृत इव श्वसेन्मर्त्यः स्यादसाध्यलिंगैर्विहीनश्च।।

Scanned with CamScanner

चर्मकषायाः कल्कू बिल्वसमं मूर्ध्नि काकपदमस्य।
कृत्वा दद्यात्कटभीकटुकट्फलप्रधमनं च।।
छागं गव्यं माहिषं वा मांसं कौक्कुटमेव वा।
दद्यात् काकपदे तस्मिंस्ततः संक्रमते विषम्।।

(च.चि. 23.65-67)

जब विष के प्रभाव से कफमार्ग दूषित हो जाता है, तो स्रोतोरोध होने से वायु संचरण बाधित हो जाता है, तब विषग्रस्त मनुष्य मरने वाले मनुष्य की भांति श्वास लेने लगता है। यदि ऐसी स्थिति में पड़े हुए व्यक्ति में असाध्यता के लक्षण उपस्थित न हों, तो उसके शिर पर काकपद बनाकर उस पर बिल्व के समान सातला के कल्क का लेप कर दें। तत्पश्चात् मालकॉगनी, सोंठ, मरिच, पीपर और कायफल, इनका महीन चूर्ण बनाकर प्रधमन नस्य दें।

6.2.13. हृदयावरण (Protecting and stimulating the heart)

हृदयावरण का तात्पर्य है - हृदय को सुरक्षा प्रदान करना, उसके बल एवं सक्रियता की रक्षा करना। विष के हृदय और मस्तिष्क को आक्रान्त कर लेने पर रोगी की मृत्यु हो जाती है। इसलिए विषाक्तता में इन दोनों अंगों की रक्षा परमावश्यक है। प्राचीन काल में मधु या घृत का पान कराने, स्वर्णगैरिक को जल में घोलकर पिलाने, कौवे के मांस को स्विन्न करके उसका रस या बकरे का ताजा खून पिलाने का विधान था। यथा

आदौ हृदयं रक्ष्यं तस्यावरणं पिबेद्यथालाभम्।
मधुसर्पिर्मज्जपयोगैरिकमथ गोमयरसं वा।।
इक्षुं सुपक्वमथवा काकू निष्पीड्य तद्रसं वरणम्।
छागादीनां वाऽसृग्भस्म मृदं वा पिबेदाशु।।

(च.चि. 23.46-47)

6.2.14. अञ्जन (Collyrium)

विष के प्रभाव से जब दृष्टि-शक्ति का विनाश होने लगता है तो अञ्जन का प्रयोग किया जाता है। देवदारु, शुण्ठी, मरिच, पिप्पली, हरिद्रा, करवीर, करंज का फल और तुलसी के बीज - इन सबको समभाग में ले, इनका बारीक चूर्ण कर फिर उसे बकरे के मूत्र में पीसकर आँखों में अञ्जनवत् लगाया जाता है। इसे उषाम विषनाशक माना जाता है।

अञ्जन योग्य रोगी के लक्षणों का निर्देश करते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है -

शूनाक्षिकूटं निद्रार्तं विवर्णाविललोचनम्।
विवर्णं चापि पश्यन्तमञ्जनैः समुपाचरेत्।।

(सु.क. 5.41)

जिस रोगी की पलकों के नीचे सूजन आ गई हो, नींद से पीड़ित आँखें विवर्ण और मलिन हो गई हों तथा जो नाना प्रकार के वर्ण देखता हो उसकी आँखों की अञ्जन आदि से चिकित्सा करनी चाहिए।

6.2.15. नस्यकर्म (snuffing)

विष के वेग के कारण आँख, नाक, कान, जिह्वा और कण्ठ का अवरोध होने की स्थिति में नस्य के प्रयोग का विधान है। इसके लिए बृहती के बीज, बिजौरा नींबू के जड़ की छाल और ज्योतिष्मती के बारीक चूर्ण को नस्यवत् व्यवहार में लाने का विधान है।

नस्य या शिरोविरेचन के योग्य रोगी की अवस्था का वर्णन करते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है -

शिरोरुग्गौरवालस्यहनुस्तम्भगलग्रहे।
शिरो विरेचयेत् क्षिप्रं मन्यास्तम्भे च दारुणे।।

(सु.क. 5.42)

जो रोगी सिर में वेदना, भारीपन, आलस्य, हनुस्तम्भ, गलग्रह या भयानक मन्यास्तम्भ से पीड़ित हो, उसे तुरन्त शिरोविरेचन कराना चाहिए।

6.2.16. धूम (Medicinal smokes)

धूम या धूपन धुआँ के अर्थ में व्यवहृत होते हैं। औषधियों के धुएँ का पान करने से बन्द स्रोत खुल जाते हैं। इससे श्वास-प्रश्वास की गति सामान्य होने लगती है। यह विषनाशक धुआँ अन्दर जाकर विषाक्तता का नाश करता है। इसके प्रभाव से विषैले जीव-जन्तु भी धुएँ वाले स्थान का परित्याग कर देते हैं। शास्त्रों में इसके लिए अनेक योग दिये गये हैं। छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी और अरहर के पत्तों की धूमवर्ति विषजन्य हिक्का का नाश करती है। लाख, खश, श्वेत अपराजिता, तेजपात, गूगुल, भिलावा, अर्जुन के फूल और राल का धुआँ कमरे के पूरे परिवेश को निर्विष एवं शुद्ध बना देता है और साँप, बिच्छू, चूहे आदि विषैले जीवजन्तु वहाँ से भाग जाते हैं।

6.2.17. लेह (Licking semi-liquids)

लेहन का अर्थ है - चाटना और लेह या अवलेह का अर्थ है - चाटकर खानेवाला पदार्थ। विष के प्रभाव से मुँह और कण्ठ का सूखना एक सामान्य बात है। इसी की शान्ति के लिए औषधि को आसानी से गले के नीचे उतारने में सहायक होने के कारण अनुपान के रूप भी लेहों को व्यवहार में लाया जाता है। इसके लिए मधु और घृत का व्यवहार सर्वविदित है।

6.2.18. औषध (Medication)

निम्नलिखित अगदों का अवस्थादि का विचार कर प्रयोग कर सकते हैं -

Scanned with CamScanner

- अजित अगद
- अजेय घृत
- अमृत घृत
- अमृत सर्पि
- ऋषभ अगद
- औशनस् अगद
- कल्याणक सर्पि
- काकाण्डादि योग
- क्षारागद
- गंधहस्ती अगद
- चन्दनादि योग
- तार्क्ष्य अगद
- दशांग अगद
- दूषीविषारि अगद
- नागदन्त्यादि घृत
- पञ्चशिरीष अगद
- प्राजापत्य अगद
- बालसूर्य अगद
- ब्राह्म अगद
- महा अगद
- महागंधहस्ती अगद
- महासुगन्धि अगद आदि।

विविध अगदों की विस्तृत जानकारी के लिए परिशिष्ट 1 देखें।

6.2.19. प्रधमन (Blowing)

तदनन्तर प्रधमन की क्रिया की जाती थी। प्रधमन का अर्थ है- किसी चोंगे या नली में रखकर, फूँक मारकर औषधि को नासा या व्रण के अन्दर पहुँचाना या उसपर छिड़काव करना। प्रधमनार्थ ज्योतिष्मती, त्रिकटु और कट्फल के बारीक चूर्ण को व्यवहार में लाया जाता है। यह भी विषनाशक है।

6.2.20. प्रतिसारण या प्रघर्षण (Scrubbing)

उक्त प्रच्छन्न आदि क्रियाओं द्वारा भी जब दूषित रक्त यथेष्ठ मात्रा में नहीं निकल पाता है तो प्रघर्षण (प्रतिसारण) क्रिया द्वारा रक्त की प्रवृत्ति कराई जाती है। प्रघर्षण का तात्पर्य है शुष्क चूर्ण को दंशस्थान पर रगड़ना या मलना। आचार्य चरक ने प्रघर्षणार्थ निम्न चूर्ण का निर्देश किया है -

त्रिकटुगृहधूमरजनीपञ्चलवणरोचना: सवार्ताका:।

(च.चि. 23.41)

शुण्ठी, मरिच, पिप्पली, गृहधूम, हरिद्रा, पञ्च लवण, गोरोचन और बड़ी कटेरी - इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर उनका कपड़छन चूर्ण बनाकर दंशस्थान पर घर्षण करें। इससे रुका हुआ रक्त बहने लगता है।

6.2.21. प्रतिविष (Antidotes)

जंगमविष स्थावरविष का और स्थावरविष जंगमविष का प्रतिकारक है। आयुर्वेद में यह शब्द इसी अर्थ में व्यवहृत हुआ है। संहिताओं में विषाक्तता की असाध्य अवस्था में अन्तिम उपाय के रूप में जंगम विष से ग्रस्त प्राणी को स्थावर विषपान कराने और स्थावर विष की असाध्य अवस्था में विषाक्त सर्प से डसाने का विधान है। यथा -

विषपानं दष्टानां विषपीते दंशनं चान्ते।

(च.चि. 23.50)

6.2.22. संज्ञापन या संज्ञास्थापन (Revival of consciousness)

विषाक्तता के उपचार के लिए रोगी को होश में बनाये रखना या बहोश रोगी को होश में लाना आवश्यक है। इस विधि का आचार्य सुश्रुत ने काफी विस्तार से वर्णन किया है -

नष्टसंज्ञं विवृत्ताक्षं भग्ननग्रीवं विरेचनै:।
चूर्णै: प्रधमनैस्तीक्ष्णैर्विषार्तं समुपाचरेत्।।

ताडयेच्च सिरा: क्षिप्रं तस्य शाखाललाटजा:।
तास्वप्रसिच्यमानासु मूर्ध्नि शस्त्रेण शस्त्रवित्।।

कुर्यात् काकपदाकारं व्रणमेवं वन्ति ता:।
सरक्तं चर्म मांसं वा निक्षिपेच्चास्य मूर्धनि।।

चर्मवृक्षकषायं वा कल्कं वा कुशलो भिषक्।
वादयेच्चागदैर्लिप्त्वा दुन्दुभींस्तस्य पार्श्वयो:।।

लब्धसंज्ञं पुनश्चैनमूर्ध्वं चाधश्च शोधयेत्।
नि:शेषं निर्हरेच्चौवं विषं परमदुर्जयम्।।

अल्पमप्यवशिष्टं हि भूयो वेगाय कल्पते।
कुर्याद्वा सादवैवर्ण्यज्वरकासशिरोरुज:।।

शोफशोषप्रतिश्यायतिमिरारुचिपीनसान्।
तेषु चापि यथादोषं प्रतिकर्म प्रयोजयेत्।।

(सु.क. 5.43-49)

तीव्र विषाक्तता से ग्रस्त जिस संज्ञाहीन रोगी की आँखें खुली की खुली रह गई हों, गर्दन लटक गई हो उसे तीक्ष्ण प्रधमन नस्यों से शिरोविरेचन दे। शाखा और ललाट में जानेवाली शिराओं पर तुरन्त ताड़न करे। यदि ऐसा करने पर भी उनसे रक्त न आये तो शास्त्रविद् एवं कर्मकुशल वैद्य शस्त्र से उसके सिर पर काकपद के आकार का चिह्न बनाये। ऐसा करने से उसमें से रक्त का स्रवण होने लगेगा। काकपद व्रण में रक्त वाला चर्म या मांस अथवा चर्म-वृक्ष (चामेर) के कषाय या कल्क को वहाँ पर रख दें। रोगी के पास दुन्दुभि (बड़ा ढोल या नगाड़ा) को अगदों से लेप कर बजाये। चेतना आने पर उसे पुन: वमन, विरेचन आदि दे। अतिशय दुर्जेय विष को पूर्णरूप से निकाल देना चाहिए। उसका रंचमात्र भी अंश शेष रह जाना वेगों को पुन: उत्पन्न कर सकता है, अथवा शिथिलता, विवर्णता, ज्वर, कास, शिरोरोग, शोफ, शोष, प्रतिश्याय, तिमिर, अरुचि आदि रोगों को उत्पन्न कर सकता है। इनकी भी दोषों के अनुसार ही चिकित्सा करनी चाहिए।

Scanned with CamScanner

6.2.23. लेप (Ointment)

प्रतिसारणकर्म के कारण यदि रक्त अधिक निकलने लगे तो वट आदि क्षीरी वृक्षों के शीतल कल्क का लेप लगाना चाहिए। यथा-

घर्षणमतिप्रवृत्ते वटादिभिः शीतलैर्लेपः।।

(च.चि. 23.41)

6.2.24. मृतसंजीवन (Mritasanjivan)

मृतसंजीवन एक प्राचीन विद्या थी जिससे मरे हुए प्राणियों को जीवित कर दिया जाता था। आजकल यह लुप्तप्राय हो चुकी है। चरकसंहिता में इसी नाम से एक अगद (औषधि योग) का भी उल्लेख किया गया है (देखें - च.चि. अध्याय 23, श्लोक संख्या 54 से 60 तक)। इसे इन्होंने सभी प्रकार के विष-विकारों, अनिष्ट प्रभावों और अकाल मृत्यु को जीतने वाला तथा दीर्घ आयु प्रदान करनेवाला बतलाया है।

विष-चिकित्सा के ही सन्दर्भ में प्रयुक्त 'संवाहन' का अर्थ है - मणि, रत्न अथवा कॉसे के पात्र का स्पर्श कराना।

उक्त प्रविधियों का उपयोग करते समय निम्न दो बातों का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए -

1. प्राणी को जीवित रखने में श्वास-प्रश्वास और रक्तसंचार की क्रियाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। विषाक्तता में ये दोनों ही क्रियाएँ सर्वाधिक और उग्र रूप में प्रभावित हो जाती हैं। इनकी विकृति उसके लिए घातक सिद्ध होती है। इसलिए विषाक्तता की चिकित्सा में इन्हीं को नियमित बनाये रखने और चयापचय (metabolism) तथा उत्सर्जन (excretion) की क्रियाओं द्वारा विष से छुटकारा पाने के लिए रोगी को अधिकाधिक प्रोत्साहित करने की ओर पूरा ध्यान देना चाहिए।
2. विष की चिकित्सा में एक बात यह भी ध्यान में रखने की है कि निर्विषीकरण की क्रियाओं और विषनाशक औषधियों का आवश्यक मात्रा में ही उपयोग किया जाये। क्रियाओं की अधिकता दोषों को और भी अधिक प्रकुपित कर दे सकती है। प्रतिविषों (stimulants) औषधियों का अति मात्रा में प्रयोग कभी-कभी विष से भी अधिक घातक सिद्ध हो सकता है।

6.3 Management of Poisoning

In modern toxicology, management of poisoning has following six steps -

1. Resuscitation,
2. Removal of unabsorbed poison,
3. Use of antidotes,
4. Elimination of absorbed poison,
5. Treatment of symptoms and other complications and
6. Maintenance of general health of the patient.

6.3.1 Resuscitation

Definition

Steps involved in resuscitation -

1. Revival
2. Ventilation and
3. Treatment of hypotension

Revival/ Resuscitation

- The priority for physician, attending a case of poisoning, is to revive or resuscitate the patient. As a physician one should be vigilant towards functioning of various organs or systems of the body.
- Maintenance of cardiac activity and blood circulation is extremely important.
- Artificial dentures of the patient should be removed.
- Oral and oro-pharnygeal secretions should be promptly removed through suction.
- In case of unconscious patient and when his cough reflexes have ceased a cuffed endotracheal tube should be inserted.
- If signs of respiratory failure are evident then artificial respiration should be resorted to.

Ventilation

- The crowd around the patient should be dispersed and appropriate ventilation of the room should be done by keeping the windows etc. open.
- The cloths on the patient's body should be loosened.
- Arterial blood gas should be analysed. If Pa CO_2 is more than 6.5 k Pa then artificial or supportive respiratory measures should be adopted.

Scanned with CamScanner

Treatment of Hypotension

- If the systolic blood pressure falls below 90 mmHg then the physician should immediately arrange for pressure agent.
- Patient should be positioned in head-low by raising the height of bed on the leg side by 15 cms.
- If poisoning is severe then central venous line should be secured and dextran or purified protein should be infused intra-venously.
- To enhance renal blood flow, if required, dopamine should be used.
- Along with revival or resuscitation of the patient, the traces or remains of poisons in the body should also be attended to.

Removal of Unabsorbed Poison

The rate of absorption for poison depends upon the nature and route or mode of administration. Certain time-frame is required for the poison to get absorbed in the body; therefore, all efforts should be done to remove the unabsorbed poison from the body. The measures, for this, depend on the route or mode of poison administration.

Contact Poisons

1. Washing the area/site with clean water and/ or soap and water
2. Use of specific antidotes (if the nature of poison is known).

Inhaled Poisons

1. Shifting the patient to fresh air
2. Docongestion and sufficient ventilation of the place where the patient is shifted
3. Artificial respiration and oxygenation.

Injected Poisons

1. Application of tourniquet near the site of injection
2. Application of ice packs
3. Incision and suction

Ingested Poisons

1. Induction of vomiting or purgation (as required)
2. Gastric lavage (stomach wash)

6.3.2 Induction of Vomiting

Indications

- During the initial few hours (as early as possible) of ingested poison, except when the poison is corrosive in nature.

Contra-Indications

- Corrosive poisons
- Unconscious and comatose patients
- Children
- Pregnancy etc.

Commonly used Emetic Drugs/ Agents

1. Ipecac powder (1-2 gm) in one glass water
2. Ipecac syrup (30 ml)
3. Zinc sulphate (250mg) in one glass water
4. Ammonium carbonate (1-2 gm) in one glass water
5. Apomorphine hydrochloride (6 mg s.c.) with Naloxone (0.4 mg i.m./i.v.) (for counteracting the respiratory depression caused by Apomorphine)
6. Common salt 1 table spoon
7. Mustard powder 2 tea spoon

Methods

If considerable time has not lapsed, in case of ingested poisoning, then induction of vomiting proves more productive than the gastric lavage/ stomach wash; except in case of corrosive poisons. Some poisons, by nature, are emetic and a large portion of them are thrown out of the body through vomiting. Even in such case, induction of further vomiting is advisable.

If the patient is conscious, supportive and the poison he has ingested is not contradictory to vomiting then manual stimulation of oro-pharyngeal area or using emetics should be immediately resorted to.

इस सन्दर्भ में योगोक्त गजकर्णी या धौति-क्रिया भी उपयोगी सिद्ध हो सकती है। रोगी स्वयं 4-5 गिलास लवण युक्त सुखोष्ण जल पीकर उसे स्वयं हलक में अँगुली डालकर निकाल दे। इस क्रिया

Scanned with CamScanner

की विस्तृत जानकारी के लिए देखें – डॉ. अयोध्या प्रसाद 'अचल' कृत 'यौगिक षट्कर्म'।

6.3.3 Gastric lavage (Stomach Wash)

Gastric Lavage Tube

- Synonym - Boa's tube/ Ewald's tube
- It is rubber tube; the length of the tube is 1.5 m. and its external diameter is 12.7 mm.
- Parts -
  1. Filter funnel
  2. Rubber tube
  3. Suction bulb
  4. Mouth gag
  5. Lower end of rubber tube (marked at 40, 50 and 60 cm.)

Indications

- Ingested poisoning

Contra-Indications

- Corrosive poisoning (except carbolic acid)
- Convulsions
- Comatose patient
- Upper alimentary tract illness/ pathology etc.

Method

- Gastric lavage is washing away of upper part of gastric tract, especially stomach, for any ingested poison.
- It is done using a stomach tube.
- It is a life-saving measure if performed within 1 hours of ingestion of poison. After this the poison is absorbed in the system and the procedure will prove ineffective.
- Even if the patient has been vomiting out the contents still gastric lavage should be performed to wash out the traces of poison that may be present in the gastric cavity.
- Therefore, gastric lavage or stomach wash proves to be a mandatory measure in treating ingested poison except when contra-indicated.

Procedure

- Patient should be lying on his left side or prone with his head hanging over the edge of the bed and face down supported by a subordinate; this is done so that the mouth is at a lower level than the larynx. By this positioning the secretions of respiratory tract can easily come out and it also prevents aspiration of any contents into the respiratory pathway.
- The end of the rubber tube is lubricated with liquid paraffin, glycerine, milk or any other slimy material and inserted into the oral cavity.
- If required a tongue depressor can be used to lower the tongue so as to facilitate insertion of the rubber tube.
- The tube should be inserted till the mark on the tube. Once reached the mark, it is assumed that the tip of the tube is inside the stomach.
- To confirm the position of tip of the tube, a small amount of air is pushed through the tube and a stethoscope is placed over the stomach area to hear bubble sounds.
- Absence of any cough reflex also confirms the position of the tube in the abdominal cavity.
- The tube should be inserted with utmost care and without applying any considerable force; if force is applied, the chances are high that the esophageal, respiratory passage or stomach wall might get injured.
- About half liter of warm water should be passed through the funnel held high up above the patient's head. Due to gravitational force, the warm water will immediately pass through the tube.
- After this the funnel should be lowered (below the gastric level) and whatever is in the stomach will come out itself.
- The contents of first wash should be preseved and sent for biochemical analysis.
- Large amount of warm water, during the first wash, should be avoided as this might

Scanned with CamScanner

push the stomach contents into the duodenal area.

- This procedure should be repeated many times and continued till the color of solution (inserted through the funnel) and the content (aspirated out through the tube) are same.
- Nearly ten liters of water might be required for gastric lavage.
- Some amount of solution should be allowed to remain in the stomach cavity. By this trace of poisons, if any left behind, will be neutralized.
- Solutions used for gastric lavage include -
  - Potassium permanganate
  - Magnesium sulphate
  - Sodium sulphate
  - Sodium bicarbonate,
  - Activated charcoal,
  - Fuller's earth etc.
- These are selected on the basis of nature and dosage of poisons.
- After appropriate gastric lavage, the tube should be removed carefully.

Gastric lavage in Infants and Children

- For infants and children, Ryle's tube or a number 8 to 12 French catheter can be used for gastric lavage.
- About 25 cm length is sufficient to reach the stomach cavity and this length should be marked before-hand by using an adhesive tape.
- The tip of the tube should be lubricated and inserted through nostrils or oral cavity.
- If the child coughs, it suggests that the tube is entering the respiratory passage; in such condition the tube should be slightly retracted and again pushed in the esophageal tube.
- The outer end of the tube should be connected to a syringe (20 to 50 ml) and the gastric contents be aspirated out.
- Later solutions (mixed with antidotes etc.) should be pushed through the tube and aspirated out.
- One has to be very careful when performing gastric lavage in children.

6.3.4 Use of Antidotes

Definition

Antidotes are the substances that counteract or neutralize the effects of poisons.

Types of Antidotes

1. Mechanical or physical antidotes
2. Chemical antidotes
3. Physiological antidotes
4. Universal antidotes

1. Mechanical or Physical Antidotes

- Bulky food articles (e.g. potato, banana, rice etc.) - These hinder the ingested poisons (e.g. glass powder, dust of diamond etc.) by blocking their action on the gastric mucosa.
- Demulcents (white of egg, ghee, milk, butter etc.) - These coat the gastric mucosa and thus hinder the absorption of poisons.
- Activated charcoal - This adsorbs the poisons and thus makes them ineffective.

2. Chemical Antidotes

- Weak alkali magnesium oxide for acids
- Weak acids acetic acid or vinegar for alkalies
- Lime for oxalic acid
- Potassium permanganate for various poisons

3. Physiological/Pharmacological Antidotes

These act by producing exactly the opposite action to those produce by the poison e.g.—

- Physostigmine in pibcarpine poisoning
- Atropine in organophas phorus poisoning
- Nolorone in morphine poisoning

4. Chelating agent - वह पदार्थ हैं जो metalic poision के साथ मिलकर उसे हानिरहित पदार्थो में बदल देते हैं, यह निम्नवत हैं -

(i) BAL- British Anti Lewisite या Dimereaprol यह संखिया, पारद स्वर्ण, विस्मथ, ताम्र आदि धातुओं की विषाक्तता में 2.5mg/kg I.M. प्रत्येक चार-चार घण्टे में प्रथम दो दिन बाद में दिन में दो बार इंजेक्शन द्वारा अगले 10 दिन तक दिया जाता है।

Scanned with CamScanner

(ii) E.D.T.A - Ethylenediamine tetraacetic acid, calcium disodium verronate. इसका प्रयोग विशेषरूप से सीसा विषाक्तता में अन्त:शिरा से किया जाता है। इसकी मात्रा 50-70mg/kg twice a day for 3-5 days.

(iii) Penicillamine - यह पैनिसिलिन का ऐमिनी अम्ल व्युत्पन्न है जो विशेष रूप से ताम्र विषाक्तता या wilson's disease में, जो ताम्र के विकृत चयापचय के कारण होती है में 250mg दिन में चार बार मुख मार्ग से 8 से 10 दिन तक प्रयोग किया जाता है।

(iv) Desferrioxamine - इसका प्रयोग लौह विषाक्तता में chelating agent के रूप में किया जाता है।

4. Universal Antidotes

- Charcoal (2 parts) + Magnesium oxide (1 part) + Tannic acid (1 part)

Household antidotes

S.No.	Antidote	Poison
1.	Milk (cow's milk), ghee and egg white	Mercury, arsenic and other metallic poisons
2.	Milk of magnesia or soap water	Acid poisoning
3.	Orange or lemon juice with vinegar (1 part vinegar and 3 parts water)	Alkali poisoning
4.	Strong tea	Alkaloid poisoning or metal poisoning
5.	Starch	Iodine poisoning
6.	Flour or potato mash	As a substitute for activated charcoal

आयुर्वेद में गोदुग्ध को विष के दस गुणों के ठीक विपरीत उसके प्रतिकारक दस गुणों से युक्त माना गया है।

6.3.5 Elimination of Absorbed Poison

If more than six hours has passed from time of poisoning and above mentioned measures are not proving sufficient then it should be understood that large amount of poison has been absorbed in the blood system. This absorbed poison should be removed through diuresis or sudation. For this following measures should be adopted -

1. **Forced diuresis** - It is a good method to enhance the process of elimination of the absorabed poison when the kidneys are in well functioning condition and can take additional load. This is used in poisoning due to asperine or barbiturates.
2. **Peritoneal dialysis** - This is used in poisoning due to methanol and ethylene glycol. In non-availability of dialysis, this method can be used in salicylate poisoning among children.
3. **Forced alkaline diuresis** - This is used in poisoning due to pheno-barbitol and salicylate.
4. **Hemodialysis** - For elimination of barbiturates, boric acid, bromides, glutethimide, methyl alcohol, salicylates etc. from the blood.
5. **Resin hemodialysis** - Used in theophylline poisoning.

Symptomatic Treatment

Symptomatic treatment also plays a vital role in management of poisoning cases. In cases where the source of poisoning is not established the patient should be managed only on the basis of symptoms. Therefore, the attending physician should be vigilant towards the symptoms manifested.

- **For pain relief** - Morphine or Pethidine
- **For respiratory failure** - Artificial respiration and oxygen therapy
- **For fall in blood pressure** - Cardio-stimulants
- **For pyrexia** - Antipyretic drugs
- **For fall in temperature** - Non-pharmacological measures like warm room, blankets etc.
- **For convulsions** - Barbiturates
- **For dehydration** - Fluids etc.

By infusion of fluids, the poison can be expelled through the urine. But the pysician should be vigilant towards over-hydration of the patient.

Scanned with CamScanner

In case of unconscious patient, the total fluids infused should not be more than 1.5 liters.

Early stages of vomiting and diarrhea should not be stopped; these help in self-elimination of poisons from the body.

In case of continuous and persistent vomiting following medicines should be used - luminal atropine etc.

Constipation should be managed with purgatives; e.g. milk of magnesia etc. If required, enema can also be given.

Anuria should be managed quickly because large amount of poison can be expelled out through urination. Distended bladder should be mildly pressed. Saline or glucose saline should be pushed intra-venously. Diuretics should be given. In case of emergency urethral catheterization should be done.

In case of hypotension, the patient should be given a head-low position. Stimulant drugs should be given.

Delirium, convulsions and insomnia should be managed with sedatives and sleep-inducing drugs such as - barbiturates, paraldehyde, chloral hydrate, Diazepalm etc.

Severe convulsions should be managed with anesthetic agents such as chloroform etc.

Pulmonary edema should treated using atrophine sulphate (1/6 or 1/4 grain) sub-cutaneously. If needed O2 inhalation can be given.

Edema of pleura and respiration passage should be managed with appropriate antibiotics.

Physician should watch-out for labored breathing or respiratory failure. These should be managed promptly.

Shock results in hypotension, coldness and sticky skin, raised pulse rate, fall in body temperature and discoloration of skin. It is an emergency condition and if patient cannot recover from this he will collapse and ultimately die. There can be numerous reasons for shock to set in.

If shock is due to anuria or oliguria caused by dehydration then blood-transfusion should be given. In non-availability of blood, blood-plasma or even simple glucose-saline should be infused.

Bradycardia or cardiac arrest should be managed appopriately.

To enhance peripheral circulation, adrenaline or nor-adrenaline should be given by drip method.

At times cessation of acute and fatal signs of poisoning results in manifestation of associated symptoms such as - hemiplegia, edema, renal edema etc. These should be managed accordingly.

In management of poisoning the recovery period is considered to be a stage of complications. During this period the physician should be extremely vigilant. The after-effect of antidotes, at times, can give rise to serious complications.

6.3.6 Maintenance of general health of the patient

- During the course of management for poisoning, the general health of the patient should be maintained.
- Body temperature, functioning of various organs, strength and consciousness should be reassessed at regular intervals.
- After recovering from poisoning the patient should be counselled for optimistic attitude towards life and its incidences.
- Optimum nursing care, psychological support and medical managment - all these are of equal importance in treating cases of poisoning.
- After recovery in suicidal poisoning cases the patient should be put to psychiatric counselling under the guidance of expert Psychiatrists; and the patient should be discharged only after the approval of Psychiatrist-in-charge.

• • •

Scanned with CamScanner

7

विष के उपद्रव और उनकी चिकित्सा
Supervenient Symptoms or Complication of Poisoning & their Management

विषय

- विष के उपद्रव (Supervenient symptoms or complications of poisoning)
- चिकित्सा (Treatment)
- दृश्य अगद और शब्द अगद (Sight and sound therapy)
- पथ्यापथ्य (Apt and inapt regimen)
- विषमुक्त रोगी के लक्षण (Symptoms of recovery)

7.1 विष के उपद्रव (Supervenient Symptoms or Complications of Poisoning)

आचार्य वृद्धवाग्भट ने विष के सोलह उपद्रव बतलाये हैं –

ज्वरकासवमिश्वासहिध्मा तृष्णाऽतिमूर्च्छनम्।
विशोभेदोऽतिकाठिन्यमानाहो बस्तिमूर्द्धरुक्।।

श्वयथुः पूतिदंशत्वं रक्तस्रावो विषानिलः।
इति षोडश निर्दिष्टा विषार्तानामुपद्रवाः।
गच्छन्त्युपेक्षिता नाशं यैर्जुष्टा विषरोगिणः।। (अ.सं.उ. 47/2-3)

1. ज्वर (fever)
2. कास (cough)
3. वमन (vomiting)
4. श्वास (dyspnea)
5. हिक्का (hiccups)
6. अति तृष्णा (excessive thirst)
7. मूर्च्छा (fainting)
8. अतिसार (diarrhea)
9. मलावरोध (constipation)
10. आनाह (tympanites)
11. बस्ति में पीड़ा (bladder colic)
12. सिरदर्द (headache)
13. शोथ (edema)
14. दंश का सड़ना (gangrene)
15. रक्तस्राव (bleeding)
16. विषवात।

– इनकी उपेक्षा करने से विष-रोगियों की मृत्यु हो जाती है।

आचार्य चरक ने इस सन्दर्भ में मुख्यरूप से चार उपद्रवों का उल्लेख किया है

विषवेगान्मदमूर्च्छाविषादहृदयद्रवाः प्रवर्तन्ते।
शीतैर्निवर्तयेत्तान् वीज्यश्चालोमहर्षात् स्यात्।। (च.चि. 23/43)

1. मद (intoxication),
2. मूर्च्छा (fainting),
3. विषाद (depression)
4. हृदयद्रव [हृदयगति का बढ़ जाना (tachycardia)]

Scanned with CamScanner

– इन उपद्रवों को शान्त करने के लिए शीतल क्रियाएँ और शीत द्रव्यों का उपयोग करना चाहिए, (यथा – पंखा झुलाना) और ये क्रियाएँ तब तक करते रहना चाहिए जब तक रोगी में सिहरन न उत्पन्न हो जाये।

ऐसा प्रतीत होता है कि आचार्य वृद्धवाग्भट ने विषाक्तता से उत्पन्न प्राय: सभी महत्त्वपूर्ण लक्षणों का उपद्रवों में समावेश कर लिया है पर आचार्य चरक ने प्रारम्भिक अवस्था के मात्र अति गम्भीर लक्षणों को ही इसमें समाविष्ट किया है।

7.2 चिकित्सा (Treatment)

चिकित्सा में यहाँ मात्र शास्त्रोक्त योगों का ही उल्लेख किया जा रहा है। आधुनिक योगों को भी चिकित्सक अपने विवेक से व्यवहार में ला सकते हैं, परन्तु उन्हें इतना ध्यान रखना चाहिए कि जिन योगों को वे व्यवहार में ला रहे हैं उनका विष-चिकित्सा से विरोध न हो।

7.2.1 ज्वर (Fever) की चिकित्सा

1. आरग्वध का फल + खस + गम्भारी + मुस्ता + पद्माख के क्वाथ में शर्करा + मधु मिलाकर पिलायें।
2. कुटकी + मिश्री को चावलों के धोवन से दें।
3. काला जीरा + ऋषभक + जीवक + कमल + बेर की मज्जा + मिश्री + धनिया + भारंगी + मुलहठी + नागकेसर का क्वाथ – वमन, कास, श्वास और तृष्णा में भी उपयोगी।
4. त्रिफला + अमलतास + कटेरी का क्वाथ।
5. कच्चे बेल का गूदा + वचा + मुस्तक + पुनर्नवा का क्वाथ – अग्निमान्द्य और शोथ में भी उपयोगी।
6. हींग + पिप्पली का चूर्ण मधु + मिश्री मिलाकर अथवा
7. सैंधव लवण + कपित्थ रस + मधु + मिश्री में मिला कर – ये दोनों योग हिक्का, श्वास और कास में भी उपयोगी।
8. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - गोदन्ती भस्म
   - प्रवालपिष्टी
   - षडंगपानीय क्वाथ
   - पञ्चमूलादि कषाय आदि।
   - शुभ्रा भस्म
   - ताप्यादि लौह
   - अमृताष्टक क्वाथ

7.2.2 कास (Cough) की चिकित्सा

1. द्राक्षा + शुण्ठी + पिप्पली + घृत + मधु + लेहनार्थ
2. त्रिफला + मुस्ता + घृत + मधु + लेहनार्थ
3. पाठा + मञ्जिष्ठा + अञ्जन + हरिद्रा + दारुहरिद्रा + यष्टीमधु चूर्ण + यष्टीमधु क्वाथ
4. हींग + पिप्पली + कैथ + सेंधानमक के चूर्ण को मिश्री + मधु से चटायें।
5. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - सितोपलादि चूर्ण
   - प्रवालपिष्टी
   - सूतशेखर रस
   - गोदन्ती भस्म
   - स्वर्णभस्म
   - द्राक्षासव आदि।

7.2.3 वमन (Vomiting) की चिकित्सा

1. काली मिर्च का चूर्ण + बिल्वमूल के क्वाथ,
2. बिल्वमूल + आमलकी + फालसा + द्राक्षा + मुलेठी के चूर्ण को दूध में पतला करके,
3. काली मिर्च + अञ्जन + खस + मुलेठी + छोटी इलायची + पिप्पली + नागकेसर अथवा
4. काली मिर्च + द्रवन्ती को घृत + मधु से चटायें।
5. बरगद + क्षीरी वृक्षों के शुंगों को मधु + मिश्री के साथ दें।
6. पुराने चावलों का भात चन्दन के पानी में बनाकर मधु + दूध मिलाकर खिलायें, ऊपर से शीतल जल पिलायें।
7. बेर की गुठली की मींगी + रसाञ्जन + धान का लावा + नीलकमल – इनके चूर्ण को मधु + घृत के साथ मिलाकर चटायें।
8. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - शुक्तिभस्म
   - पुष्पराग भस्म
   - सूतशेखर रस
   - स्वर्णमाक्षिक भस्म
   - कुमुदेश्वर रस
   - चन्द्रकला रस आदि।

7.2.4 श्वास (Asthma) की चिकित्सा

1. हींग + पिप्ली; पिप्पली + प्रियंगु को मधु + घृत के साथ,
2. तेल + गोबर के रस को,
3. द्राक्षा + काकड़ासिंगी + पिप्पली + मिश्री को;
4. गुड़ + सोंठ + पिप्पली + हरड़ + ऑवले के चूर्ण को मधु के साथ चटायें।
5. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - स्वर्णभस्म
   - पन्ना भस्म
   - लक्ष्मीविलास
   - द्राक्षासव
   - वासावलेह आदि।
   - अभ्रक भस्म
   - मुक्तापिष्टी
   - प्रवालपञ्चामृत
   - वासारिष्ट

Scanned with CamScanner

7.2.5 हिक्का (Hiccough) की चिकित्सा

1. छोटी कटेरी + बड़ी कटेरी + अरहर की पत्तियों को पीस, धूमवर्ति तैयार कर उससे रोगी को धूम्रपान करायें।
2. शंखभस्म + स्वर्ण भस्म + कुटकी + स्वर्ण गैरिक को मधु के साथ चटायें,
3. काली मिर्च + सोंठ + पिप्पली + खस + हल्दी + दारुहल्दी को मधु के साथ चटायें।
4. त्रिकटु को बिजौरा नीबू के रस में दें।
5. नेत्रबाला चूर्ण + मधु के साथ दें।
6. सोंठ + खैर + हल्दी + देवदारु के क्वाथ में गुड़ मिलाकर दें।
7. दन्ती + इन्द्रायण + चित्रक के कल्क की कांजी के साथ पिलायें।
8. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - मयूरचन्द्रिका भस्म
   - सूतशेखर रस
   - विजयापुष्पाद्यवलेह आदि।

7.2.6 तृष्णा और मूर्च्छा (Thirst and fainting) की चिकित्सा

1. छाती और सिर पर शीतल आलेप और शीतल जल से परिषेक करें। इसके लिए कमलनाल, कमल-पुष्प, चन्दन, खस और मुक्ता को वर्षा के जल, खाण्ड के शर्बत, दूध, घी अथवा ईख के रस में तर करके काम में लायें।
2. रोगी को ठण्डे जल से परिसिक्त स्थान में बैठाकर या लिटाकर पंखे से हवा करें।
3. कमल, नीलकमल, किञ्जल्क (खिले हुए कमल) से भरे तालाब या नदी में अवगाहन करायें।
4. शर्करा + अनारदाना + मधु और जल में बना लाजा का सत्तू पिलायें।
5. बरगद + जलवेतस + जामुन + आम + खस के फाण्ट से तैयार शीतल जल पिलायें।
6. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - रसादि चूर्ण
   - चन्दनादि चूर्ण
   - चन्दनादि वटी
   - कुमुदेश्वर
   - पर्पटाद्यरिष्ट
   - उशीरासव आदि।

7.2.7 अतिसार (Diarrhea) की चिकित्सा

1. चिरायता, मोथा, कुटकी, त्रायमाण, इन्द्रजौ – प्रत्येक एक-एक भाग, चित्रक दो भाग और कुटज की छाल आठ भाग लेकर चूर्ण करें। इसे शीतल जल से पिलायें। उदावर्त, कास, श्वास और ज्वर में भी उपयोगी।
2. लोध्र + मोचरस + पाठा + धातकी के चूर्ण को तण्डुलोदक में मधु मिलाकर उससे पिलायें।
3. सोंठ + अतीस + हरड़ + धातकी + कुटज + रसाञ्जन का सूक्ष्म चूर्ण तण्डुलोदक से पिलायें।
4. पाठा + सोंठ के चूर्ण को मधु मिश्रित दही के साथ पिलायें।
5. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - कामदुधा रस
   - सूतशेखर रस
   - प्रवालपञ्चामृत
   - कुटजघनवटी
   - कुटजावलेह
   - कुटजारिष्ट आदि।

7.2.8 बस्ति-वेदना, उदावर्त और आनाह (Pain in bladder, flatulence and constipation) की चिकित्सा

1. फलवर्ति का व्यवहार करें।
2. अमलतास, निशोथ, काला जीरा – इनमें से किसी एक या अधिक को हरड़ के साथ चूर्णित कर मधु और घृत से दें।
3. गृहधूम + तगर + काली निशोथ + नीलिनी + चौलाई – इनसे सिद्ध घृत पिलायें।
4. त्रिफला के क्वाथ में त्रिवृत् का प्रक्षेप देकर पिलायें।
5. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - त्रिफला चूर्ण
   - पञ्चसकार चूर्ण
   - आरग्वधादि क्वाथ
   - शंख वटी
   - ताप्यादि लौह
   - अभयारिष्ट आदि।

7.2.9 शिरोवेदना (Headache) की चिकित्सा

1. काकोली, बरगद आदि क्षीरी वृक्षों की छाल अथवा द्राक्षा, मुलेठी और शर्करा को शीतल जल में पीस कर उसका नस्य दें।
2. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - गोदन्ती भस्म
   - कामदुधा
   - सूतशेखर
   - शूलवज्रिणी
   - प्रवालपिष्टी
   - च्यवनप्राशावलेह
   - दशमूलारिष्ट आदि।

7.2.10 शोथ (Inflammation) की चिकित्सा

1. वमन और विरेचन से शरीर का शोधन कर :–
   a. सोंठ, पिप्पली, कुटकी और देवदारु से सिद्ध दूध अथवा

Scanned with CamScanner

b. तुलसी के मूल के कल्क या पिप्पली सिद्ध बकरी का दूध पिलायें।

2. निशोथ और त्रिफला के क्वाथ को तीन भावनाएँ देकर, घी में मिलाकर सेवन करायें।
3. मधु + विडंग + त्रिफला + देवदारु अथवा खस + पद्माख; या मधुर और कषाय द्रव्यों से तैयार लेप का व्यवहार करें।
4. शिरीष के फूल + सॉप का सिर + तगर + कूठ – इनके चूर्ण को घृत-मिश्रित कर उसका धुआँ दें।
5. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - पुनर्नवा मण्डूर
   - लक्ष्मीविलास रस
   - पुनर्नवासव
   - मधुकादि लेप आदि।
   - ताप्यादि लौह
   - कामदुधा रस
   - दशांग लेप

7.2.11 दंश सड़न (Putrefaction of the bite) की चिकित्सा

1. मधुर, स्निग्ध और शीतल परिषेक और लेप का व्यवहार करें, यथा – बरगद आदि क्षीरी वृक्षों की छाल के कषाय में दूध मिलाकर।
2. बरगद के शुंग + तिल + मुलेठी + सरसों + सेंधा नमक + हरड़ + नीम की पत्ती + घी – उनको पीसकर इनका लेप करें।
3. व्रणवत् चिकित्सा करें।

7.2.12 रक्तस्राव (Haemorrhage) की चिकित्सा

1. काली मिर्च, चौलाई की जड़ अथवा शर्करा के साथ घी पिलायें।
2. दंश स्थान पर बारीक पीसी हुई दारुहल्दी का लेप करें।
3. मिश्री + मधु से बकरी के दूध में बनाया नस्य दें।
4. शमी (सफेद कीकर) की छाल का कल्क पिलायें।
5. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - मुक्तापिष्टी
   - उशीरासव आदि।
   - प्रवालपिष्टी

7.2.13 विषवात (Mental symptoms due to poisoning) की चिकित्सा

कृश व्यक्ति में रक्त का अतिस्राव हो जाने से, रूक्ष वस्तुओं के अति सेवन से अथवा विष के अपने स्वभाव से रोगी का वात कुपित हो जाता है। इससे उसमें विषाद, अपस्मार, उन्माद, मनोभ्रंश तथा आक्षेप के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। इनकी शान्ति के लिए चिकित्सक को स्नेहन, बस्ति, नस्य, प्रधमन एवं अञ्जन का व्यवहार करना चाहिए। शरीर का शोधन कर निम्न योगों का आवश्यकतानुसार उपयोग करना चाहिए।

1. नागदन्ती + हरड़ + कूठ + पिप्पली + अडूसा + कट्फल + भिलावा + कुटकी + बिल्व + अतीस – इनके कल्क से सिद्ध घृत का सेवन दूध के साथ कराना चाहिए।
2. बकरी के मॉस में एरण्ड का तैल मिलाकर दें।
3. मेध्य मांस रस का भोजन कराते हुए घी और तैल को एक साथ मिलाकर पिलायें।
4. कार्पासमूल + काली मिर्च + हल्दी + दारुहल्दी + बालछड़ + नरसड़ + पिप्पली + सर्जक्षार + कूठ – इनको जल में घोलकर पिलायें।
5. वचा + हंसराज + त्रिकटु + कैथ + गजपिप्पली + देवदारु + बला + बिल्व + विडंग + कूठ + श्योनाक + लोध्र + मूषाकर्णी + अतीस – इनके कल्क से दूध के साथ घृत सिद्ध कर पिलायें, अभ्यंग करें और नस्य दें।
6. महत्त्वपूर्ण कल्प –
   - स्वर्ण भस्म
   - प्रवाल भस्म
   - कामदुधा रस
   - ब्राह्मी घृत
   - सारस्वतारिष्ट आदि।
   - रौप्य भस्म
   - मुक्ता भस्म
   - सूतशेखर रस
   - सारस्वत चूर्ण

7.3 दृश्य अगद और शब्द अगद (Sight and Sound Therapy)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

दृश्यशब्दागदैरस्य विषशेषं निवर्तयेत्।
अल्पमप्यवशिष्टं हि व्याधये मरणाय वा।।

(अ.सं.उ. 47/48)

रोगी के शरीर में शेष बचे विष को दृश्य अगदों और शब्द अगदों से शान्त करना चाहिए। शरीर में रंचमात्र भी विष अवशिष्ट रह जाये तो वह रोगों का तथा मृत्यु का कारण बनता है। दृश्य अगद उन अगदों को कहते हैं जिन्हें देखने मात्र से विष का नाश होता है और शब्द अगद उन अगदों को कहते हैं जिनका भेरी, मृदंग आदि पर लेप कर उन्हें बजाने पर उनका शब्द सुनने से ही विष का नाश होता है। इनकी प्रभावोत्पादकता का आधार देखने और सुनने की क्रियाएँ हैं।

Scanned with CamScanner

विषाक्तता और उससे उत्पन्न लक्षणों, लक्षण-समूहों एवं उपद्रवों को दूर करने के लिए संहिताओं में अनेक अगदों का उल्लेख किया गया है, यथा - क्षारागद, सुगन्धाख्य अगद आदि। इनमें से अधिकांश सर्वविष नाशक माने जाते हैं।

7.4 पथ्यापथ्य (Apt and Inapt Regimen)

पथ्य

पुराने शाली और साँठी के चावल, कोदों, मूँग, अरहर, परवल, बेंत के पत्ते, चौलाई, जीवन्ती, बैंगन, चौपतिया, जंगली अनार, आँवला, कैथा, सेंधा नमक, मिश्री और अविदाही अन्नपान। उबालकर ठण्डा किया हुआ या आँवला और मधु मिश्रित जल। पुष्ट जवों का सत्तू घी में मिलाकर तक्र के साथ - इसे अतिशय विषनाशक कहा गया है। विषरोगी का भोजन विषनाशक औषधियों के क्वाथ में पकाना चाहिए और उसे कल्याणक आदि घृतों से संस्कृत कर रोगी को खिलाना चाहिए।

अपथ्य

तिल, मद्य, कुलथी आदि विदाही अन्नपान; क्रोध, भय, शोक आदि मनोविकार; अति परिश्रम या अति साहस का कार्य तथा मैथुन एवं दिन में सोना।

आचार्य गोविन्ददाससेन ने 'भैषज्यरत्नावली' नामक ग्रन्थ में विष की चिकित्सा के लिए सहयोगी 'पथ्यापथ्य' का विवेचन निम्न शब्दों में किया है -

पथ्य

विहार -

अरिष्टाबन्धनं मन्त्रक्रिया छर्दिर्विरेचनम्।
कर्षणं शोणिताकृष्टिः परिषेकोऽवगाहनम्।।
हृदयावरणं नस्यमञ्जनं प्रतिसारणम्।
उद्वर्त्तनं प्रधमनं प्रलेपो वह्निकर्म च।।
उपधानं प्रतिविषं धूपः संज्ञा प्रबोधनम्।

(भै.र. 72/74-76)

1. अरिष्टाबन्धन,
2. मन्त्र प्रयोग,
3. वमन-विरेचन द्वारा दोष निर्हरण
4. कर्षण,
5. रक्तमोक्षण,
6. परिषेक,
7. अवगाहन,
8. हृदयावरण,
9. नस्य,
10. अञ्जन,
11. प्रतिसारण,
12. उद्वर्तन,
13. प्रधमन,
14. प्रलेप,
15. दाहकर्म,
16. उपधान प्रयोग,
17. प्रतिविष,
18. धूपनकर्म,
19. संज्ञाप्रबोधन।

आहार -

शालयः षष्टिकाश्चापि कोरदूषाः प्रियंगवः।।
मुद्गा हरेणवस्तैलं सर्पिर्जीर्णं नवं तथा।
शिखितित्तिरिलावैणगोधाखुश्वाविदामिषम्।।
वार्त्ताकुकुलकं धात्रीनिष्पावं तण्डुलीयकम्।
मण्डूकपर्णी जीवन्ती सुनिषण्णोऽप्युपोदिका।।
कालशाकं सलशुनं दाडिमं च विकंकतम्।
प्राचीनामलकं पथ्या कपित्थं नागकेशरम्।।
गोछागनरमूत्राणि तक्रं शीताम्बु शर्करा।
अविदाहीनि चान्नानि सैन्धवं मधुकुंकुमम्।।
पश्चिमोत्तरवाताश्च हरिद्रा सितचन्दनम्।
मुस्तं शिरीषः कस्तूरी तिक्तानि मधुराणि च।।
हेमचूर्णं च वर्गोऽयं यथाऽवस्थं यथाविषम्।
विषरोगेषु सर्वेषु प्रयोक्तव्यो विजानता।।

(भै.र. 72/77-82)

1. शालिचावल का भात,
2. षष्टिक चावल का भात,
3. कोरदूष चावल,
4. प्रियंगु,
5. मुद्ग,
6. हरेणु,
7. तिलतैल,
8. पुराण/नया गोघृत,
9. मयूर, तित्तिर, लावक, एण, गोह, चूहा, श्वावित् का मांस,
10. वार्त्ताकु (बैंगन),
11. कुलक (परवल),
12. आमलकी,
13. निष्पाव,
14. चौराईशाक,
15. मण्डूकपर्णी,
16. जीवन्ती,
17. सुनिषण्णकशाक,
18. पोईशाक,
18. पोईशाक,
19. कालशाक,
20. लसुन,
21. दाडिम (अनारदाना),
22. कण्टकचौराई,
23. पुराना आमला,
24. हरीतकी.
25. कपित्थफल,
26. नागकेशर,
27. गोमूत्र,
28. बकरीमूत्र,
29. नरमूत्र,
30. तक्र,
31. शीतल जल,

Scanned with CamScanner

32. चीनी,
33. अविदाही अन्न,
34. सैन्धव लवण,
35. मधु,
36. केशर,
37. पश्चिम एवं उत्तर दिशा की वायु
38. हल्दी,
39. श्वेतचन्दन,
40. नागरमोथा,
41. शिरीष,
42. कस्तूरी,
43. तिक्त एवं मधुर पदार्थ,
44. सुवर्णभस्म।

अपथ्य

क्रोधं विरुद्धाध्यशनं व्यवायं ताम्बूलमायासमपि प्रवातम्।
अम्लं च सर्वं लवणं च सर्वं स्वेदं च नानाविधमासुतानि।
निद्रां भयं धूमविधिं क्षुधां च विषातुरो नैव भजेत् कदाचित्।। (भै.र. 72/83)

1. क्रोध करना
2. विरुद्ध भोजन
3. अध्यशन,
4. मैथुनकर्म
5. ताम्बूल सेवन
6. परिश्रम
7. तेजवायु का सेवन
8. सभी अम्ल एवं लवण पदार्थ
9. स्वेदन
10. अनेक प्रकार के आसुत अर्थात् अचार
11. शयन
12. भय
13. धूमपान
14. क्षुधा

7.5 विषमुक्त रोगी के लक्षण (Symptoms of recovery)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

प्रशान्तदोषं प्रकृतिस्थधातुमाहारकामं सममूत्रविट्कम्।
प्रसन्नवर्णेन्द्रियचित्तचेष्टं वैद्योवगच्छेदविषं मनुष्यम्।।
(अ.सं.उ. 47/83)

1. जब रोगी के वातादि दोष शान्त हो जायें,
2. रस-रक्तादि धातुएँ अपनी स्वाभाविक अवस्था में आ जायें,
3. भोजन में रुचि उत्पन्न हो जाये,
4. मल-मूत्रादि की क्रियाएँ अपने स्वाभाविक रूप में घटित होने लगे,
5. वर्ण स्वाभाविक हो जायें,
6. इन्द्रियाँ अपना काम ठीक से करने लगें,
7. चित्त विषादरहित एवं प्रसन्न रहने लगे तथा
8. चेष्टाएँ अविकल एवं निर्मल हो जायें

– ये सभी लक्षण रोगी में विष से मुक्त होने पर दृश्यमान होते हैं।

• • •

Scanned with CamScanner

An Initiative By Technofiesta
AyuTech®
Technologically Driven Ancient Science !

स्थावर विष
Inanimate or Static Poisons

विषय

- स्थावर विष की परिभाषा (Definition of inanimate or static poisons)
- स्थावर विष के अधिष्ठान (Site of inanimate poisons)
- स्थावर विष के भेद (Kinds of inanimate poisons)
- स्थावरविषों की गणना (Number of inanimate poisons)
- कन्दविषों (root poisons) के अवान्तर भेद
- स्थावरविषों के लक्षण (Symptoms of inanimate poisons)
- कन्द विषों के विशिष्ट लक्षण (Specific symptoms of root poisons)
- स्थावरविषों की मारकता (Fatality of inanimate poisons)
- स्थावरविषों के वेगानुसार लक्षण (Symptoms according to impulse)
- स्थावर विष - वेगों की क्रमानुसार चिकित्सा (Treatment of Sthavara visha - according to the vegas)
- काकपद (Kakapada)
- वेगान्तरों में कालघाती विष का प्रतिकार (Treatment in between the consecutive vegantaras)
- वत्सनाभ (Aconite)
- शृंगी विष (Aconitum chasmanthum)
- हरताल (Yellow arsenic)

8.1 स्थावर विष की परिभाषा (Definition of Inanimate or static poisons)

स्थावर द्रव्यों (plants and minerals) में पाये जानेवाले विष को **'स्थावर विष'** कहते हैं।

आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन

ततस्तत् स्थावरासु मूर्तिष्वधिवसनात् स्थावरमित्युच्यते। (अ.सं.उ. 40/4)

अर्थात् चूँकि यह स्थावर मूर्तियों में रहता है, इसलिए इसे स्थावर कहते हैं।

8.2 स्थावर विष के अधिष्ठान (Site of inanimate poisons)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

मूलं पत्रं फलं पुष्पं त्वक् क्षीरं सार एव च।
निर्यासो धातवश्चैव कन्दश्च दशमः स्मृतः।। (सु.क. 2/4)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

तयोः स्थावरं मूलपत्रपुष्पफलत्वक्सारनिर्यासक्षीरधातुकन्दभेदा-द्दशाधिष्ठानम्। (अ.सं.उ. 40/6)

1. मूल (root)
2. पत्र (leaves)
3. फल (fruit)
4. पुष्प (flower)
5. त्वक् (bark)
6. क्षीर (sap/latex)
7. सार (heart-wood)
8. निर्यास (exudate/gums)
9. धातु (minerals)
10. कन्द (bulb)।

8.3 स्थावर विष के भेद (Kinds of Inanimate Poisons)

रसशास्त्र के ग्रन्थों में स्थावर विष के दो भेद माने गये हैं -

1. विष
2. उपविष।

उपविष विष की अपेक्षा अल्प बल और अल्प प्रभाव वाले होते हैं।

Scanned with CamScanner

- Inorganic Acids/ Mineral acids
- Sulphuric Acid
- Nitric Acid
- Hydrochloric Acid
- Organic Acids
- Carbolic Acid
- Oxalic Acid
- Formic Acid
- Alkalies
- Iodine
- Inorganic Elements
- Phosphorus
- Aluminium phosphide
- Chlorine
- Asphyxiants
- Ammonia
- Methyl isocyanate (MIC)
- Carbon monoxide (CO)
- Carbon dioxide (CO_2)
- Hydrogen sulphide
- Cyanide

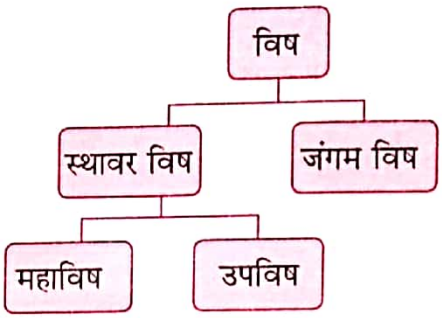

8.4 स्थावरविषों की गणना (Number of Inanimate Poisons)

आचार्य सुश्रुत मतेन

तत्र, क्लीतकाश्वमारगुञ्जासुगन्धगर्गरककरघाटविद्युच्छिखाविजयानीत्यष्टौ मूलविषाणि; विषपत्रिकालम्बावरदारुकरम्भमहाकरम्भाणि पञ्च पत्रविषाणि; कुमुद्वतीवेणुकाकरम्भमहाकरम्भकर्कोटकरेणुकखद्योतकचर्मरीभगन्धासर्षघातिनन्दनसारपाकानीति द्वादश फलविषाणि; वेत्रकादम्बवल्लीजकरम्भमहाकरम्भाणि पञ्च पुष्पविषाणि; अन्त्रपाचककर्तरीयसौरीयककरघाटकरम्भनन्दननाराचकानि सप्त त्वक्सारनिर्यासविषाणि कुमुदघ्नीस्नुहीजालक्षीरीणि त्रीणि क्षीरविषाणि; फेनाश्म (भस्म) हरितालं च द्वे धातुविषे; कालकूटवत्सनाभसर्षपपालककर्दमकवैराटकमुस्तक शृंगीविषप्रपुण्डरीकमूलकहालाहलमहाविषकर्कटकानीति त्रयोदश कन्दविषाणि; इत्येवं पञ्चपञ्चाशत् स्थावरविषाणि भवन्ति।। (सु.क. 2/5)

आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन

तत्र मूलविषाणि क्लीतनकाश्वमारकगुञ्जासुगन्धकगर्गरककर्करकरघाटकादीनि। पत्रविषं कालपत्रिका लम्बा वरदकरम्भार्कादीनाम्। पुष्पविषं वल्लीरेणुककरम्भ महाकरम्भादीनाम्। फलं कुमुद्वतीरेणुकाकरम्भमहाकरम्भमदनकतुवरकादीनाम्। त्वक्सारनिर्यासाः करककरघाटककरम्भमहाकरम्भनाराचकादीनाम्। क्षीरं कुमुद्वती दन्ती स्नुह्यर्कजालिनी व्यालादीनाम्। धातवो हरितालफेनाश्मभस्मरक्ताप्रभृतयः। कन्दजानि तु हालाहलकालकूटवत्सनाभशृंगीसार्षपजालककर्दमकवैराटकमुस्तकमुष्ककसाक्तुकक्रौञ्चकवालकमहाविषपुण्डरीकगालवमूलकमर्कटकर्कटककरवीरकेन्द्रायुधसंकोचकलांगलकतैलपेय कुशपुष्पके तु पुष्पकरोहिषाञ्जनाभकादीनि। (अ.सं.उ. 40/7)

आयुर्वेद की संहिताओं में अधिष्ठानों के आधार पर स्थावर विषों की गणना प्रस्तुत की गई है। आगे आचार्य सुश्रुत के अनुसार इनका विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है –

मूलविष

तत्र, क्लीतकाश्वमारगुञ्जासुगन्धगर्गरककरघाटविद्युच्छिखाविजयानीत्यष्टौ मूलविषाणि। (सु.क. 2/5)

- संख्या – 8
- नाम –

1. क्लीतक	2. कनेर	3. गुञ्जा	4. सुगन्ध
5. गर्गरक	6. करघाट	7. विद्युत्शिखा	8. विजयानी

Scanned with CamScanner

पत्रविष

विषपत्रिकालम्बावरदारुकरम्भमहाकरम्भाणि पञ्च पत्रविषाणि। (सु.क. 2/5)

- संख्या – 5
- नाम –

1. विषपत्रिका	2. लम्बा	3. करम्भ
4. महाकरम्भ	5. वरदारु	

फलविष

कुमुद्वतीवेणुकाकरम्भमहाकरम्भकर्कोटकरेणुकखद्योत कचर्मरीभगन्धासर्पघातिनन्दनसारपाकानीति द्वादश फलविषाणि। (सु.क. 2/5)

- संख्या – 12
- नाम –

1. कुमुद्वती	2. वेणुका	3. करम्भ
4. महाकरम्भ	5. कर्कोटक	6. रेणुक
7. खद्योतक	8. चर्मरी	9. इभगन्धा
10. सर्पघाती	11. नन्दन	12. सारपाक

पुष्पविष

वेत्रकादम्बवल्लीजकरम्भमहाकरम्भाणि पञ्चपुष्प-विषाणि। (सु.क. 2/5)

- संख्या – 5
- नाम –

1. वेत्र	2. कादम्ब	3. वल्लीज
4. करम्भ	5. महाकरम्भ	

त्वक्विष, सारविष, निर्यासविष

अन्त्रपाचककर्तरीयसौरीयककरघाटकरम्भनन्दनना-राचकानि सप्त त्वक्सारनिर्यासविषाणि। (सु.क. 2/5)

- संख्या – 7
- नाम –

1. अन्त्रपाचक	2. कर्तरीय	3. सौरीयक
4. करघाट	5. करम्भ	6. नन्दन
7. नाराचक		

क्षीरविष

कुमुदघ्नीस्नुहीजलक्षीरीणि त्रीणि क्षीरविषाणि। (सु.क. 2/5)

- संख्या – 3
- नाम –

1. कुमुदघ्नी	2. स्नुही	3. जालक्षीरी

धातुविष →

फेनाश्म(भस्म) हरितालं च द्वे धातुविषे। (सु.क. 2/5)

- संख्या – 2
- नाम –

1. फेनाश्म	2. हरताल

कन्दविष →

कालकूटवत्सनाभसर्षपपालककर्दमकवैराटकमुस्तक-शृंगीविषप्रपुण्ड रीकमूलकहालाहलमहाविषकर्कटका-नीति त्रयोदश कन्दविषाणि। (सु.क. 2/5)

- संख्या – 13
- नाम –

1. कालकूट	2. वत्सनाभ	3. सर्षप
4. पालक	5. कर्दमक	6. वैराटक
7. मुस्तक	8. शृंगीविष	9. प्रपुण्डरीक
10. मूलक	11. हालाहल	12. महाविष
13. कर्कटक		

इस प्रकार इनकी संख्या 55 हुई। हो सकता है आचार्य सुश्रुत के काल तक इतने ही स्थावर विषों का ज्ञान हो।

आचार्य वृद्धवाग्भट ने इनकी गणना कराते हुए प्रत्येक वर्ग के अन्त में आदि शब्द का प्रयोग कर अन्य विषों के भी होने की सम्भावना व्यक्त की है।

उपर्युक्त विषों में से केवल वत्सनाभ, शृंगी विष और हरताल को ही आज का चिकित्सक समाज विशेष रूप से जानता है और उन्हीं के योगों का चिकित्सा-कार्य में प्रयोग करता है। इसलिए अध्याय के अन्त में इन तीनों का ही संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया जायेगा। इसी प्रकार क्लीतक (मुलेठी), विजया (भांग), कनेर, गुञ्जा (घुँघची) तथा स्नुही (सेंहुड़) भी परिचित पदार्थ हैं। इनमें से अधिकांश का वर्णन उपविषों के अन्तर्गत किया गया है। फेनाश्म (संखिया) का वर्णन धातुज विष में उपलब्ध है। शेष में से सम्भव है कुछ की प्रजातियाँ लुप्त हो गई हों और कुछ को वनवासी या विभिन्न प्रान्तों के लोग अपनी-अपनी स्थानीय भाषा में भिन्न-भिन्न नामों से जानते हों और उन्हें उपयोग में भी लाते हों। इस सम्बन्ध में खोज की आवश्यकता है।

8.5 कन्दविषों (Root Poisons) के अवान्तर भेद

वत्सनाभ के चार, मुस्तक के दो और सर्षप के छः उपभेद होते हैं। शेष एक-एक प्रकार के ही होते हैं। यथा –

Scanned with CamScanner

चत्वारि वत्सनाभानि मुस्तके द्वे प्रकीर्तिते।
षट् चैव सर्षपाण्याहुः शेषाण्येकैकमेव तु।।
(सु.क. 2/6)

सभी विषों की 'मौली' संज्ञा –

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

सर्वमपि चैतन्मौलमित्युच्यते मूलाश्रयत्वात् पत्रादीनाम्।
(अ.सं.उ. 40/6)

चूँकि पत्र आदि सभी मूल के ही आश्रित होते हैं, इसलिए इन विषों को मौली नाम से भी जाना जाता है।

8.6 स्थावरविषों के लक्षण (Symptoms of Inanimate Poisons)

8.6.1 सामान्य लक्षण –

आचार्य चरक के अनुसार

स्थावरं तु ज्वरं हिक्कां दन्तहर्षं गलग्रहम्।
फेनवम्यरुचिश्वासमूर्च्छाश्च जनयेद्विषम्।।
(च.चि. 23/16)

1. ज्वर (fever)
2. हिक्का (hiccups)
3. दन्तहर्ष (dental sensitivity)
4. गलग्रह (गले की जकड़ाहट) (chocking of throat)
5. मुँह से फेन निकलना (frothing from mouth)
6. वमन (vomiting)
7. अरुचि (anorexia)
8. श्वास (dyspnea)
9. मूर्च्छा (fainting)

8.6.2 अधिष्ठानानुसार विशिष्ट लक्षण –

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

उद्वेष्टनं मूलविषैः प्रलापो मोह एव च।
जृम्भांगोद्वेष्टनश्वासा ज्ञेयाः पत्रविषेण तु।।
मुष्कशोफः फलविषैर्दाहोऽन्नद्वेष एव च।
भवेत् पुष्पविषैश्छर्दिराध्मानं मोह एव च।।
त्वक्सारनिर्यासविषैरुपयुक्तैर्भवन्ति हि।
आस्यदौर्गन्ध्यपारुष्यशिरोरुक्कफसंस्रवाः।।
फेनागमः क्षीरविषैर्विड्भेदो गुरुजिह्वता।
हृत्पीडनं धातुविषैर्मूर्च्छा दाहश्च तालुनि।।
(सु.क. 2/7-10)

1. मूलविष

- उद्वेष्टन (twisting pain)
- प्रलाप (delirium)
- मोह (stupor)

2. पत्रविष

- जृम्भा (yawning)
- अंग-उद्वेष्टन (twisting pain)
- श्वास (dyspnea)

3. फलविष

- वृषणशोथ (orchitis)
- दाह (burning sensation)
- अन्नद्वेष (anorexia)

4. पुष्पविष

- छर्दि (vomiting)
- आध्मान (borborgymi)
- मोह (stupor)

5, 6, 7. त्वक् विष, सार विष और निर्यास विष

- मुख से दुर्गन्ध आना (hallitosis)
- पारुष्य (hardness)
- शिरोवेदना (headache)
- कफस्राव (mucus secretion)

8. क्षीरविष

- फेनागम (frothing from the mouth)
- अतिसार (dirrhea)
- जिह्वा में भारीपन (heaviness of tongue)

9. धातुविष

- हृत्प्रदेश में वेदना (cardiac pain)
- मूर्च्छा (fainting)
- तालु में दाह (burning sensation of palate)

10. कन्दविषों के लक्षण –प्रत्येक भेद के विशिष्ट लक्षण।

8.7 कन्द विषों के विशिष्ट लक्षण (Specific Symptoms of Root poisons)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

कन्दजानि तु तीक्ष्णानि तेषां वक्ष्यामि विस्तरम्।।
स्पर्शाज्ञानं कालकूटे वेपथुः स्तम्भ एव च।
ग्रीवास्तम्भो वत्सनाभे पीतविण्मूत्रनेत्रता।।
सर्षपे वातवैगुण्यमानाहो ग्रन्थिजन्म च।
ग्रीवादौर्बल्यवाक्संगौ पालकेऽनुमताविह।।
प्रसेकः कर्दमाख्येन विड्भेदो नेत्रपीतता।
वैराटकेनांगदुःखं शिरोरोगश्च जायते।।
गात्रस्तम्भो वेपथुश्च जायते मुस्तकेन तु।
शृंगीविषेणांगसाददाहोदरविवृद्धयः।।

Scanned with CamScanner

पुण्डरीकेण रक्तत्वमक्ष्णोर्वृद्धिस्तथोदरे।
वैवर्ण्यं मूलकैश्छर्दिर्हिक्काशोफप्रमूढ़ता।।
चिरेणोच्छ्वसिति श्यावो नरो हालाहलेन वै।
महाविषेण हृदये ग्रन्थिशूलोद्गमौ भृशम्।।
कर्कटेनोत्पतत्यूर्ध्वं हसन् दन्तान् दशत्यपि।

(सु.क. 2/11-17)

कन्दविष अत्यधिक तीक्ष्ण एवं उग्र प्रभाव वाले होते हैं, अतएव आचार्य सुश्रुत ने उनके विशिष्ट लक्षणों का पृथक् निर्देश किया है।

- **कालकूट**
  - स्पर्श का अज्ञान (loss of sensation),
  - कम्पन (tremors)
  - जड़ता (stiffness)।
- **वत्सनाभ**
  - ग्रीवास्तम्भ (stiffness of neck),
  - मलमूत्र का पीत वर्ण का होना (yellowish discoloration of feces and urine
  - नेत्रों में पीलापन (yellowish discoloration of eyes)
- **सर्षप**
  - वायु की विपरीतता (opposite-peristalsis),
  - आनाह (abdominal distension)
  - गाँठों की उत्पत्ति।
- **पालक**
  - ग्रीवा की दुर्बलता (laxity of neck)
  - वाणी का अवरोध (loss of speech)।
- **कर्दमक**
  - मुख से पानी आना (salivation),
  - अतिसार (diarrhea)
  - आँखों में पीलापन (yellowish discoloration of eyes)।
- **वराटक**
  - अंगों का दुखना (malaise)
  - शिरोरोग (diseases of head region)।
- **मुस्तक**
  - शरीर में स्तम्भ (stiffness of body)
  - कम्पन (tremors)।
- **शृंगीविष**
  - अंगों में शिथिलता (laxity of limbs),
  - दाह (burning sensation)
  - उदरवृद्धि (abdominal enlargement)।
- **प्रपुण्डरीक**
  - आँखों में लालिमा (redened eyes)
  - उदर-वृद्धि (abdominal enlargement)।
- **मूलक**
  - विवर्णता (loss of complexion),
  - हिक्का (hiccups),
  - शोफ (edema)
  - मूढत्व (stupor)।
- **हालाहल**
  - श्वास की गति मन्द (shallow breathing),
  - श्वासवरोध (dyspnea)
  - श्वास का देर से आना (prolonged expiration)
  - शरीर रंग काला पड़ जाना।
- **महाविष**
  - हृदय में ग्रन्थि
  - असहनीय शूल (severe colic)।
- **कर्कटक**
  - मनुष्य ऊपर की ओर उछलता और कूदता (irregular movements) है।
  - हँसता हुआ दाँतों को काटता एवं किटकिटाता है (irrelevant laughing and grinding of teeth)।

8.8 स्थावरविषों की मारकता (Fatality of Inanimate Poisons)

ये विष अपने विषैले प्रभाव से प्राय: एक दिन, पन्द्रह दिन अथवा एक मास में प्राणों का हरण कर लेते हैं। दसों गुणों से युक्त विष तत्काल मारक सिद्ध होते हैं। सन्दर्भ - सु.क 2/34-39

8.9 स्थावरविषों के वेगानुसार लक्षण (Symptoms According to Velocity)

नीचे स्थावरविषों के सातों वेगों के विशिष्ट लक्षण दिये जा रहे हैं। इन लक्षणों से इस बात का ज्ञान हो सकता है कि विष ने किस सीमा तक प्राणी को अपने प्रभाव-क्षेत्र में ले रखा है।

Scanned with CamScanner

स्थावरस्योपयुक्तस्य वेगे तु प्रथमे नृणाम्।
श्यावा जिह्वा भवेत्तस्या मूर्च्छा श्वासश्च जायते।।

द्वितीये वेपथुः सादो दाहः कण्ठरुजस्तथा।
विषमामाशयप्राप्तं कुरुते हृदि वेदनाम्।।

तालुशोषं तृतीये तु शूलं चामाशये भृशम्।
दुर्वर्णं हरिते शूने जायेते चास्य लोचने।।

पक्वामाशययोस्तोदो हिक्का कासोऽन्त्रकूजनम्।
चतुर्थे जायते वेगे शिरसश्चातिगौरवम्।।

कफप्रसेको वैवर्ण्यं पर्वभेदश्च पञ्चमे।
सर्वदोषप्रकोपश्च पक्वाधाने च वेदना।।

षष्ठे प्रज्ञाप्रणाशश्च भृशं चाप्यतिसार्यते।
स्कन्धपृष्ठकटीभंगः सन्निरोधश्च सप्तमे।।

(सु.क. 2/34-39)

- **प्रथम वेग के लक्षण** - मनुष्यों में स्थावर विष की विषाक्तावस्था के 'प्रथम वेग' में
  - जीभ श्यावर्ण (bluish discoloration) और जकड़ाहट (stiffiness) से युक्त हो जाती है तथा
  - मूर्च्छा (fainting) एवं
  - श्वास (dyspnea) होते हैं।
- **द्वितीय वेग के लक्षण** - इसमें
  - कम्प (tremors),
  - अंगों में शैथिल्य (laxity),
  - दाह (burning sensation),
  - गले में पीड़ा (throat pain),
  - आमाशय में पहुँचने पर विष से हृदयप्रदेश में वेदना (pain in cardiac region) होने लगती है।
- **तृतीय वेग के लक्षण** - विषाक्तावस्था के तृतीय वेग में
  - तालुशोष (dryness of palate),
  - आमाशय में तीव्र शूल (severe abdominal pain) और
  - नेत्रों में विवर्णता (discoloration),
  - हरापन (greenish discoloration)
  - शोथ (edema) हो जाती है।
- **चतुर्थ वेग के लक्षण** - इसमें पक्वाशय और आमाशय में पहुँचने पर विष से
  - सूचीवेधवत् वेदना (pricking pain),
  - हिक्का (hiccup),
  - कास (cough),
  - आँतों में गुड़गुड़ाहट (borborgymi)
  - शिर में भारीपन (heaviness of head) हो जाते हैं।
- **पञ्चम वेग के लक्षण** - इस वेग में
  - कफ का स्राव (secretion of mucus),
  - विवर्णता (pallor),
  - सन्धिशूल (arthralgia),
  - सर्वदोषप्रकोप
  - पक्वाशय में वेदना (lower abdominal pain) होते हैं।
- **षष्ठ वेग के लक्षण** - इसमें
  - बुद्धिविभ्रंश (stupor),
  - तीव्र अतिसार (profuse diarrhea) ये दो लक्षण होते हैं।
- **सप्तम वेग के लक्षण** - इस वेग में
  - कन्धे (shoulders), पीठ (back); और कमर (waist) का टूटना (pain)
  - श्वासावरोध (Respiratory arrest) होते हैं।

8.10 स्थावर विष - वेगों की क्रमानुसार चिकित्सा (Treatment of Sthavara Visha - According to the Vegas)

विष-वेगों की चिकित्सा आचार्य चरक और आचार्य सुश्रुत दोनों ने विस्तार से की है। यहाँ उसे आचार्य चरक के अनुसार प्रस्तुत किया जा रहा है। सुश्रुतसंहिता में यदि कहीं भिन्नता है तो उसका पृथक् से निर्देश कर दिया गया है।

8.10.1 प्रथम विष-वेग की चिकित्सा -

आचार्य चरक मतेन

त्वङ्मांसगतं दाहो दहति विषं स्रावणं हरति रक्तात्।
पीतं वमनैः सद्यो हरेद्विरेकैर्द्वितीये तु।। (च.चि. 23/45)

- यदि विष का वेग अभी त्वचा और मांस तक ही फैला हो तो उसका दाहकर्म करना चाहिए। दाहकर्म से स्थानीय विषवेग का शमन हो जाता है।
- यदि विष का वेग रक्त में प्रवेश कर गया हो तो रक्तमोक्षण या रक्तस्रावण कराना चाहिए।
- यदि किसी प्राणी ने स्थावर विष का पान किया हो तो उसे शीघ्र ही वमन कराना चाहिए। वमन के साथ अनवशोषित विष का अधिकांश भाग बाहर निकल जाता है।
- यदि विलम्ब हो जाने के कारण विष आमाशय से पक्वाशय

Scanned with CamScanner

में चला गया हो तो तीक्ष्ण विरेचन का प्रयोग करना चाहिए।

आचार्य सुश्रुत मतेन

प्रथमे विषवेगे तु वान्तं शीताम्बुसेचितम्।
अगदं मधुसर्पिर्भ्यां पाययेत समायुतम्।। (सु.क. 2/40)

आचार्य सुश्रुत ने संक्षेप में

- वमन के उपरान्त शीतल जल का परिषेक कराने और
- घृत एवं मधु के अनुपान से अगद का पान कराने को कहा है।

8.10.2 द्वितीय विष वेग की चिकित्सा –

आचार्य चरक मतेन

आदौ हृदयं रक्ष्यं तस्यावरणं पिबेद्यथालाभम्।
मधुसर्पिर्मज्जपयोगैरिकमथ गोमयरसं वा।।

इक्षुं सुपक्वमथवा काकं निष्पीड्य तद्रसं वरणम्।
छागादीनां वाऽसृग्भस्म मृदं वा पिबेदाशु।।

(च.चि. 23/46-47)

- द्वितीय विष-वेग में विष का रक्त में प्रवेश हो जाता है, अतः मर्मस्थान होने के कारण सबसे पहले हृदय की रक्षा करनी चाहिए।
- इसके लिए
  - मधु,
  - गोघृत,
  - मज्जा,
  - शुद्ध स्वर्णगैरिक,
  - गाय के गोबर का रस,
  - पकाया हुआ ईख का रस,
  - कौवे के मांस को पकाकर उसका निचोड़ हुआ रस,
  - बकरे आदि ग्राम्य पशुओं का ताजा रक्त,
  - गोबर की राख
  - काली मिट्टी को घोलकर पिलाना चाहिए।

आचार्य सुश्रुत मतेन

द्वितीये पूर्ववद्वान्तं पाययेत्तु विरेचनम्। (सु.क. 2/41)

- आचार्य सुश्रुत ने संक्षेप में वमन कराकर तीव्र विरेचन देने की बात कही है।

8.10.3 तृतीय विष वेग की चिकित्सा –

आचार्य चरक मतेन

क्षारागदस्तृतीये शोफहरैर्लेखनं समध्वम्बु।

(च.चि. 23/48)

- इस विष-वेग में शोफ का नाश करनेवाले और लेखन गुणवाले क्षारागद का मधु और जल के अनुपान से सेवन कराना चाहिए।

आचार्य सुश्रुत मतेन

तृतीयेऽगदपानं तु हितं नस्यं तथाऽञ्जनम्।।

(सु.क. 2/41)

- आचार्य सुश्रुत ने अगदपान के साथ-साथ नस्य और अञ्जन का भी विधान किया है।

8.10.4 चतुर्थ विष वेग की चिकित्सा –

आचार्य चरक मतेन

गोमयरसश्चतुर्थे वेगे सकपित्थमधुसर्पिः।

(च.चि. 23/48)

चतुर्थ वेग में गोबर के रस और कैथ की पत्ती के रस में मधु और गोघृत मिलाकर पिलाना चाहिए।

आचार्य सुश्रुत मतेन

चतुर्थे स्नेहसंमिश्रं पाययेदागदं भिषक्। (सु.क. 2/42)

आचार्य सुश्रुत ने स्नेह मिश्रित अगद का पान कराने का निर्देश दिया है।

8.10.5 पञ्चम विष वेग की चिकित्सा –

आचार्य चरक मतेन

काकाण्डशिरीषाभ्यां स्वरसेनाश्च्योतनाञ्जने नस्यम्।
स्यात्पञ्चमेऽथ।। (च.चि. 23/49)

पञ्चम वेग में काकाण्ड (काकतिन्दुक, महानिम्ब अथवा कौवे का अण्डा) और शिरीष की पत्तियों का रस आँख में डालना, अञ्जनवत् लगाना और उसी का नस्य लेना चाहिए।

आचार्य सुश्रुत मतेन

पञ्चमे क्षौद्रमधुकक्वाथयुक्तं प्रदापयेत्।। (सु.क. 2/42)

आचार्य सुश्रुत ने मधुयुक्त मधुयष्टि के क्वाथ के अनुपान से अगदपान कराने का विधान किया है।

8.10.6 षष्ठ विष वेग की चिकित्सा –

आचार्य चरक मतेन

षष्ठे संज्ञायाः स्थापनं कार्यम्।।

गोपित्तयुता रजनी मञ्जिष्ठामरिचपिप्पलीनाम्।

(च.चि. 23/49-50)

छठे वेग में संज्ञास्थापक औषधियों का प्रयोग कराना चाहिए। संज्ञास्थापन हेतु गोरोचन, हल्दी, मजीठ, काली मिर्च और

Scanned with CamScanner

पिप्पली - इनके समभाग चूर्ण को जल में घोल कर पिलाना चाहिए।

आचार्य सुश्रुत मतेन

षष्ठेऽतीसारवत् सिद्धिरवपीडः। (सु.क. 2/43)

आचार्य सुश्रुत ने इस विषवेग में अतिसारवत् चिकित्सा-विधान और अवपीडन नस्य के प्रयोग की अनुशंसा की है।

8.10.7 सप्तम विष वेग की चिकित्सा -

आचार्य चरक मतेन

विषपानं दष्टानां विषपीते दंशनं चान्ते। (च.चि. 23/50)

अन्ततोगत्वा विष से विष का प्रतिकार ही एक मात्र उपाय रह जाता है। इसीलिए सातवें वेग में आचार्य चरक ने जिस रोगी को सर्प आदि ने डसा हो, उसे स्थावर विष का पान कराने और जिसने स्थावर विष का पान किया हो, उसे सर्प आदि जहरीले जन्तुओं से डसाने का परामर्श दिया है।

आचार्य सुश्रुत मतेन

सप्तमे।
मूर्ध्नि काकपदं कृत्वा सासृग्वा पिशितं क्षिपेत्।।

(सु.क. 2/43)

आचार्य सुश्रुत ने इस विष वेग में सिर पर काकपद के आकार के चीरे लगाकर उन पर रक्तमिश्रित मांस रखने और अवपीडन नस्य का प्रयोग करने का विधान किया है।

8.10.8 अष्टम विष वेग की चिकित्सा -

आचार्य सुश्रुत आदि ने सात और आचार्य चरक ने विष के आठ वेग माने हैं। आठवें विष-वेग की चिकित्सा का विधान करते हुए उन्होंने कहा है -

शिखिपित्तार्धयुतं स्यात् पलाशबीजमगदो मृतेषु वरः।
वार्ताकुफाणितागारधूमगोपित्तनिम्बं वा।।

(च.चि. 23/51)

जब विषपीत या सर्पदष्ट प्राणी मरणासन्न अवस्था में (मरे हुए से कुछ अच्छा) हो तो उसे -

1. पलाश के बीजों का चूर्ण, उससे 1/2 भाग में मोर का पित्त मिलाकर पिलाना चाहिए।

   अथवा :-

2. बड़ी कण्टकारी के बीज, राब, गृहधूम और गोरोचन - इन्हें निम्बपत्र स्वरस में मिश्रित कर पिलाना चाहिए।
3. तुलसी की पत्ती, पिप्पलीमूल, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, यष्टीमधु और कुष्ठ - इन सभी द्रव्यों के कपड़छन चूर्ण को गोपित्त में पीस कर गोली बना लें।

   अथवा :-

4. उक्त चूर्ण को शिरीषपुष्प स्वरस और बकायन के रस में पीसकर गोली बना लें। ये दोनों ही योग विषपीत अथवा दष्ट दोनों में अमृत के समान लाभकारी माने गये हैं।

आगे और भी अनेक अगदों का उल्लेख किया गया है, जिनमें से प्रमुख अगदों की संक्षिप्त जानकारी परिशिष्ट - 1 में प्राप्त की जा सकती है।

8.11 काकपद (Kakapada)

आचार्य सुश्रुत मतेन

मूर्ध्नि काकपदं कृत्वा सासृग्वा पिशितं क्षिपेत्।।

(सु.क. 2/43)

आचार्य चरक मतेन

विषदूषितकफमार्गः स्रोतःसंरोधरुद्धवायुस्तु।
मृत इव श्वसेन्मर्त्यः स्यादसाध्यलिंगैर्विहीनश्च।।

चर्मकषायाः कल्कं बिल्वसमं मूर्ध्नि काकपदमस्य।
कृत्वा दद्यात्कटभीकटुकट्फलप्रधमनं च।।

(च.चि. 23/65-66)

अन्तिम उपाय के रूप में प्राचीन समय में रोगी के सिर को उस्तरे से साफ कर उस पर कौवे के पैर के कई चीरे लगाकर उन सद्योनिर्मित क्षतों पर बकरे, गौ, भैंस या मुर्गे - इनमें से किसी के ताजे मांस-पिण्डों (fresh piece of meat) को उन पर रख दिया जाता था। ये मांस-पिण्ड विष का शोषण (absorption) कर लेते थे और रोगी होश (conscious) में आ जाता था।

आचार्य चरक के अनुसार कफ मार्ग के विष से दूषित हो जाने के कारण स्रोतों के रुद्ध (obstruct) हो जाने से वायु का भी अवरोध हो जाता है। इससे रोगी मरणासन्न की भाँति श्वास लेने लगता है। ऐसी अवस्था में यदि रोगी असाध्य लक्षणों से रहित हो, तो उसके मस्तक पर काकपदाकार क्षत करके चर्मकषा (सातला) के कल्क को वहाँ स्थापित कर ज्योतिष्मती, त्रिकटु और देवदाली का प्रधमन नस्य (powder snuff) देना चाहिए।

8.12 वेगान्तरों में कालघाती विष का प्रतिकार (Treatment in Between the Consecutive Vegantaras)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

वेगान्तरे त्वन्यतमे कृते कर्मणि शीतलाम्।
यवागूं सघृतक्षौद्रामिमां दद्याद्विषापहाम्।।

Scanned with CamScanner

कोषातक्योऽग्निकः पाठासूर्यवल्ल्यमृताभयाः।
शिरीषः किणिहि शेलुर्गिर्याह्वा रजनीद्वयम्।।
पुनर्नवे हरेणुश्च त्रिकटुः सारिवे बला।
एषां यवागूर्निष्क्वाथे कृता हन्ति विषद्वयम्।।

(सु.क. 2/44-46)

- वेगान्तरों में शीतल उपचार (cold measures) करे।
- घृत और मधु मिश्रित विषघ्न यवागू, जो निम्न प्रकारेण है, पीने के लिए रोगी को दें :
  - कड़वी तुरई, चित्रक, पाठा, सूर्यवल्ली, गुर्च, हरड़, शिरीष, चिरचिटा, लसोढ़ा, कोयल, हल्दी, दारुहल्दी, पुनर्नवा, रक्त पुनर्नवा, हरेणु, त्रिकटु, सारिवा, कृष्ण सारिवा तथा बला - इनके क्वाथ में बनाई गई यवागू स्थावर और जंगम दोनों प्रकार के विषों को नष्ट करती है।

8.13 वत्सनाभ (Aconite)

Latin name - Aconitum ferox
English name - Aconite
Family - Ranunculaceae

आयुर्वेदानुसार वर्णन -

- **पर्याय** - वत्सनाभ - अमृत - विष।
- **गण** - भावमिश्र मतेन - धात्वादि वर्ग
- **रस** - मधुर
- **गुण** - रूक्ष, तीक्ष्ण, लघु, व्यवायि, विकाशि
- **वीर्य** - उष्ण
- **विपाक** - मधुर
- **कर्म** - शुद्ध विष (1) + शुद्ध टंकण (1) → सर्वरोगहर (र.का.) - वेदनास्थापक - शोथघ्न - शूलप्रशमन - ज्वरघ्न - स्वेदजनन
- **विशेष संदर्भ** -
  - च.चि. 23/11
  - सु.क. 2/5, 6, 12
- **स्वरूप** -

आचार्य भावमिश्र के अनुसार

सिन्दुवारसदृशपत्रो वत्सनाभ्याकृतिस्तथा।
यत्पार्श्वे न तरोर्वृद्धिर्वत्सनाभः स भाषितः।।

(भा.प्र. धात्वादिवर्ग 192)

- सिन्दुवारपत्रसदृश पत्र
- वत्सनाभ्याकृति
- यत्पार्श्वे न तरोर्वृद्धिः

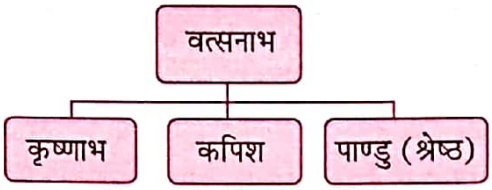

- **भेद** -
  - वर्ण भेद से - 3

Habitat - Himalayan range (at higher altitudes i.e. 10,000 feet and above), Nepal, Sikkim and Gadhwal.

Morphology

- The shrub is about 45 to 90 cm long; its leaves resemble that of Five-leaved chaste (Vitex negundo).
- All parts of the plant are poisonous but the root is most potent.
- The root is 5 to 10 cm long and 1 to 2 cm thick; the dry root is conical in shape, usually shrivelled and with longitudinal wrinkles. It is dark-brown in color.
- When freshly cut it is whitish and starchy inside but on exposure to air it turns pinkish.
- It is odorless but has slightly sweetish taste.
- It is sparingly soluble in water.

Chemical Composition

- Alkaloid aconitine
- Picroaconitine
- Pseudo-aconitine
- Aconine

Among all these contents, alkaloid aconitine is most potent. Initially it affects the cardiac muscles and later smooth muscles, skeletal muscles, central and peripheral nervous systems are affected.

Signs and Symptoms

आयुर्वेदानुसार विषाक्तता के लक्षण -

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

ग्रीवास्तम्भो वत्सनाभे पीतविण्मूत्रनेत्रता।

(सु.क. 2/12)

Scanned with CamScanner

अशुद्ध वत्सनाभ का सेवन करने से –

1. ग्रीवास्तम्भ (stiffness of neck)
2. मल, मूत्र एवं नेत्र में पीतता (yellowish discoloration of feces, urine and conjunctiva)।

रसतरंगिणी के अनुसार

अविशुद्धं विषं दाहं मोहं हृद्गतिरोधनम्।
मृत्युञ्च।। (र.त. 24/18)

अशुद्ध वत्सनाभ का सेवन करने से –

- दाह (burning sensation),
- मोह (stupor)
- हृदयगति का अवरोध (cardiac arrest) होकर मृत्यु हो जाती है।

तालिका – आचार्य सुश्रुत एवं आचार्य सदानन्द शर्मा के अनुसार वत्सनाभ विषाक्तता के लक्षण

आचार्य सुश्रुत के अनुसार	आचार्य सदानन्द शर्मा के अनुसार
1. ग्रीवास्तम्भ (stiffness of neck) 2. मल, मूत्र एवं नेत्र में पीतता (yellowish discoloration of feces, urine and conjunctiva)	1. दाह (burning sensation), 2. मोह (stupor) और 3. हृदयगति का अवरोध (cardiac arrest) होकर मृत्यु

As per Modern Toxicology

- Severe burning sensation in the mouth, lips, tongue and throat
- Tingling sensation and numbness in oral cavity
- Profuse salivation
- Abdominal pain
- Vomiting
- Tingling sensation and numbness rapidly spread in whole body
- Symptoms resembling paralytic attack
- Giddiness
- Blurring of vision
- Stammering
- Generalized weakness
- Muscle cramps
- Convulsions
- Reduced and irregular pulse
- Initially constriction of pupils and later dilatation (this condition is called hippus)
- Fall in body temperature
- Death due to ventricular fibrillation.

Fatal dose

- Crude powder - 1 gm
- Juice - 250 mg
- Tincture - 25 drops
- Alkaloids - 4 mg

Fatal period

- Minimum - 45 minutes
- Maximum - 24 hours

Postmortem Appearance

- Non-specific
- Traces of aconite in abdominal cavity

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Commonly used for suicide/ homicide
- Abortifacient
- Cattle poison
- Arrow poison

Treatment

- **आयुर्वेदानुसार** –
  - टंकण + घृत का प्रयोग
  - अजादुग्ध की अधिक मात्रा देकर वमन कराना
  - हरिद्रा स्वरस + तण्डुलीय स्वरस/सर्पाक्षी स्वरस + टंकण + घृत

As Per Modern Toxicology

1. Stomach wash (using Tannic acid or Potassium permanganate)
2. Novocaine (for cardiac arrhythmias)
3. Nor-adrenaline/ Mephentine (for low blood pressure)
4. Artificial respiration

Scanned with CamScanner

8.14 शृंगी विष (Aconitum Chasmanthum)

Latin name - Aconitum chasmanthum

Family - Ranunculaceae

आयुर्वेदानुसार वर्णन -

- **पर्याय** - शृंगी - शृंगीक - शिंगिया - सिंधिया - सिंगी मुहरा - सिंधी मोहरा।
- **रसशास्त्र में प्रयोग** - उग्र विष होने के कारण इसका उपयोग रस-बन्धन और बुबुक्षा उत्पन्न करने के लिए ही किया जाता है।
- **परिचय** - भावप्रकाश के अनुसार यदि इसे गाय की सींग में बाँध दिया जाये तो उसका दूध लाल उतरने लगता है -

यस्मिन् गोशृंगं बद्धं दुग्धं भवति लोहितम्। (भा.प्र)

Habitat - Himalayan range (10,000 to 12,000 feet high).

Morphology

It is similar to and resembles aconite.

It is of two kinds -

1. White variety
2. Reddish variety

Smelling of reddish variety causes epistaxis.

Its root-bulb resembles the udder of cow.

It is greyish in color when dry.

Signs and Symptoms

- **आयुर्वेदानुसार विषाक्तता के लक्षण -**

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

शृंगीविषेणांगसाददाहोदरविवृद्धयः।। (सु.क 2/15)

1. अंगसाद (lassitude)
2. दाह (burning sensation) तथा
3. उदरवृद्धि (abdominal distension)।

As per Modern Toxicology

- Similar to Aconitum ferox

Fatal dose - Similar to Aconitum ferox

Fatal period - Similar to Aconitum ferox

Post-mortem appearance - Similar to Aconitum ferox

Medico-legal aspects - Similar to Aconitum ferox

Treatment

- **आयुर्वेदानुसार -**
  - टंकण वत्सनाभ और शृंगीक का प्रतिविष (antidote) है।

As per Modern Toxicology

- Similar to Aconitum ferox.

8.15 हरताल (Yellow arsenic)

English- Orpiment/ Arsenical gold ore/ Yellow arsenic

Chemical formula - As_2S_3 (Arsenic trisulphide)

Hardness - 1.5 to 2

Specific gravity - 3.4 to 3.5

Features -

आयुर्वेदानुसार

- **पर्याय**- -ताल - नटभूषण - शैलूषभूषण - विडालक - चित्रगन्धक - पिञ्जर - आल - पीतनक - वंगारि - खर्जूर - वंशपत्रक - मल्लगन्धज।
- **भेद** - 2

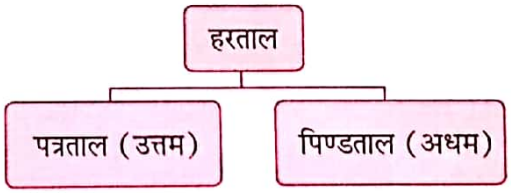

- **पत्रताल**→ पत्रताल सोने के समान चमकीला, पीतवर्ण का, स्निग्ध, भारी और अभ्रक के समान पत्रवाला होता है। यह गुणों में श्रेष्ठ और रसायन होता है।
- **पिण्डताल**→पिण्डताल स्वल्प वीर्य, अल्प गुणवाला, भारी और स्त्री के पुष्प को नष्ट करने वाला होता है।
- **अन्य भेद**→ इनके अतिरिक्त कुछ लोग इसके दो भेद और मानते हैं -
  - गोदन्ती हरताल
  - बगदादी हरताल।

Signs and Symptoms

- **आयुर्वेदानुसार -**

इसमें संखिया का अंश कम होने के कारण इसकी विषाक्तता भी अल्प बल और अल्प वीर्यवाली होती है। इसे अशुद्ध रूप में सेवन

Scanned with CamScanner

करने से उत्पन्न होने वाले लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए रसतरंगिणीकार ने कहा है –

अविशोधितं तु तालं परिशीलितं प्रकामम्।
जनयन्त्यनल्पदाहक्षोभप्रकम्पतोदान्।।

मलिनीकरोति गात्रं प्रकरोति कुष्ठभीतिम्।
कमनीयतां प्रकामं विनिहन्ति कायजाताम्।।

अशुद्ध तालकं कुर्याद् रोगान् वातकफोद्भवान्।
मृत्युशंकाकरान् यस्माद् भिषक् तस्माद्विशोधयेत्।।

(र.त. 11/13-15)

1. अशुद्ध हरताल का सेवन करने से शरीर में अत्यन्त दाह (profuse burning sensation), क्षोभ (discomfort), कम्प (tremors), तोद (पूरे शरीर में सुईयॉ-सी चुभना (pricking pain)) आदि लक्षण प्रकट होने लगते हैं।
2. रक्तदुष्टि से सम्पूर्ण शरीर में विकृति आ जाती है और कुष्ठ (skin ailments) का भय उत्पन्न हो जाता है।
3. शरीर की सुन्दरता (complexion) नष्ट हो जाती है।
4. अशुद्ध हरताल मृत्युकारक वात-कफप्रकोपात्मक रोगों को उत्पन्न करता है।

रसेन्द्रसारसंग्रह के रचयिता के अनुसार

अशुद्धतालमायुघ्नं कफमारुतमेहकृत्।
तापस्फोटांगसंकोचान् कुरुते तेन शोधयेत्।।

(र.सा.सं. 1/178)

- अशुद्ध हरताल आयुनाशक है।
- वह कफ, वायु, प्रमेह (diabetes), ताप (burning sensation) और फोड़े-फुँसियों (blisters etc.) को उत्पन्न करती है।
- अंगों में संकोच-उद्वेष्टन (cramps) को उत्पन्न करती है।

As per Modern toxicology

- The symptoms and signs of poisoning are similar to that of arsenic poisoning but in mild and low-grade form.

Fatal dosage - Not confirmed

Fatal period - Not confirmed

Post-Mortem Appearance

- Not specific
- Somewhat similar to arsenic poisoning (in low dose)

Treatment

- **आयुर्वेदानुसार**

1. सामान्य चिकित्सा-क्रम या आवश्यक होने पर संखिया की विषाक्तता में वर्णित चिकित्सा-क्रम अपनायें।
2. कूष्माण्ड स्वरस में मिश्री और जीरक चूर्ण मिलाकर दिन में तीन बार सेवन करने से हरताल के विकार दूर हो जाते हैं।
3. शर्करायुक्त जीरक का तीन दिन तक सेवन करना हितकर होता है।

As per Modern Toxicology -

- Stomach wash
- Emetics
- BAL
- Calcium disodium versenate
- Penicillamine etc.

8.16 Inorganic Acids/ Mineral Acids

8.16.1 Sulphuric Acid

Chemical formula - H_2SO_4

Synonym - Oil of Vitriol

Physical appearance - It is heavy, oily, colorless, non-fuming etc.

Signs and Symptoms

- Swollen tongue with white coating
- Chalky white teeth
- Swollen and exfoliated lips
- Severe burning sensation in the oral cavity
- Dysphagia
- Epigastric and retrosternal pain
- Brown/ black streaks over the cheeks, chin etc.
- Brownish/ blackish vomiting

Fatal dose

- In adults - 5-10 ml
- In children - 1.5-1.75 ml

Fatal period - 18 - 24 hrs.

Post-Mortem Appearance

- Corrosion of lips, cheeks, chins etc.
- Dilated pupils
- Cloth stained with brownish color
- GIT - black, swollen, dried and charred in appearance
- Performation of stomach etc.

Scanned with CamScanner

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Suicidal poisoning
- Vitriolage

Treatment

- Stomach wash and emesis are strictly contraindicated
- Milk of magnesia (for neutralization of acid)
- Lime water/ wood ash/ soap and water
- Use of demulcents (milk/ beaten egg white/ starch solution etc.)
- Inj. Morphine (for relieving pain)
- Symptomatic

8.16.2 Nitric Acid

Chemical formula - HNO_3

Synonym - Aqua Fortis

Physical appearance - It is a clear, colorless, fuming, heavy liquid with peculiar and choking odour.

Signs and Symptoms

- Yellowish discoloration of tissues
- Yellowish staining of cloths and teeth
- Lacrimation
- Photophobia
- Eructations
- Perforation of GIT (less common)
- Dyspnea

Fatal dose - 10 - 15 ml

Fatal period - 18 - 24 hrs

Post-Mortem Appearance

- Yellowish staining of tissues
- Yellowish staining of cloths
- Congestion of larynx, trachea, and broncheal tubes etc.
- Odematous lung

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Suicidal poisoning

Treatment

- Oxygenation (for respiratory distress)
- Management similar to that of Sulphuric acid

8.16.3 Hydrochloric Acid

Chemical formula - HCl

Synonym - Muriatic acid/ Spirit of salts

Physical appearance - pungent, colorless, fuming liquid

Signs and Symptoms

- Irritation of larynx and air passages
- Non-corrosion of skin
- Reddish brown staining of cloths etc.
- Salivation
- Convulsion
- Delirium
- Paralysis
- Nausea
- Epigastric pain

Fatal dose - 15 - 20 ml

Fatal period - 28 - 30 hrs

Post-Mortem Appearance

- Less severe corrosion
- Brownish fluid in the stomach
- Folds of stomach - brownish, firm, leathery
- Inflammation of respiratory passage and lung tissues

Medico-Legal Aspects

- Suicidal poisoning
- Accidental poisoning

Treatment

- Same as sulphuric acid

8.17 Organic Acids

8.17.1 Carbolic Acid

Carbolic acid poisoning is knowns as - **Carbolism.**

Chemical formula - C_6H_4OH

Synonym - Phenol/ Hedroxy benzene

Physical appearance - colorless, crystalline, peculiar odour, turns pink when exposed to atmosphere

Scanned with CamScanner

Signs and Symptoms

- Mild corrosion
- Whitish discoloration
- Local burning sensation, tingling and numbness
- Vomiting of frothy mucus with a strong smell of carbolic acid
- Vertigo
- Oliguria
- Carboluria
- Contraction of pupils
- Cyanosis

Fatal dose - 3 - 10 gm

Fatal period - 3 - 4 hrs

Treatment

- Stomach wash with 20% alcohol, soap solution etc.
- Demulcents like milk, egg albumin, barley water
- For efficent excretion I.V. fluid with sodium bicarbonate.
- For respiratory distress - atropine sulphate
- For circulatory collapse - I.V. fluid and vaso constrictor.

Post-Mortem Appearance

- Characteristic odor from mouth, nostrils etc.
- White or brownish discoloration of corroded areas
- Greenish/ brownish urine
- Cerebral edema
- Pulmonary edema
- Congestion of viscera

Medico-Legal Aspects

- Accidental
- Occupational hazard
- Suicidal etc.

8.17.2 Oxalic Acid

Chemical formula - $C_2H_2O_4$

Synonym - Acid of Sugar

Physical appearance - colorless, odourless, prismatic crystals, bitter to taste etc.

Signs and Symptoms

- Burning sensation
- Dysphagia
- Vomiting ('coffee grounds' vomitus)
- Diarrhea
- Tetany and convulsions
- Bradycardia
- Oxaluria etc.

Fatal dose - 15 - 20 gm

Fatal period - 1hr

Treatment

- Stomach wash
- Calcium gluconate IV
- Demulcents
- Supportive measures

Post-Mortem Appearance

- Whitish colored corroded mucosa
- Congestion of brain, liver and kidneys
- Signs of corrosion

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoining (very common)
- Suicidal poisoning

8.17.3 Formic Acid

Chemical formula - CH_2O_2

Synonym - Formylic acid/ Methanoic acid

Physical appearance - colorless, pungent, penetrating odour

Signs and Symptoms -

- Burning sensation
- Vomiting
- Drowsiness
- Salivation
- Ulceration
- Dilatation of pupils
- Hemolysis etc.

Fatal dose - 50 - 200 ml

Fatal period - 10 - 24 hrs

Treatment

- Gastric lavage
- Activated charcoal
- Dialysis

Scanned with CamScanner

- Ventilation
- Emesis
- Supportive measures

Post-Mortem Appearance

- Blackish discoloration of mucosa
- Pulmonary edema

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Suicidal poisoning

8.18 Alkalies

Commonly used

- Ammonium hydroxide - Sodium carbonate - Potassium carbonate - Sodium hydroxide - Potassium hydroxide etc.

Physical appearance - white/ colorless powders

Mode of Action

- Ulceration
- Liquefaction/ Necrosis

Signs and Symptoms

- Corrosion of tissues/ mucosa
- Dysphagia
- Vomiting
- Hematemesis
- Abdominal pain
- Diarrhea
- Tenesmus etc.

Fatal dose

- KoH and NaoH - 5gm
- Ammonia liquid form 10-30ml
- Sodium and potassium carbonate 15-30gm.

Treatment

- Endotracheal tubing
- Oxygenation therapy
- Demulcents
- Irrigation
- Supportive therapy

Post-Mortem Appearance

- Brownish/ graying staining of skin, tissues etc.
- Inflammation of tissues
- Congestion of respiratory tract

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Occupational hazards
- Suicidal poisoning

8.19 Iodine

Chemical formula - I

Physical appearance - bluish-black, soft and scaly crystals with metallic lustre and unpleasant taste

Signs and Symptoms

- Burning sensation in the GIT
- Rhinorrhea
- Conjunctivitis
- Cough
- Salivation
- Metallic taste
- Vomiting
- Diarrhea
- Yellowish discoloration of stool, skin and mucous membrane etc.

Fatal dose - 2 - 4 gm or 30-60 ml

Fatal period - 1 to several days

Treatment

- Stomach wash
- Irrigation of eyes
- Activated charcoal
- Sodium bicarbonate (for metabolic acidosis)
- Symptomatic management

Post-Mortem Appearance

- Inflamed, excoriated and brownish mucosa
- Fatty degeneration of heart, liver, kidneys etc.
- Edematous brain

Medico-Legal Aspects

- Accidental
- Iodism (chronic poisoning)
- Occupational hazard

8.20 Inorganic Elements

8.20.1 Phosphorus

Chemical formula - P_4

Varieties - 2

1. **White/ crystalline**
   - Physical appearance - waxy, crystalline, solids, garlicky odour

Scanned with CamScanner

- Usage - Fertilizers, insecticides, rodenticides, smoke screens, fireworks etc.

2. Red/ Amorphous

- Physical appearance - reddish-brown, amorphous, odorless

Signs and Symptoms

1. Acute poisoning -

- First stage (upto 8 hrs) - Burning sensation in throat and abdomen, profuse thirst, nausea, vomiting, diarrhea, severe abdominal pain, garlic-like odor in breath and feces
- Second stage (upto 2-3 days) - symptom free stage
- Third stage - nausea, vomiting, diarrhea, hematemesis, hepatic tenderness, jaundice, pruritus etc.

1. Fulminant poisoning (on consuming more than 1 gm) - restlessness, delirium, thirst, vomiting, nausea, retching - death within 12 hrs
2. Chronic poisoning - toothache, bone necrosis, sequestration, osteomyelitis of jaw. This condition is called as Phossy Jaw as this results due to long term occupational exposure (2-5 years) to the phosphorus fumes in a phosphorus industrial worker.

Fatal dose - 60 - 120 mg

Fatal period - 2 - 8 days

Post-Mortem Appearance

- Garlicky odor of mouth
- Jaundice
- Sub-cutaneous hemorrhage
- Congestion of affected parts
- Enlargment and fatty degeneration of liver
- Phossy jaw/ glass jaw (in chronic poisoning)

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Suicidal poisoning
- Homicidal poisoning

Treatment

- Gastric lavage (using 1:5000 $KMnO_4$)
- Activated charcoal
- Vitamin K i.v.
- Bowel evacuation (using magnesium sulphate)
- Avoid - oil, fat
- Symptomatic treatment

8.20.2 Aluminium Phosphide

Abbreviation - ALP

Physical appearance - Its greyish-green tablets are available as Celphos, Alphos, Phostoxin etc.

Signs and Symptoms

- Inhalation: irritation of mucous membranes, dizziness, fatigueness, tightness in the chest, nausea, vomiting, diarrhea, headache etc.
- Ingestion: nausea, vomiting, headache, abdominal pain, hypotension etc.

Fatal dose - 150 mg - 500 mg

Fatal period - 1 - 4 days

Post-Mortem Appearance

- Garlic-like odor in mouth, nostrils etc.
- Blood-stained froth
- Congestion in the mucous membranes of oesophagus, stomach and duodenum
- Centrizonal hemorrhagic necrosis of liver etc.

Medico-Legal Aspects

- Suicidal poisoning (very common in India)
- Homicidal poisoning

Treatment

- Gastric lavage
- Activated charcoal
- Antacids
- Liquid paraffin
- Magnesium sulphate (to reduce organ toxicity etc.)

Scanned with CamScanner

- IV fluids
- Sodium bicarbonate (for metabolic acidosis) etc.

8.20.3 Chlorine

Chemical formula - Cl

Physical Appearance - It is greenish-yellow gas with unpleasant and irritating odor.

Signs and Symptoms

- Irritation of the eyes, throat and mucous membranes of respiratory tract
- Cough
- Dyspnea
- Nausea
- Vomiting
- Spasm of glottis

Fatal dose - 1:1000
Fatal period - 1 - 2 days

Post-Mortem Appearance

- Inflammation of respiratory tract
- Pulmonary edema
- Rupture of alveolar walls etc.

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Industrial exposure

Treatment

- Shifting from the site
- Treatment of shock
- Treatment of circulatory collapse
- Treatment of pulmonary edema

8.21 Asphyxiants

8.21.1 Ammonia

Chemical Formula - NH_3
Features - highly water soluble, extremely irritant gas with asphyxiating odor

Signs and Symptoms

- Acute respiratory irritation
- Lacrimation
- Cough
- Dyspnea
- Odema of glottis and larynx
- Sloughing of bronchial mucosa
- Coma etc.

Fatal dose - 5 - 10 ml
Fatal period - Rapid

Post-Mortem Appearance

- Congestion in respiratory tract
- Edema of glottis and larynx etc.

Medico-Legal Aspects

- Suicidal poisoning
- Robbery (ammonia spray)

Treatment

- Intubation
- Oxygenation therapy
- Broncho-dilators
- Irrigation and washing in case of contact poisoning
- Water/ milk

8.21.2 Methyl Isocyanate (MIC)

Features - pungent, sweetish smelling, stable liquid at 27^0C and gaseous at 31^0C, highly volatile and inflammable

Signs and Symptoms

- Acute irritation of the eyes
- Lacrymation
- Blurred vision
- Intense burning sensation in throat
- Chest pain
- Laboured breathing etc.

Fatal period - 5 - 6 days

Post-Mortem Appearance

- Pulmonary edema
- Cerebral edema
- Asphyxia etc.

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Industrial accident

Treatment

- Sodium thiosulphate

Scanned with CamScanner

- Copious washing of eyes and skin
- Oxygenation
- Broncho-dilators
- Symptomatic management

8.21.3 Carbon Monoxide (CO)

Features - colorless, odorless, tasteless, non-irritating gas

Signs and Symptoms

- Depend on the limit of blood saturation
- Respiratory distress
- Circulatory distress
- Anemia
- Mild headache
- Vomiting
- Nausea etc.

Fatal dose - 70% or more

Fatal period - Rapid (due to respiratory arrest)

Post-Mortem Appearance

- Bright cherry red skin
- Blood, visceras - all cherry red colored
- Froth from mouth and nose
- Hemorrhages seen in lungs, GIT, heart, brain etc.

Medico-Legal Aspects

- Suicidal poisoning (very common in Western countries)
- Accidental poisoning

Treatment

- Respiratory care
- Blood transfusion
- i.v. Mannitol
- s.c. Adrenaline and Coramine

8.21.4 Carbon Dioxide (CO_2)

eatures - colorless, odorless gas

Signs and Symptoms

- Headache
- Giddiness
- Ringing in the ears
- Sense of tightness in the chest region
- Gradual loss of muscle power
- Drowsiness
- Unconsciousness etc.

Fatal dose - More than 30% conc.

Fatal period - Varies

Post-Mortem Appearance

- Pale and swollen lips
- Dilated pupils
- Frothing from the mouth and nostrils
- Signs of asphyxia

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning

Treatment

- Shifting the patient to a fresh air
- Artificial respiration
- Symptomatic management

8.21.5 Hydrogen Sulphide

Chemical formula - H_2S

Features - It is a colorless, heavy, rotten egg like smell and flammable gas.

Signs and Symptoms

- Feeling of dullness
- Giddiness
- Cough
- Nausea
- Laboured breathing
- Lacrymation
- Photophobia etc.

Fatal dose - 0.1 - 0.2%

Fatal period - **Immediate**

Post-Mortem Appearance

- Signs of asphyxia
- Greenish-purple colored blood and viscera

Medico-Legal Aspects

- Accidental (sewer gas)

Treatment

- Shifting into fresh air
- Artificial respiration

Scanned with CamScanner

- Oxygenation etc

8.21.6 Cyanide

Occurrence - As a gas: Hydrogen cyanide
As a liquid: Hydrocyanic acid
As a solid: Salts of Cyanide

Chemical formula - HCN

Signs and Symptoms

- Most rapid of all the poisons
- Loss of consciousness
- Respiratory arrest

Fatal dose - Acid: 50 - 60 mg Sodium cyanide/ Potassium cyanide: 200 - 300 mg Air conc.: 1:500

Fatal period - Immediate

Post-Mortem Appearance

- Bright, glistening and prominent eyes
- Dilated pupils
- Froth from mouth
- Bitter almond odor
- Brick-red colored skin etc.
- Pulmonary edema
- Cerebral edema etc.

Medico-Legal Aspects

- Suicidal poisoning
- Accidental poisoning

Treatment

- Ventilation
- Oxygenation
- Cardiac monitoring
- IV fluids
- Amyl nitrite
- Sodium nitrite
- Sodium thiosulphate etc.

• • •

Scanned with CamScanner

9 उपविष
Mild Poisons

विषय

- परिभाषा (Definition)
- कुचला (Nux vomica)
- अहिफेन (Opium)
- जयपाल (Croton tiglium)
- धत्तूर (Thorn apple)
- भँगा (Cannabis indica)
- गुञ्जा (Abrus precatorius)
- भल्लातक (Semecarpus anacardium)
- अर्क (Calotropis procera)
- स्नुही (Euphorbia Nerijolia)
- कलिहारी (Gloriosa superba)
- करवीर (Oleander)
- तम्बाकू (Tobacco)
- Parthenium hysterophorus
- चित्रक (Plumbago zeylanica)
- एरण्ड (Ricinus communis)
- हृत्पत्री (Digitalis)
- Cerbera odollam

9.1 परिभाषा (Definition)

विष के अतिरिक्त अन्य ऐसे सभी द्रव्य जिनका प्रभाव स्वस्थ प्राणियों में मादक रूप में व्यक्त होता है, उपविष कहलाते हैं। ये विष की अपेक्षा अल्प प्रभाव एवं अल्प बल वाले होते हैं। इनमें भी विष के प्रायः सभी गुण अपेक्षाकृत न्यून मात्रा में पाये जाते हैं। व्यापक दृष्टि से गरविष और दूषीविष का भी समावेश इन्हीं में किया जा सकता है, परन्तु शास्त्रीय मर्यादा और सुविधा की दृष्टि से उनका विवरण पृथक् अध्याय में प्रस्तुत किया गया है।

उपविषों की संख्या (Number of mild poisons)

रसेन्द्रसारसंग्रह में उपविषों की संख्या सात बतलाई गई हैं -

अर्कसेहुण्डधूस्तूरलांगलीकरवीरकाः।
गुञ्जाऽहिफेनावित्येताः सप्तोपविषजातयः।। (र.सा.सं. 1/385)

1. अर्क (Calotropis procera),
2. सेंहुण्ड (Euphorbia nerifolia),
3. धूस्तूर (Datura metel),
4. लांगली (Gloriosa superba),
5. करवीर (Nerium indicum),
6. गुञ्जा (Abrus precatorius)
7. अहिफेन (Papaver somniferum)।

रसतरंगिणी में उपविषों की संख्या ग्यारह बतलाई गई हैं -

विषतिन्दुकबीजं च त्वहिफेनञ्च रेचकम्।
धत्तूरबीजं विजया गुञ्जा भल्लातकाह्वयः।।
अर्कक्षीरं स्नुहीक्षीरं लांगली करवीरकम्।
समाख्यातो गणोऽयं तु बुधैरुपविषा भिधः।। (र.त. 24/163-164)

1. विषतिन्दुकबीज (कुचला - Strychnos nux vomica),
2. अहिफेन (अफीम - Papaver somniferum),
3. रेचक (जमालगोटे के बीज - Croton tiglium),
4. धत्तूरबीज (Datura metel),

Scanned with CamScanner

5. विजया (भांग की पत्ती - Cannabis sativa),
6. गुञ्जा (सफेद घुँघची - Abrus precatorius),
7. भल्लातक (भिलावा - Semecarpus anacardium)
8. अर्कक्षीर (आक का दूध - Calotropis procera)
9. स्नुहीक्षीर (थूहर का दूध - Euphorbia nerifolia)
10. लांगली (कलिहारी - Gloriosa superba)
11. करवीर (कनेर - Nerium indicum/ Thevetia nerifolia)।

ये सभी उपविष वानस्पतिक विषों (vegetable poisons) की श्रेणी में आते हैं। आयुर्वेद में व्यापक रूप से यही वर्गीकरण अधिक मान्य है। आगे इनमें से प्रत्येक का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है।

9.2 कुचला (Nux Vomica)

Latin name - Strychnos nux-vomica

English name - Nux vomica/ Poison nut tree/ Nux vomica tree

Family - Loganiaceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** - कुचेलक - कुचल - कुचिला - कुचिल - विषतुन्द - तिन्दु - तिन्देक - विषतिन्दुक - कारस्कर - रम्यफल - कुपाक - विषमुष्टिका - विषमुष्टि - कालकूट
- **रस** - तिक्त, कटु
- **गुण** - रूक्ष, लघु, तीक्ष्ण
- **वीर्य** - उष्ण
- **विपाक** - कटु
- **वर्ग** - फल विष

Category - Spinal irritant

Habitat - It is found in the foothills of Himalaya, South India, Coromandal coast, Orissa etc.

Morphology

- It belongs to the family Loganiaceae.
- The tree is about 12-13 meters tall and its trunk is crooked and thick.
- The branches are thin but sturdy.
- The leaves, greenish in color, are broad, shinning, approx. 5 to 12 cm in length etc.
- Flowers - These are greenish-white, numerous etc.
- Fruits - These are, 2.5 to 7.5 cm in length, globose and slightly rough with shining surface. The color changes to orange-red on ripening.
- Seeds - These are disc shaped (approx. 2 cm in diameter) with central depression, are ash-grey in color with shining surface and short tiny hairs. These are the most toxic part of the plant.

Active principles - Strychnine, Brucine, loganine, Vomicine, Kajine, Novacine, Iso-strychnine etc.

Signs and Symptoms

No toxicity is seen if the seeds are swallowed completely without chewing; toxicity is seen only when ingested after chewing. The signs and symptoms of toxicity are -

- Bitter taste in mouth
- Feeling of uneasiness
- Restlessness
- Difficulty in swallowing
- Convulsions
- Increased rigidity of muscles
- Ophisthotonous
- Emprosthotonous
- Muscular twitchings etc.
- Risus sardonicus

Fatal dose - 50 - 100 mg

Fatal period - 1 - 2 hrs

Differential Diagnosis

- Tetanus
- Epilepsy
- Hysteria

S. No.	Strychnine poisoning	Tetanus
1.	History of eating something pungent substance	History of injury or pricking of needle, nails etc.
2.	Abrupt manifestation of symptoms	Gradual manifestation of symptoms
3.	Convulsion affects all the muscles simultaneously	Convulsion initiates from muscles of lower jaw and neck

Scanned with CamScanner

S. No.	Strychnine poisoning	Tetanus
4.	Muscles relax during consecutive convulsions	Muscle remain rigid at all times
5	Either patient recovers rapidly or dies within few hours	Death is not before 24 hours
6	Chemical analysis confirms poisoning	Chemical analysis is insignificant

Fatal dosage

- Raw powder (in adults) - 2 gm
- Strychnine (in adults) - 15 - 30 mg
- Strychnine (in children) - 10 mg

Fatal period

- 1 to 2 hours (may extend upto 5 to 6 hours)
- Within few minutes (in case of intravenous poisonining with strychnine)

Post-Mortem Findings

- Signs of asphyxia
- Rigor mortis appears early
- Hemorrhages under the peritoneal coat of stomach
- Congestion in mucosa of stomach and duodenum
- Congestion in lungs, kidneys, liver, brain, spinal cord etc.

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Suicidal poisoning (rare, due to painful death)
- Homicidal poisoning
- Aphrodisiac use

Treatment

1. **Isolation** - Patient should be kept isolated in a dark room devoid of factors aggravating the convulsions
2. **Anesthetic agents**
   - Chloroform
   - Barbiturates
3. **Gastric lavage**
   - With Potassium permanganate (KMnO4) solution (1:1000) or warm water
4. **Sedatives**
   - Potassium bromide
   - Chloral hydrate
5. **Anti-convulsants**
   - Mephenesin - 3 mg/kg in drip
   - Diazepam - 2.5 mg
6. **Anti-dotes**
   - Barbiturates
   - Phenobarbitone sodium (500 - 700 mg in 10 ml distilled water)
7. **Supportive measures**
   - Artificial respiration
   - Oxygen therapy

9.3 अहिफेन (Opium)

Latin name - Papaver somniferum

English name - Opium/ Poppy seeds

Family - Papavaraceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** - अहिफेन · अफेन · निफेन · अहिफेनक आफूक - फणिफेन - नागफेन - आफिम - अफू - अमल अफीण - खसफलक्षीर
- **रस** - तिक्त, कषाय
- **गुण** - लघु, रूक्ष, सूक्ष्म, व्यवायी, विकासी
- **वीर्य** - उष्ण
- **विपाक** - कटु
- **प्रभाव** - मादक
- **वर्ग** - उपविष
- **भेद** - 4
  1. श्वेत
  2. पीत
  3. कृष्ण
  4. चित्र
- **क्षुप** - खाखस/ पोश्ता (Poppy Capsule)
- **फल** - डोडा

Scanned with CamScanner

- **फल त्वक्** - पोश्त (भा.प्र. - "धातूनां शोषक रूक्षमद-कृद्वाग्विवर्धनम्।")
- **बीज** - पोश्तदाना/खशखश/खाखस तिला (Poppy Seeeds)
- **फलक्षीर** - अहिफेन
- **शोधन विधि** - अहिफेन को पानी में घोलकर, कपड़े से छानकर अग्नि पर घन कर लें। तत्पश्चात् आर्द्रक स्वरस की 21 भावना दें।

Category - CNS depressant

Active principles - Morphine, codeine, thebaine, narcotine, papavarine etc.

Habitat - Opium in India is cultivated in U.P., Rajasthan and M.P. by the government license. It is also cultivated in Myanmar, Thailand, Laos, Afganistan, Pakistan and Iran.

Morphology

- Opium belongs to the family Papaveraceae It is cultivated worldwide.
- It is an annual herb with height reaching upto 2.75 meters.
- The stem is erect, herbaceous, green, cylindrical and hairy.
- The leaf is simple, alternate, sessile, lobed etc.
- The flower is bisexual, complete, large, showy, red or white in color.
- The fruit is small and is either white or black.
- The unripe fruit capsule is incised in raw stage and left overnight. Next morning the accumulated latex is scrapped and collected. This is known as 'raw opium'

Signs and Symptoms

- आयुर्वेदानुसार -

अहिफेने मूर्धगुरुता भ्रमाध्मानमेव च।
कृच्छ्रश्वासो भवेदोष्ठमुखनेत्रेषु कृष्णता।
अतिस्वेदोऽगंशैथिल्यं शैत्यं स्याद्धस्तपादयोः।।

(अनुपानमञ्जरी)

1. मूर्धगुरुता (heaviness of head)
2. भ्रम (giddiness)
3. आध्मान (abdominal distension)
4. श्वासकृच्छ्रता (dyspnea)
5. ओष्ठ, मुख एवं नेत्र में कृष्णता (blackish discoloration of lips, mouth and eyes)
6. अति स्वेदप्रवृत्ति (profuse sweating)।
7. अंगशैथिल्य (laxity)
8. हस्त एवं पाद में शीतता (coldness of hands and legs)

As per Modern Toxicology

In opium the content of morphine is maximum; therefore poisoning by opium means poisoning by morphine.

The symptoms begin to present within an hour of consumption. If parentrally administered then the symptoms are seen within minutes.

It directly affects the central nervous system (CNS) and its toxicity has three stages -

1. Stage of excitement,
2. Stage of stupor and
3. Stage of narcosis.

- **Stage of excitement:**
  - Increased sense of well-being
  - Increased mental activity
  - Restlessness
  - Hallucination
  - Flushing of face
  - Palpitation
- **Stage of stupor:**
  - Headache
  - Nausea
  - Vomiting
  - Giddiness etc.
- **Stage of narcosis:**
  - Contraction of pupils
  - Fall in body temperature
  - Cyanosis
  - Cheyne-Stokes breathing

Fatal dose

- Opium - 2 gm
- Morphine - 200 mg
- Codeine - 50 mg
- Tincture -
  - 10 ml (for adults)
  - 1 to 3 drops (for children)

Scanned with CamScanner

Fatal period - 6 -12 hrs

Post-Mortem Appearance

- Signs of asphyxia
- Cyanosis of face and nails
- Froth at the mouth and nostrils etc.

Medico-Legal Aspects

- Chronic poisoning (Morhinism/Morphinomania)
- Suicidal poisoning
- Accidental poisoning
- Pediatric poisoning
- Cattle poisoning

Treatment

- **आयुर्वेदानुसार** –
  - आयुर्वेद के ग्रन्थों में गाय के ताजे दूध और घी, कड़वी नीम, मकोय, कपास या इमली की पत्तियों के रस, एरण्ड की जड़ अथवा कोपलों के कल्क, अखरोट की गिरी, बिनौले और फिटकिरी के चूर्ण, तेजबल के कल्क और हींग को अफीम के विष का नाशक माना गया है।
  - आवश्यकतानुसार जहरमोहरा पिष्टी, चन्द्रोदय, कस्तूरी आदि का भी उपयोग किया जा सकता है।

As per Modern Toxicology

- Stomach wash (with $KMnO_4$)
- Endotracheal clearance
- Lethidrone 10 mg i.v.
- Amiphenazole 30 mg i.v.
- Stimulants (e.g. Adrenaline, Coramine etc.)
- Oxygenation
- Artificial respiration
- Maintaining the body temperature with hot bags and blankets etc.
- Use of antidotes - Nalorphine hydrobromide (5 mg i.v.) and Amiphenazole.

9.4 जयपाल (Croton Tiglium)

Latin name - Croton tiglium

English name - Purging croton

Family - Euphorbiaceae

आयुर्वेदानुसार –

- **पर्याय** – द्रवन्तीबीज – जयपाल – जेपाल – दन्तिबीज – तिन्तिडीफल
- **वर्ग** – फलविष

Category - Organic Irritant poison

Active principles - Crotonoleic acid, crotonol etc.

Habitat - It is found in abundance in states of Assam, Bengal and other parts of India.

Morphology

- The tree is small and evergreen; it measures upto 5 - 7 meters in height.
- Branches are small and hairy.
- Leaves are 4 to 10 cm long, broad, egg-shaped etc.
- Flowers are greenish-yellow.
- Seeds are oval, dark brown with longitudinal lines and are small sized and yield crotin and crotonoside.
- The oil (derived from seeds) is brown, viscid with unpleasant odour and acrid and burning taste.

Signs and Symptoms

- आयुर्वेदानुसार –

दन्तीविषातियोगे तु वान्तिर्भ्रान्तिश्च रेचनम्।
शूलाटोपौ भृशं स्वेदः भवेद्दौर्बल्यमेव च।।

(अनुपानमञ्जरी)

1. वान्ति (vomiting)
2. भ्रान्ति (giddiness)
3. विरेचन (diarrhea)
4. शूल (colic)
5. आटोप (abdominal - distention)
6. अत्यधिक स्वेदप्रवृत्ति (profuse sweating)
7. दौर्बल्य (fatigue-ness)

- **As per Modern Toxicology**
  - Burning sensation in GIT
  - Vomiting
  - Purging
  - Salivation
  - Blood in stools
  - Vertigo
  - Collapse

Fatal dose

- Adults
  - Seeds: 4 in number
  - Oil: 15 - 30 drops

Scanned with CamScanner

- Children
  - Seeds: 1 in number
  - Oil: 3 - 4 drops

Fatal period - 4 - 5 hrs

Post-Mortem Appearance

- Congestion, inflammation and erosion of mucosa of stomach and intestines

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Suicidal poisoning
- Homicidal poisoning
- Arrow poisoning (by forest dwellers)

Treatment

- **आयुर्वेदानुसार** -

धान्यकं सितया युक्तं दधिना सह यः पिबेत्।
घ्नन्ति बीजविकारस्य निवृत्तिस्तस्य जायते।।

(अनुपानमञ्जरी)

- धनिया, मिश्री और दही - इन तीनों को मिलाकर दें।
- कुछ न मिले तो थोड़ा-सा गर्म पानी पिला दें।
- 2 से 4 चावल की मात्रा में अफीम खिलाकर ऊपर से घी मिला दूध पिलाने से भी दस्त बन्द हो जाते हैं।
- बिना घी निकाली छाछ भी लाभदायक है।

- **As per Modern Toxicology**
  - Stomach wash
  - Demulcent
  - Symptomatic management

9.5 धत्तूर (Thorn Apple)

Latin name - Datura metel

English name - Datura/ Thorn apple

Family - Solanaceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** - धूत्तूरा - कितव - उन्मत्त - कनक - कण्टकफल - शिवशेखर - धूर्त्त - उन्मत्त - देवता - कितव - तूरी - महामोही
- **रस** - तिक्त, कटु
- **गुण** - लघु, रूक्ष, व्यवायी, विकासी
- **वीर्य** - उष्ण
- **विपाक** - कटु
- **प्रभाव** - मादक
- **शोधन** - गोदुग्ध में दोलायन्त्र विधि से 1 प्रहर तक स्वेदन करने से धत्तूर शुद्ध हो जाता है।
- **भेद** - 2
  1. सफेद फूलों वाला (Datura alba)
  2. काले या बैंगनी फूलोंवाला (Datura niger)
- **वर्ग** - फल-विष

Category - Deliriant poison

Active principles - Hyoscine, hyosciamine, atropine etc.

Habitat - All over India

Morphology

- It is an annual herbaceous plant.
- It grows upto 12 feet in height.
- Leaves are light, dull green color with slightly serrated edges.
- Branches are smooth, violet or dark purple.
- Flowers are funnel-shaped, fragrant, either white, yellow or violet in color.
- Fruit is nearly an inch long and and 1.5 inches in diameter. It bears thorns on its surface and is bent at the edges.
- Seeds are kidney bean shaped and yellowish-brown in color.

Signs and Symptoms

- **आयुर्वेदानुसार** -

धूर्तबीजेऽतितृष्णा स्याद् भ्रमः स्वेदः प्रलापकः।
मूर्च्छातिकृच्छ्रश्वासश्च मोह आक्षेपकस्तथा।।

(अनुपानमञ्जरी)

1. अत्यधिक तृष्णा (excessive thirst)
2. भ्रम (giddiness)
3. स्वेदप्रवृत्ति (sweating)
4. प्रलाप (delirium)
5. मूर्च्छा (fainting)
6. अत्यधिक कष्टपूर्वक श्वास (labored breathing)
7. मोह (stupor)
8. आक्षेप (convulsions)

Scanned with CamScanner

As per Modern Toxicology

The symptoms can be summarized under 9 D's:

1. Dryness of mouth and throat
2. Dysphagia
3. Difficulty in speech
4. Dilatation of cutaneous blood vessels
5. Dilatation of pupils
6. Delirium etc.
7. Drunken gait
8. Dry not skin
9. Drowsiness

The symptoms are described as dry as a bone, red as beat, blind as bat, hot as hare, mad as wet hen.

Effects

- The alkaloids of datura initially stimulate the higher centres of the brain and then followed by motor centres and finally cause depression and paralysis of vital centres of the medulla.

Fatal dose - 600 mg - 1 gm (100 - 125 seeds)
Fatal period - 24 hrs

Post-mortem appearance

- Wide dilatation of pupils
- Lividity
- Well developed hypostasis
- Congestion in internal organs etc.

Medico-legal aspects

- Stupefying agent (by mixing with food or with smoke)
- Accidental poisoning etc.

Treatment

- **आयुर्वेदानुसार -**

आवश्यकतानुसार निम्न योगों का प्रयोग करें -

1. बिनौले की गिरी खिलाकर दूध पिलायें।
2. धान की जड़ तुषोदक में पीसकर मिश्री मिलाकर पिलायें।
3. शंखाहुली की जड़ पानी में पीसकर पिलायें।
4. बिनौले और कपास के फूलों का क्वाथ दें।
5. बैंगन के छोटे-छोटे टुकड़े पानी में खूब मल लें और उसी पानी को छानकर या नितार कर पिलायें।
6. गाय का घी एवं मिश्री मिला दूध दें -

गोदुग्धं प्रस्थमेकं तु शर्कराया: पलद्वयम्।
तस्य पानाद्विषं याति धत्तूरस्य च निश्चितम्।।

(अनुपानमञ्जरी)

7. तात्कालीक रूप से और कुछ नहीं उपलब्ध हो तो नमक घोलकर पिलायें।

As per Modern Toxicology

- Stomach wash (using weak solution of KMno4)
- Purgation (in case of delayed management)
- Cold water irrigation over the head
- Pilocarpine nitrous/ Escerine/ Physostigmine
- Diuretics
- Symptomatic management

9.6 भँगा (Cannabis indica)

Latin name - Cannabis indica
English name - Indian Hemp
Family - Cannabinaceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** - बूटी - सिद्धि - भंगा - भंगी - मातुलानी - मादिनी - मातिका - मातुली - विजया - तन्द्राकारिणी - बहुवादिनी
- **रस** - तिक्त
- **गुण** - लघु, तीक्ष्ण
- **वीर्य** - उष्ण
- **विपाक** - कटु
- **प्रभाव** - मादक
- **शोधन** - गोदुग्ध में दोलायन्त्र विधि से 1 प्रहर तक स्वेदन कर तत्पश्चात् गोघृत में भर्जन करने से भंगा शुद्ध हो जाता है।
- **भाँग** - पत्र-पुष्प-फलयुक्त कोमल शाखा।
- **गाँजा** - स्त्री जाति के क्षुप की रालयुक्त पुष्पमञ्जरी।
- **चरस** - पत्र-शाखों पर जमें हुए निर्यास।
- **माजून** - यह एक प्रकार का स्वादिष्ट पदार्थ है जिसको भंगा के पत्र, शर्करा, क्षीर और घृतादि मिलाकर बनाते हैं। इसका सेवन भोजनेच्छा एवं कामेच्छा वृद्धि के लिए किया जाता है।

Category - Deliriant poison

Scanned with CamScanner

Active principles - Cannabinol (15% in bhanga, 25% in ganja and 25-40% in charasa), cannabidiol etc.

Habitat - Found throughout India (upto 1300 metres elevation); specifically found in Uttar Pradesha, Bihar, and Gujarat etc. It is also cultivated.

Morphology

- It is an erect, annual and scarcely branched herb (height - 0.8 to 1.5 metres).
- Leaves - Stalked palmate, alternate; measuring - 7.5 to 20 cm in diameter
- Flowers - Pale yellow green
- Fruits - Ovate flat

Signs and Symptoms

- **आयुर्वेदानुसार -**

विजयायां तु तैमिर्यं मनोविभ्रम एव च।
अपस्मृतिः प्रलापश्च वान्तिः कण्ठे विशुष्कता।।

अनुपानमञ्जरी

1. तिमिर (eye disorder)
2. मनोविभ्रम (unstable mind)
3. अपस्मृत्ति (loss of memory)
4. प्रलाप (delirium)
5. वान्ति (vomiting)
6. कण्ठ में शुष्कता (dryness of throat)

As per Modern Toxicology

- Two stages occur -
  1. Stage of excitement or euphoria
  2. Stage of narcosis

1. Stage of Excitement or Euphoria

- Delightful and sensuous hallucinations
- Irrelevant laughing and singing
- Talking at a high pitch
- Increased appetite and thirst
- Sleeplessness etc.

2. Stage of Narcosis

- Muscular weakness
- Lassitude
- Drowsiness
- Loss of co-ordinated movements
- Dilatation of pupils
- Frail pulse etc

Chronic Poisoning

- Loss of appetite
- Loss of libido
- General weakness
- Emaciation
- Trembling etc

Fatal dose

- Bhanga: 10 gm/kg body wt.
- Ganja: 8 gm/kg body wt.
- Charasa: 2 gm/kg body wt.

Fatal period - 12 - 24 hrs

Post-Mortem Appearance

- Signs of asphyxia

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Stupefying poison

Treatment

- **आयुर्वेदानुसार -**

1. प्रचुर मात्रा में घी, दूध, दही, नारंगी या खट्टे अनार का रस, नीबू का पुराना अचार, इमली या इमली का सत आदि का सेवन करायें।
2. गले में खुश्की हो तो गले में घी चुपड़ें और अरहर की दाल का धोवन पिलायें।
3. पेड़े को पानी में घोलकर पिलायें।
4. बिनौले की गिरी का कल्क दूध में घोलकर पिलायें।
5. सोंठ का चूर्ण गाय के दही के साथ दें।
6. गाँजे के नशे में दूध या घी-मिश्री का प्रचुर मात्रा में सेवन करायें। यथा -

शिरःस्नानं तु कर्तव्यमतिशीतलवारिणा।
पयःपानं च सितया विजया विषशान्तिकृत्।।

(अनुपानमञ्जरी)

As per Modern Toxicology

- Inducing vomiting
- Stomach wash
- Cold water irrigation over the head
- Strong tea or coffee for ingestion

Scanned with CamScanner

- Strychnine HCl s.c.
- Artificial respiration

9.7 गुञ्जा (Abrus precatorius)

Latin name - Abrus precatorius

English name - Indian liquorice

Family - Fabaceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** - रक्ता - रक्तिका - ताम्रिका - कृष्णचूर्णिका - उच्चटा - शीतपाकी - भिल्लभूषणिका - अरुणा - चूड़ामणि - शिखण्डी - कृष्णला - काकणन्ती - काम्भोजी
- **रस** - तिक्त, कषाय
- **गुण**- लघु, रूक्ष
- **वीर्य** - उष्ण
- **विपाक** - कटु
- **भेद**- 3
  1. श्वेत
  2. रक्त
  3. कृष्ण

Category - Organic irritant poison

Active principles - Abrin, toxalbumin, abrine, hemoglutinin, abralin etc.

Habitat - Found throughout the tropics.

Morphology

- It is slender, twinning climber having woody base.
- Leaves - Long, pinnate-leafleated leaves
- Flowers - Pea like, long, purple, pink, yellowish and white in colour.
- Seeds - Egg shaped, bright scarlet in colour; it is marked with a large black spot at one end; it is devoid of any taste or odour.

Signs and Symptoms

- **आयुर्वेदानुसार -**

गुञ्जाविषेण दौर्बल्यं खेभ्यो रक्तसृतिर्भवेत्।
तन्द्रा मोहश्च गात्रेषु संभवेयुर्व्रणा भृशम्।।

(अनुपानमञ्जरी)

1. दौर्बल्य (weakness)
2. रक्तस्राव (bleeding)
3. तन्द्रा (fatigueness)
4. मोह (stupor)

As per Modern Toxicology

- Abdominal pain
- Nausea
- Vomiting
- Diarrhea
- Cold perspiration
- Trembling of hands etc.

Fatal dose - 90 - 120 mg (1 - 2 seeds)

Fatal period - 3 - 5 days

Post-Mortem Appearance

- Swelling and necrosis of site of injection
- Congestion of mucosa of stomach etc.

Medico-Legal Aspects

- Cattle poisoning
- Malingering
- Arrow poison etc.

Treatment

- **आयुर्वेदानुसार -**

मेघनादरसो ग्राह्यः शर्करायुक्तपानतः।
उच्चटाया विकारस्य शांतिः स्यात्।। (अनुपानमञ्जरी)

- चौलाई का रस मिश्री मिलाकर दें और ऊपर से दूध पिलायें। इससे घुँघची का विष शान्त हो जाता है।

As per Modern Toxicology

- Inj. Antiabrin
- Excising the site of injection

9.8 भल्लातक (Semecarpus anacardium)

Latin name - Semecarpus anacardium

English name - Marking nut

Family - Anacardiaceae

- **आयुर्वेदानुसार -**
- **पर्याय** - अरुष्कर - अग्निक - वीरवृक्ष - शोफकृत्
- **रस** - कटु, तिक्त, कषाय
- **गुण** - लघु, स्निग्ध, तीक्ष्ण

Scanned with CamScanner

- **वीर्य** - उष्ण
- **विपाक** - मधुर
- **शोधन द्रव्य** - ईष्टिका चूर्ण

Category - Organic irritant poison

Active principles - Semecarpol, bhilawanol etc.

Habitat - (i) Also in lower Himalayan range. (ii) It is found in Uttar Pradesh, Uttrakhand Bihar, Kerala, Andhra etc.

Morphology

- Moderate sized deciduous tree
- Leaves - 18 to 60 cm x 10 to 30 cm
- Flowers - Greenish white in colour
- Nuts - 1 inch long, black, ovoid or heart shaped with rough projections at the base; they possess thick pericarp. It contains irritant juice which is brownish, oily acrid but turns black when exposed to atmosphere.

Signs and Symptoms

- **आयुर्वेदानुसार** -

भल्लातकस्य विषे तापो कोष्ठे भवति सव्रणः।
त्वचि स्फोटो भवद्भिन्ने स्रावः कुर्याद् व्रणं पुनः।।
(अनुपानमञ्जरी)

1. कोष्ठ में ताप (burning sensation) एवं व्रणोत्पत्ति (ulceration)
2. त्वचा में स्फोट (blister formation)

As per Modern Toxicology

- **On Local application:**
  - Irritation,
  - Painful blister formation,
  - Itching,
  - Lesions resemble a bruise etc.
- **On Ingestion:**
  - Blisters on throat,
  - Severe GIT irritation,
  - Dyspnea,
  - Tachycardia,
  - Hypotension etc.

Fatal dose - 5 - 10 gm

Fatal period - 12 - 24 hrs

Post-Mortem Appearance

- Blisters in the mouth, throat, stomach etc.
- Congestion of internal organs

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Abortifacient
- In doubt of infidelity the women are punished by applying it on their genital organs
- Irrational use by Quacks
- For faking injuries caused by others etc.

Treatment

- **आयुर्वेदानुसार** -

सितया सहयामाश्च मेघनादरसस्य च।
तस्माद्भल्लं विषं हन्ति यथा लिंगप्रसेवनात्।।
(अनुपानमञ्जरी)

भिलावे के धुएँ या उसके स्पर्श से त्वचा पर उत्पन्न दाह एवं कण्डू में -

1. कसौंदी की पत्ती पीसकर लगायें।
2. आमाहल्दी, सॉठी चावल और दूब बासी पानी में पीसकर लगायें।
3. काले तिल पीसकर सिरके और मक्खन में मिलाकर लगायें।
4. काले तिलों को दूध या दही में पीसकर लगायें।
5. इमली के साफ पानी में नारियल की गिरी घिसकर लगायें।
6. सफेद चन्दन और लाल चन्दन पत्थर पर घिसकर लगायें।
7. चौलाई का रस मक्खन में मिलाकर लगायें।
8. तिल और काली मिट्टी पीसकर लेप करें।
9. इमली की पत्तियों का रस पीने को दें।
10. इमली के बीज पीसकर, चिरौंजी और तिल को भैंस के दूध में पीसकर या अखरोट की गिरी खाने को दें।
11. दूध, दही अथवा नारियल का जल पिलायें।

As per Modern Toxicology

- Stomach wash
- Rinsing of part applied with water etc.
- Application of soothing agents
- Morphine (for relieving the pain)
- Symptomatic management

9.9 अर्क (Calotropis procera)

Latin name - Calotropis gigantea (श्वेतार्क)
Calotropis procera (रक्तार्क)

Scanned with CamScanner

English name - Gigantic Swallow wort/ Madar

Family - Asclepiadiaceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** - गणरूप · मन्दार · सदापुष्प अलर्क प्रतापस
- **रस** – कटु, तिक्त
- **गुण** – लघु, रूक्ष, तीक्ष्ण
- **वीर्य** – उष्ण
- **विपाक** – कटु
- **भेद** -
  - सुश्रुत मतेन 2 = - अर्क - अलर्क
  - भावप्रकाश मतेन 2 = - श्वेत – रक्त
  - धन्वन्तरि निघण्टु मतेन 2 = - अर्क – राजार्क
  - राज निघण्टु मतेन 4 = - अर्क – राजार्क शुक्लार्क - श्वेतमन्दारक

Category - Organic irritant poison

Active principles - Uscherin - Calotropin Calotoxin - Amyrin - Giganteol

Habitat - Throughout India

Morphology

- There are two varieties - (i) Calotropis gigantea (white flowers) and (2) Calotropis procera (purple flowers).
- Height -
  - C. gigantea: 8 to 10 feet
  - C. procera: 3 to 6 feet
- Leaves - Sessile and sub-sessile, opposite, ovate and cordate at the base.
- Flowers - 3.5 to 5 cm in size; C. gigantea. devoid of fragrance and C. procera: has fragrance.
- Seeds - Compressed, broadly ovoid, with a tufted micropylar coma of long silky hair.

Signs and Symptoms

- **On application:**
  - Localized redness,
  - Vesication etc.
- **On ingestion:**
  - Burning pain in throat and stomach,
  - Salivation,
  - Stomatitis,
  - Vomiting,
  - Diarrhea,
  - Dilated pupils,
  - Tetanic convulsions etc

Fatal dose - Uncertain

Fatal period - 1 - 8 hrs (might extend up to 12 hours)

Post-Mortem Appearance

- Dilated pupils
- Froth at nostrils and mouth
- Stomatitis
- Inflammation of GIT
- Congestion of internal organs (e.g. liver, spleen, kidneys, brain and meninges)

Medico-Legal Aspects

- Infanticide
- Accidental poisoning (common)
- Abortifacient
- Cattle poisoning
- Arrow poison etc

Treatment

आयुर्वेदानुसार -

- आयुर्वेद में पलाश (ढाक) को अर्कविष का प्रतिकारक माना गया है और ये दोनों ही प्राय: जंगली रूप में ऊसर जमीन पर साथ-साथ उगते हैं।
- त्वचा पर अर्कक्षीर लग जाने से यदि घाव हो गया हो तो उसे पलाश के क्वाथ से धोयें और पलाश की कोमल पत्तियों का बारीक चूर्ण उस पर बुरकें।
- अर्कक्षीर, पत्ते या जड़ आदि का सेवन कर लेने से यदि विषाक्तता उत्पन्न हो गई हो तो उसे पलाश का क्वाथ पिलायें।

As per Modern Toxicology

- Gastric lavage (with warm water)
- Demulcents (e.g. white of egg)
- Morphine (for pain)
- Stimulants

9.10 स्नुही (Euphorbia Nerifolia)

Latin name - Euphorbia antiquorum

English name - Common milk hedge

Family - Euphorbiaceae

Scanned with CamScanner

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** - सेहुण्ड - स्नुही - थार गुडा सुधा समन्तदुग्धा – वज्री – निस्त्रिंशपत्र
- **जातियाँ** – तिधारा, चौधारा, पञ्चधारा, षड्धारा, सप्तधारा, नागफणी, आंगुलिया, खुरासानी और काँटे वाली।
- **रस** – कटु
- **गुण** – लघु - तीक्ष्ण
- **वीर्य** – उष्ण
- **विपाक** – कटु

Category - Organic irritant poison

Active principles - Euphorbiol, nerifoliol, nerifolene, calcium mandelate etc.

Habitat - Common in rocky ground throughout the Indian Peninsula

Morphology

- Large shrub growing upto 20 feet
- Leaves - Fleshy, 6 to 12 inches long.
- Flowers - Yellowish green/ Greenish-yellow, two to seven in single spike
- Fruits - 0.5 inch long.
- Seeds - Minute.

Signs and Symptoms

आयुर्वेदानुसार -

स्नुहीक्षीरातियोगेन कुक्षौ तापो भवेत् भृशम्।
विरेकवमने स्यात्तां तत्र दीप्ताश्यवत्क्रिया।।

अनुपानमञ्जरी

- कुक्षिप्रदेश में ताप (warmth in the abdominal region)
- विरेचन (diarrhea)
- वमन (vomiting)

As per Modern Toxicology

- **On application:**
  - Vesication
  - Inflammation etc
- **On ingestion:**
  - Vomiting
  - Diarrhea
  - Convulsions
  - Coma etc

Fatal dose - Uncertain

Fatal period - 12 - 18 hrs

Treatment

आयुर्वेदानुसार -

- मक्खन और मिश्री खिलायें।
- भैंस का कच्चा दूध मिश्री मिलाकर पिलायें। यूनानी चिकित्सा में भैंस के दूध को थूहर का दर्पनाशक माना गया है।
- शीतल जल मिश्री मिलाकर पिलायें।
- घाव पर शामक मद्य का प्रयोग करें।

As per Modern Toxicology

- Stomach wash
- Symptomatic treatment

Post-Mortem Appearance

- Not specific

Medico-Legal Aspects

- Abortifacient
- Homicidal poisoning

9.11 कलिहारी (Gloriosa superba)

Latin name - Gloriosa superba

English name - Malabar Glory Lily

Family - Liliaceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** – लांगुलि - विषलांगली - अग्निशिखा - स्वर्णपुष्पा - दीप्ता – विद्युज्ज्वाला - गर्भपातिनी
- **रस** – कटु – तिक्त
- **गुण** – लघु - तीक्ष्ण
- **वीर्य** – उष्ण
- **विपाक** – कटु
- **प्रभाव** - गर्भपातन

Category - Organic irritant poison

Active principles - superbine, colchicine etc.

Habitat - Commonly found in all parts of Indian subcontinent.

Morphology

- Perennial herbs (but mostly seen during rainy season found climbing/ scrambling over other neighbouring plants

Scanned with CamScanner

- Leaves - Sessile, alternate, opposite or verticillate.
- Flowers - Showy, greenish-yellow to pink-ish-red in colour.
- Seeds - Few, wing like.

Signs and Symptoms

- Burning and numbness in the mouth and throat
- Nausea
- Vomiting
- Purging
- Ataxia
- Spasm
- Convulsions
- Profuse sweating etc.

Fatal dose - Uncertain

Fatal period - Uncertain

Treatment

- Treatment of shock
- Maintenance of blood pressure
- Symptomatic treatment

Post-Mortem Appearance

- Non-specific

Medico-Legal Aspects

- Abortifacient
- Suicidal poisoning etc.

9.12 करवीर (Oleander)

Latin name -

- **श्वेत करवीर**- Nerium indicum
- **पीत करवीर** - Cerebra thevetia/ Thevetia nerrifolia

English name - Indian oleander

Family - Apocynaceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** - हयारि - हयमार - अश्वमार - अश्वान्तक - अश्वहा - अश्वघ्न - चण्डातक
- **रस** - कटु - तिक्त
- **गुण** - लघु - रूक्ष - तीक्ष्ण
- **वीर्य** - उष्ण
- **विपाक** - कटु
- **भेद** - 3
  1. श्वेत
  2. पीत
  3. रक्त
- **वर्ग** - मूल विष

Category - Cardiac poison

Active principles - neriodorin, neiodorein, karabin etc.

Habitat - Commonly found in all parts of India.

Morphology

- Based on colour of flowers, it is of three types - (1) white, (2) reddish and (3) yellowish.
- It is an evergreen shrub or small tree.
- It grows upto 2 to 6 meters with erect stems.
- Leaves - Dark green in colour; shinning above and rough & dotted beneath.
- Flowers - 1.5 inches in diameter, red or white coloured.
- Fruits - 6 to 7 inches and 3 to 4 inches
- Seeds - Linear, ribbed, having a coma of greyish-brown hairs.

Signs and Symptoms

आयुर्वेदानुसार -

करवीरविषे तापो कोष्ठे भवति दारुण:।
स शूलौ वांतिरेकौ च भवेदाक्षेपको गद:।।

अनुपानमञ्जरी

1. कोष्ठ में ताप (warmth in abdomen)
2. अत्यधिक शूल (severe colic)
3. वांति (vomiting)
4. विरेचन (diarrhea)
5. आक्षेप (convulsions)

As per Modern Toxicology

1. Burning sensation in throat and abdomen
2. Edematous tongue
3. Difficulty in swallowing and speech
4. Profuse frothy salivation
5. Vomiting
6. Abdominal pain
7. Dilatation of pupils

Scanned with CamScanner

Fatal dose

- Root: 15 - 20 gm
- Leaves: 5 - 15 gm

Fatal period - 24 to 36 hours

Post-Mortem Appearance

- Petechial appearance on the heart
- Congestion of viscera
- Being heat-resistant, it can be traced even in burnt bodies

Medico-Legal Aspects

- Cattle poisoning (crushed seeds are fed with corn/ bread)
- Suicidal
- Abortifacient
- Homicidal (rarely used)

Treatment

- Stomach wash (using Tannic acid)
- Symptomatic management
- Morphine for sedation
- Sodium lactate

9.13 तम्बाकू (Tobacco)

Latin name - Nicotiana tabacum

English name - Tobacco

Family - Solanaceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** - ताम्रपत्र - गुच्छपत्र - क्षारपत्र - कृमिघ्न - वज्रपत्रिका

Category - Cardiac poison

Signs and Symptoms

- Nausea and vomiting
- Excessive salivation
- Abdominal pain
- Pallor
- Sweating
- Hypertension
- Tachycardia
- Ataxia etc.

Fatal dose - Adults - 0.5-1.0 mg/kg

Children - 0.1 mg/kg

Fatal period - 5 - 15 mins

Treatment

- Activated charcoal
- Control of seizures (using benzodiazepine)
- I.v. fluids (for hypotension)
- Atropine (for bradycardia)
- Respiratory support
- Acidification of urine

Post-Mortem Appearance

- Signs of asphyxia
- Brownish froth (mouth and nostrils)
- Congestion of GIT
- Pulmonary edema

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Malingering

9.14 Parthenium hysterophorus

Latin name - Parthenium hysterophorus

English name - Altamisa/ Carrot grass/ Bitter weed/ Star weed/ White top/ Wild feverfew/ Scourage of India/ Congress grass

Family - Asteraceae

Active principles - Parthenin, phenolic acids etc.

Signs and Symptoms

- Allergy
- Dermatitis
- Respiratory malfunction
- Eczema
- Asthma
- Allergic rhinitis
- Black spots
- Burning and blisters around eyes
- Diarrhoea etc.

Fatal dose - Uncertain

Fatal period - Uncertain

Treatment

- Treatment of allergy
- Symptomatic treatment

Post-Mortem Appearance

- Non-specific

Scanned with CamScanner

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning

9.15 चित्रक (Plumbago zeylanica)

Latin name - Plumbago zeylanica

English name - Ceylon Leadwort/ White Leadwort

Family - Plumbaginaceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** – अनलनामा - पाठी - व्याल - उषण
- **रस** – कटु
- **गुण** – लघु, रूक्ष, तीक्ष्ण
- **वीर्य** – उष्ण
- **विपाक** – कटु
- **कर्म:**– वह्निकृत् - अर्शोघ्न
- **भेद** – 2
  1. श्वेत
  2. रक्त
- **विशेष** -
  - वर्ज्य – गर्भिणी
  - हानिकारक प्रभाव - फुफ्फुस एवं यकृत

Category - Organic irritant poison

Active principles - plumbagin

Signs and Symptoms

- On application: irritation, blisters
- On ingestion: burning pain in the GIT, vomiting, thirst, diarrhea, collapse etc

Fatal dose - Uncertain

Fatal period - Few days

Post-Mortem Appearance

- Signs of gastro-enteritis
- Congestion of internal organs

Medico-Legal Aspects

- Abortifacient
- Homicidal poisoning

Treatment

- Gastric lavage
- Demulcents
- Symptomatic treatment

9.16 एरण्ड (Ricinus communis)

Latin name - Ricinus communis

English name - Castor oil plant

Family - Euphorbiaceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** – गन्धर्वहस्त - पञ्चांगुल - वर्धमान - उत्तानपत्रक - व्याघ्रपुच्छ – उरुबूक - व्यडम्बक
- **रस** – मधुर
- **अनुरस** – कटु, कषाय
- **गुण** – स्निग्ध, तीक्ष्ण, सूक्ष्म
- **वीर्य** – उष्ण
- **विपाक** – मधुर
- **भेद** – 2
  1. शुक्ल एरण्ड
  2. रक्त एरण्ड

Category - Organic irritant poisons

Active principles - Ricin etc.

Signs and Symptoms

1. Burning sensation in the GIT
2. Salivation
3. Nausea
4. Vomiting
5. Bloody diarrhea
6. Abdominal pain
7. Thirst
8. Impairment of sight
9. Weak and rapid pulse
10. Cramps etc.

Fatal dose - 5 - 10 seeds

Fatal period - 2 to several days

Post-Mortem Appearance

- Congestion of GIT mucosa
- Sub-mucous hemorrhages
- Dilation of heart
- Hemorrhages in the pleura
- Edematous liver, kidneys and other organs

Medico-Legal Aspects

- Accidental
- Homicidal

Treatment

1. Gastric lavage

Scanned with CamScanner

2. Demulcents
3. Symptomatic

9.17 हृत्पत्री (Digitalis)

Latin name - Digitalis purpurea

English name - Digitalis/ Foxglove

Family - Scrophulariaceae

आयुर्वेदानुसार -

- **पर्याय** - तिलपुष्पी
- **रस**- तिक्त
- **गुण** - लघु - रूक्ष
- **वीर्य** - शीत
- **विपाक** - कटु
- **प्रभाव** - हृद्य

Category - Cardiac poison

Active principles - digitoxin, digitonin, digoxin

Signs and Symptoms

1. Nausea
2. Vomiting
3. Diarrhoea
4. Xanthopsia (jaundiced/ yellow vision)
5. Drooling
6. Abnormal heart rate
7. Cardiac arrhythmias
8. Weakness
9. Dilated pupils
10. Tremors etc.

Fatal dose - Digitalin: 15 - 30 mg
Digitoxin: 4 mg
Leaf: 2 gm

Fatal period - 1 - 24 hrs

Post-Mortem Appearance

- Non-specific

Medico-Legal Aspects

- Accidental (due to drug overdosing)

Treatment

1. Stomach wash
2. Bowel evacuation
3. Activated charcoal
4. Digoxin specific antibody fragments (Fab) i.v.
5. Lignocaine iv.
6. Dilantin/ Propranolol
7. Potassium salts etc.

9.18 Cerbera odollam

Latin name - Cerbera odollam

English name - Suicide tree/ Pong-pong/ Othalanga

Family - Apocynaceae

Category - Cardiac poison

Active principles - cerberin (a potent alkaloid toxin)

Signs and Symptoms

1. Nausea
2. Severe retching
3. Vomiting
4. Abdominal pain
5. Diarrhea
6. Blurring of vision
7. Bradycardia
8. Irregular breathing etc.

Fatal dose - Kernel of one fruit

Fatal period - 1 - 2 days

Post-Mortem Appearance

- Similar to asphyxia
- Congestion of eyes
- Congestion of lungs etc.
- Hemorrhages etc.

Medico-legal Aspects

- Suicidal
- Homicidal

Treatment

1. Stomach wash
2. Atropine
3. Manage hyperkalaemia

• • •

Scanned with CamScanner

An Initiative By Technofiesta
AyuTech®
Technologically Driven Ancient Science !
www.ayutech.net

LAQ and SAQ
FMP

दूषी विष एवं गर विष
Slow Acting/Polluting Poisons and Swallowing Poisons

विषय

- दूषी विष
  (Polluting poisons)
- गरविष
  (Swallowing poisons/ Artificial poisons)

10.1 दूषी विष (Polluting Poisons)

10.1.1 परिचय (Introduction)

आयुर्वेद में दूषी विष शरीरस्थ या शरीर बाह्य स्थावर, जंगम या कृत्रिम विष के उस रूप या अंश के लिए प्रयोग किया गया है, जो विषघ्न औषधियों के प्रभाव से हतवीर्य होकर, या जन्म से ही अल्प गुण वाला (जिसमें विष के दसों गुण न पाये जायें या अल्प मात्रा में पाये जायें) या अल्पवीर्य होने के कारण या अत्यधिक पुराना। अथवा अन्य भौतिक एवं पारिस्थितिक शक्तियों से हतवीर्य हो जाने के कारण शरीर में जाकर भी अव्यक्त रूप में पड़ा रहे, परन्तु कालान्तर में जीर्ण होकर अन्य सहयोगी कारकों से प्रेरित या उद्दीप्त होकर धातुओं को दूषित कर भाँति-भाँति के रोगों को उत्पन्न कर रोगी के प्राणों का हरण कर ले, उसे **दूषी विष** (polluting poison)की संज्ञा दी जाती है।

10.1.2 निरुक्ति (Etymological derivation)

दूषी शब्द 'दूष' धातु में णिच् और इन प्रत्यय लगकर बना है। दूष का अर्थ है - अपवित्र या खराब करने वाला और दूषी का शाब्दिक अर्थ है-आँख का कीचड़।

आचार्य सुश्रुत मतेन

दूषितं देशकालान्नदिवास्वप्नैरभीक्ष्णशः।
यस्माद्दूषयते धातून् तस्माद्दूषीविषं स्मृतम्।। (सु.क. 2/33)

अन्नस्योपलक्षणत्वाद् व्यवाय, व्यायामक्रोधादिभिरपीत्यर्थः। (डल्हण)

चूँकि यह विष देश (habitat), काल (schedule), अन्न (diet) तथा दिन में सोने (day-sleeping) से बार-बार धातुओं को दूषित करता रहता है, इसलिए इसे 'दूषी विष (polluting poison)' कहते हैं।

आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन

आचार्य वृद्धवाग्भट ने दूषी विष को उद्दीप्त करने वाले कारकों में पूर्वी दिशा की वायु (eastern wind), अजीर्ण (indigestion), शीत (cold weather) और बादल (clouds) का भी उल्लेख किया है -

Scanned with CamScanner

प्राग्वाताजीर्णशीताभ्रदिवास्वप्नाहिताशनैः।

(अ.सं.उ. 40/44)

10.1.3 परिभाषा (Definition)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

यत् स्थावरं जंगमकृत्रिमं वा देहादशेषं यदनिर्गत तत्।
जीर्णं विषघ्नौषधिभिर्हतं वा दावाग्निवातातपशोषितं वा।।

स्वभावतो वा गुणविप्रहीनं विषं हि दूषीविषतामुपैति।
वीर्याल्पभावान्न निपातयेत्तत् कफावृतं वर्षगणनुबन्धि।।

(सु.क. 2/25-26)

स्थावर, जंगम अथवा कृत्रिम विष का वह अंश जो पूर्णरूप से शरीर के बाहर नहीं निकल पाता, किन्तु पचकर अथवा विषघ्न औषधियों के प्रभाव से हतवीर्य (poor in potency) होकर शरीर में ही पड़ा रहकर उसे धीरे-धीरे दूषित (vitiate/pollute) करता रहता है। जो पुराना पड़ गया है, जो वनाग्नि से, वायु अथवा धूप से जल कर या सूखकर हतवीर्य हो गया है अथवा जो जन्म से ही अपने स्वाभाविक गुणों से युक्त नहीं है, उसे दूषी विष (polluting poison) कहते हैं।

10.1.4 दूषीविष के प्रकोपक कारण
(Aggravating factors for dushi visha)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

कोपं च शीतानिलदुर्दिनेषु यात्याशु। (सु.क. 2/29)

शीत (coldness), अनिल अर्थात् वायु (wind) तथा दुर्दिन (cloudy day) - ये सभी विषय दूषीविष को प्रकुपित करने वाले होते हैं।

10.1.5 दूषी विष की अव्यक्तावस्था
(Chronicity of dushi visha)

दूषी विष अल्प वीर्य होने के कारण प्राणी को शीघ्र तो नहीं मारता, परन्तु कफावृत होकर शरीर में वर्षों तक बना रहता है। इसके लक्षण शीघ्र व्यक्त नहीं होते।

10.1.6 दूषी विष का निदान (Etiology)

प्रतिकूल देश, काल, आहार-विहार, अत्यधिक परिश्रम, अत्यधिक मैथुन, मानसिक द्वन्द्व, क्रोध आदि प्रतिकूल संवेगों के कारण जब मनुष्य की जीवनी-शक्ति या रोगप्रतिरोधक-क्षमता कमजोर पड़ जाती है तो पुरवैया हवा, धूप, शीत, वर्षा, बादल, अजीर्ण, शरीरस्थ आमविष आदि का सहयोग पाकर दूषी विष पुनः धातुओं को दूषित करने लगता है और उसके लक्षण व्यक्त होने लगते हैं।

10.1.7 दूषी विष के पूर्वरूप
(Pre-monitory symptoms)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

निद्रा गुरुत्वं च विजृम्भणं च विश्लेषहर्षावथवाऽंगमर्दः।

(सु.क. 2/30)

1. निद्रालुता (excessive sleeping)
2. भारीपन (heaviness)
3. जृम्भा (yawning)
4. सन्धियों की शिथिलता (laxity of joints)
5. रोमांच (horripilation)
6. अंगमर्द (अंगों का टूटना) malaise) आदि।

10.1.8 दूषी विष के रूप/लक्षण
(Signs and symptoms)

आचार्य चरक के अनुसार

दूषीविषं तु शोणितदुष्ट्यारुःकिटिमकोठलिंगं च।
विषमेकैकं दोषं संदूष्य हरत्यसूनेवम्।। (च.चि. 23/31)

दूषी विष शरीरस्थ रक्त को दूषित कर अरूंषिका (फुंसियाँ या चकत्ते - blisters), किटिभ (कुष्ठ का एक भेद - psoriatic lesions) तथा कोठ (allergic dermatitis) रोग को उत्पन्न करता है।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

तेनार्दितो भिन्नपुरीषवर्णो विगन्धवैरस्यमुखः पिपासी।
मूर्च्छन् वमन् गद्गदवाग्विषण्णो भवेच्च दुष्योदर-लिंगजुष्टः।। (सु.क. 2/27)

दूषीविष से ग्रस्त रोगी को निम्न विकार पीड़ित करते हैं -

1. भिन्नपुरीष (अतिसार - diarrhea),
2. भिन्नवर्ण (चेहरे का वर्ण बदलना - change of complexion),
3. मुख से विगन्ध (दुर्गन्ध - halitosis),
4. मुख में वैरस्य (स्वाद का बदलना - loss of taste),
5. पिपासा (प्यास लगना - thirst),
6. मूर्च्छा (fainting),
7. वमन (vomiting),
8. गद्गद वाणी (अस्पष्ट वाणी - stammering),
9. रोगी का विषण्ण (दुःखी - depressed) रहना
10. दूष्योदर अर्थात् सन्निपातज उदर रोग (Abdominal disorders due to vitiation of all the doshas।

ततः करोत्यन्नमदाविपाकावरोचकं मण्डलकोठमोहान्।।
धातुक्षयं पादकरास्यशोफं दकोदरं छर्दिमथातिसारम्।

Scanned with CamScanner

वैवर्ण्यमूर्च्छाविषमज्वरान् वा कुर्यात् प्रवृद्धां प्रबलां तृषां वा।।

उन्मादमन्यज्जनयेत्तथाऽन्यदानाहमन्यत् क्षपयेच्च शुक्रम्।
गाद्गद्यमन्यज्जनयेच्च कुष्ठं तांस्तान् विकारांश्च बहुप्रकारान्।। (सु.क. 2/30-32)

1. अन्नमद (अन्न खाने के बाद नशा-सा मालूम होना - intoxication after eating food),
2. अविपाक (अजीर्ण - indigestion),
3. अरोचक (anorexia),
4. मण्डल एवं कोठ की उत्पत्ति (development of rashes and blisters on the body),
5. मोह (stupor),
6. धातुक्षय (depletion of bodily tissues),
7. पाद, कर (हाथ) और मुख पर शोथ (edema),
8. दकोदर (जलोदर - ascites),
9. छर्दि (वमन - vomiting),
10. अतिसार (द्रव मल प्रवृत्ति - diarrhea),
11. वैवर्ण्य (loss of complexion),
12. मूर्च्छा (fainting),
13. विषमज्वर (fever of periodic nature),
14. प्रवृद्ध एवं प्रबल तृष्णा (अत्यधिक एवं असहनीय प्यास लगना - profuse and uncontrollable thirst),
15. अपने - अपने विशिष्ट प्रभाव के कारण कोई विष उन्माद (psychosis), कोई आनाह (distension), कोई शुक्रक्षय (depletion of seminal secretions), कोई स्वर-विकृति (hoarseness) तथा कोई कुष्ठ (skin ailments) को उत्पन्न करता है। इस प्रकार यह विष अनेक प्रकार के रोगों को उत्पन्न करने का कारण बनता है।

10.1.9 शरीर के अवयव विशेष में स्थित दूषी विष के लक्षण (Symptoms of dushi visha embedded in various organs)

आचार्य सुश्रुत मतेन

आमाशयस्थे कफवातरोगी पक्वाशयस्थेऽनिलपित्त-रोगी। भवेन्नरो ध्वस्तशिरोरुहांगो विलूनपक्षस्तु यथा विहंगः।।
स्थितं रसादिष्वथवा यथोक्तान् करोति धातुप्रभवान् विकारान्। (सु.क. 2/28-29)

- आमाशय (stomach) में स्थित दूषी विष कफ-वात के लक्षण उत्पन्न करता है।
- पक्वाशय (intestines) में स्थित दूषी विष वात-पित्त के लक्षण उत्पन्न करता है तथा रोगी के सिर के बाल और शरीर पर के रोंयें झड़ (falling of scalp and body hairs) जाते हैं। वह पंख कटे हुए पक्षी की भाँति दिखलाई पड़ता है।
- इसी प्रकार रस धातु आदि में स्थित दूषी विष धातुजन्य रोगों को उत्पन्न करता है।

10.1.10 दूषी विष की साध्यता-असाध्यता (Prognosis)

साध्यमात्मवतः सद्यो याप्यं संवत्सरोत्थितम्।
दूषीविषमसाध्यं तु क्षीणस्याहितसेविनः।।

(सु.क. 2/55)

- आत्मसंयमी पुरुष में नवीन रोग साध्य (curable) और एक वर्ष पुराना याप्य (palliative) होता है।
- क्षीण एवं अहितसेवी पुरुष में दूषी विष भी असाध्य (incurable) होता है।

10.1.11 दूषी विष की शास्त्रोक्त चिकित्सा (Treatment of dushi visha)

दूषीविषार्तं सुस्विन्नमूर्ध्वं चाधश्च शोधितम्।
पाययेतागदं नित्यमिमं दूषीविषापहम्।।

पिप्पल्यो ध्यामकं मांसी शावरः परिपेलवम्।
सुवर्चिका ससूक्ष्मैला तोयं कनकगैरिकम्।।

क्षौद्रयुक्तोऽगदो ह्येष दूषीविषमपोहति।
नाम्ना दूषीविषारिस्तु न चान्यत्रापि वार्यते।।

(सु.क. 2/50-52)

- दूषी विष से पीड़ित रोगी को भली प्रकार स्वेदन (sudation) देकर वमन (emesis) द्वारा शोधन करायें।
- शरीर के शुद्ध हो जाने पर निम्न दूषीविषारि अगद का कुछ दिनों तक लगातार सेवन करायें -
- पिप्पली, कत्तृण, जटामांसी, शावर लोध्र, केवटीमोथा, सुवर्चिका (हुलहुल), सूक्ष्मैला और स्वर्णगैरिक - इन्हें मधु में मिलाकर सेवन करायें।

10.1.12 दूषी विष के उपद्रवों की चिकित्सा (Treatment of complications of dushi visha)

ज्वरे दाहे च हिक्कायामानाहे शुक्रसंक्षये।
शोफेऽतिसारे मूर्च्छायां हृद्रोगे जठरेऽपि च।।

उन्मादे वेपथौ चैव ये चान्ये स्युरुपद्रवाः।
यथास्वं तेषु कुर्वीत विषघ्नैरौषधैः क्रियाम्।।

(सु.क. 2/53-54)

Scanned with CamScanner

दूषीविष के उपद्रव (Complications of dushi visha) हैं

- ज्वर (fever), दाह (burning sensation), हिक्का (hiccoughs), आनाह (distention), शुक्रक्षय (depletion of testicular secretions), शोफ (edema), अतिसार (diarrhea), मूर्च्छा (fainting), हृदयरोग (cardiac ailments), उन्माद (psychosis), कम्पन (tremors) आदि।

Treatment

- **विशिष्ट योग (Specific formulation)**
  - दूषी विष में तुत्थ भस्म, गन्धक रसायन और कल्याणक घृत विशेष रूप से लाभदायक पाये गये हैं।
- **विरेचन (Purgation)**
  - कोष्ठ-शोधनार्थ तुत्थ भस्म (375 - 750 mg) को रोटी में लपेटकर या लिट्टी (बाटी में भरकर रोगी को निगलवा दें और ऊपर से गोघृत (50 - 100 gm) पिला दें। लगभग 2 घण्टे बाद एक विरेचन होगा। उसके बाद उसे पुनः 50gm घी पिला दें। दूसरी बार विरेचन हो जाने पर 50 gm घी पुनः पिला दें। इस क्रम को तब तक जारी रखें जब तक कि पायखाने के रूप में पिया हुआ घी मात्र ही न आने लगे। अधिक से अधिक 10-12 बार ऐसा करना पड़ता है। इससे उदर साफ हो जाने से विषविकार शान्त हो जाता है तथा बेचैनी दूर हो जाती है। भूख लगने पर दो दिन तक केवल मूँग की खिचड़ी दें।
- **रसायन प्रयोग (Use of rasayana therapy)**
  - इसके उपरान्त लगभग 2 महीने तक गन्धक रसायन (1 gm) समभाग मिश्री मिलाकर प्रातः - सायं दूध से दें।
  - कल्याणक घृत (10 to 20 gm) दिन में 2 बार चटायें। इससे दूषी विष के सम्पूर्ण विकार शान्त हो जायेंगे तथा शरीर निर्मल और मन शान्त हो जायेगा।

जीर्ण विष प्रकोप में निम्न औषधियों का भी सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है -

1. स्वर्ण भस्म 2. स्वर्णमाक्षिक भस्म 3. पन्ना भस्म
4. पुखराज भस्म 5. प्रवाल पिष्टी 6. प्रवाल पञ्चामृत
7. रसादि चूर्ण 8. ताप्यादि लोह

10.2 गरविष (Swallowing Poisons/ Artificial Poisons)

10.2.1 परिचय (Introduction)

गर शब्द 'गृ' धातु में अच् प्रत्यय लगकर बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है - निगलना या निगलने योग्य। इसी अर्थ में यह पेय पदार्थों का वाचक हो गया है। इसका एक अर्थ जहर या विष भी है। आयुर्वेद में इस शब्द का प्रयोग कृत्रिम विष के उस रूप के लिए किया गया है, जो दो या दो से अधिक विषाक्त और विषहीन या निरे विषहीन पदार्थों के परस्पर मिलने से बनता है और शरीर में जाकर धातुओं को दूषित करता है या धातुओं को क्षतिग्रस्त कर मारक प्रभाव उत्पन्न करता है। गर विष का प्रयोग जिस प्रकार किया जाता था, वह उसके व्युत्पत्तिलब्ध अर्थ को ही चरितार्थ करता है।

10.2.2 परिभाषा (Definition)

आचार्य वाग्भट मतेन

नानाप्राण्यंगशमलविरुद्धौषधिभस्मनाम्।।
विषाणां चाल्पवीर्याणां योगो गर इति स्मृतः।

(अ.हृ.उ. 35/49-50)

नाना प्रकार के प्राणियों के अंगों से उत्पन्न मल (wastes), विरुद्ध औषधियों की भस्म (calcined powders) तथा अल्प वीर्यवाले विषों के योग को 'गरविष (swallowing poison/ artificial poison)' की संज्ञा दी जाती है।

आचार्य चरक मतेन

गरसंयोगजं चान्यद्गरसंज्ञं गदप्रदम्।
कालान्तरविपाकित्वान्न तदाशु हरत्यसून्।।

(च.चि. 23/14)

स्थावरविष (poison from stable sources) और जंगमविष (poison from moving sources) के अतिरिक्त एक संयोगज विष और होता है। जिसे गर (swallowing/ artificial poison) नाम से पुकारते हैं। यह भी नाना प्रकार के रोगों को उत्पन्न करता है। चूँकि इसका विपाक (digestion) देर से होता है, इसलिए यह शीघ्र प्राणघातक नहीं होता।

10.2.3 गरविष का प्रयोग (Purpose of inducing gara visha)

आचार्य चरक मतेन

सौभाग्यार्थं स्त्रियः स्वेदरजोनानांगजान्मलान्।
शत्रुप्रयुक्तांश्च गरान् प्रयच्छन्त्यन्नमिश्रितान्।

(च.चि. 23/233)

Scanned with CamScanner

सौभाग्य-प्राप्ति की इच्छा से स्त्रियाँ अपना स्वेद (पसीना - sweat), रज (menstrual bood) अथवा अपने अंगों से निकले हुए मल (wastes) को भोजन आदि में मिलाकर अपने पतियों अथवा अपने प्रेमियों को अपने वशीभूत करने के लिए अथवा शत्रुओं से प्रेरित होकर उनके द्वारा बहकावे में आकर कृत्रिम विषों को खिला देती हैं।

स्त्रियों में इस आचरण का आधार उनका अज्ञान, तत्कालीन अंधविश्वास और गलत तान्त्रिक धारणाएँ थीं, जो कुछ अंशों में अभी भी प्रचलित है। ऐसा वे प्रायः बहकावे में आकर ही करती थीं। प्राचीन काल में विषकन्याओं का इसी प्रकार गलत उपयोग कर उनसे तरह-तरह के कुकृत्य कराये जाते थे।

10.2.4 गरविष के लक्षण (Symptoms of gara visha)

आचार्य चरक के अनुसार

तैः स्यात् पाण्डुः कृशोऽल्पाग्निर्गरश्चास्योपजायते।
मर्मप्रधमनाध्मानं श्वयथुं हस्तपादयोः।।

जठरं ग्रहणीदोषो यक्ष्मा गुल्मः क्षयो ज्वरः।
एवंविधस्य चान्यस्य व्याधेर्लिंगानि दर्शयेत्।।

स्वप्ने मार्जारगोमायुव्यालान् सनकुलान् कपीन्।
प्रायः पश्यति नद्यादीञ्छुष्कांश्च सवनस्पतीन्।।

कालश्च गौरमात्मानं स्वप्ने गौरश्च कालकम्।
विकर्णनासिकं वाऽपि प्रपश्येद्विहतेन्द्रियः।।

(च.चि. 23/234-237)

शारीरिक लक्षण (Somatic symptoms)

1. शरीर की पाण्डुता (pallor)
2. शरीर का कार्श्य (leanness)
3. जठराग्नि का मन्द पड़ना (frailness of digestive capacity)
4. मर्मप्रधमन अर्थात् हृदय की धड़कन बढ़ना (tachycardia)
5. आध्मान अर्थात् पेट फूलना (abdominal distension)
6. हाथ और पैरों में शोथ (edema in the extremities)
7. जठरदोष (disorders of abdomen), ग्रहणीदोष (disorders of duodenal region), यक्ष्मा (tuberculosis), गुल्म (phantom tumors), क्षय (emaciation), ज्वर (pyrexia) आदि अनेक प्रकार के लक्षणों की उपस्थिति।

Debility - थकावट

स्वप्न में दृश्यमान लक्षण (Features seen in dreams)

1. मार्जार (बिलार), गोमायु (सियार), व्याल(शेर, बाघ, भालू), नकुल (नेवला), कपीन्(बन्दर) आदि वन्य पशुओं; सूखी नदियों, वनों आदि से युक्त अशुभ एवं डरावने सपनों को देखने लगता है।
2. स्वप्नावस्था में रोगी अपने वर्ण (complexion) को बदला हुआ, अर्थात् यदि काला है तो गोरा और यदि गोरा है तो काला देखता है तथा अपने को विकर्ण (कान के बिना - without ears) और विनासिक (बिना नाक के - without nose) देखता है।

मानसिक लक्षण (Psychiatric symptoms)

1. जाग्रतावस्था में रोगी अनुभव करता है जैसे उसकी इन्द्रियाँ (sensory organs) अपने-अपने विषयों को ग्रहण करने में समर्थ नहीं हैं।

साध्यासाध्यत्व (Prognosis)

आचार्य वाग्भट के अनुसार

एतैरन्यैश्च बहुभिः क्लिष्टो घोरैरुपद्रवैः।।

गरार्तो नाशमाप्नोति कश्चित्सद्योऽचिकित्सितः।

(अ.हृ.उ. 35/54-55)

गरविष के उपद्रवरूप लक्षणों से ग्रस्त रोगी की शीघ्र चिकित्सा न की गई तो उसकी मृत्यु हो सकती है।

10.2.5 गरविष की चिकित्सा (Treatment of gara visha)

आचार्य चरक के अनुसार

गरविष प्रायः इस प्रकार धोखे से खिलाया जाता है कि प्राणी को शीघ्र पता नहीं चल पाता। पता चल जाने पर तत्काल उसका उपचार सम्भव है। उक्त लक्षणों से युक्त रोगी जब विद्वान् चिकित्सक के पास पहुँचे और उसे विष दिये जाने का संदेह हो तो; आचार्य चरक के अनुसार -

तमवेक्ष्य भिषक् प्राज्ञः पृच्छेत् किं कैः कदा सह।
जग्धमित्यवगम्याशु प्रदद्याद्वमनं भिषक्।।

(च.चि. 23/238)

वैद्य रोगी से पूछे कि तुमने कब, किसके साथ और क्या खाया है। वह वस्तु तुम्हें किसने दी, इत्यादि। इन सारी बातों का पता लगा लेने के उपरान्त वैद्य शीघ्र ही रोगी को वमनकारक योग पिलाये।

Scanned with CamScanner

1. वमनकर्म (Emesis)

सूक्ष्मं ताम्ररजस्तस्मै सक्षौद्रं हृद्विशोधनम्।

(च.चि. 23/239)

वमन कराने के लिए अशुद्ध तांबे के चूर्ण को अल्प मात्रा में मधु के साथ चटा दे। इससे वमन होकर हृदय शुद्ध हो जायेगा।

2. हेमप्राशन (Hemaprashana)–

शुद्धे हृदि ततः शाणं हेमचूर्णस्य दापयेत्।।
हेम सर्वविषाण्याशु गरांश्च विनियच्छति।
न सज्जते हेमपांगे विषं पद्मदलेऽम्बुवत्।।

(च.चि. 23/239–240)

हृदय के शुद्ध हो जाने पर एक शाण (लगभग 4 gm) स्वर्ण चूर्ण मधु में मिलाकर खिलायें। स्वर्ण सभी प्रकार के विषों तथा गरविषों को शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

विमर्श –विष से पीड़ित रोगियों के लिए आचार्य चरक ने ताम्बे के चूर्ण को सर्वश्रेष्ठ वमनकारक और स्वर्ण के चूर्ण को सर्वश्रेष्ठ विषनाशक योग माना है। आचार्य चरक के काल की मात्राएँ आज के रोगी के लिए अपेक्षाकृत अधिक प्रतीत होती हैं। दूसरे अब स्वर्ण के चूर्ण के स्थान पर स्वर्णभस्म का उचित मात्रा में प्रयोग करना चाहिए।

3. अगदपान –

नागदन्तीत्रिवृद्दन्तीद्रवन्तीस्नुक्पयःफलैः।
साधितं माहिषं सर्पिः सगोमूत्राढकं हितम्।।
सर्पकीटविषार्तानां गरार्तानां च शान्तये।

(च.चि. 23/241–242)

नागदन्ती, त्रिवृत्, दन्ती, द्रवन्ती, स्नुहीक्षीर (प्रत्येक द्रव्य 1–1 पल (48 gm)) को माहिष सर्पि (भैंस का घी) और गोमूत्र (दोनों 1–1 आढ़क (3072 ml)) से सिद्ध कर रोगी को सेवन (24-48 gm) करायें। यह योग सर्पविष, कीटविष और गरविष को शान्त करता है।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

आचार्य वृद्धवाग्भट ने गरविष की चिकित्सा का किञ्चित् विस्तार से वर्णन किया है।

1. वमनकर्म (Emesis) एवं हेमप्राशन (Hemaprashana)–

गरार्तो वान्तवान्भुक्तवा तत्पथ्यं पानभोजनम्।
शुद्धहृच्छीलयेद्धेम सूत्रस्थानविधेः स्मरन्।।

(अ.सं.उ. 40/64)

उनके अनुसार भी गरविष के रोगी को तुरन्त वमन कराकर हितकारी आहार देना चाहिए और हृदय का शोधन करके स्वर्ण का सेवन कराना चाहिए।

2. शामक योग (Formulation) –

शर्कराक्षौद्रसंयुक्तश्चूर्णस्ताप्यसुवर्णयोः।
लेहः प्रशमयत्युग्रं सर्वं योगकृतं विषम्।।

(अ.सं.उ. 40/65)

स्वर्णमाक्षिक और स्वर्णभस्म को शर्करा और मधु के अनुपान से देना चाहिए।

10.2.6 गरविष के उपद्रवों की चिकित्सा (Management of complications of gara visha)

आचार्य वृद्धवाग्भट ने गरविष के उपद्रवों की चिकित्सा का विधान किया है, यथा –

- **अरुचि** (anorexia) **एवं मन्दाग्नि** (dyspepsia) **में –**

मूर्वामृतानतकणापटोलीचव्यचित्रकान्।
वचामुस्तविडंगानि तक्रकोष्णाम्बुमस्तुभिः।
पिबेद्रसेन चाम्लेन गरोपहतपावकः।। (अ.सं.उ. 40/66)

- मूर्वादि चूर्ण → मूर्वा, गुडूची, तगर, पिप्पली, पटोली, चव्य, चित्रक, वचा, मुस्ता और विडंग का चूर्ण – तक्र, कोष्ण जल, मस्तु, मांसरस या कांजी के अनुपान से।

- **तृष्णा** (thirst), **कास** (cough), **श्वास** (dyspnea), **हिक्का** (hiccough) **और ज्वर** (fever) **में –**

पारावतामिषशटीपुष्करास्वशृतं हिमम्।
गरतृष्णारुजाकासश्वासहिध्माज्वरापहम्।।

(अ.सं.उ. 40/67)

वायसी श्वासकासघ्नी भृष्टाज्यत्रिफलारसे।
भार्गीनागरनिर्यूहः शिशिरश्च समाक्षिकः।।

(अ.सं.उ. 40/68)

1. कपोत मांस को शटी और पुष्करमूल के साथ जल में पकाकर, ठण्डाकर खाने को दें।
2. घृत और त्रिफला के रस में बना भृंगराज का साग सेवन करायें।
3. भारंगी और शुण्ठी का क्वाथ ठण्डा कर, मधु मिलाकर रोगी को पिलायें।

- **त्वक्विकारों** (skin manifestations) **में –**

हरेणुचन्दनश्यामानलदं श्लक्ष्णपेषितम्।
विलेपनं प्रयोक्तव्यं गरेणोपहतत्वचः।।

(अ.सं.उ. 40/69)

Scanned with CamScanner

- हरेण्वादि लेपन→ रेणुका, चन्दन, प्रियंगु और नलद (खस) – इनको बारीक पीसकर लेप करें।
- **ओजक्षय** (depletion of immunity) **में** –

मञ्जिष्ठा किणिही निम्बरजन्यश्वत्थचन्दनैः।
प्रघर्षणं कृशानां तु गरेण क्षपितौजसाम्।।

(अ.सं.उ. 40/70)

- **मञ्जिष्ठादि प्रघर्षण**→ मञ्जिष्ठा, किणिही अपामार्ग, निम्ब, रजनी हल्दी, अश्वत्थ (पीपल) और चन्दन का प्रघर्षण (उबटन) लगायें।

10.2.7 विशिष्ट योग (Formulation)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

वृषनिम्बपटोलीनां क्वाथेन विपचेत् घृतम्।
अभयागर्भिणं श्रेष्ठं तत् गस्य निबर्हणम्।।

(अ.सं.उ. 40/72)

घटक द्रव्य –

- **क्वाथ के लिए** –
  1. वृष (अडूसा)
  2. निम्ब
  3. पटोल
- **कल्क के लिए** –
  1. अभया (हरड़)

मात्रा – 4 - 8 gm
अनुपान – कोष्ण जल

10.2.8 गरविष में पथ्य (Diet apt in garavisha)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

पथ्यं परममुद्दिष्टं शीलनं क्षीरसर्पिषोः। अ.सं.उ 40/71

गरविष में श्रेष्ठ पथ्य द्रव्य हैं –

1. क्षीर (दुग्ध)
2. सर्पि (घृत)।

• • •

Scanned with CamScanner

11 खनिज या धातुविष
Mineral or Metallic Poisons

विषय

- खनिज या धातुविष (Mineral or Metallic poisons)
- पारद (Mercury)
- नाग या सीसा (Lead)
- वंग (Tin)
- संखिया (Arsenious oxide)
- ताम्र (Copper)
- यशद (Zinc)

11.1 खनिज या धातुविष (Mineral or Metallic Poisons)

11.1.1 परिभाषा

इन्हें मूल रूप में पृथ्वी के अन्दर खोद कर निकाले जाने के कारण खनिज और धातु रूप में पाये जाने के कारण **धातु विष** की संज्ञा दी जाती है।

11.1.2 उदाहरण –

इनमें से प्रमुख हैं –

1. पारद (mercury),
2. नाग (lead),
3. वंग (tin),
4. संखिया या गिरिपाषाण (arsenic),
5. ताम्र (copper),
6. यशद (zinc),
7. एण्टिमनी (antimony),
8. थेलियम (thallium),
9. मैगँनीज (manganese),
10. बेरियम (berium)

इनमें से प्रथम छः का आयुर्वेद में प्राचीन काल से ही उपयोग होता चला आ रहा है। आगे संक्षेप में इनका परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है। शेष छः आधुनिक आयुर्विज्ञान की देन हैं। इनका वर्णन आधुनिक विष-विज्ञान की पुस्तकों में देखा जा सकता है।

Scanned with CamScanner

11.2 पारद (Mercury)

English- Mercury/ Quick silver
सांकेतिक नाम - Hg
परमाणु भार(Atomic weight) - 200.6
आपेक्षिक घनत्व - 12.59
हिमांक (Freezing temperature) – 36°C
क्वथनांक (Boiling point) - 357.25°C

Latin- Hydrargyrum
परमाणु संख्या (Atomic number) -80
विशिष्ट गुरुत्व (Specific gravity) - 13.56
परमाणु बन्धन क्षमता - 2
गलनांक (Melting temperature) – 35.87°C

पर्याय -

रस	रसेन्द्र	सूत	रसेश्वर	चपल
रसराज	खेचर	दिव्यरस	मुकुन्द	शिवबीज
रुद्रतेज	जत्र	महारस	शशिहेमनिधि	सूतराज

Category - Metallic poison

Introduction

- Mercury is a metal in liquid stage; it resembles silver and is similarly whitish and shinning in appearance; therefore it is also known as 'quicksilver'.
- Indians were introduced to this metal more than 3000 years back; almost all the classics of Ayurveda have described this metal.
- Modern science considers mercury as an element and is positioned at 80th place in Chemist's periodic table.
- In contrast to other metals, mercury is uniquely found in liquid state at room temperature.
- रसतरंगिणीकार के अनुसार पारद में स्वभावत: नाग, वंग, वह्नि, मल, चापल्य, विष, गिरि तथा असह्याग्नि – ये दोष विद्यमान रहते हैं।
  - नागदोष के कारण शरीर में व्रण की, वंग दोष के कारण कुष्ठ की, अग्निदोष से तापवृद्धि, मलदोष से जड़ता, चापल्यदोष से शुक्रक्षय, विषदोष से मृत्यु, गिरिदोष से स्फोट और असह्याग्नि से मोह आदि विकारों की उत्पत्ति होती है।

- **Ores of mercury : They are**

S. No.	Ore	Formula
1.	Cinnebar	HgS
2.	Meta cinnebar	HgS
3.	Calomel	Hg_2Cl_2
4.	Living stonite	$2Sb_2H_2$ HgS
5.	Montroydite	HgO
6.	Falh ore	
7.	Barsenite	
8.	Gwadal kajrite	
9.	Steel ore of mercury	
10.	Liver ore of mercury	
11.	Carolline ore of mercury	
12.	Brick ore of mercury	

- Among these Cinnebar (हिंगुल) is the prime source of mercury; this contains about 75 to 80% of mercury.

Mercury Poisoning

Source of poisoning

- Mercury is frequently used in arts, commercial and industrial setups, dentistry and other medical modalities.

Types of mercury poisoning - Mercury poisoning occurs in two ways -

1. Acute
2. Chronic

Scanned with CamScanner

Acute poisoning is caused to due to sudden ingestion of mercury in its toxic dosage whereas chronic poisoning is due to ingestion in minute quantity over a long span of time. Signs of acute poisoning are sudden and intense where as those of chronic poisoning are mild and consistent over a long period.

Chronic Poisoning, again, is of two types

1. Occupational poisoning (those working in mines or working in industries involving usage or contact of mercury) and
2. Therapeutic poisoning (those taking mercurial preparations for treatment of certain medical conditions).

Signs and Symptoms of Acute Mercury Poisoning

- **First phase:**
  - Acrid metallic taste in mouth
  - Sense of chocking in the throat
  - Difficulty in breathing
  - Swelling & greyish-white coating of mouth etc.
  - Burning sensation in GIT etc.
- **Second phase:**
  - Glossitis
  - Ulcerative gingivitis
  - Loosening of teeth
  - Necrosis of jaw
  - Necrosis of renal tubules
  - Transient polyuria etc.

Chronic Mercury Poisoning (Hydrargyrism)

- **Causes**
  - Occupational
  - Recovery from acute poisoning
  - Accidental absorption by workers
  - Injudicious therapeutic usage (in terms of dosage/ duration)
- **Signs and Symptoms**
  - Continuous metallic taste in mouth
  - Signs of gingivitis, glossitis etc.
  - Nausea, vomiting, diarrhea with colicky pain
  - Anorexia
  - Anemia
  - Weight loss
  - Lymphocytosis
  - Mercuria lentis (due to deposition of mercury through the cornea on the anterior lens capsule)
  - Skin - erythematous, eczematous or papular eruptions
  - Mercurial tremors
  - Erethism etc.

Treatment

- Removal from site of exposure (e.g. change of profession, location, site etc.)
- Sodium thiosulphate (i.v. 0.45 to 0.6 gm in 5 cc water; on alternate days)
- BAL (i.m.)
- Vitamin C
- Symptomatic managment

Differential Diagnosis

- Arsenic poisoning

Fatal dose - Mercuric chloride: 1 - 4 gm

Fatal period - 3 - 5 days

Treatment

- Gastric lavage - This is done using 5-10% sodium formaldehyde sulphoxylate; 250 ml is used and approximately 100 ml is allowed to remain in the stomach. This acts as a chemical antidote and reduces the mercuric compound to a mildly toxic compound.
- Egg albumin, milk etc. proteinous substances for protecting the gastric mucosa
- Activated charcoal (3 TSF in two cups of water) for absorbing mercury salts.
- Hemodialysis (in case of renal damage)
- BAL or dimercaprol (3-5 mg/kg i.m. 4 hourly for first two days; followed by 6 hourly on 3rd day and then 12 hourly for ten days)
- Symptomatic management
- गन्धक रसायन और पर्पटाद्यरिष्ट अथवा सारिवाद्यासव।

Scanned with CamScanner

Post-Mortem Appearance

- Oral cavity - Tongue is white in colour and swollen; mouth is diffuse greyish-white.
- GIT mucosa - Signs of inflammation, corrosion, congestion etc.
- Large intestine and caecum - Intense inflammation, ulceration and even gangrene.
- Liver - Congestion with central necrosis.
- Heart - Fatty degeneration and sub-endocardial hemorrhage.
- Spleen - congestion
- Emaciated body (due to loss of fluid by vomiting and diarrhea) etc.

Medico-Legal Aspects

1. Accidental poisoning (very common)
2. Abortifacient
3. Suicidal poisoning (rare due to painful death)
4. Homicidal poisoning (rare).

11.3 नाग या सीसा (Lead)

English- Lead
संकेत - Pb
विशिष्ट गुरुत्व (Specific gravity) - 11.3
गलनांक (Melting temperature) - 326^{0}C
Latin- Plumbum
परमाणु भार (Atomic weight) - 207.22
काठिन्य - 1.5
क्वथनांक (Boiling point) -1525^{0}C

पर्याय -

सीसक	शीषक	नागक	भुजंग	फणि
आशीविष	कुवंगक	कुरंग	सिन्दूरकारण	वभ्र
योगेष्ट				

Category - Metallic Poison

Introduction

- Lead is known to Indians since the Vedic era; during Charaka's period it was used in therapeutics.
- **Ores of lead are -**

S. No.	Ores	Formula
1.	Galena	PbS
2.	Cerrusite	$PbCO_3$
3.	Anglesite	$PbSO_4$
4.	Matlockite	PbCIF
5.	Lead oxide	PbO

- It is a heavy, steel-grey coloured metal.

Types of Lead Poisoning

1. Acute
2. Sub-acute
3. Chronic

Signs and Symptoms of Acute Lead Poisoning

- Astringent and metallic taste in mouth
- Dry throat
- Excessive thirst
- Burning sensation in abdomen
- Vomiting and nausea
- Headache
- Insomnia
- Paraesthesias etc.

Fatal dose

- Lead acetate: 20 gm
- Lead carbonate: 40 gm

Fatal Period - 1 - 2 days

Sign and Symptoms of chronic Lead poisoning

- Anaemia - Punctate basophilia, reticulocytoris, poikilocytosis
- Burtonian lead line - blue line on gums.
- Colic - relieved by application of pressure over abdomen

Scanned with CamScanner

- Lead palsy - foot drop, wrist drop
- Lead Encephalopathy
- Facial pallor, infertility, sterility, amenorrhoea, dysmenorrhoea.

Post-Mortem Appearance

- Signs of acute gastro-enteritis
- Thickened and softened mucosa of stomach (with eroded patches)

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning (common)
- Abortifacient
- Suicidal poisoning

Treatment

1. Emesis
2. Gastric lavage (initially with Magnesium sulphate or sodium sulphate 1% and later with plain water)
3. In case of abdominal pain - Morphine/ Atropine or शूलवज्रणी वटी
4. Demulcents
5. BAL + Calcium disodium versenate
6. Symptomatic treatment

Treatment of Chronic Poisoning

आयुर्वेदानुसार - नाग की चिरकारी विषाक्तता में आयुर्वेद के निम्न योग भी लाभदायक सिद्ध हुए हैं -

1. स्वर्णभस्म, हरड़ एवं मिश्री के चूर्ण के साथ, 2 से 21 दिन तक।
2. महागन्धक मीठे अनार के रस और तण्डुलोदक के साथ। अथवा
3. रसमाणिक्य और/अथवा स्वर्णमाक्षिक भस्म मक्खन और मिश्री के साथ 21 दिनों तक।

इन योगों का आवश्यकतानुसार तीव्र एवं अनुतीव्र विषाक्तता में भी प्रयोग किया जा सकता है।

11.4 वंग (Tin)

English - Tin
Latin- Stannum
संकेत - Sn
परमाणु संख्या (Atomic number) - 50
परमाणु भार (Atomic weight) - 118.70
विशिष्ट गुरुत्व (Specific gravity) - 7.3
गलनांक (Melting temperature) - 232^{0}C
क्वथनांक (Boiling temperature) - 2702^{0}C
काठिन्य - 6.7

पर्याय-

• वंगक	• रंग	• रंगक
• शुक्रलोह	• कुरूप्य	• त्रपु - त्रपुस

• प्रमेह	• हृद्रोग	• शूल
• अर्श	• कास	• श्वास
• वमन	• क्षय	• पाण्डु
• शोथ	• शुक्राश्मरी आदि	

भेद-

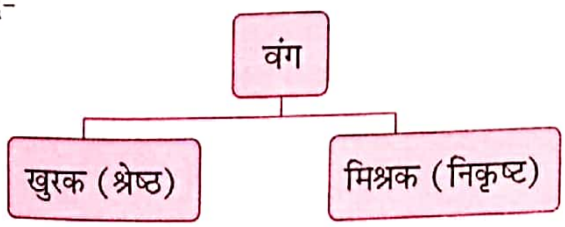

Category - Metallic poison

Features - It is a soft, malleable, ductile and silvery-white metal

Signs and Symptoms

अशुद्ध वंग सेवन से उत्पन्न विकार -

• शरीर की शोभा का नाश	• श्वित्र	• गुल्म

As per Modern Toxicology

- Acute:
  - Irritation of eyes and skin
  - Headache
  - Nausea and vomiting
  - Diarrhea
  - Dizziness
  - Profuse sweating
  - Difficulty in breathing etc.
- Chronic:
  - Depression
  - Hepatic damage

Scanned with CamScanner

- Malfunctioning of immune system
- Anger
- Sleeping disorders etc.

Fatal dose - Uncertain

Fatal period - Uncertain

Treatment

- Stomach wash
- Demulcents
- Emetics
- Stimulants etc.

Post-Mortem Appearance

- Signs of gastro-enteritis

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning

Treatment

आयुर्वेदानुसार -

- मेषशृंगी चूर्ण + मिश्री मिलाकर 3 दिन तक सेवन।

11.5 संखिया (Arsenious Oxide)

English- White arsenic

सूत्र - As_2O_3

विशिष्ट गुरुत्व (Specific gravity) - 5.6 से 5.8

रासायनिक नाम - Arsenious oxide

काठिन्य - 3 से 4

पर्याय - - शंखविष - दारुमूष - दारुमोच - मल्ल - फेनाश्म - आखुपाषाण - हतचूर्णक आदि

इतिहास - सुश्रुत संहिता कल्पस्थान (अ. 1) में सर्वप्रथम इसका उल्लेख इस प्रकार मिलता है -

फेनाश्महरितालं च द्वे धातुविषे।

Category - Metallic poison

Introduction - It is a colorless, odorless, tasteless & greyish substance.

Signs and Symptoms of Poisoning

- **Fulminant type:**
  - Shock
  - Failure of peripheral vascular system etc.
- **Gastro-enteritis type:**
  - Resembles cholera
  - Chocking of throat
  - Difficulty in swallowing
  - Burning sensation in the GIT
  - Profuse thirst
  - Severe vomiting
  - Watery stools (with high frequency) etc.

Differential Diagnosis

- Cholera
- Food poisoning (of bacterial origin)

S. No.	Arsenic poisoning	Cholera
1.	Fewer cases are seen	Erupts like an epidemic
2.	Symptoms present in acute manner	Symptoms present in 1 to 5 days
3.	Throat pain prior to vomiting	Throat pain after vomiting
4.	Diarrhea after vomiting	Vomiting occurs after diarrhea
5.	Phlegm, bile and blood streaks are seen in vomitus	Watery and curd water like vomitus
6.	Stool - rice water like and stained with blood	Stool - resembles rice water
7.	No change in voice	Hoarse voice
8.	Constricted pupils	No change

Fatal dose - 0.1 - 0.2 gm

Fatal period - 1 - 2 days

Treatment

- Stomach wash
- Emetics

Scanned with CamScanner

- BAL
- Calcium disodium versenate
- Penicillamine etc.

Post-Mortem Appearance

- Sunken eyeballs
- Cyanosed skin
- Signs of dehydration
- Fatty degeneration of liver etc.

Medico-Legal Aspects

- Homicidal poisoning (very popular)
- Accidental poisoning
- Cattle poisoning

11.6 ताम्र (Copper)

English- Copper
Latin- Cuprum
संकेत - Cu
परमाणु संख्या (Atomic number) - 29
परमाणु भार (Atomic weight) - 63.54
विशिष्ट गुरुत्व (Specific gravity) - 8.95 से 9
गलनांक (Melting temperature) - 1084^{0}C
क्वथनांक (Boiling point) -2310^{0}C
काठिन्य - 2.5 से 3

पर्याय -

• शुल्व	• रक्तक	• म्लेच्छ वक्त्र	• नेपालीय
• त्र्यम्बक	• सूर्यलोह	• त्वाष्ट	• अर्क
• भानुलोह	• रविलोह	• उदुम्बर	• अरविन्द
• सूर्यांग	• लोहितायस		

Introduction

ताम्र की गणना क्षोभक विषों में की जाती है। भारत में इसकी विषाक्तता का ज्ञान बहुत पहले ही था। आचार्य चरक ने स्पष्ट कहा है कि मूर्ख वैद्य से चिकित्सा कराने की अपेक्षा ताम्र का क्वाथ पीकर मर जाना कहीं बेहतर है -

वरमाशीविषविषं क्वथितं ताम्रमेव वा। (च.सू. 1/131)

Category - Metallic poison

Features -

- Metallic copper - Non-poisonous
- Copper sulphate/ blue vitriol - Poisonous

Signs and Symptoms

अशुद्ध ताम्र के भक्षण से उत्पन्न होनेवाले लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए रसतरंगिणीकार ने कहा है -

वान्तिर्भ्रान्तिश्चित्तसन्तापशोषौ गाढं क्लेदश्चारु-चिदार्हमोहौ। इत्यष्टौ वै सूर्यलोहस्य दोषाः पूर्वाचार्यैः क्लेशदाः सम्प्रदिष्टाः।। (र.त.)

- वान्ति (वमन)
- भ्रान्ति (सिर चकराना),
- चित्तसन्ताप (मन में क्षोभ),
- मुखशोष,
- क्लेद,
- अरुचि,
- दाह
- मूर्च्छा
  - ताम्र में ये आठ ऐसे कष्टदायी दोष हैं, जो कालान्तर में मृत्यु का कारण बन सकते हैं।

As per Modern Toxicology

- Strong metallic taste in mouth
- Constriction in throat
- Increased salivation and thirst
- Burning sensation in GIT
- Diarrhea
- Scanty urination etc.

Fatal dose

- Copper sulphate: 30 gm
- Copper subacetate: 15 gm

Fatal period - 1 - 3 days

Treatment

- Stomach wash (using $KMnO_4$ 10% solution)
- N-penicillamine
- EDTA
- BAL
- Demulcents
- Castor oil
- Symptomatic management

Scanned with CamScanner

Post-Mortem Appearance

- Yellowish skin
- Greenish-blue froth at mouth and nostrils
- Congestion of gastric mucosa etc.

Medico-Legal Aspects

- Suicidal poisoning
- Accidental poisoning etc.

11.7 यशद (Zinc)

English- Zinc
संकेत - Zn
गलनांक (Melting temperature) - 429^{0}C
Latin- Zincum
विशिष्ट गुरुत्व (Specific gravity) - 7.1
क्वथनांक (Boiling point) -980^{0}C

पर्याय - - यसद - जशद - जसद - रीतिहेतु - खर्परज - रंगसंकाश

Category - Metallic poison

Introduction - Zinc phosphide is a steel-grey colored crystalline powder having garlic-like odor.

Signs and Symptoms of Zinc Poisoning

आयुर्वेदानुसार -

अशुद्धं यशदं गुल्मादीन् जनयेतीति तस्माच्छ्लाघ्यम्। र.त अर्थात् अशुद्ध यशद के सेवन से गुल्म, प्रमेह, क्षय, कुष्ठ आदि की उत्पत्ति होती है।

As per Modern Toxicology

- Abdominal pain
- Vomiting
- Diarrhea
- Cyanosis
- Fever
- Respiratory distress

Fatal dose - Zinc chloride &
Zinc phosphide : 5 gm
Zinc sulphate : 15 gm

Fatal period - 24 hrs

Post-Mortem Appearance

- Garlic-like odor from gastric contents
- Cherry-red colored blood
- Congestion and edema of the lungs

Medico-Legal Aspects

- Accidental poisoning
- Suicidal poisoning
- Abortifacient etc. s

Treatment

आयुर्वेदानुसार - बला एवं अभया (हरीतकी) चूर्ण का मिश्री के साथ 3 दिन तक सेवन।

As per Modern Toxicology

- Stomach wash
- Purgatives
- Demulscents (e.g. white of egg etc.)
- Symptomatic.

• • •

Scanned with CamScanner

12

मद्यज विषाक्तता
Alcohol Poisoning

विषय

- मद एवं मद्य (Intoxication and Alcohol)
- मद्य के दोष (Demerits of alcohol)
- मदात्यय (Alcoholism)
- ध्वंसक एवं विक्षय (Dhwamsaka & Vikshaya)
- मदात्यय चिकित्सा के सामान्य सिद्धान्त (Principles of management of Madatyaya)
- ध्वंसक और विक्षय की चिकित्सा (Treatment of Dhwansaka and vikshaya)
- कतिपय सर्व मदात्ययहर योग (Certain madatyaya pacifying formula-tions)
- मदात्यय रोग में पथ्यापथ्य (Apt and inapt articles in Madatyaya)
- Alcohol & Alcoholism

12.1 मद एवं मद्य (Intoxication and Alcohol)

12.1.1 निरुक्ति (Etymology)

मद का सामान्य अर्थ है – नशा, विक्षिप्तता या पागलपन और चिकित्सा-शास्त्रीय अर्थ है – बुद्धि, विवेक और संज्ञा का आंशिक लोप या मतवालापन।

मद्य शब्द 'मद्' धातु में 'यत्' प्रत्यय लगकर बना है, जिसकी व्याख्या इस प्रकार होगी –

माद्यति जनोऽनेन इति।

अर्थात् जो मनुष्य को मतवाला बना दे या जिसका पान कर मनुष्य मतवाला हो जाय, उसी को मद्य कहते हैं। मद्य से ही भाँति-भाँति की सुराओं, मदिराओं आदि का निर्माण किया जाता है, जिनका व्यवहार मादकता को उत्पन्न करने के लिए किया जाता है।

12.1.2 परिभाषा (Definition)

आचार्य शार्गधर ने मद्य की गणना मदकारी द्रव्यों में की है और मदकारी द्रव्यों की परिभाषा देते हुए उन्होंने कहा है –

बुद्धिं लुम्पति यद्द्रव्यं मदकारि तदुच्यते।।

तमोगुणप्रधानं च यथा मद्यं सुरादिकम्। (शा.पू. 4/21-22)

अर्थात् जो द्रव्य बुद्धि का लोप करते हैं, उन्हें मदकारी कहते हैं। ये तमोगुण प्रधान होते हैं। उदाहरण के लिए जैसे – मद्य, सुरा आदि।

12.1.3 पर्याय (Synonym)

आचार्य अमरसिंह के अनुसार मद्य के निम्न पर्याय हैं –

1. सुरा	2. हलिप्रिया	3. हाला	4. परिस्रुत
5. वरुणात्मजा	6. गन्धोत्तमा	7. प्रसन्ना	8. इरा
9. कादम्बरी	10. परिस्रुता	11. मदिरा	12. कश्यम्

Scanned with CamScanner

12.1.4 मद्य के गुण (Qualities of madya)

मद्य की गणना भी विष में की गई है। मद्य में भी वे ही दश गुण पाये जाते हैं जो विष में पाये जाते हैं।

आचार्य चरक के अनुसार

लघूष्णतीक्ष्णसूक्ष्माम्लव्यवाय्याशुगमेव च।
रूक्षं विकाशि विशदं मद्यं दशगुणं स्मृतम्।।

(च.चि. 24/30)

ये निम्न दस गुण मद्य में पाये जाते हैं –

1. लघु (light)
2. उष्ण (hot)
3. तीक्ष्ण (sharp)
4. सूक्ष्म (subtle)
5. अम्ल (sour)
6. व्यवायी (quick absorbing)
7. आशुग (quick acting)
8. रूक्ष (rough)
9. विकासी (depressing)
10. विशद (non-sliminess)।

12.1.5 मद्य एवं ओज के गुणों विपरीतता (Contradicting qualities of madya and ojah)

आचार्य चरक मतेन

गुरु शीतं मृदु श्लक्ष्णं बहलं मधुरं स्थिरम्।
प्रसन्नं पिच्छिलं स्निग्धमोजो दशगुणं स्मृतम्।।

गुरुत्वं लाघवाच्छैत्यमौष्णादम्लस्वभावतः।
माधुर्यं मार्दवं तैक्ष्ण्यात्प्रसादं चाशुभावनात्।।

रौक्ष्यात् स्नेहं व्यवायित्वात् स्थिरत्वं श्लक्ष्णतामपि।
विकासिभावात्पैच्छिल्यं वैशद्यात्सान्द्रतां तथा।।

सौक्ष्म्यान्मद्यं निहन्त्येवमोजसः स्वगुणैर्गुणान्।
सत्त्वं तदाश्रयं चाशु संक्षोभ्य जनयेन्मदम्।।

(च.चि. 24/31-34)

ओज के दस गुण हैं –

1. गुरु (heavy),
2. शीत (cold),
3. मृदु (tender),
4. श्लक्ष्ण (smoothness),
5. बहल (gross),
6. मधुर (sweet),
7. स्थिर (stable),
8. प्रसन्न (clarity),
9. पिच्छिल (sliminess)
10. स्निग्ध (unctuous)।

मद्य के 10 गुणों से ओज के 10 गुणों का क्षोभ होता है। यथा -

1. मद्य के लघु (light) गुण से ओज के गुरु (heavy) गुण का नाश होता है।
2. मद्य के उष्ण (hot) गुण से ओज के शीत (cold) गुण का नाश होता है।
3. मद्य के अम्ल (sour) गुण से ओज के मधुर (sweet) गुण का नाश होता है।
4. मद्य के तीक्ष्ण (sharp) गुण से ओज के मृदु (tender) गुण का नाश होता है।
5. मद्य के आशुग (quick acting) गुण से ओज के प्रसाद (प्रसन्न) (clarity) गुण का नाश होता है।
6. मद्य के रूक्ष (rough) गुण से ओज के स्निग्ध (unctuous) गुण का नाश होता है।
7. मद्य के व्यवायी (quick absorbing) गुण से ओज के स्थिर (stable) गुण का नाश होता है।
8. मद्य के विकासी (depressing) गुण से ओज के श्लक्ष्ण (smoothness) गुण का नाश होता है।
9. मद्य के विशद (non-sliminess) गुण से ओज के पिच्छिल (sliminess) गुण का नाश होता है।
10. मद्य के सूक्ष्म (subtle) गुण से ओज के बहल (gross) गुण का नाश होता है।

12.1.6 मद्य की प्रशंसा (Praise for madya)

आचार्य चरक मतेन

या देवानमृतं भूत्वा स्वधा भूत्वा पितृंश्च या।
सोमो भूत्वा द्विजातीन् या युंक्ते श्रेयोभिरुत्तमैः।।

आश्विनं या महत्तेजो बलं सारस्वतं च या।
वीर्यमैन्द्रं च या सिद्धा सोमः सौत्रामणौ च या।।

शोकारतिभयोद्वेगनाशिनी या महाबला।
या प्रीतिर्या रतिर्या वाग् या पुष्टिर्या च निर्वृत्तिः।।

या सुरासुरगन्धर्वयक्षराक्षसमानुषैः।
रतिः सुरेत्यभिहिता तां सुरां विधिना पिबेत्।।

(च.चि. 23/7-10)

मदिरा अमृत के रूप में देवताओं को, स्वधा के रूप में पितरों को और सोम के रूप में द्विजातियों को आरोग्य, तुष्टि और पुष्टि आदि गुणों से सम्पन्न बनाती हे। इस प्रकार यह देवता, मनुष्य और पितर इन सबका पोषण करती है।

Scanned with CamScanner

12.1.7 सुरा सेवन के लाभ (Benefits of consuming sura)

जो सुरा अश्विनीकुमारों का महान् तेजःस्वरूप है, जो सरस्वती का बल-स्वरूप है, जो इन्द्र का वीर्यस्वरूप है, जो सौत्रामणि यज्ञ में सिद्ध सोमरसरूप है; जो महाबलशालिनी और शोक, व्यग्रता, भय और उद्वेग को नष्ट करती है; जो स्नेह उपजाती है, आकांक्षाओं को जन्म देती है, वाणी को ओजस्विनी बनाती है, जो शरीर में पौष्टिकता प्रदान करती है तथा अतिशय संतृप्ति देती है; देवता, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और मनुष्य, जिसे रति या सुरा कहते हैं, उस सुरा का विधिपूर्वक पान करना चाहिए।

12.1.8 अष्टत्रिक (Eight triads)

आचार्य चरक मतेन

अन्नपानवयोव्याधिबलकालत्रिकाणि षट्।
त्रीन्दोषांस्त्रिविधं सत्त्वं ज्ञात्वा मद्यं पिबेत्सदा।।

(च.चि. 24/68)

आठ त्रिकों की योजना ही मद्यपान की युक्ति –

1. अन्नत्रिक
   - i वातकर
   - ii पित्तकर
   - iii कफकर
2. पान या पेयत्रिक
   - i वातकर
   - ii पित्तकर
   - iii कफकर
3. वयस्त्रिक
   - i बाल्यावस्था
   - ii युवावस्था
   - iii वृद्धावस्था
4. व्याधित्रिक
   - i मृदु
   - ii मध्य
   - iii दारुण
5. बलत्रिक
   - i प्रवर
   - ii मध्यम
   - iii अवर
6. कालत्रिक
   - i शीत
   - ii उष्ण
   - iii वर्षा
7. दोषत्रिक
   - i वात
   - ii पित्त
   - iii कफ और
8. सत्त्वत्रिक
   - i सात्त्विक
   - ii राजस
   - iii तामस।

इन आठ त्रिकों का विचार करके ही सदैव मदिरापान करना चाहिए।

12.1.9 मद्य के गुण और दोष (Merits and demerits of alcohol)

बहुद्रव्यं बहुगुणं बहुकर्म मदात्मकम्।
गुणैर्दोषैश्च तन्मद्यमुभयं चोपलक्ष्यते।। (च.चि. 24/26)

मद्य अनेक प्रकार के होते हैं। अनेक प्रकार के द्रव्यों से तैयार किये जाते हैं। अपने – अपने आधार द्रव्यों के अनुसार इनमें अनेक अलग – अलग गुण होते हैं। मात्र एक गुण या विशेषता सभी में समान रूप से पायी जाती है अर्थात् सभी मदकारी होते हैं। गुणों के समान ही उनमें दोष भी पाये जाते हैं। जिस प्रकार प्रकृतिजन्य सभी पदार्थ गुणदोषमय होते हैं, उसी प्रकार मद्य भी गुण और दोष दोनों से युक्त होते हैं।

12.1.10 मद्य के गुण (Merits of alcohol)

विधिना मात्रया काले हितैरन्नैर्यथाबलम्।
प्रहृष्टो यः पिबेन्मद्यं तस्य स्यादमृतं यथा।।

(च.चि. 24/27)

जो व्यक्ति शास्त्रोक्त विधि से, उचित मात्रा में, उचित समय या अवसर पर, हितकारक अन्नपान के साथ अपने बल या शक्ति का ध्यान रखते हुए उसी के अनुरूप प्रसन्न मन से मदिरा का पान करता है, उसके लिए वह मदिरा अमृत के समान गुणकारी सिद्ध होती है। इससे होने वाले लाभों पर प्रकाश डालते हुए आचार्य चरक ने कहा है –

शोकारतिभयोद्वेगनाशिनी या महाबला।
या प्रीतिर्या रतिर्या वाग् या पुष्टिर्या च निर्वृत्तिः।।
या सुरासुरगन्धर्वयक्षराक्षसमानुषैः।
रतिः सुरेत्यभिहिता तां सुरां विधिना पिबेत्।।

(च.चि. 24/9-10)

जिसका सेवन करने से शोक, अरति (बेचैनी), भय और उद्वेग (घबड़ाहट) का नाश होता है; व्यक्ति अपने को महाबलशाली अनुभव करने लगता है, उसका मन प्रसन्न हो जाता है, कामवासना जागृत हो जाती है, वाक् शक्ति में वृद्धि हो जाती है; बोलने में हिचकिचाहट समाप्त हो जाती है, शरीर पुष्ट होता है और व्यक्ति अपने को चिन्ताओं से मुक्त अनुभव करने लगता है; और जिसे देवता, दैत्य, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और मनुष्यों ने सुरा की संज्ञा दी है, उस सुरा का विधिपूर्वक पान करना चाहिए।

मद्य में वस्तुतः वे गुण नहीं होते जिनकी ऊपर चर्चा की गई है। पीने वाले को मतिभ्रमवश ऐसा आभास होता है। उसकी सुखानुभूति मात्र एक छलावा होती है।

12.2 मद्य के दोष (Demerits of alcohol)

मद (Intoxication)

12.2.1 लक्षण (Features)

हृदि मद्यगुणाविष्टे हर्षस्तर्षो रतिः सुखम्।
विकाराश्च यथासत्त्वं चित्रा राजसतामसाः।।

Scanned with CamScanner

जायन्ते मोहनिद्रान्ता मद्यस्यातिनिषेवणात्।
स मद्यविभ्रमो नाम्ना 'मद' इत्यभिधीयते।।

(च.चि. 24/39-40)

जब मद्य के लघु, उष्ण आदि गुण हृदय (मन) को प्रभावित कर देते हैं, तो सत्त्वगुणप्रधान व्यक्ति को प्रसन्नता, विषयों की अभिलाषा, प्रेम और सुख का अनुभव होता है। रजोगुणप्रधान व्यक्ति को नाना प्रकार के दर्प, अभिपान आदि राजस भाव जाग्रत् होते हैं और तमोगुण-प्रधान व्यक्ति जब अधिक मात्रा में मद्यपान करता है, तो उसे सम्मोह, क्रोध तथा निद्रा आती है। इस मद्यज भ्रान्त धारणा को 'मद' नाम से कहा जाता है।

12.2.2 मद के प्रकार (Classification of mada)

पीयमानस्य मद्यस्य विज्ञातव्यास्त्रयो मदाः।
प्रथमो मध्यमोऽन्त्यश्च लक्षणैस्तान् प्रचक्ष्महे।।

(च.चि. 24/41)

मद्यपान के परिणामस्वरूप तीन प्रकार के मदों (नशे की अवस्थाओं) को जानना चाहिए -

1. प्रथम मद,
2. मध्यम या द्वितीय मद
3. उत्तम, अन्त्य या तृतीय मद।

12.2.3 प्रथम मद के लक्षण
(Signs and symptoms of 1st stage of mada)

प्रहर्षणः प्रीतिकरः पानान्नगुणदर्शकः।
वाद्यगीतप्रहासानां कथानां च प्रवर्तकः।।
न च बुद्धिस्मृतिहरो विषयेषु न चाक्षमः।
सुखनिद्राप्रबोधश्च प्रथमः सुखदो मदः।।

(च.चि. 24/42-43)

प्रथम मद (नशा का हल्का आसार या गुलाबी नशा) आनन्दवर्धन, प्रीतिवर्धन और खाने-पीने की वस्तुओं के गुणों की अनुभूति कराने वाला होता है। यह बाजा बजाने, गाना गाने और हास-परिहास तथा कथा-वार्ता में रुचि उत्पन्न करता है। न तो यह बुद्धि और स्मृति का अपहरण करता है, न ही इन्द्रियों को अपने विषयग्रहण की शक्ति से वंचित करता है। अच्छी नींद लाता है और जब नींद खुलती है, तो सुख का अनुभव कराता है। इस प्रकार यह प्रथम मद सुखप्रद होता है।

12.2.4 मध्यम मद के लक्षण
(Signs and symptoms of 2nd stage of mada)

मुहुः स्मृतिर्मुहुर्मोहो(ऽ)व्यक्ता सज्जति वाङ्मुहुः।
युक्तायुक्तप्रलापश्च प्रचलायनमेव च।।
स्थानपानान्नसांकथ्ययोजना सविपर्यया।
लिंगान्येतानि जानीयादाविष्टे मध्यमे मदे।।

(च.चि. 24/44-45)

मद्यपान करने पर जब मध्यम कोटि का मद मन को प्रभावित करता है, तब रह-रहकर याद आती है, फिर विस्मृति हो जाती है। कभी तो साफ बोली निकलती है और कभी अस्पष्ट निकलती है। वह व्यक्ति कभी ठीक-ठीक बात करता है और कभी असम्बद्ध बात या प्रलाप करने लगता है। वह इधर-उधर भाग-दौड़ करता रहता है। उसके बैठने के स्थान में, खाने-पीने में और वार्तालाप के प्रसंग में अनिश्चितता होती है और उलट-फेर होता रहता है। इन लक्षणों को देखकर 'मध्यम मद' जानना चाहिए।

12.2.5 तृतीय मद के लक्षण
(Signs and symptoms of 3rd stage of mada)

तृतीयं तु मदं प्राप्य भग्नदार्विव निष्क्रियः।
मदमोहावृतमना जीवन्नपि मृतैः समः।।
रमणीयान् स विषयान्न वेत्ति न सुहृज्जनम्।
यदर्थं पीयते मद्यं रतिं तां च न विन्दति।।
कार्याकार्यं सुखं दुःखं लोके यच्च हिताहितम्।
यदवस्थो न जानाति कोऽवस्थां तां व्रजेद्बुधः।।
स दूष्यः सर्वभूतानां निन्द्यश्चाग्राह्य एव च।
व्यसनित्वादुदर्के च स दुःखं व्याधिमश्नुते।

(च.चि. 24/48-51)

मद्यपान करने वाला व्यक्ति जब मद की तृतीयावस्था (नशे की चरमसीमा) में पहुँचता है, तो वह छिन्नमूल वृक्ष की तरह अचानक मूर्च्छित होकर धराशायी हो जाता है। वह निश्चेष्ट हो जाता है, मद और बेहोशी के आवरण से उसका मन आवृत हो जाता है। जीवित होते हुए भी वह मरे हुए जैसा होता है। उसे मनोरम सुखद प्रसंग का भी ज्ञान नहीं होता। वह अपने शुभचिन्तक जनों को नहीं जानता-पहचानता है। जिस आनन्द को पाने की लालसा से वह मद्य पीता है, उसे उसकी कुछ भी उपलब्धि नहीं होती। उसके कर्तव्य-अकर्तव्य, सुख-दुःख, हित-अहित का ज्ञान नहीं होता। कौन बुद्धिमान् व्यक्ति ऐसी दुरवस्था में पहुँचना पसन्द करेगा? मद की यह तृतीयावस्था प्राणिमात्र के लिए दोषपूर्ण है, निन्दनीय है और त्याज्य है। मद्यप व्यक्ति जब इस व्यसन (बुरी लत) का शिकार हो जाता है, तो अन्ततोगत्वा वह कष्टप्रद व्याधि (मदात्यय) को भोगने के लिए विवश हो जाता है।

आचार्य चरक के अनुसार

यथोपेतं पुनर्मद्यं प्रसंगाद्येन पीयते।
रूक्षव्यायामनित्येन विषवद्याति तस्य तत्।।

(च.चि. 24/28)

Scanned with CamScanner

जिस पुरुष का शरीर रूक्ष है, जो नित्य अत्यधिक व्यायाम या शारीरिक श्रम करता रहता है और जब, जहाँ व जैसी भी मदिरा मिल जाये (देश, काल, मदिरा के स्वरूप और अपनी प्रकृति का विचार किये हुए बिना) भी लेता है, उसके लिए वह मदिरा विष के समान हानिकारक सिद्ध होती है।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

आचार्य वृद्ध वाग्भट ने मद्य के दोषों पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए कहा है -

धर्माधर्मं सुखं दुःखमर्थानर्थं हिताहितम्।
यदासक्तो न जानाति कथं तच्छीलयेद्बुधः।।

(अ.सं.नि. 6/9)

जिस मद्य में आसक्त होकर मनुष्य धर्म-अधर्म, सुख-दुःख, अर्थ-अनर्थ, हित-अहित की पहचान खो देता है, उस मद्य को कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति कैसे पान करना चाहेगा।

मद्ये मोहो भयं शोकः क्रोधो मृत्युश्च संश्रिताः।
सोन्मादमदमूर्च्छायाः सापस्मारापतानकाः।।

(अ.सं.नि. 6/10)

मोह, शोक, भय, क्रोध, मृत्यु, मद, मूर्च्छा, उन्माद, अपस्मार तथा अपतानक ये सभी मद्य में ही आश्रित हैं अर्थात् मद्य इन सबको उत्पन्न करने में कारणीभूत है।

यत्रैकः स्मृतिविभ्रंशस्तत्र सर्वमसाधु यत्।
अयुक्तियुक्तमन्नं हि व्याधये मरणाय च।।

(अ.सं.नि. 6/11)

मद्य शरीर में पहुँचकर सीधे प्रमस्तिष्क को प्रभावित करता है। प्रमस्तिष्क के प्रभावित होने से धी, धृति और स्मृति का भ्रंश होने लगता है। आचार्य वाग्भट ने बल देकर कहा है कि जिसमें अकेले स्मृति को ही नष्ट कर देने की क्षमता हो, उसमें जो कुछ भी होगा वह निन्दनीय ही होगा। गीता में स्पष्ट कहा गया है -

स्मृतिनाशात् बुद्धिनाशो, बुद्धिनाशात् प्रणश्यतिम्।

(श्रीमद्भगवद् गीता)

अर्थात् स्मृतिनाश से बुद्धि का नाश होता है और बुद्धि के नाश हो जाने से मनुष्य का कर्तव्याकर्तव्य का विवेक समाप्त हो जाता है। विवेक समाप्त हो जाने पर प्राणी प्रज्ञापराध का भागी बन भाँति-भाँति की आधि-व्याधियों को निमंत्रित करने लगता है। निष्कर्ष रूप में वृद्धवाग्भट ने आगे कहा है -

मद्यं त्रिवर्गधीधैर्यलज्जादेरपि नाशनम्।

(अ.सं.नि. 6/11)

अर्थात् मद्य त्रिवर्ग - धर्म, अर्थ और काम; धी (सत्यासत्य - विवेक, बुद्धि), धैर्य और लज्जा आदि सद्गुणों का नाश करने वाला है।

12.2.6 मद्य का मानव शरीर पर प्रभाव (Effect of alcohol on human body)

मद्यं हृदयमाविश्य स्वगुणैरोजसो गुणान्।
दशभिर्दश संक्षोभ्य चेतो नयति विक्रियाम्।।

(च.चि. 24/29)

मद्य सीधे हृदय में प्रवेश कर (आयुर्वेद में हृदय को मन का अधिष्ठान कहा गया है) अपने दस गुणों से ओज के दस गुणों में क्षोभ उत्पन्न कर मन एवं चेतना में विकार उत्पन्न कर देता है। मद्य और ओज के दस-दस गुणों का वर्णन गत पृष्ठों में किया जा चुका है। दोनों के दसों गुण ठीक एक-दूसरे के विपरीत होते हैं। इसलिए मद्य का प्रत्येक गुण ओज के अपने गुण को विचलित करता है, यथा - मद्य का लघु गुण ओजस् के गुरु गुण को, उष्ण शीत को, तीक्ष्ण मृदु को, अम्ल मधुर को, आशु प्रसाद को, रूक्ष स्निग्ध को, व्यवायी स्थिर को, विकासी श्लक्ष्ण को, विशद पिच्छिल को और सूक्ष्म बहुल (सान्द्र) को विचलित कर देता है। इस प्रकार मद्य द्वारा ओजस् के दसों गुणों को नष्ट कर दिये जाने पर ओजस् के आश्रय में रहनेवाला सत्त्वसंज्ञक मन भी विचलित होकर मतवाला हो जाता है।

रसवातादिमार्गाणां सत्त्वबुद्धीन्द्रियात्मनाम्।
प्रधानस्यौजसश्चैव हृदयं स्थानमुच्यते।।

(च.चि. 24/35)

रस, वात आदि का वहन करनेवाली दसों धमनियों का स्थान है। हृदय में आश्रित रस को ले जानेवाली धमनियाँ ही वातादि का भी वहन करती हैं। और सत्त्व (मन), बुद्धि, इन्द्रिय, आत्मा एवं ओजस् का भी आश्रय-स्थान हृदय ही है। इसलिए जब मद्यपान द्वारा हृदय विकृत हो जाता है तो रस-रक्तादि धातुएँ मन, बुद्धि, ज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ, आत्मा और ओजस् सभी अव्यवस्थित हो जाते हैं। सभी की क्रियाएँ असंतुलित हो जाती हैं। आगे आचार्य चरक ने स्पष्ट कहा है -

अतिपीतेन मद्येन विहतेनौजसा च तत्।
हृदयं याति विकृतिं तत्रस्था ये च धातवः।।

(च.चि. 24/36)

मद्य का अत्यधिक मात्रा में पान कर लेने पर ओजोधातु प्रभावहीन हो जाती है। ओज के निष्प्रभ हो जाने से हृदय विकृत हो जाता है और इसीलिए वे सभी धातुएँ भी जिनका आश्रय-स्थान हृदय है, विकृत हो जाती हैं।

Scanned with CamScanner

12.2.7 मद्यातिरेक की अवस्थाएँ (Stages of alcoholic poisoning)

जैसे-जैसे शरीर में मद्य की मात्रा बढ़ती जाती है, वैसे ही वैसे मादकता भी बढ़ती जाती है और प्राणी अपना संतुलन खोता जाता है। उसका व्यवहार विकृत से विकृततर होता जाता है। आयुर्वेद में मद्य से उत्पन्न मद की तीन अवस्थाएँ मानी गई हैं –

1. प्रथम या पूर्वावस्था,
2. द्वितीय या मध्यमावस्था
3. तृतीय या उत्तमावस्था।

इन अवस्थाओं का अनुमान मद्यप के व्यवहार को देखकर या फिर उसके रक्त और मूत्र में उपस्थित मद्य की मात्रा का परीक्षण कर लगाया जा सकता है। आचार्य चरक ने इन अवस्थाओं का अति संक्षेप में वर्णन करते हुए कहा है –

ओजस्यविहते पूर्वो हृदि च प्रतिबोधिते।
मध्यमो विहतेऽल्पे च विहते तूत्तमो मदः।।

(च.चि. 24/37)

अर्थात् मद की प्रथम अवस्था में ओज अविहत और हृदय जागरूक रहता है। मध्यम अवस्था में ओज थोड़ा विचलित और अन्तिम या उत्तम अवस्था में ओज पूर्ण रूप से नष्ट हो जाता है। आचार्य वृद्धवाग्भट ने इन अवस्थाओं का विस्तार से वर्णन करते हुए कहा है –

तीक्ष्णादिभिगुणैर्मद्यं मन्दादीनोजसो गुणान्।
दशभिर्दश सङ्क्षोभ्या चेतो नयति विक्रियाम्।।
आद्ये मदे। (अ.सं.नि. 6/4-5)

प्रथम मद की अवस्था में मद्य अपने तीक्ष्ण आदि दस गुणों से ओज के मन्द आदि दस गुणों में क्षोभ उत्पन्न कर मन को विकृत बना देता है।

द्वितीये तु प्रमादायतने स्थितः।
दुर्विकल्पहतो मूढः सुखमित्यवबुध्यते।। (अ.सं.नि. 6/6)

द्वितीय मद की अवस्था में प्रमाद में स्थित मनुष्य दुष्ट विचारों के कारण मूढ़ हुआ अपनी इसी अवस्था को सुख मान लेता है।

मध्यमोत्तमथोः सन्धिं प्राप्य राजसतामसः।
निरंकुश इव व्यालो न किञ्चिन्नाचरेज्जडः।।

(अ.सं.नि. 6/7)

राजस और तामस मन वाला मनुष्य मध्यम और तृतीय मद की सन्धि में पहुँचकर मतवाले हाथी की तरह पूर्णतः निरंकुश हो जाता है – कर्तव्याकर्तव्य का ज्ञान नष्ट हो जाने के कारण वह कुछ भी कर सकता है, कुछ भी बोल सकता है, किन्तु मद्यजनित जड़ता के कारण कुछ भी नहीं करता। अपने होशोहवास खो देता है।

इयं भूमिरवद्यानां दौश्शील्यस्येदमास्पदम्।
एकोऽयं बहुमार्गाया दुर्गतेर्देशिकः परम्।।

(अ.सं.नि. 6/8)

यह अवस्था निन्दनीय दोषों की भूमि और दुःशीलता का आश्रयस्थान है। यह एक ही रास्ता अनेक मार्गों वाली दुर्गति की ओर ले जानेवाला राजपथ है।

निश्चेष्टः शववच्छेते तृतीये तु मदे स्थितः।
मरणादपि पापात्मा गतः पापतरां दशाम्।।

(अ.सं.नि. 6/9)

तृतीय मद को प्राप्त मनुष्य निश्चेष्ट होकर शव के समान सो जाता है। वह पापात्मा मृत्यु से भी बदतर अनिष्टकारी दशा को प्राप्त हो असहनीय कष्टों को भोगता है।

मादकता में वृद्धि के सम्बन्ध में कुछ व्यक्तिगत भिन्नताएँ भी देखने को मिलती हैं। इनके कारणों पर प्रकाश डालते हुए आचार्य वृद्धवाग्भट ने कहा है –

नातिमाद्यन्ति बलिनः कृताहारा महाशनाः।
स्निग्धाः सत्ववयोयुक्ता मद्यनित्यास्तदन्वयाः।
मेदःकफाधिकामन्दवातपित्ता दृढाग्नयः।।

(अ.सं.नि. 6/12)

बलशाली, आहार से तृप्त, अति भोजी, स्निग्ध शरीरवाले, सत्त्वगुण युक्त, वययुक्त (अर्थात् युवा), नित्य मद्य पीनेवाले, मद्यपायियों के वंश में उत्पन्न, मेद और कफ की अधिकतावाले, मन्द वातपित्त की अवस्थावाले तथा दृढ़ अग्नि (पाचनशक्ति) वाले मद्य से अधिक प्रभावित नहीं होते।

12.3 मदात्यय (Alcoholism)

12.3.1 सन्दर्भ (References)

- च.चि. 24; सु.उ. 47; अ.हृ.नि. 6; अ.हृ.चि. 7।

12.3.2 परिभाषा (Definition)- मद्य की अतियोग से उत्पन्न रोग को 'मदात्यय' कहते हैं।

सामान्यतया यह दो प्रकार का माना जाता है –

1. **तीव्र या गम्भीर मदात्यय (acute alcohol poisoning)** – यह मद्य को एकबारगी अधिक मात्रा में सेवन करने से उत्पन्न होता है। इसमें लक्षण अकस्मात् और उग्र रूप में प्रकट होते हैं।
2. **जीर्ण मदात्यय (chronic alcohol poisoning)** – इसका कारण मद्य का अधिक समय तक, अति मात्रा में एवं अव्यवस्थित ढंग से सेवन है। इसमें लक्षण अपेक्षाकृत मन्द

Scanned with CamScanner

परन्तु स्थाई और मनोदैहिक-तन्त्र को स्थाई रूप से क्षति पहुँचाने वाले होते हैं।

12.3.3 पर्याय (Synonym)

- पानात्यय

12.3.4 मदात्यय के भेद (Classification of madatyaya)

यूँ तो सभी मदात्यय त्रिदोषज होते हैं, परन्तु दोषों की प्रधानता के आधार पर उन्हें चार प्रकार का माना गया है –

1. वातज मदात्यय,
2. पित्तज मदात्यय,
3. कफज मदात्यय और
4. सन्निपातज मदात्यय।

12.3.5 सामान्य लक्षण (General signs and symptoms)

आचार्य चरक के अनुसार

शरीरदु:खं बलवत् संमोहो हृदयव्यथा।
अरुचि:प्रतता तृष्णा ज्वरः शीतोष्णलक्षणः।।
शिर:पार्श्वास्थिसन्धीनां विद्युत्तुल्या च वेदना।
जायतेऽतिबला जृम्भा स्फुरणं वेपनं श्रमः।।
उरोविबन्धः कासश्च हिक्का श्वासः प्रजागरः।
शरीरकम्पः कर्णाक्षिमुखरोगस्त्रिकग्रहः।।
छर्द्यतीसारहृल्लासा वातपित्तकफात्मकाः।
भ्रमः प्रलापो रूपाणामसतां चैव दर्शनम्।।
तृणभस्मलतापर्णपांशुभिश्चावपूरणम्।
प्रधर्षणं विहंगैश्च भ्रान्तचेताः स मन्यते।।
व्याकुलानामशस्तानां स्वप्नानां दर्शनानि च।
मदात्ययस्य रूपाणि सर्वाण्येतानि लक्षयेत्।।
सर्वं मदात्ययं विद्यात् त्रिदोषम्।।

(च.चि. 24/101-107)

- शरीरदु:खं बलवत् (शरीर में अत्यधिक पीड़ा होना)
- संमोह (इन्द्रियों का अपने विषयों को ग्रहण करने में समर्थ न होना)
- हृदयव्यथा (हृद् प्रदेश में पीड़ा/वेदना होना)
- अरुचि (भोजन की इच्छा न होना)
- प्रतता तृष्णा (निरन्तर प्यास लगना)
- ज्वरः शीतोष्णलक्षण:(शीत अथवा उष्ण लक्षण वाला ज्वर होना)
- शिर:पार्श्वास्थिसन्धीनां विद्युत्तुल्या च वेदना। जायतेऽतिबला (शिर, पार्श्व और अस्थि की सन्धियों में बिजली आघात के समान क्षणिक वेदना होना)
- जृम्भा
- स्फुरण (शरीर में फरफराहट होना)
- वेपन (शरीर के एक स्थान में कम्पन होना)
- श्रम (थकावट होना)
- उरोविबन्ध (छाती में जकड़ाहट अनुभव होना)
- कास
- हिक्का
- श्वास
- प्रजागर (अनिद्रा)
- शरीरकम्प (शरीर में कम्पन होना)
- कर्णाक्षिमुखरोग (कर्ण, नेत्र और मुख रोगों से ग्रस्त होना)
- त्रिकग्रह (त्रिक प्रदेश में जकड़ाहट)
- छर्दि
- अतीसार
- हृल्लास
- वातपित्तकफात्मक रोग (वातादि दोषज विकारों का होना)
- भ्रम
- प्रलाप (असम्बद्ध विषयों पर बोलना)
- रूपाणामसतां चैव दर्शनम् (जिन रूपों का अस्तित्व न हो उन रूपों को देखना)
- तृणभस्मलतापर्णपांशुभिश्चावपूरणम् (स्वयं के शरीर को तृण, भस्म, लता, पत्र और धूल से भरा हुआ अनुभव करना)
- प्रधर्षणं विहंगैश्च (पक्षियों द्वारा आक्रान्त होना)
- भ्रान्तचेता: स मन्यते (मानसिक भ्रान्ति)
- व्याकुलानामशस्तानां स्वप्नानां दर्शनानि च (स्वप्न में मन को व्याकुल करने वाले तथा अशुभ विषयों को देखना)

आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन

आचार्य वृद्धवाग्भट ने मदात्यय के निम्न सामान्य लक्षण बतलाये हैं –

सामान्यं लक्षणं तेषां प्रमोहो हृदयव्यवथा।
विड्भेदः सततं तृष्णा सौम्याग्नेयोज्वरोऽरुचिः।।
शिरःपार्श्वास्थिरुक्कम्पो मर्मभेदस्त्रिकग्रहः।
उरोविबन्धस्तिमिरं कासश्वासप्रजागराः।।

Scanned with CamScanner

स्वेदोऽतिमात्रं विष्टम्भः श्वयथुश्चित्तविभ्रमः। प्रलापश्छर्दिरुत्क्लेशो भ्रमो दुःस्वप्नदर्शनम्।। (अ.सं.नि. 6/15-17)

1. अज्ञान, 2. उद्विग्नता, 3. घबड़ाहट, 4. हृदय में पीड़ा, 5. मलभेद, 6. सतत प्यास, 7. सौम्य एवं आग्नेय ज्वर, 8. अरुचि, 9. शिरोवेदना, 10. पार्श्वशूल, 11. अस्थिशूल, 12. कम्पन, 13. मर्मभेद, 14. त्रिकग्रह, 15. छाती का जकड़ना, 16. तिमिर (आँखों के आगे अँधेरा छाना), 17. कास, 18. श्वास, 19. रात में नींद न आना, 20. अत्यन्त स्वेद, 21. वायु का अवरोध, 22. शोथ, 23. चित्तविभ्रम, 24. प्रलाप, 25. वमन, 26. मिचली, 27. भ्रम और 28. दुःस्वप्न (बुरे एवं डरावने सपने दिखलाई देना)।

तालिका - आचार्य चरक एवं आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार मदात्यय के सामान्य लक्षण

क्र.	आचार्य चरक मतेन	आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन
1.	शरीरदुःखं बलवत् (शरीर में अत्यधिक पीड़ा होना)	अज्ञान
2.	संमोह (इन्द्रियों का अपने विषयों को ग्रहण करने में समर्थ न होना)	उद्विग्नता
3.	हृदयव्यथा (हृद् प्रदेश में पीड़ा वेदना होना)	घबड़ाहट
4.	अरुचि (भोजन की इच्छा न होना)	हृदय में पीड़ा
5.	प्रतता तृष्णा (निरन्तर प्यास लगना)	मलभेद
6.	ज्वरः शीतोष्णलक्षणः (शीत अथवा उष्ण लक्षण वाला ज्वर होना)	सतत प्यास
7.	शिरःपार्श्वास्थिसन्धीनां विद्युत्तुल्या च वेदना। जायतेऽतिबला (शिर, पार्श्व और अस्थि की सन्धियों में बिजली आघात के समान क्षणिक वेदना होना)	सौम्य एवं आग्नेय ज्वर
8.	जृम्भा	अरुचि
9.	स्फुरण (शरीर में फरफराहट होना)	शिरोवेदना
10.	वेपन (शरीर के एक स्थान में कम्पन होना)	पार्श्वशूल
11.	श्रम (थकावट होना)	अस्थिशूल
12.	उरोविबन्ध (छाती में जकड़ाहट अनुभव होना)	कम्पन
13.	कास	मर्मभेद
14.	हिक्का	त्रिकग्रह
15.	श्वास	छाती का जकड़ना
16.	प्रजागर (अनिद्रा)	तिमिर (आँखों के आगे अँधेरा छाना)
17.	शरीरकम्प (शरीर में कम्पन होना)	कास
18.	कर्णाक्षिमुखरोग (कर्ण, नेत्र और मुख रोगों से ग्रस्त होना)	श्वास
19.	त्रिकग्रह (त्रिक प्रदेश में जकड़ाहट)	रात में नींद न आना
20.	छर्दि	अत्यन्त स्वेद
21.	अतीसार	वायु का अवरोध
22.	हृल्लास	शोथ
23.	वातपित्तकफात्मक रोग (वातादि दोषज विकारों का होना)	चित्तविभ्रम
24.	भ्रम	प्रलाप
25.	प्रलाप (असम्बद्ध विषयों पर बोलना)	वमन
26.	रूपाणामसतां चैव दर्शनम् (जिन रूपों का अस्तित्व न हो उन रूपों को देखना)	मिचली
27.	तृणभस्मलतापर्णपांशुभिश्चावपूरणम् (स्वयं के शरीर को तृण, भस्म, लता, पत्र और धूल से भरा हुआ अनुभव करना)	भ्रम

Scanned with CamScanner

क्र.	आचार्य चरक मतेन	आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन
28.	प्रधर्षणं विहंगैश्च (पक्षियों द्वारा आक्रान्त होना)	दु:स्वप्न (बुरे एवं डरावने सपने दिखलाई देना)
29.	भ्रान्तचेता: स मन्यते (मानसिक भ्रान्ति)	
30.	व्याकुलानामशस्तानां स्वप्नानां दर्शनानि च (स्वप्न में मन को व्याकुल करने वाले तथा अशुभ विषयों को देखना)	

12.3.6 दोषज मदात्यय के लक्षण (Signs and symptoms of doshaja madatyaya)

आचार्य चरक के अनुसार

- **वातज मदात्यय के लक्षण (Signs & symptoms of vataja madatyaya)**

हिक्काश्वासशिर:कम्पपार्श्वशूलप्रजागरै:।
विद्याद्बहुप्रलापस्य वातप्रायं मदात्ययम्।।
(च.चि. 24/91)

- हिक्का
- श्वास
- शिर:कम्प
- पार्श्वशूल
- प्रजागर (निद्रानाश)
- बहुप्रलाप (अत्यधिक असम्बद्ध भाषण करना)

- **पित्तज मदात्यय के लक्षण (Signs & symptoms of pittaja madatyaya)**

स तु वातोल्बणस्याशु प्रशमं याति हन्ति व।।
तृष्णादाहज्वरस्वेदमूर्च्छातीसारविभ्रमै:।
विद्याद्धरितवर्णतस्य पित्तप्रायं मदात्ययम्।।
(च.चि. 24/93-94)

- यदि वातोल्वण व्यक्ति को पित्तज मदात्यय हो जाय तो या तो शीघ्र ही शान्त हो जाता है अथवा शीघ्र ही रोगी को मार देता है
- तृष्णा
- दाह
- ज्वर
- स्वेद
- मूर्च्छा
- अतिसार
- विभ्रम
- शरीर का हरितवर्णीय हो जाना।

- **कफज मदात्यय के लक्षण (Signs & symptoms of kaphaja madatyaya)**

छर्दिरोचकहल्लासतन्द्रास्तैमित्यगौरवै:।
विद्याच्छीतपरीतस्य कफप्रायं मदात्ययम्।।
(च.चि. 24/97)

- छर्दि
- अरोचक
- हल्लास
- तन्द्रा
- स्तैमित्य
- गौरव
- शरीर का शीतयुक्त होना।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

- **वातज मदात्यय के लक्षण (Signs & symptoms of vataja madatyaya)**

स्तम्भांगमर्दहृदयग्रहतोदकम्पा: पानात्ययेऽनिलकृते शिरसो रुजश्च। (सु.उ. 47/18)

- स्तम्भ
- अंगमर्द
- हृदयग्रह
- तोद
- कम्प
- शिरोरुजा।

- **पित्तज मदात्यय के लक्षण (Signs & symptoms of pittaja madatyaya)**

स्वेदप्रलापमुखशोषणदाहमूर्च्छा: पित्तात्मके वदनलोचन-पीतता च।। (सु.उ. 47/18)

- स्वेद
- प्रलाप
- मूर्च्छा
- मुखशोष
- दाह
- वदनपीतता (शरीर का पीतवर्णीय होना)
- लोचनपीतता (नेत्र का पीतवर्णीय होना)।

- **कफज मदात्यय के लक्षण (Signs & symptoms of kaphaja madatyaya)**

श्लेष्मात्मके वमथुशीतकफप्रसेका:। (सु.उ. 47/19)

- वमथु (वमन)
- शीतानुभूति
- कफप्रसेक।

- **त्रिदोषज मदात्यय के लक्षण (Signs & symptoms of tridoshaja madatyaya)**

सर्वात्मके भवति सर्वविकारसंपत्। (सु.उ. 47/19)

- सर्वविकार (सभी दोषों से उत्पन्न विकार)।

Scanned with CamScanner

इनके लक्षणों का निर्देश करते हुए आचार्य वृद्धवाग्भट ने कहा है -

विशेषाज्जागरश्वासकम्पमूर्धरुजोऽनिलात्।
स्वप्ने भ्रमत्युत्पतति प्रेतैश्च सह भाषते।।

पित्ताद्दाहज्वरस्वेदमोहातीसारतृड्भ्रमाः।
देहो हरिताहरिद्रो रक्तनेत्रकपोलता।।

श्लेष्मणा छर्दिहृल्लासनिद्रोदर्दागगौरवम्।
सर्वजे सर्वलिंगत्वम्।। (अ.सं.नि. 6/18-20)

- **वातज मदात्यय** - रात में नींद न आना, श्वास, अंगों का कॉपना, शिरोवेदना, नींद में घूमते हुए-सा प्रतीत होना, प्रेतों के साथ बातचीत करना (स्वतः सम्भाषण)।
- **पित्तज मदात्यय** - दाह, ज्वर, स्वेद, घबड़ाहट, अतिसार, प्यास, चक्कर आना, शरीर का हरित या पीत वर्ण का हो जाना, तथा ऑखों और गालों का रक्ताभ हो जाना।
- **कफज मदात्यय** - वमन, मिचली, अनिद्रा, उदर्द (शरीर पर बड़े-बड़े ददोरे या चकत्ते उभरना) तथा अंगों में भारीपन।
- **सन्निपातज मदात्यय** - सभी दोषों के लक्षण पाये जाते हैं।

12.4 ध्वंसक एवं विक्षय (Dhwamsaka & Vikshaya)

इसी सन्दर्भ में मद्यातिरेक से उत्पन्न दो अन्य रोगों का भी उल्लेख किया गया है, जो मद्य पीना छोड़ देने के बहुत दिनों बाद एकाएक अयोग्य मद पी लेने से उत्पन्न होते हैं। ये हैं -

1. ध्वंसक
2. विक्षय।

ये दोनों रोग वायुजन्य और प्रायः दुर्बल शरीरवालों को होते हैं। इनके लक्षण निम्न प्रकार हैं -

12.4.1 ध्वंसक के लक्षण (Signs and symptoms of dhwamsaka)

श्लेष्मप्रसेकः कण्ठास्यशोषः शब्दासहिष्णुता।
तन्द्रानिद्रातियोगश्च ज्ञेयं ध्वंसकलक्षणम्।।

(च.चि. 24/201)

- श्लेष्मप्रसेक
- कण्ठशोष
- मुखशोष
- शब्दासहिष्णुता
- तन्द्रा
- निद्रातियोग

12.4.2 विक्षय के लक्षण (Signs and symptoms of vikshaya)

हृत्कण्ठरोगः संमोहश्छर्दिरंगरुजा ज्वरः।
तृष्णा कासः शिरःशूलमेतद्विक्षयलक्षणम्।।

(च.चि. 24/202)

- हृद्रोग
- कण्ठरोग
- संमोह
- छर्दि
- अंगरुजा
- ज्वर
- तृष्णा
- कास
- शिरःशूल

तालिका - ध्वंसक एवं विक्षय के लक्षण

ध्वंसक रोग के लक्षण	विक्षय रोग के लक्षण
1. श्लेष्मप्रसेक (excessive mucous secretion)	1. हृद्रोग (cardiac distress)
2. कण्ठ शोष (dryness of throat)	2. कण्ठरोग (throat disorders)
3. मुखशोष (dryness of mouth)	3. संमोह (stupor)
4. शब्दासहिष्णुता (phonophobia)	4. छर्दि (vomiting)
5. तन्द्रा (lassitude)	5. अंगरुजा (malaise)
6. निद्रातियोग (narcolepsy)	6. ज्वर (fever)
	7. तृष्णा (thirst)
	8. कास (cough)
	9. शिरःशूल (headache)

12.5 मदात्यय चिकित्सा के सामान्य सिद्धान्त (Principles of Management of Madatyaya)

यं दोषमधिकं पश्येत्तस्यादौ प्रतिकारयेत्।
कफस्थानानुपूर्व्या वा तुल्यदोषे मदात्यये।
पित्तमारुतपर्यन्तः प्रायेण हि मदात्ययः।।

(अ.सं.चि. 9/2)

मदात्यय में जिस दोष की प्रधानता हो पहले उसी की चिकित्सा करें। यदि तीनों दोष समान रूप में प्रबल हों तो पहले कफ की, फिर पित्त की और उसके बाद वायु की चिकित्सा करें। क्योंकि प्रायः सभी मदात्ययों की समाप्ति पित्त और वायु की अधिकता में ही होती है।

हीनमिथ्यातिपीतेन यो व्याधिरुपजायते।
समपीतेन तेनैव स मद्येनोपशाम्यति।। (अ.सं.चि. 9/3)

मद्य के हीन, मिथ्या अथवा अति मात्रा में पीने से जो रोग उत्पन्न होता है, वह उसी मद्य को सममात्रा में पीने से शान्त होता है। आचार्य चरक ने इस तथ्य का और भी स्पष्टीकरण करते हुए कहा है -

Scanned with CamScanner

व्यवायितीक्ष्णोष्णतया देयमम्ले(न्ये)षु सत्स्वपि।।
स्रोतोविबन्धनुन्मद्यं मारुतस्यानुलोमनम्।
रोचनं दीपनं चाग्नेरभ्यासात् सात्म्यमेव च।।
रुजः स्रोतःस्वरुद्धेषु मारुते चानुलोमिते।
निवर्तन्ते विकाराश्च शाम्यन्त्यस्य मदोदयाः।।

(च.चि. 24/118-120)

मद्य द्वारा उभरे हुए दोषों के कारण स्रोतों में रुकी हुई वायु सिर, अस्थियों और सन्धियों में तीव्र वेदना उत्पन्न करती है। ऐसी स्थिति में दोषों को ढीला कर निकालने के लिए अन्य अम्ल द्रव्यों के रहते हुए भी व्यवायी, उष्ण और तीक्ष्ण होने के कारण उस व्यक्ति के लिए विशेष रूप से मद्य का सेवन करना ही उचित है। विधिपूर्वक मद्य-सेवन करने से स्रोतों के विबन्ध खुल जाते हैं। वायु का अनुलोमन होता है। भोजन में रुचि उत्पन्न होती है। जठराग्नि प्रदीप्त होती है। वायु का अनुलोमन होने से सिर आदि प्रदेशों की वेदना और अन्य उपद्रव नष्ट हो जाते हैं और मदात्यय रोग शान्त हो जाता है।

उपचार के लिए रोगी की प्रकृति, प्रकुपित दोष तथा उसके बलाबल का विचार कर विशेष रूप से तैयार की गई मदिरा का उचित अनुपान के साथ सेवन कराया जाता है। साथ में अन्य आनुषंगिक उपायों, योगों तथा उचित पथ्यापथ्य की व्यवस्था की जाती है। चूँकि मद्यपान प्रधानतया एक मानसिक समस्या है, अतः दैहिक उपचार के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक उपचार की ओर भी समुचित ध्यान दिया जाता है।

सप्ताहमष्टरात्रं वा कुर्यात् पानात्ययौषधम्।
जीर्यत्येतावता पानं कालेन विपथाश्रितम्।।

(अ.सं.चि. 9/10)

चिकित्सा की अवधि (Duration of treatment) - मदात्यय की चिकित्सा 7 या 8 दिन तक करनी चाहिए। इस अवधि में विमार्ग में स्थित मद्य जीर्ण हो जाता है। इसके बाद जो रोग हो या जो लक्षण अवशिष्ट हों, उनकी दोषानुसार चिकित्सा करनी चाहिए।

12.5.1 वातज मदात्यय की चिकित्सा (Treatment of Vataja madatyaya)

1. औषधियुक्त मदिरा -

बीजपूरकवृक्षाम्लकोलदाडिमसंयुतम्।
यवानीहपुषाजाजीशृंगवेरावचूर्णितम्।।
सस्नेहैः शक्तुभिर्युक्तमवदंशैर्विरोचितम्।
दद्यात् सलवणं मद्यं पैष्टिकं वातशान्तये।।
दृष्ट्वा वातोल्बणं लिंगं रसैश्चैनमुपाचरेत्।
लावतित्तिरदक्षाणां स्निग्धाम्लैः शिखिनामपि।।
पक्षिणां मृगमत्स्यानामानूपानां च संस्कृतैः।
भूशयप्रसहानां च रसैः शाल्योदनेन च।।

(च.चि. 24/121-124)

आचार्य चरक के अनुसार वातज मदात्यय से पीड़ित मनुष्य को चावल के आटे से बनी हुई पुरानी मदिरा में बिजौरा नीबू का रस, इमली, खट्टे बेर का चूर्ण, अनार का रस, अजवायन, हाऊबेर, जीरे का चूर्ण, सोंठ का चूर्ण और सेंधा नमक मिलाकर पीने को दें। आचार्य सुश्रुत ने इसमें प्रक्षेप के लिए दो अन्य योगों का उल्लेख किया है -

1. चूक, कालीमिर्च, अदरख, अजवायन, कूठ और सेंधा नमक का चूर्ण
2. बड़ी इलायची, अजवायन, सोंठ, शुद्ध हींग और सोंचर नमक का चूर्ण।

2. पथ्य

स्निग्धोष्णलवणाम्लैश्च वेशवारैर्मुखप्रियैः।
चित्रैर्गौधूमिकैश्चान्नैर्वारुणीमण्डसंयुतैः।।
पिशितार्द्रकगर्भाभिः स्निग्धाभिः पूपवर्तिभिः।
माषपूपलिकाभिश्च वातिकं समुपाचरेत्।।
नातिस्निग्धं न चाम्लेन युक्तं समरिचार्द्रकम्।
मेद्यं प्रागुदितं मांसं दाडिमस्वरसेन वा।।
पृथक्त्रिजातकोपेतं सधान्यमरिचार्द्रकम्।
रसप्रलेपि संपूपैः सुखोष्णैः संप्रदापयेत्।।

(च.चि. 24/125-128)

स्निग्ध, उष्ण, लवण, अम्ल और मुख के लिए प्रिय वेशवार अर्थात् अस्थि रहित मांस को कूटकर संस्कारित मांसरस, गोधूम से निर्मित विविध खाद्य पदार्थ, वारुणी मद्य, मण्ड, पिशित (मांस) और आर्द्रक की पिट्ठी से निर्मित पूपवर्त्ति (कचौड़ी) तथा माष (उड़द) की पीठी से निर्मित पूपलिका (पूआ)- ये सभी पदार्थ वातज मदात्यय के आतुर को भक्षणार्थ दें।

न अधिक स्निग्ध और न ही अधिक अम्ल मरिच तथा आर्द्रक आदि युक्त पहले कटे गये मेद्य (स्थूल) मांस में दाडिम स्वरस मिलाकर वातज मदात्यय के रोगी को भोजन के लिए देना चाहिए।

त्रिजातक (दालचीनी + छोटी इलायची + तेजपत्ता) के द्रव्यों के चूर्ण (अलग-अलग) को मांस में मिलाकर वातज मदात्यय के रोगी को खाने के लिए देना चाहिए या मांस में धान्यक, मरिच

Scanned with CamScanner

और आर्द्रक अलग-अलग मांस में मिलाकर इस प्रकार पकायें जिससे वह लेप के समान हो जाय। इस रसप्रलेप (जो मांसरस लेप के समान गाढ़ा हो) को सुखोष्ण पूप के साथ भोजन के लिए देना चाहिए।

3. पेय

भुक्ते तु वारुणीमण्डं दद्यात् पातुं पिपासवे।
दाडिमस्य रसं वाऽपि जलं वा पाञ्चमूलिकम्।।

धान्यनागरतोयं च दधिमण्डमथापि वा।
अम्लकाञ्जिकमण्डं वा शुक्तोदकमथापि वा।।

(च.चि. 24/129-130)

भोजन के बाद प्यास लगने पर आवश्यकतानुसार वारुणी का मण्ड, खट्टे अनार का स्वरस, बृहत् पञ्चमूल अथवा धनिया और सोंठ के योग से षडंगपानीय परिभाषा के अनुसार सिद्ध जल, दही का पानी, खट्टी कॉजी अथवा शीतल जल पीने को दें।

4. अन्यान्य

रागषाडवसंयोगैर्विविधैर्भक्तरोचनैः।
पिशितैः शाकपिष्टान्नैर्यवगोधूमशालिभिः।।

अभ्यंगोत्सादनैः स्नानैरुष्णैः प्रावरणैर्घनैः।
घनैरगुरुपंकैश्च धूपैश्चागुरुजैर्घनैः।।

नारीणां यौवनोष्णानां निर्दयैरुपगूहनैः।
श्रोण्यूरुकुचभारैश्च संरोधोष्णासुखावहैः।।

शयनाच्छादनैरुष्णैरुष्णैश्चान्तर्गृहैः सुखैः।
मारुतप्रबलः शीघ्रं प्रशाम्यति मदात्ययः।।

(च.चि. 24/132-135)

भक्तरोचन (भोजन में रुचि उत्पन्न करने वाले) अनेक प्रकार के राग तथा षाडवों के प्रयोग से, मांस के प्रयोग से शाक, पिष्टान्न, यव, गोधूम एवं शालि जैसे अन्नों से बने आहार द्रव्यों के प्रयोग से, अभ्यंग से, उत्सादन से, उष्णजल से स्नान करने से, कम्बल आदि गुरु वस्त्रों को ओढ़ने से, माढ़े अगुरु का लेप करने से, गाढ़े अगुरु के धूप सेवन करने से, युवावस्था से जिन स्त्रियों का शरीर उष्ण होता है उनके शरीर का निर्ममतापूर्वक आलिंगन करने से, जिन स्त्रियों का नितम्ब, ऊरु और स्तन अधिक मांसल होने से अधिक उपचित होता है एवं उन अंगों के गुरु होने से उनके अंगों में संरोधजनित उष्णता हो जाती है, ऐसी स्त्रियों से लिपट कर आलिंगन करने से, उष्ण शय्या एवं उष्ण वस्त्र को ओढ़ने से, तथा उष्ण सुखद अन्तर्गृह (enclosed room) में रहने से वातज मदात्यय शीघ्र ही शान्त हो जाता है।

12.5.2 पित्तज मदात्यय की चिकित्सा (Treatment of Pittaja madatyaya)

1. औषधियुक्त मदिरा -

भव्यखर्जूरमृद्वीकापरूषकरसैर्युतम्।
सदाडिमरसं शीतं सक्तुभिश्चावचूर्णितम्।।

सशर्करं शार्करं वा मार्द्वीकमथवाऽपरम्।
दद्याद्बहूदकं काले पातुं पित्तमदात्यये।।

(च.चि. 24/136-137)

पित्तज मदात्यय में समयानुसार आतुर को तृष्णा (प्यास) लगने पर भव्य, खर्जूर, मृद्वीका, परुषक, दाडिम स्वरस को मद्य में मिलाकर शीतल करके उसमें यवसक्तू और शर्करा मिलाकर उस मद्य का पान करना चाहिए।

शर्करा से निर्मित मद्य, मृद्वीका (मुनक्का) से निर्मित मद्य या अन्य कोई मद्य हो उसमें अधिक परिमाण में जल मिलाकर आतुर पानार्थ प्रयोग करे।

पित्तात्मके मधुरवर्गकषायमिश्रं मद्यं हितं समधुशर्कर-मिष्टगन्धम्।।

पीत्वा च मद्यमपि चेक्षुरसप्रगाढं निःशेषतः क्षणमवस्थित-मुल्लिखेच्च।
लावैणतित्तिरिरसांश्च पिबेदनम्लान् मौद्गान् सुखाय सघृतान् ससितांश्च यूषान्।। (सु.उ. 47/26-27)

पित्तज मदात्यय में तृष्णा शान्ति के लिए गुडूचीरहित काकोल्यादि मधुर वर्ग के कषाय में मधु, शर्करा एवं इलायची, दालचीनी, तेजपत्र आदि सुगन्धित द्रव्य मिलाकर मद्य के साथ देना हितकर होता है।

पित्तज मदात्यय में रोगी को मद्य में इक्षुरस बड़ी मात्रा में पिलाकर वमन कराना चाहिये। तदनन्तर लाव, हरिण, तित्तिरि का अम्लरहित मांसरस पिलाना चाहिए और मुद्ग का घृत एवं शर्करा युक्त यूष पिलाना हितकर होता है।

2. आहार

शशान् कपिञ्जलानेणॉल्लावानसितपुच्छकान्।
मधुराम्लान् प्रयुञ्जीत भोजने शालिषष्टिकान्।।

पटोलयूषमिश्रं वा छागलं कल्पयेद्रसम्।
सतीनमुद्गमिश्रं वा दाडिमामलकान्वितम्।।

द्राक्षामलकखर्जूरपरूषकरसेन वा।
कल्पयेत्तर्पणान् यूषान् रसांश्च विविधात्मकान्।।

(च.चि. 24/138-140)

Scanned with CamScanner

पित्तज मदात्यय के आतुर को भोजन के लिए शश (खरगोश), कपिञ्जल (गौरैया), एण, लाव, असितपुच्छमृग (काले हिरन) के मांस को मधुर तथा अम्ल द्रव्यों से संस्कारित करके उसके साथ शालि चावल का भात और साठी चावल का भात खाने के लिए देना चाहिए। अथवा पटोल के यूष को मिलाकर अजामांस रस बनाना चाहिए। या मटर एवं मूँग का यूष मिलाकर अजामांस रस बनायें। उस मांसरस में दाडिम स्वरस और आमलकी स्वरस मिलाकर उसके साथ शालि चावल या साठी चावल का भात खाने के लिये देना चाहिये। अथवा द्राक्षा, आमलकी, खर्जूर और परुषक के रस से निर्मित अनेक प्रकार के तर्पण (मन्थादि), यूष और मांसरस का निर्माण करना चाहिये और इन्हीं मन्थ, यूष और मांसरस के साथ शालि चावल का भात या साठी चावल का भात रोगी को खाने के लिए देना चाहिये।

3. पेय

गुडूचीभद्रमुस्तानां पटोलस्याथवा भिषक्।
रसं सनागरं दद्यात् तित्तिरिप्रतिभोजनम्।।

(च.चि. 24।145)

पित्तज मदात्यय में यदि रोगी को रक्तनिष्ठीवन युक्त कास, पार्श्वपीड़ा, स्तन प्रदेश में पीड़ा, दाह के साथ पिपासा हो, हृदय और उरोप्रदेश में उत्क्लेश हो तो गुडूची और भद्रमुस्ता के क्वाथ में या पटोलपत्र कषाय में शुण्ठी चूर्ण मिलाकर पिलाना चाहिए। औषधि के पाचनोपरान्त तित्तिरि के मांसरस के साथ शालिचावल या साठी चावल का भात रोगी को खाने के लिए देना चाहिए।

4. अन्यान्य आनुषंगिक उपाय

शीतलान्यन्नपानानि शीतशय्यासनानि च।
शीतवातजलस्पर्शाः शीतान्युपवनानि च।।

क्षौमपद्मोत्पलानां च मणीनां मौक्तिकस्य च।
चन्दनोदकशीतानां स्पर्शाश्चन्द्रांशुशीतलाः।।

हेमराजतकांस्यानां पात्राणां शीतवारिभिः।
पूर्णानां हिमपूर्णानां दृतीनां पवनाहताः।।

संस्पर्शाश्चन्दनार्द्राणां नारीणां च समारुताः।
चन्दनानां च मुख्यानां शस्ताः पित्तमदात्यये।।

(च.चि. 24/152-155)

शीतल अन्नपान, शीतल शय्या, शीतल आसन, शीतल वायु एवं जल का स्पर्श, ठण्डे बागों में घूमना, चन्दन के जल से सुवासित महीन वस्त्र धारण करना, कमल, उत्पल, अनेक प्रकार की मणियों तथा चन्द्रकिरणों में शीतल हुए मोतियों का स्पर्श करना, चन्द्रमा की शीतल किरणों में बैठना, शीतल जल से पूर्ण सोने, चाँदी या काँसे के पात्रों का स्पर्श, चन्दन का लेप तथा अन्यान्य शीतवीर्य द्रव्यों का उपभोग। यहाँ तक कि ठण्डी चीजों को देखना या उनकी कल्पना करना भी इसमें आराम पहुँचाता है।

5. पित्तज मदात्यय के उपद्रवों में वमन

आमाशयस्थमुत्क्लिष्टं कफपित्तं मदात्यये।
विज्ञाय बहुदोषस्य दह्यमानस्य तृष्यतः।।

मद्यं द्राक्षारसं तोयं दत्त्वा तर्पणमेव वा।
निःशेषं वामयेच्छीघ्रमेवं रोगाद्विमुच्यते।।

काले पुनस्तर्पणाद्यं क्रमं कुर्यात् प्रकांक्षिते।
तेनाग्निर्दीप्यते तस्य दोषशेषान्नपाचकः।।

(च.चि. 24/141-143)

जब रोगी दाह और तृषा की अधिकता का अनुभव करे तो समझ लेना चाहिए कि आमाशय में कफ और पित्त उभर गये हैं। उन्हें निकालने के लिए मद्य, अंगूरों का रस और शीतल जल एक में मिलाकर; अथवा मद्य में सोंठ का रस प्रचुर मात्रा में मिलाकर अथवा जौ का पतला सत्तू प्रचुर मात्रा में पिलाकर वमन करवा दें। इस प्रकार दोषों के निकल जाने से मदात्यय स्वतः शान्त हो जायेगा।

6. तृषा को शान्त करने के लिए

तृष्यते चातिबलवद्वातपित्ते समुद्धते।
दद्याद्द्राक्षारसं पातुं शीतं दोषानुलोमनम्।।

जीर्णे समधुराम्लेन छागमांसरसेन तम्।
भोजनं भोजयेन्मद्यमनुतर्षं च पाययेत्।।

अनुतर्षस्य मात्रा सा यया नो दूष्यते मनः।
तृष्यते मद्यमल्पाल्पं प्रदेयं स्याद्बहूदकम्।।

कोलदाडिमवृक्षाम्लचुक्रीकाचुक्रिकारसः।
पञ्चाम्लको मुखालेपः सद्यस्तृष्णां नियच्छति।।

(च.चि. 24/146-148 तथा 151)

तृषा को शान्त करने के लिए अंगूरों का रस, शीतल जल; अथवा पाटल, कमलकन्द, कमल और मुद्गपर्णी से सिद्ध जल को बरफ से ठण्डा कर और उसमें पिप्पली का चूर्ण डालकर पीने को दें। खट्टे बेर, खट्टे अनार, इमली, आमला तथा चुक्रिका - इन पाँचों अम्ल द्रव्यों के रस का मुख के अन्दर लेप करें।

7. दाह को शान्त करने के लिए

तोयदानां च शब्दा हि शमयन्ति मदात्ययम्।
जलयन्त्राभिवर्षीणि वातयन्त्रवहानि च।।

कल्पनीयानि भिषजा दाहे धारागृहाणि च।
फलिनीसेव्यलोध्राम्बुहेमपत्रं कुटन्नटम्।।

Scanned with CamScanner

कालीयकरसोपेतं दाहे शस्तं प्रलेपनम्।
बदरीपल्लवोत्थश्च तथैवारिष्टकोद्भवः।।

फेनिलायाश्च यः फेनस्तैर्दाहे लेपनं शुभम्।
सुरा समण्डा दध्यम्लं मातुलुंगरसो मधु।।

सेके प्रदेहे शस्यन्ते दाहघ्नाः साम्लकाञ्जिकाः।
परिषेकावगाहेषु व्यञ्जनानां च सेवने।।

(च.चि. 24/158-162)

दाह को शान्त करने के लिए रोगी को फव्वारे में स्नान करायें; पँखे, कूलर आदि से शीतलता पहुँचायें तथा शीतल जल का परिषेक एवं अवगाहन करायें। बेर, केसर अथवा नीम की पत्तियों को पीसकर शरीर पर लेप करें।

12.5.3 कफज मदात्यय की चिकित्सा (Treatment of Kaphaja madatyaya)

कफज मदात्यय के रोगी को पहले वमन और उपवास कराना चाहिए। इससे उसका आमदोष पच जायेगा।

1. औषधियुक्त मदिरा

निरत्ययं पीयमानं पिपासाज्वरनाशनम्।
निरामं कांक्षितं काले सक्षौद्रं पाययेत्तु तम्।।

शार्करं मधु वा जीर्णमरिष्टं सीधुमेव वा।
रूक्षतर्पणसंयुक्तं यवानीनागरान्वितम्।।

(च.चि. 24/168-169)

आमदोष के पच जाने पर जब रोगी भोजन की इच्छा प्रकट करे तो उसे शर्करा और मधु से निर्मित पुराना अरिष्ट या रूक्ष तर्पण (यथा - धान के लावा का सत्तू), अजवायन और सोंठ का चूर्ण अथवा मधु मिश्रित सीधु (गुड़ या ईख के रस से बनाई हुई शराब) पीने को देना चाहिए।

2. आहार-द्रव्य

यावगौधूमिकं चान्न रूक्षयूषेण भोजयेत्।
कुलत्थानां सुशुष्काणां मूलकानां रसेन वा।।

तनुनाऽल्पेन लघुना कट्वम्लेनाल्पसर्पिषा।
पटोलयूषमम्लं वा यूषमामलकस्य वा।।

प्रभूतकटुसंयुक्तं सयवान्नं प्रदापयेत्।
व्योषयूषमथाम्लं वा यूषं वा साम्लवेतसम्।।

छागमांसरसं रूक्षमम्लं वा जांगलं रसम्।
स्थाल्यां वाऽथ कपाले वा भृष्टं निर्द्रववर्तितम्।।

कट्वम्ललवणं मांसं भक्षयन् वृणुयान्मधु।
व्यक्तमारीचकं मांसं मातुलुंगरसान्वितम्।।

प्रभूतकटुसंयुक्तं यवानीनागरान्वितम्।
भृष्टं दाडिमसाराम्लमुष्णपूपोपवेष्टितम्।।

यथाग्नि भक्षयेत् काले प्रभूतार्द्रकपेशिकम्।
पिबेच्च निगदं मद्यं कफप्राये मदात्यये।।

(च.चि. 24/170-176)

जौ और गेहूँ की बनी सूखी रोटी कटु तथा अम्ल रस मिश्रित कुलथी अथवा सूखी मूली के यूष के साथ खट्टे अनार के रस से मिश्रित परवल के यूष अथवा गोल मिर्च आदि कटु द्रव्य मिश्रित ऑवले के यूष के साथ खिलानी चाहिए। खट्टे अनार के रस और सोंठ, मिर्च, पीपल मिश्रित बकरे के मॉस का रस अथवा जंगली पशु-पक्षियों का मांसरस देना चाहिए।

3. पेय

तृष्यते सलिलं चास्मै दद्याद्ह्रीबेरसाधितम्।
बलया पृश्निपर्ण्या वा कण्टकार्याऽथवा शृतम्।।

सनागराभिः सर्वाभिर्जलं वा शृतशीतलम्।
दुःस्पर्शेन समुस्तेन मुस्तपर्पटकेन वा।।

जलं मुस्तैः शृतं वाऽपि दद्याद्दोषविपाचनम्।
एतदेव च पानीयं सर्वत्रापि मदात्यये।।

(च.चि. 24/165-167)

सुगन्धबाला, बलामूल, पिठिवन, छोटी कँटेरी का पंचांग; सोंठ, दुरालभा और मोथा; मोथा और पित्तपापड़ा अथवा मात्र मोथा से पकाया हुआ जल पीने के लिए देना चाहिए।

4. अन्य आनुषंगिक उपाय

रूक्षोष्णेनान्नपानेन स्नानेनाशिशिरेण च।
व्यायामलंघनाभ्यां च युक्त्या जागरणेन च।।

कालयुक्तेन रूक्षेण स्नानेनोद्वर्तनेन च।
प्राणवर्णकराणां च प्रघर्षाणां च सेवया।।

सेवया वसनानां च गुरूणामगुरोरपि।
संकोचोष्णसुखांगीनामंगनानां च सेवया।।

सुखशिक्षितहस्तानां स्त्रीणां संवाहनेन च।
मदात्ययः कफप्रायः शीघ्रमेवोपशाम्यति।।

(च.चि. 24/185-188)

रूक्ष और उष्ण अन्नपान, गर्म जल से स्नान, व्यायाम, लंघन और जागरण, रूक्ष स्नान, उबटन और प्रघर्षण, भारी और मोटे वस्त्रों का धारण, अगर का लेप और शरीर दबवाना।

5. कफज मदात्यय में होनेवाले उपद्रव - अरुचि एवं अग्निमान्द्य - अष्टांग लवण जल के साथ अथवा मधुर और अम्ल द्रव्यों के अनुपान से दें। बीजरहित मुनक्के, सोंठ, मिर्च और

Scanned with CamScanner

पीपल आदि कटु द्रव्य; तथा सोंचर नमक, छोटी इलायची, जीरा, दालचीनी और अजवायन में बिजौरा नीबू या खट्टे अनार का रस मिलाकर चटनी बनाकर सेवन करायें। यथा –

सौवर्चलमजाजी च वृक्षाम्लं साम्लवेतसम्।
त्वगेलामरिचार्धांशं शर्कराभागयोजितम्।।
एतल्लवणमष्टांगमग्निसंदीपनं परम्।
मदात्यये कफप्राये दद्यात् स्रोतोविशोधनम्।।
एतदेव पुनर्युक्त्या मधुराम्लैर्द्रवीकृतम्।
गोधूमान्नयवान्नानां मांसानां चातिरोचनम्।।
पेषयेत् कटुकैर्युक्तां श्वेतां बीजविवर्जिताम्।
मृद्वीकां मातुलुंगस्य दाडिमस्य रसेन वा।।
सौवर्चलैलामरिचैरजाजीभृंगदीप्यकैः।
स रागः क्षौद्रसंयुक्तः श्रेष्ठो रोचनदीपनः।।
(च.चि. 24/177–181)

12.5.4 सन्निपातज मदात्यय की चिकित्सा (Treatment of Sannipataja Madatyaya)

कुर्याच्च सर्वमथ सर्वभवे विधानं द्वन्द्वोद्भवे द्वयमवेक्ष्य यथाप्रधानम्।। (सु.उ. 47/29)

- द्वन्द्वज मदात्यय में दोनों दोषों का विचार कर पहले जो प्रधान हो उसकी, तत्पश्चात् दूसरे की चिकित्सा करनी चाहिए।
- त्रिदोषज या सन्निपातज मदात्यय में तीनों दोषों की सम्मिलित चिकित्सा करनी चाहिए। साथ ही हितकारी आहार-विहार तथा आनुषंगिक उपायों पर भी समुचित ध्यान देना चाहिए।

12.6 ध्वंसक और विक्षय की चिकित्सा (Treatment of Dhwansaka and vikshaya)

तयोः कर्म तदेवेष्टं वातिके यन्मदात्यये।
तौ हि प्रक्षीणदेहस्य जायेते दुर्बलस्य वै।।
बस्तयः सर्पिषः पानं प्रयोगः क्षीरसर्पिषोः।
अभ्यंगोद्वर्तनस्नानान्यन्नपानं च वातनुत्।।
(च.चि. 24/203)

- वातज मदात्यय में बतलाई गई चिकित्सा इसमें भी विधेय है।
- घी, दूध, बृंहण बस्तियों, वातनाशक अभ्यंग, उद्वर्तन, स्नान और खान-पान का प्रयोग करें।

12.7 कतिपय सर्व मदात्ययहर योग (Certain Madatyaya Pacifying Formulations)

त्वङ्नागपुष्पमगधैलमधूकधान्यैः श्लक्ष्णैरजाजिमरिचैश्च कृतं समांशैः।।
पानं कपित्थरसवारिपरूषकाढ्यं पानात्ययेषु विधिवत्सुत-मम्बरान्ते। ह्रीबेरपद्मपरिपेलवसंप्रयुक्तैः पुष्पैर्विलिप्य करवीरजलोद्भवैश्च।।
पिष्टैः सपद्मकयुतैरपि सारिवाद्यैः सेकं जलैश्च वितरेदमलैः सुशीतैः। त्वक्पत्रचोचमरिचैलभुजंगपुष्पश्लेष्मातकप्रसववल्कगुडैरुपेतम्।।
द्राक्षायुतं हृतमलं मदिरामयार्तैस्तत्पानकं शुचि सुगन्धि नरैर्निषेव्यम्। पिष्ट्वा पिबेच्च मधुकं कटुरोहिणीं च द्राक्षां च मूलमसकृत् त्रपुषीभवं यत्।।
कार्पासिनीमथ च नागबलां च तुल्यां पीत्वा सुखी भवति साधु सुवर्चलां च। (सु.उ. 47/30–34)

1. दालचीनी, नागकेसर, इलायची, महुए के फूल, पिप्पली, धनिया, जीरा और काली मिर्च – समभाग ले चूर्ण बना लें। 3 से 6 ग्राम तक कैथ, फालसे के स्वरस अथवा जल के साथ दें।
2. हाऊबेर, कमल, कैवर्त, मोथा, कनेर और कमल के फूलों को पीसकर रोगी के शरीर पर लेप करें।
3. सारिवादिगण की औषधियों को महीन पीसकर शीतल जल में घोल, उससे रोगी के शरीर का सिंचन करें।
4. दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, लिसोड़े के कोमल पत्ते और छाल, गुड़ तथा मुनक्कों को पीसकर, पानक बनाकर रोगी को पिलायें।
5. मुलहठी, कुटकी, मुनक्का और खीरे की जड़ (अभाव में बीज) समभाग ले पानक बना रोगी को पिलायें।
6. बनकपास की जड़, नागबला और सुवर्चला समभाग ले पानक बना रोगी को पिलायें।
7. काली मिर्च, जीरा, नागकेसर, दालचीनी, तेजपात, सोंठ, चविका और इलायची का चूर्ण अगुर्वादि धूप से धूपित कर व्यवहार में लायें।

आचार्य गोविन्ददास सेन मतेन –

1. फलत्रिकाद्य चूर्ण	⇒	मात्रा – 3 से 4 ग्राम	अनुपान – जल
2. अष्टांग लवण	⇒	मात्रा – 2 से 3 ग्राम	अनुपान – जल

Scanned with CamScanner

3. एलादि मोदक	⇒	मात्रा – 10 ग्राम	अनुपान – गोदुग्ध/मुद्ग यूष
4. महाकल्याण वटी	⇒	मात्रा – 125 मि.ग्रा.	अनुपान – शर्करा/मधु/नवनीत
5. पुनर्नवादि घृत	⇒	मात्रा – 5 से 10 ग्राम	अनुपान – कोष्ण गोदुग्ध
6. श्रीखण्डासव	⇒	मात्रा – 12 से 25 मि ली.	अनुपान – जल

12.8 मदात्यय रोग में पथ्यापथ्य (Apt and Inapt Articles in Madatyaya)

आचार्य गोविन्ददास सेन ने अपने ग्रन्थ 'भैषज्यरत्नावली' में मदात्ययरोगाधिकार में मदात्यय में पथ्य एवं अपथ्य विषयों का वर्णन निम्न शब्दों में किया है –

पथ्य –

संशोधनं संशमनं स्वपनं लंघनं श्रमः।
संवत्सरसमुत्पन्नाः शालयः षष्टिकैः सह।।
मुद्गा माषाश्च गोधूमाः सतीना रागषाडवी।
एणतित्तिरिलावाजदक्षबर्हिशशामिषम्।।
वेशवारो विचित्रान्नं हृद्यं मद्यं पयः सिता।
तण्डुलीयं पटोलञ्च मातुलुंगं परूषकम्।।
खर्जूरं दाडिमं धात्री नारिकेलं च गोस्तनी।
सर्पिः पुराणं कर्पूरं प्रतीरं शिशिरानिलः।।
धारागृहं चन्द्रपादा मणयो मित्रसंगमः।
क्षौमाम्बरं प्रियाश्लेषो गीतं वादित्रमुद्धतम्।
शीताम्बु चन्दनं स्नानं सेव्यमेतन्मदात्यये।।

(भै.र. 22/34–38)

1. संशोधन (वमन, विरेचनादि)
2. संशमन
3. निद्रा
4. लंघन
5. श्रम
6. 1 वर्ष पुराना शालि चावल
7. षष्टिक चावल
8. मुद्ग
9. माष
10. गोधूम
11. सतीन
12. राग
13. षाडव
14. एण, तित्तिरि, लावा, अजा (बकरी), दक्ष (मुर्गा), बर्हि (मोर) एवं शश (खरगोश) का मांस
15. वेशवार
16. अनेक प्रकार के रुचिकर आहार
17. हृद्य आहार
18. मद्यपान
19. दुग्ध
20. शर्करा
21. तण्डुलीय
22. पटोल
23. मातुलुंग
24. परूषक
25. खर्जूर
26. दाडिम
27. धात्री
28. नारिकेल
29. द्राक्षा
30. पुराण घृत
31. कर्पूर
32. नदी का किनारा
33. शीतल वायु
34. धारागृह
35. चन्द्र किरणों का सेवन
36. मणिधारण
37. मित्रों का साथ
38. क्षौम अम्बर
39. प्रियाश्लेष
40. गीत
41. वादित्र
42. शीताम्बु
43. चन्दन
44. स्नान।

अपथ्य

स्वेदोऽञ्जनं धूमपानं नावनं दन्तघर्षणम्।
ताम्बूलञ्चेत्यपथ्यं स्यान्मदात्ययविकारिणाम्।।

(भै.र. 22/39)

1. स्वेदन
2. अञ्जनकर्म
3. धूमपान
4. नस्यकर्म
5. दन्तधावन
6. ताम्बूल सेवन।

12.9 Alcohol & Alcoholism

Features

- The term 'Alcohol' refers to - Ethyl alcohol (C_2H_5OH).
- It is a colorless, transparent, volatile liquid with characteristic spirituous odour and a burning taste.
- It is included under category of 'inebriant cerebral poisons' (i.e. those producing intoxication).
- Alcohol is used as a drink, as a solvent (for resin, fat etc.) and also as an antiseptic.

Scanned with CamScanner

Approximate percentage of alcohol in various beverages

• Rum	50 - 60%
• Brandy	40 - 45%
• Whisky	40 - 45%
• Gin	40 - 45%
• Port	20%
• Champagne	10 - 15%
• Wine	10 - 15%
• Beer	4 - 8 %

- Absolute alcohol ⇒ contains 99.95% alcohol
- Rectified spirit ⇒ contains 90% alcohol
- Denatured ⇒ mixture of alcohol 95% + wood naphtha 5% alcohol
- Ethanol ⇒ produced by fermentation of sugar by yeast

Absorption of Alcohol

- 20% absorbed from stomach
- 80% absorbed from small intestine

Excretion of Alcohol

- 5% excreted in the breath
- 5% excreted in the urine

Physiological Effect of Alcohol

Blood alcohol conc.	Effects
0 - 50 mg%	- Mild euphoria
50 - 100 mg%	- Diminished inhibitions - Enhanced self confidence - Alteration of judgement etc.
100 - 150 mg%	- Basic mental confusion - Emotional instability - Impairment of memory - Sleepiness
150 - 300 mg%	- Loss of muscular co-ordination - Staggering gait - Marked mental confusion - Dizziness - Disorientation etc.
300 - 400 mg%	- Marked in-coordination - Stupor - Decreased response to stimuli - Coma
400 mg% +	- Anesthesia - Deep coma - Death

Phase of Alcohol Intoxication

1. Stage of excitement
2. Stage of inco-ordination
3. Stage of coma

Fatal dose - Absolute alcohol: 150 - 250 ml

Fatal period - 12 - 24 hrs

Treatment

- Gastric lavage
- Keeping the patient warm
- NS (1 litre) + Glucose (10%) + Thiamine (100 mg) + Insulin (15 units)
- Nerve stimulants
- Artificial respiration
- Oxygen inhalation etc.

Post-Mortem Appearance

- Alcoholic odor
- Acute inflammation of stomach
- Congestion of brain, liver etc.
- Oedema and congestion of brain etc.

• • •

Scanned with CamScanner

साक्षीकृत विष

An Initiative By Technofiesta
AyuTech®
Technologically Driven Ancient Science !

13

जंगम विष (1)
Animal Poison - I

विषय

- जंगम विष (Animal poison)
- सर्प विष (Snake poison)
- शंका विष (Imaginary fear of snake bite)
- सर्पांगाभिहत (Touch of snake)
- सर्प के पर्याय (Synonyms of snake)
- सर्प के भेदोपभेद (Classification of snakes)
- दर्वीकर, मण्डली और राजिमान की पहचान (Physical appearance of darvikara, mandali and rajimana)
- उक्त सर्पों का विचरण काल (Time of outing)
- विष का रस और वीर्य तथा उसकी दोषप्रकोपकता (Rasa, virya and dosha aggravating nature of visha)
- विषाक्तता पर अवस्था और ऋतु का प्रभाव (Effect of age and season on poisoning)
- सॉपों का जीवन क्रम और जीवनावधि (Lifestyle and lifespan of snakes)
- लिंगभेद की पहचान (Sex differences)
- सर्पों में भी वर्णभेद (Caste based classification among snakes)
- वर्ण भेदानुसार विचरणकाल (Schedule for movement - as per the caste)
- वर्णभेदानुसार दोष प्रकोपकता (Dosha aggravation - as per the caste of snakes)
- सर्पदंश के हेतु (Causes of snake bite)

13.1 जंगम विष (Animal Poison)

13.1.1 परिभाषा (Definition)

जंगम प्राणियों में पाये जानेवाले विष को 'जंगम विष' कहते हैं। आचार्य चरक ने इसका विवेचन निम्न शब्दों में प्रस्तुत किया है-

सर्पाः कीटोन्दुरा लूता वृश्चिका गृहगोधिकाः।
जलौकामत्स्यमण्डूकाः कणभाः सकृकण्टकाः।।
श्वसिंहव्याघ्रगोमायुतरक्षुनकुलादयः।
दंष्ट्रिणो ये विषं दंष्टधेत्थं जंगमं मतम्।। (च.चि. 23/9-10)

सॉप, कीट (क़ीड़े-मकोड़े), चूहा, मकड़ी, बिच्छू, छिपकली, जोंक, मछली, मेंढक, कणभ (एक पक्षी विशेष), कृकण्टक (गिरगिट), कुत्ता, शेर, व्याघ्र, गोमायु (गीदड़), तरक्षु (लकड़बग्घा), नेवला आदि जो दॉतोंवाले प्राणी हैं, उनकी दाढ़ों से उत्पन्न होनेवाले विष को 'जंगम विष (animal poison)' कहते हैं।

13.1.2 जंगम विष के अधिष्ठान (Sites of animal poison)

विषाक्त जीवों के जिन-जिन अंगों में विष का निवास रहता है, उन्हें विष का अधिष्ठान कहते हैं। आचार्य सुश्रुत ने जंगम विष के निम्न 16 अधिष्ठान कहे हैं -

तत्र, दृष्टिनिःश्वासदंष्ट्रानखमूत्रपुरीषशुक्रलालार्तवमुखसन्दंशविशर्धित-तुण्डास्थिपित्तशूकशवानीति।। (सु.क. 3/4)

जंगम विष के 16 अधिष्ठान हैं -

1. दृष्टि (sight)
2. निःश्वास (breath)
3. दंष्ट्रा (fangs)
4. नख (nails)
5. मूत्र (urine)
6. पुरीष (feces)
7. शुक्र (semen)
8. लालास्राव (saliva)
9. आर्तव (menstrual blood)
10. मुख संदंश (mouth-bite)

Scanned with CamScanner

- सर्पदंश के भेद (Classification of snake bite)
- अवस्था विशेष से साँपों की अल्पविषाक्तता (Factors producing decrease in poisonousness)
- साँपों की उग्र विषाक्तता (Intense poisonousness of snakes)
- सर्पदंश के सामान्य लक्षण (General symptoms of snake bite)
- पुरुषादि सर्प भेदों के दंश के लक्षण (Signs of snake bite - as per sex etc.)
- सर्पविष के वेग (Impetuosity of snake poison)
- Features of poisonous & non-poisonous snakes
- Poisonous snakes
- Commonly found snakes in India
- Snake venom and its toxicity
- सर्पदंश (Snake bite)
- Symptoms of snake bite
- सर्पविष का उपचार (Treatment of snake bite)
- विभिन्न अंगों-धातुओं में पहुँच कर स्थिर हुए विष की चिकित्सा (Treatment of visha reaching various tissues and organs)
- सर्पांगाभिहत और शंकाविष की चिकित्सा (Treatment of touch of snake or imaginary fear of snake bite)
- कुछ सर्पविष-निरोधक योग (Some formulations for prophylaxis against snake bite)
- सर्पविष में विशेष रूप से वर्जित पदार्थ (Contra-indicated articles in snake bite)
- सर्पविष में उपयोगी कुछ योग (Certain useful prescriptions for snake bite)
- Modern treatment of Snake bite

11. विशर्धित (गुदा) (flatus)
12. तुण्ड (beak)
13. अस्थि (bone)
14. पित्त (bile)
15. शूक (bristles)
16. शव (cadaver)।

किन-किन जीवों के किस-किस अंग में विष का निवास रहता है, आगे उन्होंने इसका भी अधिष्ठानानुसार निर्देश किया है -

तत्र, दृष्टिनिःश्वासविषा दिव्याः सर्पाः, भौमास्तु दंष्ट्राविषाः, मार्जारश्ववानरमकरमण्डूकपाकमत्स्यगोधाशम्बूकप्रचलाक गृहगोधिकाचतुष्पादकीटास्तथाऽन्ये दंष्ट्रानखविषाः, चिपिटपिच्चिटककषायवासिकसर्षपकतोटवर्चःकीटकौण्डिन्यकाः शकृन्मूत्रविषाः, मूषिकाः, शुक्रविषाः, लूता लालामूत्रपुरीषमुखसन्दंशनखशुक्रार्तवविषाः, वृश्चिकविश्वम्भरवरटीराजीवमत्स्योच्चिटिंगाः समुद्रवृश्चिकाश्चाल (र) विषाः, चित्रशिरःसरावकुर्दिशतदारुकारिमेदकसारिकामुखा मुखसन्दंश विशर्धितमूत्रपुरीषविषाः, मक्षिकाकणभजलायुका मुखसन्दंशविषाः, विषहतास्थि सर्पकण्टकवरटीमत्स्यास्थि चेत्यस्थिविषाणि, शकुलीमत्स्यरक्तराजिवरकी (टी) मत्स्याश्च पित्तविषाः, सूक्ष्मतुण्डोच्चिटिंगवरटीशतपदीशूकवलभि- काशृंगिभ्रमराः शूकतुण्डविषाः, कीटसर्पदेहा गतासवः शवविषाः; शेषास्त्वनुक्ता मुखसन्दंशविषेष्वेव गणयितव्याः।। (सु.क. 3/5)

1. दृष्टि (sight) एवं निःश्वास (breath) → दिव्य सर्प।
2. दंष्ट्रा (fangs) → भूमि पर पाये जाने वाले सर्प।
3. दंष्ट्रा (fangs) एवं नख (nails) → बिल्ली, कुत्ता, बंदर, मकर, मण्डूक, पाकमत्स्य, गोह, शम्बूक, प्रचलाक, छिपकिली तथा अन्य कीट।
4. मूत्र (urine) एवं पुरीष (feces) → चिपिट, पिच्चिटक, कषाय, वासिक, सर्षपक, तोटक, वर्चः, कीट और कौण्डिन्यक।
5. शुक्र (semen) → चूहा।
6. आर्तव (menstrual blood) एवं लालास्राव (saliva) → लूता।
7. आर (पूँछ में स्थित डंक) (tail with a sting) → बिच्छू, विश्वम्भर, वरटी, राजीवमत्स्य, उच्चिटिंग (विषखोपरा) और समुद्रवृश्चिक।
8. मुखसंदंश (mouth-bite), विशर्धित (flatus), मूत्र (urine) एवं मल (feces) → चित्रशिर, शराव, कुर्दिशत, दारुकारि, मेंढक और सारिकामुख।
9. मुखसंदंश (mouth-bite)→मक्षिका, कणभ और जोंक।
10. अस्थि (bone)→ विष से मृत प्राणी की अस्थि, साँप का दाँत, वरटी मछली की अस्थि।
11. पित्त (bile) → शकुली मत्स्य, रक्तराजी, वरटी मत्स्य।

Scanned with CamScanner

12. शूक (bristles) और तुण्ड (beak) → सूक्ष्मतुंड, उच्चिटिंग, वरटी, शतपदी (कनखजूरा), शूक, वलभिका, शृंगी और भ्रमर।
13. शवविष (cadaver) → मृत कीट और सर्प।

शेष जिनका वर्णन यहाँ नहीं किया गया है, उनको मुखसंदंश विषवालों में गिनना चाहिए। मकड़ी के लालास्राव, मूत्र, मल, मुख, संदंश, नख, शुक्र और आर्तव सभी विषयुक्त होते हैं।

तालिका - आचार्य सुश्रुत द्वारा वर्णित जंगमविष

क्र.	विषाधिष्ठान	नाम
1.	दृष्टि एवं निःश्वास	1. दिव्य सर्प (दिवि भवाः दिव्याः)
2.	दंष्ट्रा	1. भौम सर्प (भूमौ भवा भौमाः)
3.	दंष्ट्रा एवं नख	1. मार्जार, 2. श्व, 3. वानर, 4. मकर, 5. मण्डूक, 6. पाकमत्स्य, 7. गोधा, 8. शम्बूक, 9. प्रचलाक, 10. गृहगोधिका, 11. चतुष्पाद, 12. कीट तथा इसी तरह के अन्य कीट
4.	मल एवं मूत्र	1. चिपिट, 2. पिच्चिटक, 3. कषायवासिक, 4. सर्षपक, 5. तोटक, 6. वर्चकीट, 7. कौण्डिन्यक
5.	शुक्र	1. मूषिक
6.	लाला, मूत्र, पुरीष, मुखसन्दंश, नख, शुक्र एवं आर्तव	1. लूता
7.	आर	1. वृश्चिक, 2. विश्वम्भर, 3. वरटी, 4. राजीवमत्स्य, 5. उच्चिटिंग, 6. समुद्रवृश्चिक
8.	मुखसन्दंश, विशर्धित, मूत्र एवं पुरीष	1. चित्रशिर, 2. सराव, 3. कुर्दिशत, 4. दारुकारि, 5. मेदक, 6. सारिकामुख
9.	मुखसन्दंश	1. मक्षिका, 2. कणभ, 3. जलौका
10.	अस्थि	1. विषहतास्थि, 2. सर्प कण्टक, 3. वरटी, 4. मत्स्यास्थि
11.	पित्त	1. शकुलीमत्स्य, 2. रक्तराजि, 3. वरकी(टी), 4. मत्स्य
12.	शूक एवं तुण्ड	1. सूक्ष्मतुण्ड, 2. उच्चिटिंग, 3. वरटी, 4. शतपदी, 5. शूक, 6. वलभिका, 7. शृंगि, 8. भ्रमर
13.	शव	1. कीट, 2. सर्प

आचार्य चरक मतेन

सर्पाः कीटोन्दुरा लूता वृश्चिका गृहगोधिकाः।
जलौकामत्स्यमण्डूकाः कणभाः सकृकण्टकाः।।
श्वसिंहव्याघ्रगोमायुतरक्षुनकुलादयः।
दंष्टिघ्नो ये विषं दंष्ट्रोत्थं जंगमं मतम्।।

(च.चि. 23/9-10)

1. सर्प 2. कीट 3. उन्दुर 4. लूता
5. वृश्चिक 6. गृहगोधिका 7. जलौका 8. मत्स्य
9. मण्डूक 10. कणभा 11. कृकण्टक 12. श्वान
13. सिंह 14. व्याघ्र 15. गोमायु 16. तरक्षु
17. नकुल आदि दँतैले जीवों के दाँत से उत्पन्न विष को जंगम विष कहा जाता है।

13.1.3 जंगम विष के सामान्य लक्षण
(General symptoms of animal poison)

निद्रां तन्द्रां क्लमं दाहं सपाकं लोमहर्षणम्।
शोफं चैवातिसारं च जनयेज्जंगमं विषम्।।

(च.चि. 23/15)

प्राणिज विषों से ग्रस्त सभी प्राणियों में प्रायः निम्न लक्षण समान रूप से पाये जाते हैं -

1. निद्रा (sleep)
2. तन्द्रा (lassitude)
3. क्लम (सुस्ती-थकान (fatigueness)
4. दाह (burning sensa-tion)

Scanned with CamScanner

5. पाक (suppuration)
6. शोथ (edema) (विशेषरूप से दंश स्थान पर)
7. रोमांच (horripila-tion)
8. अतिसार (diarrhea)

विशिष्ट प्राणियों द्वारा डसे-काटे जाने पर उत्पन्न विशिष्ट लक्षणों का विवेचन तत्तत् प्रकरण में प्रस्तुत किया जायेगा।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्राचीन काल में जंगम विष का अध्ययन अत्यन्त विस्तार से किया गया था। आचार्य चरक, आचार्य सुश्रुत एवं वाग्भट-युगल आचार्यों ने अपनी संहिताओं में जितने विषैले जीव-जन्तुओं का विवरण प्रस्तुत किया है, उनमें से अनेकों का तो अब नाम भी नहीं सुना जाता। हो सकता है जनसंख्या की वृद्धि के साथ-साथ जंगलों के विनाश और जीवन-संघर्ष (struggle for existence) में असफल होने के कारण उनकी अनेक प्रजातियाँ लुप्त हो गई हों। बहुतों के नाम परिवर्तित हो गये हों। वे पृथक्-पृथक् क्षेत्रों में वहाँ की अपनी क्षेत्रीय भाषाओं में अलग-अलग नामों से जाने जाते हों। वनवासी जातियों को उनमें से अनेक का अभी भी ज्ञान हो. परन्तु सभ्य कहलाने वाला समाज उनसे अनभिज्ञ हो। इस अध्याय में आगे कुछ बहु-प्रचलित और प्रायः सम्पर्क में आने वाले विषैले जीव-जन्तुओं और उनके विष का ही विवेचन प्रस्तुत किया जायेगा। इन प्राणियों में भी सबसे अधिक परिचित और सबसे अधिक प्राणघातक माना जाने वाला सर्प है, अतः सबसे पहले उसी की जानकारी प्रस्तुत की जा रही है।

13.2 सर्प विष (Snake Poison)

जिस प्रकार स्थावर विषों में मूल-विष सर्वाधिक घातक और सद्यः प्राणहर होते हैं, उसी प्रकार जंगम विषों में सर्पविष सर्वाधिक घातक और सद्यः प्राणहर होता है।

सर्प यूँ तो संसार के प्रायः सभी भू-भागों और सभी स्थानों पर पाये जाते हैं, परन्तु उष्णकटिबन्ध के उष्ण जलवायु वाले और वन्य प्रदेशों में विशेषरूप से अधिक देखे जाते हैं।

संसार में सर्पों की लगभग 2500 प्रजातियाँ पायी जाती हैं। इनमें से लगभग 216 भारतवर्ष में पायी जाती हैं, जिनमें से मात्र 52 विषाक्त होती हैं।

भारतवर्ष में प्रति वर्ष लगभग दो लाख सर्पदंश की घटनाएँ घटित होती हैं, जिनमें से अनुमानतः 15,000 से 30,000 तक लोग मृत्यु का ग्रास बन जाते हैं। इनमें से कुछ तो सर्पदंश की आशंका या भय से ही मर जाते हैं। इस सम्बन्ध में चरक का शंका-विष (Fear of snake-bite) का वर्णन दर्शनीय है।

13.3 शंका विष (Imaginary Fear of Snake Bite)

आचार्य चरक के अनुसार

दुरन्धकारे विद्धस्य केनचिद्विषशंकया।
विषोद्वेगाज्ज्वरश्छर्दिर्मूर्च्छा दाहोऽपि वा भवेत्।।
ग्लानिर्मोहोऽतिसारश्चाप्येतच्छंकाविषं मतम्।

(च.चि. 23/221-222)

कभी-कभी घने अंधकार में जाते समय पैर में किसी काँटे आदि के गड़ जाने के कारण मनुष्य को भय हो जाता है कि उसे किसी जहरीले कीड़े ने काट लिया है। यदि यह भय साँप का हुआ तो और भी खतरनाक सिद्ध होता है। इस शंकायुक्त भयवेग के कारण उसके शरीर में विष के लक्षण प्रकट होने लगते हैं, यथा -

1. ज्वर (fever),
2. वमन (vomiting),
3. दाह (burning sensation),
4. ग्लानि (anxiety),
5. मोह (stupor)
6. अतिसार (diarrhea)

ये लक्षण पूर्णतः संवेगात्मक मनोविकृतिजन्य (psychogenic) होते हैं। इसी को विद्वानों ने शंकाविष की संज्ञा दी है।

13.4 सर्पांगाभिहत (Touch of Snake)

आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन

भीरोः सर्पांगसंस्पर्शाद् भयेन कुपितोऽनिलः।
कदाचित् कुरुते शोफं सर्पांगाभिहतं तु तत्।।

(अ.सं.उ. 41/36)

कभी-कभी किसी डरपोक आदमी में साँप के शरीर के स्पर्श मात्र से ही भय उत्पन्न हो जाता है। उसकी वायु कुपित हो जाती है और स्पर्श-स्थान पर शोथ हो जाता है। इसे सर्पांगाभिहत (touch of snake) कहते हैं। ये लक्षण भी पूर्णतः मनोजन्य होते हैं।

प्राचीन संहिताकारों ने विशेषरूप से आचार्य सुश्रुत ने साँपों के स्वरूप, उनकी प्रकृति और विष का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया है। आगे के पृष्ठों में उसी को संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

13.5 सर्प के पर्याय (Synonyms of Snake)

आचार्य नरहरि पण्डित ने 'राजनिघण्टु' के सिंहादिवर्ग में सर्प के निम्न पर्यायों का उल्लेख किया है-

1. दर्वीकर	2. द्विरसन	3. पातालनिलय
4. वली	5. नाग	6. काद्रवेय

Scanned with CamScanner

7. वक्रग	8. दन्दशूकक	9. चक्षुःश्रवा
10. विषधर	11. गूढ़ांघ्रि	12. कुण्डली
13. फणी	14. पन्नग	15. वायुभक्ष
16. भोगी	17. जिह्मग	18. सर्प
19. दंष्टधी	20. भुजंग	21. अहि
22. भुजग	23. सरीसृप	24. कञ्चुकी
25. दीर्घपुच्छ	26. द्विजिह्व	27. उरग

13.6 सर्प के भेदोपभेद (Classification of Snakes)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

असंख्या वासुकिश्रेष्ठा विख्यातास्तक्षकादयः।।
महीधराश्च नागेन्द्रा हुताग्निसमतेजसः।
ये चाप्यजस्रं गर्जन्ति वर्षन्ति च तपन्ति च।।
ससागरगिरिद्वीपा यैरियं धार्यते मही।
क्रुद्धा निःश्वासदृष्टिभ्यां ये हन्युरखिलं जगत्।।
नमस्तेभ्योऽस्ति नो तेषां कार्यं किञ्चिच्चिकित्सया।
ये तु दंष्ट्राविषा भौमा ये दशन्ति च मानुषान्।।
तेषां संख्यां प्रवक्ष्यामि यथावदनुपूर्वशः।
अशीतिस्त्वेव सर्पाणां भिद्यते पञ्चधा तु सा।।
दर्वीकरा मण्डलिनो राजिमन्तस्तथैव च।
निर्विषा वैकरञ्जाश्च त्रिविधास्ते पुनः स्मृताः।।
दर्वीकरा मण्डलिनो राजिमन्तश्च पन्नगाः।
तेषु दर्वीकरा ज्ञेया विंशतिः षट् च पन्नगाः।।
द्वाविंशतिर्मण्डलिनो राजिमन्तस्तथा दश।
निर्विषा द्वादश ज्ञेया वैकरञ्जास्त्रयस्तथा।।
वैकरञ्जोद्भवाः सप्त चित्रा मण्डलिराजिलाः।

(सु.क. 4/5-12)

1. दिव्य – जैसे वासुकि, तक्षक आदि पौराणिक सॉप; तथा
2. भौमिक – भूमि पर विचरने वाले। पुनः भौमिक सर्पों के पॉच मुख्य भेद माने गये हैं –

a. दर्वीकर, b. मण्डली,
c. राजिमान, d. निर्विष
e. वैकरञ्ज।

दर्वीकरा मण्डलिनो राजिमन्तस्तथैव च।
निर्विषा वैकरञ्जाश्च त्रिविधास्ते पुनः स्मृताः।।

(सु.क. 4/10)

सर्प भेद	संख्या
1. दर्वीकर	26
2. मण्डली	22
3. राजिमान्	10
4. निर्विष	12
5. वैकरञ्ज	3
6. वैकरञ्जोद्भव	7
कुल संख्या	80

वर्णभेदानुसार सर्प के प्रकार –

1. ब्राह्मण सर्प
2. क्षत्रिय सर्प
3. वैश्य सर्प
4. शूद्र सर्प

आचार्य चरक के अनुसार

इह दर्वीकरः सर्पो मण्डली राजिमानिति।
त्रयो यथाक्रमं वातपित्तश्लेष्मप्रकोपणाः।।

(च.चि. 23/123)

आचार्य चरक ने दर्वीकर, मण्डली और राजिमान – इन तीन भेदों का ही उल्लेख किया है। ये ही तीन विषैले सर्पों की श्रेणी में आते हैं।

दर्वीकर सर्प	मण्डली सर्प	राजिमान सर्प
वातप्रकोपक	पित्तप्रकोपक	कफप्रकोपक

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

दिव्यभौमविभागेन द्विविधाः पन्नगाः स्मृताः।
वासुकिस्तक्षकोऽनन्तः सगरः सागरालयः।।
तथा नन्दोपनन्दाद्याः समिद्धाग्निसमप्रभाः।
दिव्या गर्जन्ति वर्षन्ति द्योतन्ते द्योतयन्ति ते।।
धारयन्ति जगत्कृत्स्नं कुर्युः क्रुद्धाश्च भस्मसात्।
दृङ्निश्वासैर्नमस्तेभ्यो न तेष्वस्ति चिकित्सितम्।।
दवीर्करा मण्डलिनो राजीमन्तश्च पन्नगाः।
त्रिधा समासतो भौमा भिद्यन्ते ते त्वनेकधा।
व्यासतो योनिभेदेन नोच्यन्तेऽनुपयोगतः।।

(अ.सं.उ. 41/2-3)

आचार्य वृद्धवाग्भट सर्पों के दो प्रधान भेद मानते हैं –

1. **दिव्य** – जैसे वासुकि, तक्षक आदि पौराणिक सॉप; तथा
2. **भौमिक** – भूमि पर विचरने वाले।

Scanned with CamScanner

पुनः भौमिक सर्पों के पॉच मुख्य भेद माने गये हैं –

1. दर्वीकर,
2. मण्डली,
3. राजिमान,
4. निर्विष
5. वैकरञ्ज।

इनमें से दर्वीकर के 26, मण्डली के 22, राजिमान के 10, निर्विष के 12 और वैकरञ्ज के 3 उपभेद होते हैं। वैकरञ्ज और राजिमान के संयोगों से भी 7 प्रकार के सर्प उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार इनकी कुल संख्या 80 हुई।

आचार्य सुश्रुत और आचार्य वृद्धवाग्भट ने सभी 80 प्रकार के सॉपों का नामोल्लेख किया है। यथा –

तत्र, दर्वीकराः – कृष्णसर्पो, महाकृष्णः, कृष्णोदरः श्वेतकपोतो, महाकपोतो, बलाहको, महासर्पः, शंखकपालो, लोहिताक्षो, गवेधुकः, परिसर्पः, खण्डफणः, ककुदः, पद्मो, महापद्मो, दर्भपुष्पो, दधिमुखः, पुण्डरीको, भ्रूकुटीमुखो, विष्किरः, पुष्पाभिकीर्णो, गिरिसर्पः, ऋजुसर्पः, श्वेतोदरो, महाशिरा, अलगर्द, आशीविष इति (1); मण्डलिनस्तु- आदर्शमण्डलः, श्वेतमण्डलो, रक्तमण्डलः, चित्रमण्डलः, पृषतो, रोध्रपुष्पो, मिलिन्दको, गोनसो, वृद्धगोनसः, पनसो, महापनसो, वेणुपत्रकः, शिशुको मदनः, पालिन्दिरः, पिंगलः, तन्तुकः पुष्पपाण्डुः, षडंगो, अग्निको बभ्रुः, कषायः, कलुषः, पारावतो, हस्ताभरणः, चित्रकः, एणीपद इति (2); राजिमन्तस्तु – पुण्डरीको राजिचित्रो, अंगुलराजिः, बिन्दुराजिः, कर्दमकः, तृणशोषकः, सर्षपकः श्वेतहनुः, दर्भपुष्पश्चक्रको, गोधूमकः, किक्किसाद इति (3); निर्विषास्तु – गलगोली, शूकपत्रो, अजगरो, दिव्यको, वर्षाहिकः, पुष्पशकली, ज्योतीरथः, क्षीरिकापुष्पको, अहिपूतिको, अन्धाहिको, गौराहिको, वृक्षेशय इति (4); वैकरञ्जास्तु त्रयाणां दर्वीकरादीनां व्यतिकराज्जाताः, तद्यथा – माकुलिः, पोटगलः, स्निग्धराजिरिति। तत्र, कृष्णसर्पेण गोनस्यां वैपरीत्येन वा जातो माकुलिः; राजिलेन गोनस्यां वैपरीत्येन वा जातः पोटगलः; कृष्णसर्पेण राजिमत्यां वैपरीत्येन वा जातः स्निग्धराजिरिति। तेषामाद्यस्य पितृवद्विषोत्कर्षो, द्वयोर्मातृवदित्येके (5); त्रयाणां वैकरञ्जानां पुनिर्दिव्येलकरोध्रपुष्पकराजिचित्रकपोटगल पुष्पाभिकीर्णदर्भपुष्पवेल्लितकाः सप्त; तेषामाद्यास्त्रयो राजिलवत्, शेषा मण्डलिवत्, एवमेतेषां सर्पाणामशीति-र्व्याख्याता। (सु.क. 4/34(1-5))

S. No.	सर्प भेद	सर्प भेदों के नाम		
1.	दर्वीकर सर्प	1. कृष्णसर्प	10.गवेधुकः	19.भ्रूकुटीमुख
		2. महाकृष्णः	11.परिसर्पः	20.विष्किरः
		3. कृष्णोदरः	12.खण्डफणः	21.पुष्पाभिकीर्ण
		4. श्वेतकपोत	13.ककुदः	22.गिरिसर्पः
		5. महाकपोत	14.पद्म	23.ऋजुसर्पः
		6. बलाहक	15.महापद्म	24.श्वेतोदर
		7. महासर्पः	16.दर्भपुष्प	25.महाशिरा
		8. शंखकपाल	17.दधिमुखः	26.अलगर्द
		9. लोहिताक्ष	18.पुण्डरीक	27.आशीविष
2.	मण्डली सर्प	1. आदर्शमण्डलः	10.पनस	19.षडंग
		2. श्वेतमण्डल	11.महापनस	20.अग्निक
		3. रक्तमण्डलः	12.वेणुपत्रकः	21.बभ्रुः
		4. चित्रमण्डलः	13.शिशुक	22.कषायः
		5. पृषत	14.मदनः	23.कलुषः
		6. रोध्रपुष्प	15.पालिन्दिरः	24.पारावत
		7. मिलिन्दक	16.पिंगलः	25.हस्ताभरणः
		8. गोनस	17.तन्तुकः	26.चित्रकः
		9. वृद्धगोनसः	18.पुष्पपाण्डुः	27.एणीपद

Scanned with CamScanner

S. No.	सर्प भेद	सर्प भेदों के नाम		
3.	राजिमान् सर्प	1. पुण्डरीक	5. कर्दमकः	9. दर्भपुष्पः
		2. राजिचित्र	6. तृणशोषकः	10.चक्रक
		3. अंगुलराजिः	7. सर्षपकः	11.गोधूमकः
		4. बिन्दुराजिः	8. श्वेतहनुः	12.किक्किसाद
4.	निर्विष सर्प	1. गलगोली	5. वर्षाहिकः	9. अहिपताक
		2. शूकपत्र	6. पुष्पशकली	10.अन्धाहिक
		3. अजगर	7. ज्योतीरथः	11.गौराहिक
		4. दिव्यक	8. क्षीरिकापुष्पक	12.वृक्षेशय
5.	वैकरञ्ज सर्प	1. माकुलिः	2. पोटगलः	3. स्निग्धराजि
6.	वैकरञ्जोद्भव सर्प	1. दिव्येलक	4. पोटगल	6. दर्भपुष्प
		2. रोध्रपुष्पक	5. पुष्पाभिकीर्ण	7. वेल्लितक
		3. राजिचित्रक		

दर्वीकर, मण्डली और राजिमान के सर्वाधिक विषाक्त होने के कारण आगे के पृष्ठों में उन्हीं का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

13.7 दर्वीकर, मण्डली और राजिमान की पहचान (Physical Appearance of Darvikara, Mandali and Rajimana)

आचार्य चरक मतेन

दर्वीकरः फणी ज्ञेयो मण्डली मण्डलाफणः।
बिन्दुलेखविचित्रांगः पन्नगः स्यात्तु राजिमान्।।

(च.चि. 23/125)

- फणवाले सर्पों को फणी या दर्वीकर कहते हैं।
- जिन सर्पों का फण मण्डलाकार होता है, उन्हें मण्डली कहते हैं।
- जो सर्प बिन्दु-बिन्दु चिह्न वाले होते हैं, वे राजिमान कहलाते हैं।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

दर्वीकर सर्प -

रथांगलांगलच्छत्रस्वस्तिकांकुशधारिणः।
ज्ञेया दर्वीकराः सर्पाः फणिनः शीघ्रगामिनः।।

(सु.क. 4/22)

- शिरोभाग (hood) पर रथांग (चक्रम्), लांगल (हल), छत्र, स्वस्तिक, अंकुश के सदृश निशान से युक्त।
- फणयुक्त।
- तेज भागने वाले।

मण्डली सर्प -

मण्डलैर्विविधैश्चित्राः पृथवो मन्दगामिनः।
ज्ञेया मण्डलिनः सर्पा ज्वलनार्कसमप्रभाः।।

(सु.क. 4/23)

- नाना प्रकार के मण्डलों से चित्रित।
- भारी शरीर वाले।
- मन्द गति वाले।
- अग्नि-सूर्य प्रभायुक्त।

राजिमान सर्प -

स्निग्धा विविधवर्णाभिस्तिर्यगूर्ध्वं च राजिभिः।
चित्रिता इव ये भान्ति राजिमन्तस्तु ते स्मृताः।।

(सु.क. 4/24)

- स्निग्ध।
- विविध वर्ण की तिर्यक् एवं ऊर्ध्व रेखाओं वाले।
- चित्रित-से।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

रथांगलांगलच्छत्रस्वस्तिकांकुशधारिणः।
फणिनः शीघ्रगतयः सर्पा दर्वीकराः स्मृताः।।
ज्ञेया मण्डलिनोऽभोगा मण्डलैर्विविधैश्चिताः।
प्रांशवो मन्दगमनाः राजीमन्तस्तु राजिभिः।
स्निग्धा विचित्रवर्णाभिस्तिर्यगूर्ध्वं च चित्रिताः।।

(अ.सं.उ. 41/6-8)

- **दर्वीकर सर्प** - चक्र, हल, छत्र, स्वस्तिक और अंकुश का चिह्न धारण करने वाले, फणयुक्त और शीघ्रगामी होते हैं।

Scanned with CamScanner

- **मण्डली सर्प** – नाना प्रकार के मण्डलों से चित्रित, चपटे, मन्द गति वाले तथा अग्नि और सूर्य के समान कान्तिवाले होते हैं।
- **राजिमान सर्प** – चिकनी, नाना वर्णों की तिरछी एवं ऊर्ध्वगामी रेखाओं से युक्त और चित्रित होते हैं।
- चिह्न आदि सॉपों के फण और पृष्ठ भाग पर ही पाये जाते हैं।

13.8 उक्त सर्पों का विचरण काल (Time of Outing)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

रजन्याः पश्चिमे यामे सर्पाश्चित्राश्चरन्ति हि।
शेषेषूक्ता मण्डलिनो दिवा दर्वीकराः स्मृताः।।

(सु.क. 4/31)

राजिमान सर्प रात्रि के पिछले प्रहर में, मण्डली रात्रि के पहले, दूसरे और तीसरे प्रहर में तथा दर्वीकर दिन में विचरण करते हैं।

दर्वीकर सर्प	मण्डली सर्प	राजिमान सर्प
• दिन में	• रात्रि के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय प्रहर में	• रात्रि के चतुर्थ प्रहर में

13.9 विष का रस और वीर्य तथा उसकी दोषप्रकोपकता (Rasa, Virya and Dosha Aggravating Nature of Visha)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

कोपयन्त्यनिलं जन्तोः फणिनः सर्व एव तु।
पित्तं मण्डलिनश्चापि कफं चानेकराजयः।।

अपत्यमसवर्णाभ्यां द्विदोषकरलक्षणम्।
ज्ञेयौ दोषैश्च दम्पत्यो।। (सु.क. 4/29-30)

फणा वाले सभी सर्प काटने पर व्यक्ति में वायु को प्रकुपित करते हैं, मण्डली सर्प पित्त को तथा अनेक राजिमान् कफ को प्रकुपित करते हैं। असमान वर्ण वाले सर्प और सर्पिणी की सन्तान जो 'वैकरञ्ज' कहलाती है, के काटने पर दो दोषों के लक्षण – उनके माता-पिता के अनुसार – उत्पन्न होते हैं।

आचार्य चरक के अनुसार

विशेषादूक्षकटुकमम्लोष्णं स्वादु शीतलम्।
विषं यथाक्रमं तेषां तस्माद्वातादिकोपनम्।।

(च.चि. 23/126)

तीन प्रकार के सर्पों में दर्वीकार सर्प का विष विशेषरूप से रूक्ष और कटु होने से वातप्रकोपक, मण्डली का विष विशेषतः अम्ल और उष्ण होने से पित्तप्रकोपक और राजिमान का विष मधुर एवं शीतल होने से कफप्रकोपक होता है।

	दर्वीकर सर्प	मण्डली सर्प	राजिमान सर्प
दोषप्रकोप	वात	पित्त	कफ
विष के गुण	रूक्ष + कटु	अम्ल + उष्ण	मधुर + शीतल

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

विशेषादूक्षकटुकमम्लोष्णं स्वादु शीतलम्।
विषं दर्वीकरादीनां क्रमाद्वातादिकोपनम्।।

(अ.सं.उ. 41/4)

- दर्वीकर सर्पों का विष कटु रसवाला और रूक्ष होने के कारण वायु को प्रकुपित करता है।
- मण्डली सॉपों का विष अम्लरस और उष्णवीर्य होने के कारण पित्त को प्रकुपित करता है।
- राजिमान सर्पों का विष मधुर रस और शीतवीर्य होने के कारण कफ को प्रकुपित करता है।

13.10 विषाक्तता पर अवस्था और ऋतु का प्रभाव (Effect of Age and Season on Poisoning)

आचार्य चरक के अनुसार

तरुणाः कृष्णसर्पास्तु गोनसाः स्थविरास्तथा।
राजिमन्तो वयोमध्ये भवन्त्याशीविषोपमाः।।

(च.चि. 23/135)

कृष्णवर्णीय सर्प युवावस्था (adolescene) में, गोनस या मण्डली सर्प वृद्धावस्था (old age) में और राजिमान् सर्प अपनी आयु की मध्यमावस्था (adult) में अधिक विषैले हो जाते हैं और उनकी दृष्टि और फुफकार से ही विष का प्रभाव होने लगता है।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

दर्वीकरास्तु तरुणा वृद्धा मण्डलिनस्तथा।
राजिमन्तो वयोमध्या जायन्ते मृत्युहेतवः।। (सु.क. 4/32)

दर्वीकर सर्प तरुणावस्था में, मण्डली सर्प वृद्धावस्था में और राजिमान् सर्प मध्यम आयु में जब होते हैं तो इनके दंश से मृत्यु हो जाती है।

Scanned with CamScanner

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

तारुण्यमध्यवृद्धत्वे वृष्टिशीतातपेषु च।
विषोल्बणा भवन्त्येते व्यन्तरा ऋतुसन्धिषु।।

(अ.सं.उ. 41/5)

दर्वीकर सॉप तरुणावस्था और वर्षाकाल में, मण्डली सॉप मध्यम वय और शीतकाल में तथा राजिमान सर्प वृद्धावस्था और ग्रीष्मकाल में अत्यधिक विषाक्त होते हैं।

13.11 सॉपों का जीवन क्रम और जीवनावधि (Lifestyle and Lifespan of Snakes)

सॉपों के जीवन-क्रम और जीवनावधि का आचार्य वृद्धवाग्भट ने बड़े ही विस्तार के साथ वर्णन किया है। ये वर्णन न केवल रुचिकर और ज्ञानवर्धक, प्रत्युत तत्कालीन विष-वैद्यों के गहन अध्ययन एवं पैनी दृष्टि की ओर भी इंगित करते हैं। इस प्रकार के निष्कर्ष सूक्ष्म निरीक्षण और प्रायोगिक अध्ययन के बिना सम्भव नहीं प्रतीत होते। आज भी उन्हें सत्यापित करने की आवश्यकता है।

यथा –

प्रायेणर्तुमती मासं ज्येष्ठं तिष्ठति पन्नगी।
आषाढे सर्पसंयोगादण्डानां मासि कार्तिके।
द्वे शते विंशति द्वे च सा सूते तत्र जायते।।

कर्केतनसवर्णेऽण्डे समुद्भिन्ने भुजंगमः।।

दीर्घलोहितराजीभिश्चित्रे योषिन्नपुंसकम्।
शिरीषपुष्पसदृशे दंष्टधः सर्पस्य सप्तमे।
चतस्रः सम्भवन्त्यह्नि विषं तासु चतुर्दशे।।

वामाधराऽसिता पीता तदूर्ध्वा दक्षिणा त्वधः।
रक्ता श्यावोत्तरैकद्विचित्रचतुर्विषबिन्दुकाः।।

ता क्रमान्मुद्गमात्रोऽत्र बिन्दुरेष हि भोगिनाम्।
विषे विकल्पनान्येषां विद्याद्दंष्टधस्तथाऽपराः।
चत्वारिंशद्भुजंगस्य निर्विषाश्चतुरुत्तराः।।

आयुर्वर्षशतं विंशं पञ्चवर्षशतायुषः।

(अ.सं.उ. 41/12-15)

- सर्पिणी प्रायः ज्येष्ठ मास में ऋतुमती होती है, आषाढ़ में उसका सॉप से संयोग होता है और कार्तिक मास में वह 240 अण्डे देती है।
- कर्केतन मणि की आभा वाले अण्डों के फूटने पर उसमें से नर सॉप; लम्बी और लाल रेखा वाले अण्डों के फूटने से उसमें से मादा सर्पिणियॉ तथा शिरीष पुष्प के समान अण्डों के फूटने से उसमें से नपुंसक सॉप निकलते हैं।
- सॉपों के जन्म के सातवें दिन इनमें चार दाढ़ें निकलती हैं और चौदहवें दिन इनमें विष का प्रादुर्भाव हो जाता है।
- नीचे की वाम पार्श्व की दाढ़ काली और इसके ऊपर की दाढ़ पीली होती है।
- नीचे के दक्षिण भाग की दाढ़ लाल और उसके ऊपर की श्याव वर्ण की होती है।
- काली दाढ़ में विष की एक बूँद, पीली में 2 बूँद, लाल में 3 बूँद और श्याव में 4 बूँदें होती हैं।
- यहॉ बूँद का अभिप्राय मूँग के दाने के बराबर मात्रा से है।
- सॉपों में दूसरी 44 दाढ़ें होती हैं, परन्तु उनमें विष नहीं होता।
- सॉपों की औसत आयु 120 वर्ष की होती है। कुछ 500 वर्षों तक भी जीवित रहते हैं।

13.12 लिंगभेद की पहचान (Sex Differences)

आचार्य चरक के अनुसार

वृत्तभोगो महाकायः श्वसन्नूर्ध्वेक्षणः पुमान्।
स्थूलमूर्धा समांगश्च स्त्री त्वतः स्याद्विपर्ययात्।।
क्लीबस्त्रसति। (च.चि. 23/130-131)

- **पुरुष सर्प** →पुरुष सर्पगोल फणवाला, विशाल शरीर वाला, फुफकारते रहने वाला, ऊपर की ओर देखने वाला, मोटे शिरवाला तथा समस्त शरीर एक समान स्थूल दीखने वाला होता है।
- **स्त्री सर्प** →स्त्री सर्प पुरुष सर्प के लक्षणों से विपरीत लक्षणों वाले होते हैं।
- **नपुंसक सर्प** →नपुंसक सर्प डरा-डरा-सा रहता है।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

तत्र महानेत्रजिह्वास्यशिरसः पुमांसः, सूक्ष्मनेत्रजिह्वास्य-शिरसः स्त्रियः, उभयलक्षणा मन्दविषा अक्रोधा नपुंसका इति।। (सु.क 4/35)

- **पुरुष सर्प** →पुरुष सर्पों की ऑखें, जीभ, मुख और शिर आकार में बड़े होते हैं।
- **स्त्री सर्प** →स्त्री सर्पों के नेत्र, मुख, जीभ और शिर आकार में छोटे होते हैं।
- **नपुंसक सर्प** →नपुंसक सर्पों में दोनों प्रकार के लक्षण पाये जाते हैं और ये अल्प विष वाले और क्रोधरहित होते हैं।

Scanned with CamScanner

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

तत्रोर्ध्वदृङ्महाकायनेत्रजिह्वाशिरः स्वरः।
व्यक्तभोगः पुमान् धीरः स्त्री स्यात्तस्माद्विपर्यये।।

आयता चपला क्लीबः सुकुमारो जडाकृतिः।
मन्दवेगस्वनक्रोधः सिताभस्तिर्यशीर्षकः।।

(अ.सं.उ. 41/16)

- **पुरुष सर्प** →सॉपों में ऊर्ध्व-दृष्टि (ऊपर की ओर देखनेवाले), बड़े आकार, बड़ी ऑखें, बड़ी जिह्वा, उच्च स्वर और स्पष्ट फणवाले सर्प नर होते हैं।
- **स्त्री सर्प** → इसके विपरीत लक्षणों वाली मादा सर्पिणियॉ होती हैं।
- **नपुंसक सर्प** →आयताकार, चपल, कोमल, जड़ के आकार के, मन्दवेगी, शब्द द्वारा ही क्रोध को व्यक्तकरनेवाले तथा श्वेताभ और तिरछे सिर वाले नपुंसक होते हैं।

लिंगभेदानुसार विष की प्रबलता
(Intensity of poison - according to sex differences)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

दिनत्रियामासन्ध्यासु प्रबलास्ते यथाक्रमम्।
तदैव चापराध्यन्ति सर्वदैव तु पन्नगी।। (अ.सं.उ. 41/17)

नर सॉप दिन में, मादा रात्रि में और नपुंसक संध्याकाल में प्रबल होते हैं। ये ही इनके काटने के समय होते हैं। सर्पिणी कभी भी काट सकती है।

13.13 सर्पों में भी वर्णभेद
(Caste Based Classification Among Snakes)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

मुक्तारूप्यप्रभा ये च कपिला ये च पन्नगाः।
सुगन्धयः सुवर्णाभास्ते जात्या ब्राह्मणाः स्मृताः।।

क्षत्रियाः स्निग्धवर्णास्तु पन्नगा भृशकोपनाः।
सूर्यचन्द्राकृतिच्छत्रलक्ष्म तेषां तथाऽम्बुजम्।।

कृष्णा वज्रनिभा ये च लोहिता वर्णतस्तथा।
धूम्राः पारावताभाश्च वैश्यास्ते पन्नगाः स्मृताः।।

महिषद्वीपिवर्णाभास्तथैव परुषत्वचः।
भिन्नवर्णाश्च ये केचिच्छूद्रास्ते परिकीर्तिताः।।

(सु.क. 4/25-28)

	ब्राह्मण सर्प	क्षत्रिय सर्प	वैश्य सर्प	शूद्र सर्प
स्वरूप	• प्रभा (कान्ति) मोती एवं चॉदी के समान • रंग में कपिल • सुगन्ध युक्त • देखने में सुन्दर	• स्निग्ध वर्ण • अत्यन्त क्रोधी • सूर्य-चन्द्र की आकृति के • छत्र, शंख या कमल की तरह के चिह्नों से युक्त	• काले रंग के वज्र (हीरे) के समान • लोहित वर्ण • धूम्र और कपोत के रंग के	• भैंस, चित्रव्याघ्र वर्ण के • खुरदरी खाल वाले • कई भिन्न-भिन्न रंगों के

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

ब्राह्मणाः क्रोधना नीलकपिलाः श्वेतलोहिताः।
रक्तास्याः पिंगनयना मेध्यदेशविचारिणः।।

भोगे यज्ञोपवीतादिद्विजचिह्नोपचिह्निताः।
बिल्वपुष्पहिमोशीरपद्मगुग्गुलुगन्धयः।।

क्षत्रिया मानिनो धीरा रक्ताक्षा भृशकोपनाः।
पक्वजाम्बवखर्जूरद्राक्षाभिन्नाञ्जनप्रभाः।।

भोगेऽर्द्धचन्द्रश्रीवत्सशंखचक्रहलांकिताः।
जातीचम्पकपुन्नागपत्रजोंगकगन्धयः।।

वैश्याः पारावताभासा वज्रगोमेदकप्रभाः।
बिन्दुमण्डलचित्रांगा धूम्रपाटललोहिताः।
बस्तकुष्ठाविकक्षीरसर्पिषां गन्धतः समाः।।

शूद्राः सवर्णा गोधूममहिषद्विपकर्दमैः।
बिन्दुरेखाचिता रूक्षाः सुराशोणितगन्धयः।।

(अ.सं.उ. 41/21-24)

1. **ब्राह्म सर्प के लक्षण**→ ब्राह्मण सर्प क्रोधी, नील, कपिल, लोहित या श्वेत वर्ण के; लाल मुख और पिंगल (धूसर) ऑखों वाले, पवित्र स्थान में विचरनेवाले और फण पर यज्ञोपवीत आदि द्विजातियों के चिह्न धारण करनेवाले होते हैं। इनके शरीर से बिल्व पुष्प, चन्दन, खस, कमल अथवा गुग्गुल की-सी गन्ध आती है।
2. **क्षत्रिय सर्प के लक्षण**→ क्षत्रिय सर्प अभिमानी, धीर, लाल ऑखों वाले और अत्यधिक क्रोधी होते हैं। ये देखने में पके हुए जामुन, खजूर, द्राक्षा या टूटे हुए अंजन के समान होते हैं। फण पर अर्धचन्द्र, शंख, चक्र या हल का चिह्न

Scanned with CamScanner

रहता है। शरीर से चमेली, चम्पा, नागकेसर, तेजपत्र अथवा अगरु की-सी गन्ध आती है।

3. **वैश्य सर्प के लक्षण** → वैश्य वर्ण के सर्प कबूतर के समान हीरा या गोमेद की-सी कान्तिवाले, शरीर पर बिन्दु या मण्डल से युक्त तथा धूसर, लाल या गहरे लाल रंग के होते हैं। इनके शरीर से कूठ, बकरी या भेड़ के दूध और घी की-सी गन्ध आती है।

4. **शूद्र सर्प के लक्षण**→ शूद्र वर्ण के सर्प भैंस, हाथी अथवा कीचड़ के से रंगवाले, बिन्दु और रेखा से युक्त तथा रूक्ष होते हैं। इनके शरीर से मद्य अथवा रक्त की-सी गन्ध आती है।

13.14 वर्ण भेदानुसार विचरणकाल (Schedule for Movement - as per the Caste)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

पूर्वमध्यापराह्णेषु चरन्ति ब्राह्मणादयः।
अस्तंगते रवौ शूद्राः .....।। (अ.सं.उ. 41/25)

ब्राह्मण सर्प अपराह्न में, क्षत्रिय मध्याह्न में, वैश्य अपराह्ण में तथा शूद्र सूर्यास्त के बाद विचरण करते हैं।

सॉपों के वर्ण को दंशस्थान से आनेवाली गन्ध से पहचानना चाहिए।

13.15 वर्णभेदानुसार दोष प्रकोपकता (Dosha Aggravation - as per the Caste of Snakes)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

विप्रास्त्रीनप्यनिलपूर्वकान्।
कोपयन्ति क्रमाद्दोषांस्त्रींस्त्रयः क्षत्रियादयाः।।
(अ.सं.उ. 41/24)

ब्राह्मण वर्ण के सॉपों का विष तीनों दोषों को, क्षत्रिय का वात को, वैश्य का पित्त को और शूद्र का विष कफ को प्रकुपित करता है।

सर्पदंश के हेतु (Causes of Snake Bite)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

पादाभिमृष्टा दुष्टा वा क्रुद्धा ग्रासार्थिनोऽपि वा।।
ते दशन्ति महाक्रोधास्त्रिविधं भीमदर्शनाः।
(सु.क. 4/13-14)

1. पैरों के नीचे दब जाने से
2. स्वभावतः दुष्ट प्रकृति का होने से
3. क्रुद्ध (किसी भी कारण से) होने से और
4. ग्रासार्थी अर्थात् भोजन की इच्छा से।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

आहारार्थं भयात्पादस्पर्शादतिविषात्क्रुधः।
पापवत्ततया वैराद्देवर्षियमचोदनात्।
दशन्ति सर्पास्तेषूक्तं विषाधिक्यं यथोत्तरम्।।
(अ.सं.उ. 41/27)

सॉप

1. आहार के लिए,
2. पैर का स्पर्श होने अथवा दब जाने के कारण भय से,
3. विष की अधिकता से व्याकुल होकर,
4. क्रुद्ध होने के कारण,
5. पाप वृत्ति से,
6. बदला लेने के लिए, अथवा
7. देवता, ऋषि या यम के आदेश से किसी प्राणी को डसता है।

इन दंशों में उत्तरोत्तर विष की अधिकता रहती है।

13.16 सर्पदंश के भेद (Classification of Snake Bite)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

सर्पितं रदितं चापि तृतीयमथ निर्विषम्।।
सर्पांगाभिहतं केचिदिच्छन्ति खलु तद्विदः।।
(सु.क. 4/14)

आचार्य सुश्रुत ने दंश के तीन भेद बतलाये हैं -

1. सर्पित,
2. रदित
3. निर्विष।

सर्पित सर्पदंश के लक्षण -

पदानि यत्र दन्तानामेकं द्वे वा बहूनि वा।
निमग्नान्यल्परक्तानि यान्युद्धृत्य करोति हि।।
चञ्चुमालकयुक्तानि वैकृत्यकरणानि च।
संक्षिप्तानि सशोफानि विद्यात्तत् सर्पितं भिषक्।।
(सु.क. 4/15-16)

सर्पदंश में यदि निम्नलिखित चिह्न एवं लक्षण उपस्थित हो तो चिकित्सक उसे 'सर्पित' दंश समझे-

- सर्पदंश के पश्चात् जब दॉतों को बाहर निकालता है तो वहॉ पर दॉतों के एक, दो या बहुत-से निशान रह जाते हैं; ये

Scanned with CamScanner

निशान गहरे (निमग्नानि) (deep), अल्परक्तयुक्त (with minimal bleeding), चञ्चुमाला की तरह दिखने वाले, विकृति लाने वाले, सूक्ष्म (small/tiny) और शोफ (oedema) युक्त होते हैं।

रदित सर्पदंश के लक्षण -

राज्यः सलोहिता यत्र नीलाः पीताः सितास्तथा।
विज्ञेयं रदितं तत्तु ज्ञेयमल्पविषं च तत्।। (सु.क. 4/17)

त्वचा में जिस दंशस्थल पर लोहित(redish), नील(bluish), पीत(yellowish) तथा श्वेत(whitish) रेखायें हों वह 'रदित' दंश समझना चाहिए। इसमें विषाक्तता अल्प होती है।

निर्विष सर्पदंश के लक्षण -

अशोफमल्पदुष्टासृक् प्रकृतिस्थस्य देहिनः।
पदं पदानि वा विद्यादविषं तच्चिकित्सकः।।

(सु.क. 4/18)

यदि दंश के एक या अनेक निशान (पदम् -marks) हों, शोफ (oedema) और दुष्ट रक्त अल्प हों और रोगी स्वस्थ अनुभव करता हो तो चिकित्सक को उसे 'निर्विष' समझना चाहिए।

सर्पित सर्पदंश के लक्षण	रदित सर्पदंश के लक्षण	निर्विष सर्पदंश के लक्षण
1. सर्प दंश के पश्चात् जब दाँतों को बाहर निकालता है तो वहाँ पर दाँतों के एक, दो या बहुत-से निशान रह जाते हैं; ये निशान → अ. गहरे, ब. अल्परक्तयुक्त, क. चञ्चुमाला की तरह दीखने वाले, ड. विकृति लाने वाले इ. सूक्ष्म और फ. शोफ युक्त	1. लोहित, नील, पीत तथा सफेद रेखाओं से युक्त 2. अल्प विषाक्तता से युक्त	1. एक या अनेक निशान वाले 2. अशोफयुक्त 3. अल्प प्रमाण में रक्तदुष्टि 4. रोगी स्वस्थ अनुभव करता हो

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

यत्र लालापरिक्लेदमात्रं गात्रे प्रदृश्यते।
न तु दंष्ट्राकृतं दंशं तत्तुण्डाहतमादिशेत्।।
एकं दंष्ट्रापदं द्वे वा व्यालीढाख्यमशोणितम्।
दंष्ट्रापदे सरक्ते द्वे व्यालुप्तं त्रीणि तानि तु।।
मांसच्छेदादविच्छिन्नरक्तवाहीनि दष्टकम्।
दंष्ट्रापदानि चत्वारि तद्वद्दष्टनिपीडितम्।।

(अ.सं.उ. 41/30)

आचार्य वृद्धवाग्भट ने दंश के पाँच भेद बतलाये हैं -

1. तुण्डाहत,
2. व्यालीढ,
3. व्यालुप्त,
4. दष्टक
5. दंष्ट्रानिपीडित।

ये आचार्य सुश्रुत की अपेक्षा अधिक सुस्पष्ट और विस्तृत हैं। अतः पहले इन्हीं का विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. **तुण्डाहत** - यह दंश छिछला एवं सतही होता है। इसमें दंश-स्थान पर लाला से गीलापन मात्र दीखता है। दंश या दाँत का कोई चिह्न नहीं होता।
2. **व्यालीढ** - यह दंश भी सतही होता है। दंश-स्थान पर एक या दो दाँतों क चिह्न तो होते हैं, परन्तु उनसे रक्त नहीं आता। इसका तात्पर्य यह हुआ कि दंश का रक्त से सम्बन्ध नहीं हो पाता।

   वृद्धवाग्भट के उक्त दोनों भेद सुश्रुत के निर्विष के अन्तर्गत आ जाते हैं। सुश्रुत ने निर्विष के निम्न लक्षण बतलाये हैं - यदि दंश-स्थान पर शोथ कम हो, रक्त भी कम दूषित हुआ हो और रोगी अपेक्षाकृत स्वस्थ दिखलाई दे तो दंश-स्थान पर एक या अधिक दाँतों के निशान होने पर भी उसे निर्विष जानना चाहिए।
3. **व्यालुप्त** - यह दंश प्रथम दो दंशों की अपेक्षा कुछ गहरा होता है। इसमें दो दाँतों के चिह्न और रक्त का किंचित् रिसाव पाया जाता है।
4. **दष्टक** - यह दंश व्यालुप्त की अपेक्षा गम्भीर होता है। इसमें दंशस्थान पर तीन दाँतों के चिह्न तथा मांस के कट

Scanned with CamScanner

जाने के कारण रक्त का अनवरत रिसाव देखने को मिलता है।

सर्पदंश के रक्त में प्रवेश से विषाक्तता की सम्भावना बढ़ जाती है। वृद्धवाग्भट के उक्त दोनों भेद सुश्रुतोक्त रदित के अन्तर्गत आते हैं। रदित के उन्होंने निम्न लक्षण बतलाए हैं - दंश-स्थान पर लाल, नीली, पीली या श्वेत रेखाएँ। इसे उन्होंने अल्प विषवाला कहा है।

5. **दंष्ट्रानिपीडित** - यह दंश सर्वाधिक गम्भीर होता है। इसमें चार दाँतों के निशान और उनसे अनवरत रक्तस्राव के लक्षण पाये जाते हैं।

इसे आचार्य सुश्रुत ने सर्पित की संज्ञा दी है, जिसमें साँप अपने पूरे वेग के साथ काटता है। उन्होंने विस्तार के साथ इसके निम्न लक्षण बतलाये हैं - जब दंश स्थान पर एक-दो या अधिक दाँतों के चिह्न गहराई तक गये मालूम हों, जैसा कि साँप काटते समय उलटकर बनाता है; और उनसे रक्त आ रहा हो, एवं चुञ्चुमालकयुक्त विकार उत्पन्न करनेवाला सूक्ष्म शोफ हो तो उसे सर्पित कहते हैं।

आचार्य वाग्भट ने इनमें से प्रथम दो अर्थात् तुण्डाहत और व्यालीढ को निर्विष और अन्तिम अर्थात् दंष्ट्रानिपीडित को असाध्य कहा है।

13.17 अवस्था विशेष से साँपों की अल्पविषाक्तता (Factors Producing Decrease in Poisonousness)

आचार्य चरक के अनुसार

भीतमत्ताबलोष्णक्षुत्तृषार्ते वर्धते विषम्।
विषं प्रकृतिकालौ च तुल्यौ प्राप्याल्पमन्यथा।।

वारिविप्रहताः क्षीणा भीता नकुलनिर्जिताः।
वृद्धा बालास्त्वचो मुक्ताः सर्पा मन्दविषाः स्मृताः।।

(च.चि. 23/162)

आचार्य चरक के अनुसार उन व्यक्तियों में सर्पविष का वेग वृद्धि को प्राप्त होता है जो डरे होते हैं, पागल होते हैं, निर्बल होते हैं, उष्णता से त्रस्त होते हैं, और क्षुधा-तृष्णा से पीड़ित होते हैं। इसी प्रकार जब विष के समान ही मनुष्य की प्रकृति हो और काल भी विषप्रभाव के तुल्य हो, तो भी विष का वेग वृद्धि को प्राप्त होता है। जब विष की प्रकृति से भिन्न प्रकृति का मनुष्य दंश का शिकार होता है और काल एवं ऋतु भी भिन्न प्रकृति के होते हैं तो विष का वेग क्षीणता या ह्रास को प्राप्त होता है तथा विष अधिक प्रभावी नहीं होता है।

जो सर्प जल में रहने वाले होते हैं, जो दुर्बल होते हैं और कृश होते हैं, जो डरपोक होते हैं, जो युद्ध में नकुल (नेवला) से पराजित हुए होते हैं, जो वृद्ध होते हैं और जो अपनी केचुल छोड़ चुके होते हैं, वे मन्दविष वाले होते हैं।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

व्याधितोद्विग्नदष्टानि ज्ञेयान्यल्पविषाणि तु।
तथाऽतिवृद्धबालाभिदष्टमल्पविषं स्मृतम्।।

सुपर्णदेवब्रह्मर्षियक्षसिद्धनिषेविते।
विषघ्नौषधियुक्ते च देशे न क्रमते विषम्।।

नकुलाकुलिता बाला वारिविप्रहताः कृशाः।
वृद्धा मुक्तत्वचो भीताः सर्पास्त्वल्पविषाः स्मृताः।।

(सु.क. 4/20-21 एवं 33)

यदि सर्प व्याधिग्रस्त या उद्विग्न हो तो तथा अतिवृद्ध और अतिबाल अवस्था में हो तो सर्प का दंश अल्पविष वाला होता है। गरुड़, देव, ब्रह्मर्षि, यक्ष, सिद्ध इनके स्थान में तथा ऐसे स्थान में जहाँ विषघ्न औषधियाँ उपलब्ध होती हैं वहाँ पर हुआ सर्पदंश अल्पविष वाला होता है अथवा उसका विषाक्त प्रभाव नहीं होता है। नकुलप्रताड़ित, जलप्रवाह आदि से ग्रस्त, बाल्यावस्था वाले, शारीरिक दृष्टि से दुर्बल, वृद्ध सर्प, जिन्होंने कञ्चुक (scales) त्याग दी है और जो डरे हुए हैं उनमें विष की मात्रा अल्प ही होती है।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

जलाप्लुता रतिक्षीणा भीता नकुलनिर्जिताः।
शीतवातातपव्याधिक्षुत्तृष्णा श्रमपीड़िताः।।

तूर्णं देशान्तरायाता विमुक्तविषकञ्चुकाः।
कुशौषधीकण्टकवद्ये चरन्ति च काननम्।।

देशं च विद्याध्युषितं सर्पास्तेऽल्पविषा मताः।।

(अ.सं.उ. 41/47)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार जल में डूबे, सम्भोग से क्षीण, भयभीत-नकुल आदि से परास्त; शीत, वायु, धूप, रोग, भूख, प्यास, थकान आदि से पीड़ित; शीघ्र ही दूसरे देश (प्रदेश) से आव्रजित, तुरन्त ही विष-केंचुल त्यागनेवाले, विषघ्नी विद्या (महामायूरी आदि) से अध्युषित स्थान में रहनेवाले तथा कुशा-औषधि (विषघ्नी औषधियों) तथा कँटीली झाड़ियों के प्रदेश में रहनेवाले साँप अल्पविषवाले होते हैं।

आचार्य सुश्रुत ने इनमें अति वृद्ध, अति बाल, उद्विग्न और रोगी सर्पों का भी समावेश किया है। सम्भवतः इनमें विष अल्प मात्रा में और अल्प वीर्यवाला होता है, इसीलिए काटने पर कम चढ़ता है।

Scanned with CamScanner
Scanned with CamScanner

13.18 सॉपों की उग्र विषाक्तता (Intense Poisonousness of Snakes)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

श्मशानचैत्यवल्मीकयज्ञाश्रमसुरालये।
चतुष्पथे जलस्थाने जीर्णोद्यानेषु कोटरे।।
क्षीरिद्रुमे निम्बतरौ निर्झरे गिरिगह्वरे।
चक्रवज्रगदाकुन्तत्रिशूलांकजटाधराः।।
रक्तास्यनयना ये च ते स्युराशीविषोपमाः।
न तेषां कालनियमो न च वेगेष्वनुक्रमः।।
मन्त्रतन्त्रबलान्नापि प्रसह्य विनिवर्त्तनम्
उपहारनमस्कारजपशान्तिपरायणः।
कश्चिज्जीवति तैर्दष्टो विरूपो विकलोऽपि वा।।

(अ.सं.उ. 41/48)

आचार्य वृद्धवाग्भट ने इसे **आशीविष** की संज्ञा दी है। आशी का शाब्दिक अर्थ होता है - विषदन्त या गरल। आशी विष से उनका तात्पर्य ऐसे विष से है जो तत्काल और निश्चित् रूप से प्रभावी होता है। उनके अनुसार शमशान, चैत्य, बॉबी, यज्ञशाला, मन्दिर, चौराहे, जल-स्थान, पुराने बाग, कोटर, बरगद आदि क्षीरी वृक्षों, नीम के वृक्ष, झरने तथा पर्वत की कंदराओं में रहनेवाले, जिनके शरीर (विशेषरूप से फण) पर चक्र, वज्र, गदा, माला अथवा त्रिशूल का चिह्न अंकित हो; जटायुक्त, लाल ऑखों और लाल मुखवाले सर्प आशीविष के समान अर्थात् अत्यधिक तीव्र विषैले होते हैं। इनके दंश के लिए समय का कोई प्रतिबन्ध नहीं। इनके काटे की कोई चिकित्सा नहीं। तन्त्र - मन्त्र - बलि - उपहार आदि सब व्यर्थ जाते हैं। रोगी किसी प्रकार बच भी जाता है तो वह विरूप अथवा विकलांग होकर जीता है।

13.19 सर्पदंश के सामान्य लक्षण (General Symptoms of Snake Bite)

स्थानीय लक्षण

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

दंशस्तु सविषः सर्वः सशोफो वेदनान्वितः।
तुद्यते ग्रथितः किञ्चित् कण्डूमान् दह्यते भृशम्।।

(अ.सं.उ. 41/35)

- सविष दंश के लक्षण → दंशस्थान पर शोथ (edema at site), वेदना (pain), चुभन (pricking sensation), गॉठ (swellings) और खुजली (itching) होती है; अत्यधिक तीव्र दाह (profuse burning sensation) जैसे वहॉ पर किसी ने जलता हुआ अंगारा रख दिया हो, ऐसा प्रतीत होता है।
- निर्विष दंश के लक्षण→ इन लक्षणों के अभाव में दंश को निर्विष समझना चाहिए।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

विषं हि निशितनिस्त्रिंशाशनिहुतवहदेश्यमाशुकारि मुहूर्त-मप्युपेक्षितमातुरमतिपातयति, न चावकाशोऽस्ति वाक्समूहमुपसर्तुं प्रत्येकमपि दष्टलक्षणेऽभिहिते सर्वत्र त्रैविध्यं भवति, तस्मात् त्रैविध्यमेव वक्ष्यामः; एतध्ध्यातुरहितमसंमोहकरं च, अपि चात्रैव सर्वसर्प-व्यञ्जनावरोधः।। (सु.क. 4/36)

आचार्य सुश्रुत ने शरीर में सर्पविष के प्रसार की गति की तुलना तलवार के वार, बिजली और अग्नि की तीव्रगामिता और व्यापकता से की है। उनके अनुसार मुहूर्त मात्र की उपेक्षा से रोगी के प्राण संकट में पड़ सकते हैं। कभी-कभी तो उसे मुँह खोलने तक का समय नहीं मिलता।

आचार्य चरक, आचार्य सुश्रुत और आचार्य वृद्धवाग्भट तीनों ने तीनों ही प्रकार के स्थानीय एवं सॉपों के विष के सार्वदैहिक लक्षणों का पृथक्-पृथक् निर्देश किया है। यथा -

आचार्य चरक के अनुसार

विशेषादूक्षकटुकमम्लोष्णं स्वादु शीतलम्।
विषं यथाक्रमं तेषां तस्माद्वातादिकोपनम्।।
दर्वीकरकृतो दंशः सूक्ष्मदंष्ट्रापदोऽसितः।
निरुद्धरक्तः कूर्माभो वातव्याधिकरो मतः।।
पृथ्वर्पितः सशोथश्च दंशो मण्डलिना कृतः।
पीताभः पीतरक्तश्च सर्वपित्तविकारकृत्।।

(च.चि. 23/126-128)

	दर्वीकर सर्प	मण्डली सर्प	राजिमान सर्प
दोषप्रकोप (aggravation of dosha)	वात	पित्त	कफ
विष के गुण (qualities of visha)	रूक्ष + कटु	अम्ल + उष्ण	मधुर + शीतल

Scanned with CamScanner

	दर्वीकर सर्प	मण्डली सर्प	राजिमान सर्प
दंश के लक्षण (symptoms of bite)	• सूक्ष्म एवं असित • निरुद्धरक्त • कूर्माभ	• पृथु • शोथयुक्त • पीताभ • पीतरक्त.	• पिच्छिल • स्थिरशोफयुक्त • स्निग्ध • पाण्डु • सान्द्र रक्त

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

दर्वीकर सर्पदंश के लक्षण -

तत्र, दर्वीकरविषेण त्वङ्नयननखदशनवदनमूत्रपुरीष-दंशकृष्णत्वं रौक्ष्यं शिरसो गौरवं सन्धिवेदना कटीपृष्ठग्रीवादौर्बल्यं जृम्भणं वेपथुः स्वरावसादो घुर्घुरको जडता शुष्कोद्गारः कासश्वासौ हिक्का वायोरूर्ध्वगमनं शूलोद्वेष्टनं तृष्णा लालास्रावः फेनागमनं स्रोतोऽवरोधस्तास्ताश्च वातवेदना भवन्ति।

(सु.क 4/37)

1. त्वचा, ऑखें, नाखून, दॉत, मुख, मूत्र, पुरीष और दंश (bite) का रंग कृष्णवर्ण (blackish discoloration) होना
2. शरीर में रूक्षता (dryness)
3. शिर में भारीपन (heaviness)
4. सन्धियों में वेदना (arthralgia)
5. कमर, पीठ और ग्रीवा में दुर्बलता (weakness in waist, back and neck)
6. जम्भाइयॉ आना (yawning)
7. शरीर में कम्प (tremors)
8. स्वरभंग (hoarseness of voice)
9. गले में घुर-घुर शब्द होना (gurgling sound in neck)
10. शरीर का जकड़ जाना (stiffness)
11. सूखे डकार आना (dry belching)
12. कास (cough)
13. श्वास (dyspnea)
14. हिक्का (hiccough)
15. वायु का ऊपर की ओर गमन (misperistalsis)
16. शूल के कारण ऐंठन होना (cramps)
17. तृष्णा (thirst)
18. लालास्राव (salivation)
19. मुख से झाग आना (frothing through oral cavity)
20. स्रोतों का अवरोध (obstruction of bodily channels)
21. तोदन-भेदनादि वातवेदनाएँ (numerous types of pain/ colic etc.)।

मण्डली सर्पदंश के लक्षण-

मण्डलिविषेण त्वगादीनां पीतत्वं शीताभिलाषः परिधूपनं दाहस्तृष्णा मदो मूर्च्छा ज्वरः शोणितागमनमूर्ध्वमधश्च मांसानामवशातनं श्वयथुर्दंशकोथः पीतरूपदर्शन-माशुकोपस्तास्ताश्च पित्तवेदना भवन्ति। (सु.क. 4/37)

1. त्वचा आदि का रंग पीला पड़ना (yellowish discoloration)
2. ठण्डी वस्तुओं की अभिलाषा (craving for cold articles)
3. सारे शरीर में जलन (generalized burning sensation)
4. दाह (burning sensation - localized)
5. तृष्णा (thirst)
6. मद (intoxication)
7. मूर्च्छा (fainting)
8. ज्वर (hyperpyrexia)
9. ऊर्ध्व और अधो मार्गों से रक्तस्राव (hemorrhage)
10. मांस का अवशातन (putrefaction of muscle tissues)
11. शोथ (edema)
12. दंशस्थान का गलना (putrefaction/ gangrene at the site)
13. रोगी को सभी वस्तुएँ पीली नजर आना (yellowish colored vision)
14. क्रोध शीघ्र आना (short temperedness)
15. ओष-चोषादि पित्तजन्य वेदनाएँ (pain with burning sensation etc.)।

Scanned with CamScanner

राजिमान सर्पदंश के लक्षण -

राजिमद्विषेण शुक्लत्वं त्वगादीनां शीतज्वरो रोमहर्षः स्तब्धत्वं गात्राणामादंशशोफः सान्द्रकफप्रसेकश्छर्दिरभीक्ष्णमक्ष्णोः कण्डूः कण्ठे श्वयथुर्घुर्घुरक उच्छ्वासनिरोधस्तमः- प्रवेशस्तास्ताश्च कफवेदना भवन्ति।। (सु.क. 4/37)

1. त्वचा आदि का रंग सफेद पड़ जाना (whitish discoloration)
2. ठण्ड लगकर ज्वर होना (fever with chills)
3. रोमाञ्च (horripilation)
4. स्तब्धता (stiffness)
5. दशंस्थल का सूज जाना (edema at the site)
6. गाढ़े कफ का आना (thick mucus)
7. वमन (vomiting)
8. ऑखों में बार-बार कण्डू होना (itching in eyes)
9. कण्ठ में सूजन (edema in throat region)
10. आवाज में घुर्घुराहट (hoareseness of voice)
11. उच्छ्वास में रुकावट (difficulty in breathing)
12. अन्धकार से घिरने जैसी प्रतीति होना (black outs)
13. कण्डू आदि श्लैष्मिक वेदनाएँ (itching etc.)।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

तत्र दंशः फणावताम्।
कूर्मपृष्ठोन्नतो रूक्षः सूक्ष्मदंष्ट्रापदान्वितः।।
विकाराः श्यावतावक्त्रनखमूत्राक्षिविट्त्वचाम्।
शीतज्वरः सन्धिरुजा निद्रानाशो विजृम्भिका।।
मन्यास्तम्भः सिराध्मानं पृष्ठकट्यस्थिवाग्ग्रहाः।
शिरोगुरुत्वमरुचिः कासश्वासौ हनुग्रहः।।
शूलमुद्वेष्टनं कोष्ठे शोषरोधौ मलाश्रयौ।
सन्दिग्धवाक्त्वं नैश्चेष्ट्यं मृतस्येव विसंज्ञता।।
फेनलालोद्गमौ हिध्मा कण्ठे घुरघुरायणम्।
शुष्कोद्गारो मुहुश्चैते वातजाश्चापरे गदाः।।
दंशो मण्डलिनां सोष्मा सशोषः पीतलोहतः।
पृथुर्विसर्पदाहोषाक्लेदकोथैर्विशीर्यते।।
विकारा वक्त्रदन्तादिपीतता तृट् श्रमो भ्रमः।
दाहो मूर्च्छा ज्वरस्तिक्तवक्त्रत्वं पीतदर्शनम्।।
रक्तागमनमूर्ध्वाक्षः शीतेच्छा धूमको मदः।
आशु सर्वांगविसृतिर्गदास्त्वेते च पित्तजाः।।
दंशो राजीमतां स्निग्धः स्थिपिच्छिलशोफकृत्।
सान्द्रास्रः शिशिरः पाण्डुस्तद्विकाराः शिरोव्यथा।।
अरुचिश्छर्दिरालस्यं हृल्लासो मधुरास्यता।
कण्ठे घुरघुरः पाको कण्डूरक्ष्णोर्हिमो ज्वरः।।
मृच्छधदुच्छ्वसनं निद्रा कासः श्वेतनखादिता।
स्तम्भो गुरुत्वं चांगानां नासिकाक्षिमुखस्रुतिः।
रोमहर्षस्तमश्वासो रोगाश्चाऽन्ये कफोद्भवाः।।
(अ.सं.उ. 41/36-38)

दर्वीकर सर्पविष के लक्षण -

→ दंशस्थान कछुए की पीठ के समान ऊपर को उठा हुआ, काला, रूक्ष और दंष्ट्राओं के सूक्ष्म चिह्नों से युक्त होता है। त्वचा, नख, नेत्र, दॉत, मुख, मल-मूत्र - सभी काले पड़ जाते हैं। रूक्षता, सिर में भारीपन, सन्धियों में वेदना; कटि, पृष्ठ और ग्रीवा में दुर्बलता; जम्भाई, कम्पन, स्वरभंग, गले में घुरघुराहट, जड़ता, सूखे उद्गार (डकारें), कास, श्वास, हिचकियॉ, ऊर्ध्ववात, शूल, ऐंठन, प्यास, लालास्राव, मुँह से फेन आना, स्रोतों का अवरोध और वातजन्य अन्य नाना प्रकार की वेदनाएँ होती हैं।

मण्डली सर्पविष के लक्षण -

→ दंशस्थान पीले-लाल वर्णवाला, कुछ सूजा, चपटी और फैलनेवाली सूजन, दाह, ओष (तीव्र जलन), क्लेद से युक्त और सड़नेवाला होता है। मुख, नेत्र, मल, मूत्र, नख तथा दॉत पीले पड़ जाते हैं। प्यास, थकान, चक्कर आना, दाह, मूर्च्छा, ज्वर, मुख में तिक्तता, सभी चीजें पीली दीखना; मुख, नाक, कान, मूत्रमार्ग तथा गुदद्वार से रक्तस्राव; शीत की चाह, धुएँ के-से उद्गार और मद के लक्षण होते हैं। विष शरीर में शीघ्रता से फैलता है तथा अन्य पित्तजन्य लक्षण भी दिखलाई पड़ते हैं।

राजिमान सर्पविष के लक्षण -

→ दंशस्थान चिकना, स्थिर, पिच्छिल, और शोफयुक्त होता है। इसमें रक्त घट्ट, ठण्डा और पाण्डु वर्ण का होता है। सिरदर्द, वमन, अरुचि, आलस्य, जी मितलाना, मुख में मधुरता, कण्ठ में घुरघुराहट, गले का जकड़ना, ऑखों में कण्डू, शीतज्वर, श्वासावरोध, निद्रा, कास; नख-मल-मूत्र-त्वचा तथा ऑखों में सफेदी; जड़ता, अंगों में भारीपन; नासिका, मुख और ऑखों से स्राव; रोमांच, तमकश्वास तथा कफजन्य अन्य लक्षण प्रकट होते हैं।

इन्हीं लक्षणों के अन्तर्गत सभी प्रकार के सर्पों के विष के लक्षण आ जाते हैं -

अपि चात्रैव सर्वसर्पव्यञ्जनावरोधः। (सु.क 4/36)

Scanned with CamScanner

आगे आचार्यों द्वारा भिन्न लिंग और भिन्न अवस्था आदि वाले सर्प-विषों के अलग - अलग विशिष्ट लक्षणों का भी निर्देश किया गया है।

13.20 पुरुषादि सर्प भेदों के दंश के लक्षण (Signs of Snake Bite - as per Sex etc.)

पुरुषाभिदष्ट ऊर्ध्वं प्रेक्षते, अधस्तात् स्त्रिया सिराश्चोत्तिष्ठन्ति ललाटे, नपुंसकाभि- दष्टस्तिर्यक्प्रेक्षी भवति, गर्भिण्या पाण्डुमुखो ध्मातश्च, सूतिकया कुक्षिशूलार्तः सरुधिरं मेहत्युपजिह्विका चास्य भवति, ग्रासार्थिनाऽन्नं कांक्षति, वृद्धेन चिरान्मन्दाश्च वेगाः, बालेनाशु मृदवश्च, निर्विषेणाविषलिंगं, अन्धाहिके- नान्धत्वमित्येके, ग्रसनात् अजगरः शरीरप्राणहरो न विषात्। तत्र सद्यः - प्राणहराहिदष्टः पतति शास्त्राशनिहत इव भूमौ, स्रस्तांगः स्वपिति।। (सु.क. 4/38)

- पुरुष सर्प के द्वारा दष्ट व्यक्ति ऊपर की ओर देखता है
- स्त्री-सर्प से दष्ट व्यक्ति नीचे की ओर देखता है और उसके माथे पर सिराएँ उभर आती हैं
- नपुंसक सर्प से दष्ट व्यक्ति तिरछा (तिर्यक्) देखता है
- गर्भिणी सर्पिणी से दष्ट व्यक्ति का मुख पाण्डुवर्ण और फूला हुआ (ध्मात) होता है
- प्रसूता सर्पिणी से दष्ट व्यक्ति कुक्षिशूल से पीड़ित होता है तथा रुधिर युक्त मूत्र त्याग करता है और उसे उपजिह्विका नामक रोग (सु.नि. 16/39) हो जाता है
- ग्रासार्थी (क्षुधार्त) सर्प द्वारा काटा व्यक्ति अन्न की कामना करता है
- वृद्ध-सर्प द्वारा दष्ट व्यक्ति में विष का प्रभाव मन्द और चिरकाल में होता है
- बालक सर्प दंश के विष का प्रभाव शीघ्र पर मृदु होता है
- निर्विष सर्प के दंश में विष के लक्षण अनुपस्थित होते हैं
- अन्धाहि या जलविलशायी सर्प के काटने पर व्यक्ति अन्धा हो जाता है
- अजगर यदि किसी को निगल लेता है तो प्राणनाश होता है, विष से नहीं।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

. . . . . दष्टः पुंसोर्ध्वमीक्षते।
प्रक्षिपेद्दक्षिणं पादं पूर्वकायसमुद्यतः।।
धीरोऽल्पवेगः शर्वर्याम् . . . . .। (अ.सं.उ. 41/40)

रोगी ऊपर की ओर ताकता और शरीर के ऊपर के भाग को सीधा रखकर तथा दाहिने पैर पर जोर देकर चलता है। धीर होता है। रात्रि में विष का वेग मन्द होता है।

13.20.1 सर्पिणी के विष का लक्षण -

आचार्य चरक के अनुसार

अधोदृष्टिः स्वरहीनः प्रकम्पते।
स्त्रिया दष्टो।। (च.चि. 23/131)

सर्पिणी द्वारा दष्ट व्यक्ति नीचे की ओर देखता रहता है, वह स्वरहीन (loss of voice) हो जाता है एवं काँपता है।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

अधस्तात् स्त्रिया सिराश्चोत्तिष्ठन्ति ललाटे।
(सु.क. 4/38)

स्त्री सर्प से दष्ट व्यक्ति नीचे की ओर देखता है और उसके माथे पर सिरायें उभर आती हैं।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

विपरीतस्तु योषिता।
हीनस्वरोऽतिसारार्त्तः कम्पते त्रस्यते ज्वरी।।
(अ.सं.उ. 41/40)

रोगी नीचे की ओर देखता है। अधो भाग पर बल देते हुए बायें पैर पर जोर देकर चलता है। माथे पर शिरायें उभर आती हैं। दिन में वेग मन्द रहता है। स्वर बैठ जाता है। ज्वर और अतिसार के लक्षण प्रकट होते हैं।

13.20.2 नपुंसक सर्पविष के लक्षण -

आचार्य चरक के अनुसार

व्यामिश्रलिंगैरेतैस्तु क्लीबदष्टं नरं वदेत्।
(च.चि. 23/132)

नपुंसक सर्प के दंश में स्त्री-पुरुष दोनों के दंश लक्षण मिलते हैं।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

नपुंसकाभिदष्टस्तिर्यक्प्रेक्षी भवति। (सु.क. 4/38)

यदि काटने वाला सर्प नपुंसक हो तो व्यक्ति तिरछा (तिर्यक्) देखता है।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

नपुंसकेन तिर्यग्दृगधीरः प्रियमैथुनः।
बहुवादी च ....।। (अ.सं.उ. 41/41)

रोगी तिरछा और पार्श्व में देखता है। अधीर, मैथुन-प्रिय एवं अधिक वाचाल होता है।

Scanned with CamScanner

13.20.3 गर्भवती सर्पिणी के विष के लक्षण -

आचार्य चरक के अनुसार

पाण्डुवक्त्रस्तु गर्भिण्या शूनौष्ठोऽप्यसितेक्षणः।

(च.चि. 23/133)

गर्भिणी सर्पिणी के काटे हुए व्यक्ति का वक्त्र (face) पाण्डुवर्णीय हो जाता है, ओष्ठ शून (शोथयुक्त) हो जाते हैं, और नेत्र काले पड़ जाते हैं।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

गर्भिण्या पाण्डुमुखो ध्मातश्च। (सु.क. 4/38)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार रोगी का मुख पाण्डूवर्ण का एवं शोथयुक्त हो जाता है।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

. . . . गर्भिण्या कृष्णजिह्वदृक्।
जृम्भा क्रोधोपजिह्वार्त्तः स शूनोष्ठः सिताननः।
गुरूदरः शिरोरोगी . . . . . ।। (अ.सं.उ. 41/41)

वृद्धवाग्भट के अनुसार रोगी की जिह्वा तथा नेत्र काले हो जाते हैं। जम्भाई आती है, ओठ सूख जाते हैं, मुख श्वेत हो जाता है, उदर में भारीपन और शिरोरोग के अन्य लक्षण प्रकट होते हैं। क्रोध अधिक आता है।

13.20.4 प्रसूता के विष के लक्षण -

आचार्य चरक के अनुसार

जृम्भाक्रोधोपजिह्वार्तः सूतया रक्तमूत्रवान्।।

(च.चि. 23/133)

उदरशूल, रक्तमिश्रित मूत्र, सूई की-सी चुभन और उपजिह्विका के अन्य रोग-लक्षण प्रकट होते हैं।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

सूतिकया कुक्षिशूलार्तः सरुधिरं मेहत्युपजिह्विका चास्य भवति। (सु.क. 4/38)

13.20.5 वृद्ध सर्पविष के लक्षण -

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

वृद्धेन चिरान्मन्दाश्च वेगाः। (सु.क. 4/38)

वृद्ध सर्प द्वारा दष्ट व्यक्ति में विष का प्रभाव मन्द और चिरकाल में होता है।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

वृद्धेन चिरान्मन्दाश्च वेदनाः। (अ.सं.उ. 41/41)

विष देर से चढ़ता है और वेदना होती है।

13.20.6 बाल सर्पविष के लक्षण -

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

बालेनाशु मृदवश्च। (सु.क. 4/38)

यदि सर्प बालक हो तो विष का प्रभाव शीघ्र किन्तु मृदु होता है।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

बालेन शीघ्रं तीक्ष्णाश्च । (अ.सं.उ. 41/41)

बाल सर्प में विष जल्दी चढ़ता है, किन्तु वेग मन्द होता है।

13.20.7 अन्धे सर्प के विष के लक्षण -

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

अन्धाहिकेनान्धत्वमित्येके। (सु.क. 4/38)

आचार्य सुश्रुत के कथनानुसार कुछ लोगों का मत है कि अन्धे सॉप के काटने से व्यक्ति अन्धा हो जाता है।

13.20.8 अजगर द्वारा ग्रसित -

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

ग्रसनात् अजगरः शरीरप्राणहरो न विषात्।

(सु.क. 4/38)

अजगर अपने शिकार को चारों ओर से लपेट कर और दबाव से पतला बनाकर निगल जाता है। ग्रसित प्राणी की मृत्यु उसके विष से नहीं प्रत्युत दबाव, भय और घुटन से हो सकती है।

13.20.9 निर्विष सर्प से दंशित -

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

निर्विषेणाविषलिंगम्। (सु.क. 4/38)

व्यक्ति में कोई लक्षण प्रकट नहीं होते। यदि थोड़े-बहुत होते भी हैं तो मात्र भय एवं आशंका के कारण।

13.20.10 प्राणहर सर्प से दंशित -

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

तत्र सद्यः - प्राणहराहिदष्टः पतति शास्त्राशनिहत इव भूमौ, स्रस्तांगः स्वपिति। (सु.क 4/38)

तीव्र जहरीले सॉपों के काटने पर रोगी शस्त्र या वज्राहत के समान तुरन्त भूमि पर गिर जाता है, अंग-प्रत्यंग शिथिल हो जाते हैं और वह गहरी नींद में सो जाता है।

Scanned with CamScanner

13.21 सर्पविष के वेग (Impetuosity of Snake Poison)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

वेगानां रक्तमांसाद्याः सप्तोक्ताः पूर्वमाश्रयाः।।

(अ.सं.उ. 41/42)

सर्प का विष जैसे-जैसे रक्त से मांस, मेद, मज्जा आदि धातुओं में प्रवेश करता जाता है, वैसे ही वैसे तत्तत् वेगों के लक्षण प्रकट होते जाते हैं। आचार्यों ने इस सन्दर्भ में भी तीनों प्रकार के सॉपों के वेग-लक्षणों का पृथक्-पृथक् निर्देश किया है। इन्हें आगे की सारिणी में देखा जा सकता है।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

दर्वीकर सर्प

1. **प्रथम वेग -**

तत्र, दर्वीकराणां प्रथमे वेगे विषं शोणितं दूषयति, तत् प्रदुष्टंकृष्णतामुपैति,तेनकाष्ण्यंपिपीलिकापरिसर्पणमिव चांगे भवति। (सु.क. 4/39)

- दर्वीकर सर्प दंश के प्रथम वेग में रक्त दूषित (vitiate) होता है और दूषित हो जाने पर इसका वर्ण कृष्ण (blackish) हो जाता है जिससे दष्ट पुरुष के शरीर का वर्ण कृष्ण (black) हो जाता है और उसको शरीर पर पिपीलिका/चीटियों (ants) के चलने जैसी प्रतीति होने लगती है।

2. **द्वितीय वेग -**

द्वितीये मांसं दूषयति, तेनात्यर्थं कृष्णता शोफो ग्रन्थयश्चांगे भवन्ति। (सु.क. 4/39)

- दर्वीकर सर्प दंश के द्वितीय वेग में मांस दूषित होता है जिससे शरीर का वर्ण अत्यधिक कृष्ण (profusely blackish), शोफ (oedema) और अंग में ग्रन्थियॉ (boils/ cysts) हो जाती है।

3. **तृतीय वेग -**

तृतीये मेदो दूषयति, तेन दंशक्लेदः शिरोगौरवं स्वेदश्चक्षुर्ग्रहणं च। (सु.क. 4/39)

- दर्वीकर सर्प दंश के तृतीय वेग में मेदोधातु की दुष्टि होती है जिससे दंशस्थान में क्लेद (गीलापन, स्राव -discharge), शिर में भारीपन (heaviness of head), स्वेद (diphoresis), नेत्रों के कार्य में अवरोध (disturbed vision) होता है।

4. **चतुर्थ वेग -**

चतुर्थे कोष्ठमनुप्रविश्य कफप्रधानान् दोषान् दूषयति, तेन तन्द्राप्रसेकसन्धिविश्लेषा भवन्ति। (सु.क. 4/39)

- दर्वीकर सर्पदंश के चतुर्थ वेग में विष कोष्ठ में प्रविष्ट होकर कफबहुल रचनाओं (organs/ sites) को दूषित करता है जिससे तन्द्रा (lassitude), प्रसेक (profuse salivation) और सन्धिविश्लेष (laxity of joints) होता है।

5. **पञ्चम वेग -**

पञ्चमेऽस्थीन्यनुप्रविशति प्राणमग्निं च दूषयति, तेन पर्वभेदो हिक्का दाहश्च भवति। (सु.क. 4/39)

- दर्वीकर सर्प दंश के पञ्चम वेग में विष अस्थियों में प्रविष्ट होकर प्राण और अग्नि को दूषित कर देता है जिससे पर्वभेद (arthralgia), हिक्का (hiccough) और दाह (burning sensation) ये लक्षण उत्पन्न होते हैं।

6. **षष्ठ वेग -**

षष्ठे मज्जानमनुप्रविशति ग्रहणीं चात्यर्थं दूषयति, तेन गात्राणां गौरवमतीसारो हृत्पीडा मूर्च्छा च भवति।

(सु.क. 4/39)

- दर्वीकर सर्पदंश के षष्ठ वेग में विष मज्जा में प्रविष्ट हो जाता है और ग्रहणी को अत्यधिक दूषित कर देता है। परिणामस्वरूप गात्रगौरव (heaviness of body parts), अतिसार (diarrhoea), हृदय में पीड़ा (cardiac pain) और मूर्च्छा (fainting/ syncope) ये लक्षण उत्पन्न होते हैं।

7. **सप्तम वेग -**

सप्तमे शुक्रमनुप्रविशति व्यानं चात्यर्थं कोपयति कफं च सूक्ष्मस्रोतोभ्यः प्रच्यावयति, तेन श्लेष्मवर्तिप्रादुर्भावः कटीपृष्ठभंगः सर्वचेष्टाविघातो लालास्वेदयोरतिप्रवृत्तिरुच्छ्वास- निरोधश्च भवति। (सु.क. 4/39)

- दर्वीकर सर्पदंश के सप्तम वेग में विष शुक्रधातु में प्रविष्ट हो जाता है और यह विष सर्वशरीरव्यापि 'व्यानवायु' को अतिदूषित कर देता है और कफ को सूक्ष्म स्रोतों से बाहर निकालता है जिससे श्लेष्मवर्तियों का प्रादुर्भाव होता है, कटी (waist) और पृष्ठ (back) भंग (dislocate) हो जाते हैं, सभी चेष्टायें (movements) नष्ट हो जाती हैं, लालास्राव (salivation) और स्वेद (sweat) अधिक आता है और श्वासावरोध (respiratory arrest) होता है।

Scanned with CamScanner

मण्डली सर्प

1. **प्रथम वेग -**

मण्डलिनां प्रथमे वेगे विषं शोणितं दूषयति, तत् प्रदुष्टं पीततामुपैति, तत्र परिदाहः पीतावभासता चांगानां भवति। (सु.क. 4/39)

- मण्डली सर्पदंश के प्रथम वेग में विष रक्त को दूषित करता है जिससे रोगी का वर्ण पीत (yellowish) हो जाता है और सर्वांग में परिदाह (burning sensation) और पीताभ वर्णता (yellowish discoloration) हो जाता है।

2. **द्वितीय वेग -**

द्वितीये मांसं दूषयति, तेनात्यर्थं पीतता परिदाहो दंशे श्वयथुश्च भवति। (सु.क. 4/39)

- मण्डली सर्पदंश के द्वितीय वेग मेंमांसधातु दूषित होती है और दंशस्थल पर अत्यन्त पीतता (excessive yellowish discoloration), परिदाह (excessive burning sensation) और दंशस्थान पर शोथ (oedema at the site of bite) उत्पन्न होता है।

3. **तृतीय वेग -**

तृतीये मेदो दूषयति, तेन पूर्ववच्चक्षुर्ग्रहणं तृष्णा दंशक्लेदः स्वेदश्च। (सु.क. 4/39)

- मण्डली सर्पदंश के तृतीय वेग में मेदोधातु की दुष्टि होती है और इससे पूर्व की तरह चक्षुर्ग्रहण (disturbed visual activities), तृष्णा (thirst), दंश स्थान पर क्लेद (discharge from the site of bite) तथा स्वेद (sweating) ये लक्षण उत्पन्न होते हैं।

4. **चतुर्थ वेग -**

चतुर्थे कोष्ठमनुप्रविश्य ज्वरमापादयति। (सु.क. 4/39)

- मण्डली सर्पदंश के चतुर्थ वेग मेंविष कोष्ठ प्रविष्ट होकर ज्वर (pyrexia/ fever) को उत्पन्न करता है।

5. **पञ्चम वेग -**

पञ्चमे परिदाहं सर्वगात्रेषु करोति। (सु.क. 4/39)

- मण्डली सर्पदंश के पञ्चम वेग मेंसम्पूर्ण शरीर में परिदाह (burning sensation) होता है।

6. **षष्ठ वेग -**

षष्ठसप्तमयोः पूर्ववत्। (सु.क. 4/39)

- मण्डली सर्पदंश के षष्ठ वेग मेंलक्षण दर्वीकर सर्प के समान लक्षण उत्पन्न होते हैं अर्थात् विष षष्ठ वेग में मज्जा में प्रविष्ट हो जाता है और ग्रहणी को अत्यधिक दूषित कर देता है। परिणामस्वरूप गात्रगौरव (heaviness of body parts), अतिसार (diarrhoea), हृदय में पीड़ा (cardiac pain) और मूर्च्छा (fainting/ syncope) ये लक्षण उत्पन्न होते हैं।

7. **सप्तम वेग -**

षष्ठसप्तमयोः पूर्ववत्। (सु.क. 4/39)

- मण्डली सर्पदंश के सप्तम वेग मेंलक्षण दर्वीकर सर्पविष के समान होते हैं अर्थात् विष सर्वशरीरव्यापि 'व्यानवायु' को अतिदूषित कर देता है और कफ को सूक्ष्म स्रोतों से बाहर निकालता है जिससे श्लेष्मवर्तियों का प्रादुर्भाव होता है, कटी (waist) और पृष्ठ (back) भंग (dislocate) हो जाते हैं, सभी चेष्टायें (move-ments) नष्ट हो जाती हैं, लालास्राव (salivation) और स्वेद (sweat) अधिक आता है और श्वासावरोध (respiratory arrest) होता है।

राजिमान सर्प

1. **प्रथम वेग -**

राजिमतां प्रथमे वेगे विषं शोणितं दूषयति तत् प्रदुष्टं पाण्डुतामुपैति, तेन रोमहर्षः शुक्लावभासश्च पुरुषो भवति। (सु.क. 4/39)

- राजिमान् सर्पदंश के प्रथम वेग मेंविष रक्त को दूषित कर देता है जिससे पाण्डुता (pallor) हो जाती है तथा रोमहर्ष (horripilation) और शरीर में शुक्लावभासता (whitish discoloration) आ जाता है।

2. **द्वितीय वेग -**

द्वितीये मांसं दूषयति, तेन पाण्डुताऽत्यर्थं जाड्यं शिरःशोफश्च भवति। (सु.क. 4/39)

- राजिमान् सर्पदंश के द्वितीय वेग मेंविष मांसधातु को दूषित कर देता है जिससे रोगी में अत्यधिक पाण्डुवर्णता (profuse pallor) उत्पन्न हो जाता है; साथ ही जाड्य (stiffness) और शिरःशोफ (swelling of head region) ये लक्षण उत्पन्न होते हैं।

3. **तृतीय वेग -**

तृतीये मेदो दूषयति, तेन चक्षुर्ग्रहणं दंशक्लेदः स्वेदो घ्राणाक्षिस्रावश्च भवति। (सु.क. 4/39)

- राजिमान् सर्पदंश के तृतीय वेग में मेदोधातु की दुष्टि होती है; इसके कारण रोगी में चक्षुर्ग्रहण (loss of visual

Scanned with CamScanner

function), दंशस्थान पर क्लेद (secretion from site of bite), स्वेद (sweating) तथा घ्राणस्राव (nasal discharge) और अक्षिस्राव (lacrimation) ये लक्षण उत्पन्न होते हैं।

4. **चतुर्थ वेग –**

चतुर्थे कोष्ठमनुप्रविश्य मन्यास्तम्भं शिरोगौरवं चापादयति। (सु.क. 4/39)

- राजिमान् सर्पदंश के चतुर्थ वेग में विष कोष्ठ को प्राप्त होकर मन्यास्तम्भ (torticollis) और शिरोगौरव (heaviness of head) ये लक्षण उत्पन्न करता है।

5. **पञ्चम वेग –**

पञ्चमे वाक्संगं शीतज्वरं च करोति। (सु.क. 4/39)

- राजिमान् सर्पदंश के पञ्चम वेग में विष वाक्संग (loss of speech) और शीतज्वर (fever with chills) ये लक्षण उत्पन्न करता है।

6. **षष्ठ वेग –**

पूर्ववदिति।। (सु.क. 4/39)

- राजिमान् सर्पदंश के षष्ठ वेग में लक्षण दर्वीकर सर्पविष के समान होते हैं।

7. **सप्तम वेग –**

पूर्ववदिति।। (सु.क. 4/39)

- राजिमान् सर्पदंश के सप्तम वेग में लक्षण दर्वीकर सर्पविष के समान होते हैं।

S. No.	वेग संख्या	दर्वीकर (वातप्रकोपक)	मण्डली (पित्तप्रकोपक)	राजिमान (कफप्रकोपक)
1.	प्रथम वेग (विष का रक्त में प्रवेश)	रक्त दूषित और काला, मुख, नख, त्वचा आदि में कालिमा, शरीर पर चीटियों के चलने की-सी प्रतीति।	रक्त पीला, अंगों में पीलापन और दाह।	रक्त पीतश्वेत वर्णी, अंगों में पाण्डुता।
2.	द्वितीय वेग (विष का मांस में प्रवेश)	मांस दूषित, अतिशय कृष्णता, सूजन और अंगों में गाँठें।	अतिशय पीलापन, दाह और दंशस्थान में सूजन।	अतिशय पाण्डुता, जड़ता और सिर में सूजन।
3.	तृतीय वेग (विष का मेद में प्रवेश)	मेद धातु दूषित, दंश स्थान में सड़न-गलन, सिर में भारीपन तथा दृष्टि-हानि।	दंशस्थान पर सड़ना, स्वेद और प्यास।	दंशस्थान का सड़ना, अन्धत्व, स्वेदागम नासिका, नेत्र तथा मुख से स्राव।
4.	चतुर्थ वेग (विष का कोष्ठ में प्रवेश)	कोष्ठगत कफ दूषित, मुख से लालास्राव, वमन, सन्धियों की शिथिलता और तन्द्रा।	ज्वर और दाह।	सिर में भारीपन और मन्यास्तम्भ।
5.	पञ्चम वेग (विष का अस्थि में प्रवेश)	प्राण और अग्नि दूषित, फलतः पर्व-सन्धियों में शिथिलता, दाह और हिक्का।	सभी अंगों में दाह।	वाणी का अवरोध और शीतज्वर।
6.	षष्ठ वेग (विष का मज्जा में प्रवेश)	ग्रहणी (पित्तधराकला) अत्यधिक दूषित, फलतः हृदय में पीड़ा, शरीर में भारीपन, मूर्च्छा, अविपाक और अतिसार।	दर्वीकर के समान।	दर्वीकर के समान।
7.	सप्तम वेग (विष का शुक्र-शोणित में प्रवेश)	मुख से घट्ट कफ निकलना, कन्धे, पीठ और कटि में टूटन, उनका निश्चेष्ट होकर लटक जाना; सभी चेष्टाओं में अवरोध, लालास्राव, पसीना आना और उच्छ्वास का रुक जाना।	दर्वीकर के समान।	दर्वीकर के समान।

Scanned with CamScanner

13.22 Features of Poisonous & Non-Poisonous Snakes

13.22.1 Features of Poisonous Snakes

- Scales on the head are usually smaller. It could be larger also with special fearures such as -
  - A pit between eye and nose as in pit viper.
  - A third supralabial scale touching the eye and nasal shield, as in cobra.
  - A large fourth Infralabial shield, as in krait.
- Scales on the belly are large and they extend to the whole extent of belly.
- Fangs are long, grooved or canalized.
- Teeth - two long fangs.
- Tail is compressed.
- Poisonous snakes are nocturnal in nature.
- Bite marks - two marks of fangs with or without marks of other smaller teeth.

13.22.2 Features of Non-Poisonous Snakes

- Scales on the head are large.
- Scales on the belly are small to moderately large in size and they fall short or covering the whole belly.
- Fangs are short and solid.
- Teeth are numerous but small.
- Tail is not markedly compressed.
- Non-poisonous snakes are not nocturnal in nature.
- Bite marks - numerous teeth in a row.

13.23 Poisonous Snakes

Poisonous snakes, on the basis of their venoms, are classified into following three -

1. Elapid
2. Viper and
3. Sea snakes.

- Elapids - The venom of elapids is neuro-toxic in nature.
- Vipers - The venom of vipers is vasculo-toxic in nature.
- Sea snakes - The venom of sea snakes is musculo-toxic in nature.

13.24 Commonly found Snakes in India

Ancistrodon Himalayanus

English name - Himalayan Pit Viper or Himalayan Viper

Family - Viperidae

Introduction - It is a venomoussnake.

Habitat - It is found in Himalayan belt of India; it is also found in Kashmir and Punjab.

Description - Its average length is 2.5 to 3 feet. The head is noticeably wide and elongated, with proportionally arranged large scales. The dorsal scales are strongly keeled. An elongated postocular extends anteriorly to separate the eye from the supralabials. The dorsum is brownish, mottled or variegated to form a pattern of transverse bars. Ventral scales are white with black and red dots or speckles.

Type of Venom

- Hemotoxic

Viper russelii/ Russell's viper

Family - Viperidae

हिन्दी → 'डबोया', 'कान्दर' या 'सुसकरना'; बंगाली → 'चन्द्रबोरा'; गुजराती → 'चीतल'; मराठी → 'घोड़ा सॉप'

तमिल → 'मण्डली'

Scientific Name - Daboia russelii or Viper russelii

English names - Daboia/ Russell's viper/ Chain viper etc.

Distribution - It is distributed throughout India upto Assam.

Scanned with CamScanner

Venom Type - Haemotoxic

Description - Its average length is 3 to 4.5 feet. It can be easily recognized by robust and stout body covered with keeled scales. Its head is triangular, pointed with small keeled scales. Two triangular shaped spots of rounded edge present on the top. The tail is small with pointed tip and is covered with typical keeled scales.

Naga Bungarus or King Cobra

Family - Elapidae

हिन्दी →'शेषनाग' या 'राजसॉप'

Scientific Name - Naga bungarus or Ophiophagus hannah

Habitat- These are found in low to moderate elevation up to 2005 m. In India these are found in Western Ghats, eastern coastline of Andhra and Odisha; Sundarbans etc.

Venom Type - Neurotoxic

Description - These are easily identified due to very large and heavy body marked with light bands. Its average length is 8 to 10 feet. Thebody is very long, slender and covered with large size smooth scales. Dorsal color varies according to geographical locations. Bands of hood region are inverted V shaped and are known for having characteristic to recognize each individual.Head is large with rounded snout, covered with large shields and slightly broader than neck. Tail is long with pointed tip.

Bungarus Coerulens

Family - Elapidae

गुजराती → 'कोनाटारो'; बंगला → 'चित्ती'; कन्नड़ → 'गोडिनसर'; मराठी → 'मनियार'; तमिल → 'यम्नावेरियन' पंजाबी → 'मनियार'

Scientific Name - Bungarus caeruleus

English - Common Indian Krait

Distribution - All over the India.

Venom Type - Neurotoxic

Description - It has shiny black colored body with milky white bands. Its average length is 90 to 120 cm. Its head is depressed with rounded snout and is slightly broader than the neck. Its tail is prehensile, shorter and ends with pointed tip.

Zamenis Mucosus

Scientific Name - Zamenis mucosus or Ptyas mucosa

Family - Colubridae

English name - Oriental Rat Snake

Habitat - The rat snake is found all over India including North-east and Andaman Islands.

Venom - Non-toxic

Description - The body is very long with dark color patterns on the whole dorsal surface. Its average length is 6 to 7 feet. The head is pointed, not depressed with shiny smooth scales, clearly broader than the neck. The tail is long and slender.

Scanned with CamScanner

Python Molurus

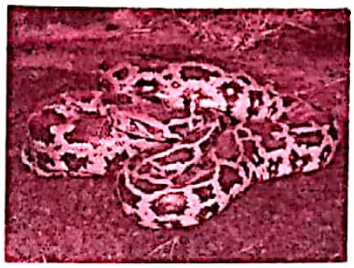

Scientific Name - Python molurus
Family - Pythonidae
English - Black-tailed Python
Hindi - Ajgar
Habitat - It is found in most of the Indian States.
Venom - Non-toxic

Description - It is easily identified by checking its large size, dark irregular patches, pinkish head and slow locomotion. It is average length is 7 to 12 feet. The body is thick with shiny smooth scales. Dorsal surface is full of irregular shaped patches of dark brown or blackish color. The head is triangular, clearly broader than neck. Heat sensitive pits are found laterally on snout. The tail is short and has dark yellow and black reticulations.

13.25 Snake Venom and its Toxicity

Introduction

- Snake venom is the saliva of the snake. It is yellowish in color, transparent, clear, viscous and slightly sticky in nature.
- It is highly modified saliva and containszootoxins that facilitates the immobilization and digestion of prey, and also defends against a threat.

Composition

- Proteolytic enzymes
- Phosphatidases
- Cholinesterases
- Neurotoxins
- Hyaluronidase
- Lecithinase
- Proteases

History - Charles Lucien Bonaparte was the first to establish the proteinaceous nature of snake venom.

Types

- Hemotoxic venom
- Neurotoxic venom
- Myotoxic venom
- Cytotoxic venom

13.26 सर्पदंश (Snake Bite)

विशेषज्ञों के अनुसार सर्पदंश प्रधानतया दो प्रकार के होते हैं -

1. सोद्देश्य (purposefully) और
2. सुरक्षात्मक (protection)।

सोद्देश्य (purposefully) दंश

- सोद्देश्य दंश में साँप अपने शिकार को मारने के उद्देश्य से ही डँसता है।
- इस अवस्था में वह विष की अधिकाधिक मात्रा प्राणी में प्रविष्ट करा देता है, जिससे वह शीघ्रातिशीघ्र मर जाये।

सुरक्षात्मक (protection) दंश

- सुरक्षात्मक दंश शत्रु को डराने अथवा अपनी सुरक्षा के लिए उसे चेतावनी देने के रूप में होता है।
- इस अवस्था में वह न्यूनतम विष प्राणी में प्रविष्ट करता है या नहीं भी करता।
- मनुष्यों में उसके दंश प्राय: सुरक्षात्मक प्रकृति के होते हैं। इसीलिए सर्पदष्ट में से लगभग 50% सर्पदंश की विषाक्तता से तो कम किन्तु शंकाविष से ही अधिक प्रभावित होते हैं।

लगभग 25% में उग्र लक्षण उत्पन्न होते हैं।

विषाक्त सर्पों के दंश में विषदन्त के स्पष्ट चिह्न दिखलाई देते हैं। दंशस्थान के अनुसार ये एक या दो भी हो सकते हैं।

विषहीन सर्पों के दंश में 'U' के आकार में छोटे-छोटे दाँतों के दंश की पंक्तियाँ दिखलाई पड़ती हैं।

विषदन्तों के दंश चिह्नों की पारस्परिक दूरी से साँप के आकार का अनुमान लगाया जा सकता है।

Scanned with CamScanner

13.27 Symptoms of Snake Bite

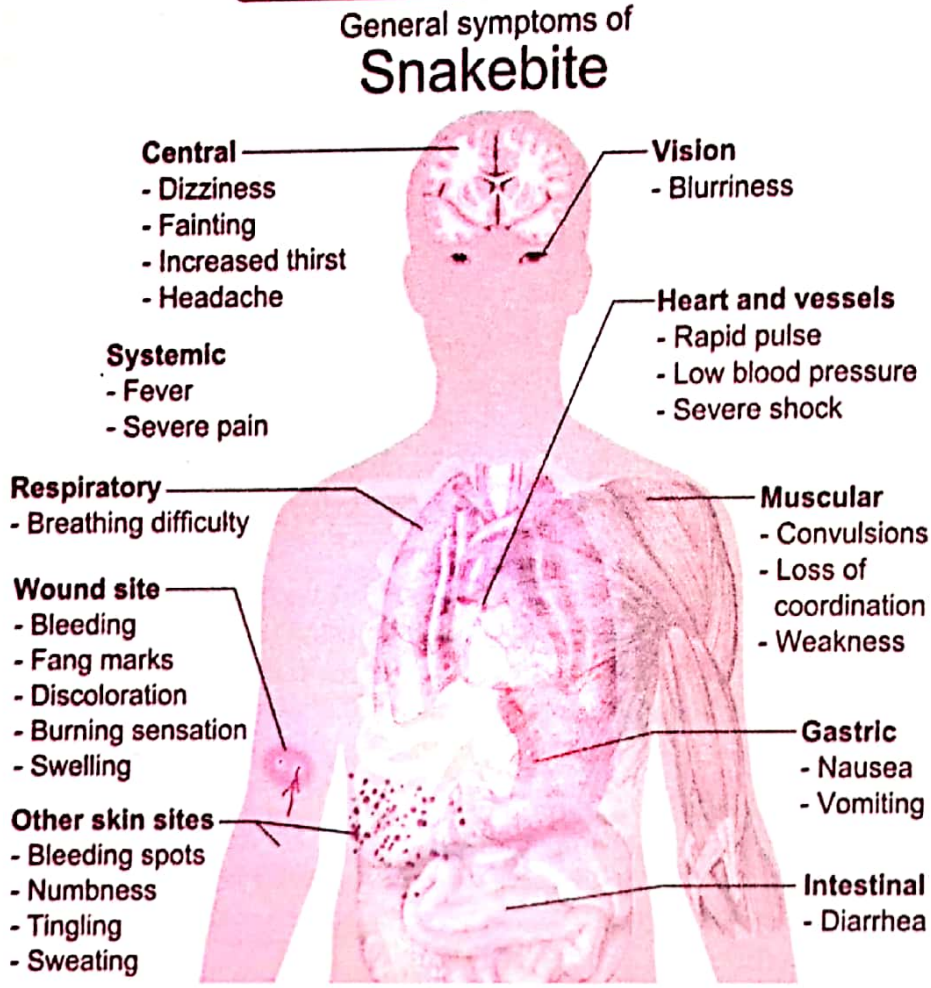

Russells' Viper

- Edema and excruciating pain at the site
- Failure of clotting
- Rupturing of blood vessels and bleeding
- Cardiac arrest due to presence of cardio-toxin in the venom
- Death (due to shock and hemorrhages)

Cobra

- Painless bite is immediately followed by intoxication
- Loss of consciousness
- Disturbed gait
- Loss of functions of tongue etc.
- Loss of speech
- Frothy mouth
- Nausea and vomiting
- Difficulty in breathing etc.

Krait

- Acute abdominal pain (due to hemorrhage)
- Few signs quoted under Cobra are also seen
- Death due to respiratory arrest.

13.28 सर्पविष का उपचार (Treatment of Snake Bite)

आयुर्वेद की संहिताओं में सर्पविष के उपचार का अत्यन्त विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। तात्कालिक और स्थानीय उपचार के अतिरिक्त अनेक प्रकार के विशिष्ट (विशेष प्रकार के साँपों के काटने पर उपयोगी) और बहुसंयोजी (सभी या अधिकांश सर्पविषों पर समान रूप से उपयोगी) अगदों का उल्लेख किया गया है। विशिष्ट अंगों में पहुँचे या वहाँ स्थिर विष के उदासीनीकरण करने की विधियाँ बतलाई गई हैं। परन्तु इन सन्दर्भों में जिन योगों का उल्लेख किया गया है, उनमें से अनेक द्रव्य संदिग्ध या अनुपलब्ध हो गये हैं। मात्र पाठकों की जानकारी के लिए

Scanned with CamScanner

आयुर्वेदीय चिकित्सा-क्रम का आगे के पृष्ठों में संक्षेप में उल्लेख किया जा रहा है। आचार्य वृद्धवाग्भट ने चरकसंहिता और सुश्रुतसंहिता के आवश्यक अंशों को लेकर अपने ढंग से इसका निरूपण किया है। इस सम्बन्ध में अष्टांगसंग्रह के उत्तरतन्त्र का 42वाँ अध्याय द्रष्टव्य है। नीचे के वर्णन में उसी का सार-संक्षेप प्रस्तुत किया गया है। इनके अतिरिक्त आधुनिक समय में ज्ञात और कुछ परीक्षित कहे जानेवाले योगों का भी संग्रह किया गया है। आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार -

मात्राशतं विषं स्थित्वा दंशे दष्टस्य देहिनः।
देहं प्रक्रमते धातून् रुधिरादीन् प्रदूषयत्।।
एतस्मिन्नन्तरे कर्म दंशस्योत्कर्तनादिकम्।
कुर्याच्छीघ्रं यथा देहे विषवल्ली न रोहति।।

(अ.सं.उ. 42/2-3)

दष्ट प्राणी के दंश-स्थान में विष सौ मात्राकाल तक स्थित रहता है फिर रक्त आदि धातुओं को दूषित करता हुआ सम्पूर्ण शरीर में फैल जाता है। इसलिए इसी अवधि में शीघ्रातिशीघ्र उत्कर्तन आदि कर्म करना चाहिए, जिससे विष सम्पूर्ण शरीर को आक्रान्त न करने पाये। एक बार पलक झपकने में जितना समय लगता है, उसे एक मात्राकाल कहा जाता है।

1. दष्ट प्राणी को चाहिए कि वह तुरन्त जिस साँप ने उसे काटा है उसे या मिट्टी के ढेले या मिट्टी अथवा कदलीफल, कमलनाल, कोहड़ा आदि किसी भी मृदुफल को काटे और अविलम्ब मुख की लार या कान के मैल का दंश-स्थान पर लेप करे।
2. दंश-स्थान के चार अंगुल ऊपर अरिष्टा-बन्धन करे।
3. मर्म या सन्धि-स्थानों पर जहाँ पर अरिष्टा-बन्धन की सम्भावना न हो, वहाँ दंशस्थान के चारों ओर से दबा-दबा कर विष को बाहर निकालने का प्रयास करे। मर्म-स्थान में दंश होने पर प्राणी की शीघ्र ही मृत्यु हो जाती है और सन्धि-स्थान में दंश होने पर उसमें विकलांगता उत्पन्न हो जाती है।
4. सम्पीड़न से विष बाहर न निकले तो मण्डली सर्प के दंश को छोड़कर, अन्य साँपों के दंश-स्थान का स्वर्ण आदि धातुओं को अग्नि में तपाकर अथवा जलती लकड़ी से उसका दहन कर देना चाहिए।
5. अरिष्टा के नीचे दंश-स्थान का उत्कर्तन कर आचूषण द्वारा भी विष को बाहर निकालने का प्रयास करना चाहिए।
6. मांसल स्थानों में तो अवश्य ही चीरा लगाकर आचूषण करना चाहिए। ये सभी उपाय विष के दंश-स्थान में स्थित रहने की अवस्था में ही अधिक सफल सिद्ध होते हैं।
7. यदि विष सम्पूर्ण शरीर में फैल गया हो तो शिरावेध द्वारा रक्तमोक्षण कराना चाहिए।
8. निकलने से बचा जो रक्त विष की गर्मी से शरीर में लीन हो गया हो उसको बार-बार अति शीतल लेप, परिषेक आदि द्वारा निष्क्रिय या उदासीन बनायें।
9. यदि विष के वेग के कारण रक्तस्रवण न रुक रहा हो तो शीतल लेप आदि बरते, पंखा झले और इस शीतोपचार को तब तक जारी रखे जब तक कि रोगी को रोमांच न हो जाये।
10. तीक्ष्ण होने से विष हृदय को हानि पहुँचाता है। हृदय की रक्षा के लिए रोगी को घी पिलायें या घी और मधु चटायें, अथवा घी में पतला कर अगद पिलायें। हृदय की रक्षा करने के क्रम में रोगी के हृदय में श्लेष्मा का संचय हो जाता है। इससे हृदय में भारीपन, जी मिचलाना तथा वमन की प्रवृत्ति होती है। इसके लिए वमन करायें। उक्त उपायों से विष शरीर में व्याप्त नहीं होने पाता। इसके अनन्तर -

भुजंगदोषप्रकृतिस्थानवेगविशेषतः।
सुसूक्ष्मं सम्यगालोच्य विशिष्टां चाचरेत्क्रियाम्।।

(अ.सं.उ. 42/20)

11. भुजंग में दोष की प्रधानता, उसके विष की प्रकृति, दंश-स्थान, उत्पन्न विषवेग आदि का विशेष रूप से सूक्ष्मता से मनोयोगपूर्वक विचार करते हुए विशिष्ट चिकित्सा-क्रम को अपनाना चाहिए।

दर्वीकर साँपों के विष में -

1. सिन्दुवार की जड़, श्वेता और गिरिकर्णिका का पानी में पीसकर अथवा
2. सिन्दुवार की जड़ को सिन्दुवार के ही स्वरस में पीसकर पिलायें।
3. कूठ और मधु का नस्य दें।
4. दंश-स्थान पर चारटी और नाकुली का लेप करे।

राजिमान साँपों के विष में -

1. चौलाई, गम्भारी, अपामार्ग, अपराजिता, बिजौरा, सिता और लसोढ़े को पानी के साथ पीसकर पिलायें। इसी का नस्य दें और अञ्जन करें।
2. कड़ुवी तुम्बी, अतीस, कूठ, घर का धुवाँसा, हरेणु, त्रिकटु और तगर का चूर्ण मधु के साथ दें।

मण्डली साँपों के विष में -

1. सुगन्धा, मृद्वीका, श्वेता, गजकर्णिका - सब समभाग; तुलसी पत्र, कैथ, बिल्व और अनारदाना उक्त द्रव्यों का

Scanned with CamScanner

आधा-आधा भाग लेकर चूर्णित कर मधु में मिलाकर चटायें।

2. पञ्चवल्कल, त्रिफला, मुलेठी, नागकेसर, एलवालुक, जीवक, ऋषभक, चन्दन, सिता, कमल और पद्माख के चूर्ण को मधु के साथ दें।
3. गम्भारी, बरगद के शुंग, जीवक, ऋषभक, सिता, मजीठ और मुलेठी का क्वाथ पिलायें।

गोनस सॉपों के विष में -

1. बॉस की छाल और बीज, कुटकी, पाढल के बीज, सोंठ, शिरीष के बीज, अतीस की जड़, गवेधुक और बच - इनको गोमूत्र में पीसकर पिलायें।

सर्पविष की वेगानुसार चिकित्सा - आचार्य सुश्रुत के अनुसार (Treatment of Snake Poisoning as per the Vegas {velocity} - According to Sage Sushruta)

दर्वीकर के विषवेगों की चिकित्सा -

फणिनां विषवेगे तु प्रथमे शोणितं हरेत्।
द्वितीये मधुसर्पिर्भ्यां पाययेतागदं भिषक्।।

नस्यकर्माञ्जने युञ्ज्यात्तृतीये विषनाशने।
वान्तं चतुर्थे पूर्वोक्तां यवागूमथ दापयेत्।।

शीतोपचारं कृत्वाऽऽदौ भिषक् पञ्चमषष्ठयोः।
पाययेच्छोधनं तीक्ष्णं यवागूं चापि कीर्तिताम्।।

सप्तमे त्वपीडेन शिरस्तीक्ष्णेन शोधयेत्।
तीक्ष्णमेवाञ्जनं दद्यात्, तीक्ष्णशस्त्रेण मूर्ध्नि च।।

कृत्वा काकपदं चर्म सासृग्वा पिशितं क्षिपेत्।

(सु.क. 5/20-24)

क्र	वेग	चिकित्सा
1.	प्रथम विष वेग	रक्तमोक्षण
2.	द्वितीय विष वेग	मधु और मिश्री के साथ अगदों का सेवन
3.	तृतीय विष वेग	विषनाशक नस्यकर्म और अञ्जन
4.	चतुर्थ विष वेग	वमन कराकर स्थावर विषवेग में कही गयी यवागू का पान करायें।
5.	पञ्चम विष वेग	प्रथमतः शीतल उपचार करें, फिर तीक्ष्ण विरेचन देकर पूर्वोक्त यवागू का ही पान करायें।
6.	षष्ठ विष वेग	प्रथमतः शीतल उपचार करें, फिर तीक्ष्ण विरेचन देकर पूर्वोक्त यवागू का ही पान करायें।
7.	सप्तम विष वेग	तीक्ष्ण अवपीड़न नस्य से सिर का शोधन करे, ऑखों में तीक्ष्ण अञ्जन लगायें और सिर पर तीक्ष्ण शस्त्र से काकपद के आकार का चीरा लगाकर उस पर रक्तयुक्त ताजे मांस का टुकड़ा या चर्म रख दें। इसमें विष मॉस के टुकड़े या चर्म में उतर जाता है।

विष-कर्षण के लिए सिर पर काकपद चीरे के स्थान पर निम्न युक्ति भी अपनाई जाती है - मुर्गों के गुदस्थान के पंख-रोयें साफ कर उनमें से एक-एक कर मुर्गे के गुदद्वार को दंश-स्थान पर सटा कर रखा जाता है। गुदद्वार द्वारा विष को कर्षित करने के कारण मुर्गा तुरन्त मर जाता है। पुनः दूसरा मुर्गा सटाया जाता है। वह भी शीघ्र ही मर जाता है। फिर इसी प्रकार एक-एक कर मुर्गों को तब तक सटाते रहते हैं, जबतक कि उनका मरना बन्द नहीं हो जाता। उक्त अवस्था में मुर्गे का जीवित बच जाना इस बात का प्रमाण माना जाता है कि रोगी के शरीर से सम्पूर्ण रूप में विष का निष्कासन हो चुका है। यह भी एक चमत्कारी प्रयोग है, जिसकी सफलता निःसंदिग्ध मानी जाती है।

मण्डली के विष वेगों की चिकित्सा -

पूर्वे मण्डलिनां वेगे दर्वीकरवदाचरेत्।।

अगदं मधुसर्पिर्भ्यां द्वितीये पाययेत च।
वामयित्वा यवागूं च पूर्वोक्तामथ दापयेत्।।

तृतीये शोधितं तीक्ष्णैर्यवागूं पाययेद्धिताम्।
चतुर्थे पञ्चमे चापि दर्वीकरवदाचरेत्।।

काकोल्यादिर्हितः षष्ठे पेयश्च मधुरोऽगदः।
हितोऽवपीडे त्वगदः सप्तमे विषनाशनः।।

(सु.क. 5/24-27)

क्र	वेग	चिकित्सा
1.	प्रथम विष वेग	दर्वीकर के सन्दर्भ में कही गई चिकित्सा बरतें।
2.	द्वितीय विष वेग	घी और मधु के साथ अगद का पान कराने के उपरान्त पूर्वोक्त यवागू पिलायें।
3.	तृतीय विष वेग	तीक्ष्ण विरेचनों द्वारा शोधन कराकर यवागू का सेवन करायें।
4.	चतुर्थ विष वेग	दर्वीकर के सन्दर्भ में निर्दिष्ट चिकित्सा का उपयोग करें।

Scanned with CamScanner

क्र	वेग	चिकित्सा
5.	पञ्चम विष वेग	दर्वीकर के सन्दर्भ में निर्दिष्ट चिकित्सा का उपयोग करें।
6.	षष्ठ विष वेग	काकोल्यादि मधुर-गण की औषधियों या अगद का पान करायें।
7.	सप्तम विष वेग	विषनाशक अगद का पान करायें और अवपीड़न नस्य दें।

राजिमान के विष-वेगों की चिकित्सा -

पूर्वे राजिमतां वेगेऽलाबुभिः शोणितं हरेत्।
अगदं मधुसर्पिभ्यां संयुक्तं पाययेत च।।
वान्तं द्वितीये त्वगदं पाययेद्विषनाशनम्।
तृतीयादिषु त्रिष्वेवं विधिर्दार्वीकरो हितः।।
षष्ठेऽञ्जनं तीक्ष्णतममवपीडश्च सप्तमे।

(सु.क 5/28-30)

क्र	वेग	चिकित्सा
1.	प्रथम विष वेग	तुम्बी द्वारा रक्तमोक्षण कराकर मधु-घृत मिश्रित अगद का पान करायें।
2.	द्वितीय विष वेग	वमन कराकर विषनाशक अगद का सेवन करायें।
3.	तृतीय विष वेग	दर्वीकर साँपों के प्रसंग में कही गई चिकित्सा बरतें।
4.	चतुर्थ विष वेग	दर्वीकर साँपों के प्रसंग में कही गई चिकित्सा बरतें।
5.	पञ्चम विष वेग	दर्वीकर साँपों के प्रसंग में कही गई चिकित्सा बरतें।
6.	षष्ठ विष वेग	तीक्ष्ण अञ्जन करें। Irritant
7.	सप्तम विष वेग	अवपीड़न नस्य का प्रयोग करें। साथ ही जिसकी संज्ञा नष्ट हो गई हो उसे होश में लाने का उपचार एवं उपक्रम करे।

13.29 विभिन्न अंगों-धातुओं में पहुँच कर स्थिर हुए विष की चिकित्सा (Treatment of Visha Reaching Various Tissues and Organs)

रक्तगत विष में -

1. लसोढ़े की जड़ की छाल, बेर और गूलर की कोपलों तथा अपराजिता के कल्क को कैथ के रस में मिलाकर पिलायें।

मांसगत विष में -

1. खदिर-काष्ठ, नीम और कुटज की जड़ को पानी के साथ पीसकर मधु मिलाकर पिलायें।
2. बला, अतिबला, मुलेठी, मैनफल और तगर को पीसकर जल में घोलकर पिलायें।

शिरोगत विष में -

- निम्न द्रव्यों में से किसी एक या अनेक का चूर्ण या कल्क नस्य के रूप में प्रयोग करें -
  1. दुपहरिया,
  2. भारंगी,
  3. श्यामा तुलसी,
  4. पिप्पली, हींग, बिच्छूबूटी, मैनसिल, सिरीष के बीज, अपामार्ग के बीज और नमक;
  5. पिप्पली, नकछिकनी, अतिविषा और काली मिर्च।

अक्षिगत विष में -

1. पिप्पली, काली मिर्च, यवक्षार, बच, सेंधा नमक और सहजन के चूर्ण को रोहित मछली के पित्त में भावना देकर;
2. चन्दन, मुलेठी, बालछड़, पिप्पली, काली मिर्च, नीलकमल और सेंधा नमक के बारीक चूर्ण को गाय के पित्त में भावित कर;
3. करंज का फल, त्रिकटु, बिल्वमूल, हल्दी, दारुहल्दी और तुलसी के फूल को बकरी के मूत्र में पीसकर; अथवा
4. बालछड़, गुञ्जा और खस को पानी से पीसकर आँखों में आँजें।

कण्ठगत विष में -

- कैथ का गूदा मधु और मिश्री मिलाकर चटायें।

आमाशयगत विष में -

- तगर का चूर्ण मधु और मिश्री मिलाकर सेवन करायें।

पक्वाशयगत विष में -

- मजीठ, हल्दी, दारुहल्दी और पिप्पली समान भाग लेकर गाय के पित्त में पीसकर पिलायें।

पित्तशयगत विष में -

- पित्ताशय में स्थित विष को विरेचन द्वारा निकालें। विष से पीड़ित रोगी को बिस्तर पर लेटे-लेटे ही विरेचन कराना चाहिए। बार-बार उठने से विष वायु को कुपित करता है।

वाताशयगत विष में -

- वाताशय में पहुँचे विष को विषघ्न घृत मिलाकर शान्त करें।

Scanned with CamScanner

विषरोगी के कण्ठ में कफ बढ़ने पर -

- पिप्पली, सोंठ और यवक्षार को मक्खन में मिलाकर कण्ठ में प्रतिसारण करें। कफ प्रकृति के मनुष्य में श्लेष्मल साँपों के काटने पर विष की शक्ति को कम करने के लिए वमन करायें। नाभि के ऊपर सर्प के काटने पर वमन अवश्य कराना चाहिए।

विष के निकलने पर यदि वात कुपित हो जाये तो तेल, मधु, कुलथी और अम्ल द्रव्यों को छोड़कर वातनाशक स्नेह आदि से चिकित्सा करनी चाहिए। पित्त के प्रकुपित होने पर उसे पित्तज्वर-नाशक कषाय, स्नेह, बस्ति आदि से शान्त करना चाहिए। कफ के कुपित होने पर आरग्वधादि गण की औषधियों के क्वाथ को मधु के साथ सेवन कराना चाहिए।

13.30 सर्पांगाभिहत और शंकाविष की चिकित्सा (Treatment of Touch of Snake or Imaginary Fear of Snake Bite)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

सिता वैगन्धिको द्राक्षा पयस्या मधुकं मधु।
पानं समन्त्रपूताम्बुप्रोक्षणं सान्त्वहर्षणम्।
सर्पांगाभिहते युञ्ज्यात्तथा शंकाविषार्दिते।।

(अ.सं.उ. 42/54)

सर्पांगाभिहत और शंकाविष प्रधानतया भय एवं आशंका की उपज हैं इसलिए इसमें मनोवैज्ञानिक चिकित्सा पर विशेष बल दिया गया है। इस चिकित्सा के तीन बिन्दु हैं -

1. मुखसेव्य औषधि - मिश्री, वैगन्धिक, द्राक्षा, विदारीकन्द, यष्टीमधु और मधु को घोटकर पिलायें।
2. प्रोक्षण - अभिमन्त्रित जल से प्रोक्षण (मार्जन या जल छिड़क कर पवित्र करना) करें।
3. मानस चिकित्सा - रोगी को सान्त्वना दें। उसे हर्षित करें। सभी तरह से प्रसन्न रखने का प्रयास करें।

13.31 कुछ सर्पविष-निरोधक योग (Some Formulations for Prophylaxis against Snake Bite)

ये सभी योग भैषज्यरत्नावली से लिये गये हैं। रचनाकार का दावा है कि इनके विधिवत् सेवन करने से कम से कम एक वर्ष तक प्राणी सर्पविष से सुरक्षित रहता है।

1. आषाढ़ मास के शुभ वार, तिथि, नक्षत्र आदि में प्रत्यंगिरा (कण्टकी शिरीष) की जड़ को तण्डुलोदक में घोलकर पियें। क्रोधवश यदि किसी सर्प ने उस व्यक्ति को काट भी हो तो वह सर्प उसी स्थान पर शीघ्र ही मर जाता है। यथा -

मूलं तण्डुलवारिणा पिबति यः प्रत्यंगिरासम्भवं
निष्पिष्टं शुचिभद्रयोगदिवसे तस्याहिभीतिः कुतः।
दर्पादेव फणी यदा दशति तं मोहान्वितो मूलपं
स्थाने तत्र स एव याति नियतं वक्त्रं यमस्याचिरात्।।

(भै.र. 72/8)

2. सूर्य के मेष राशि पर स्थित होने पर अर्थात् बैसाख मास में मसूर के एक दाने को नीम के दो पत्तों के साथ सेवन करें। यथा -

मसूरं निम्बपत्राभ्यां योऽत्ति मेषगते रवौ।
अब्दमेकं न भीतिः स्याद्विषात् तस्य न संशयः।।

(भै.र. 72/9)

3. पुष्य नक्षत्र में श्वेत पुनर्नवा की जड़ को पानी में पीसकर, तण्डुलोदक में घोलकर पिये। यथा-

धवलपुनर्नवजटया तण्डुलजलपीतया च पुष्यर्क्षे।
अपहरति खलु विषधरोपद्रवमावत्सरं पुंसाम्।।

(भै.र. 72/10)

पुष्यनक्षत्र में 1 तोला (12 gm) श्वेत पुनर्नवा के मूल को जल के साथ सिल पर अतिसूक्ष्म पीसें और 8 तोले तण्डुलोदक में मिलाकर छान लें तथा व्यक्ति को पिला दें तो पीने वाले व्यक्ति को एक वर्ष तक सर्पविष के उपद्रव का भय नहीं रहता है।

13.32 सर्पविष में विशेष रूप से वर्जित पदार्थ (Contra-Indicated Articles in Snake Bite)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार सर्पविष की अवस्था में तेल, कुलथी, मद्य और कांजी का सेवन नहीं करना चाहिए। यथा -

न पिबेत्तैलकौलत्थमद्यसौवीरकाणि च।। (सु.क. 5/18)

13.33 सर्पविष में उपयोगी कुछ योग (Certain useful Prescriptions for Snake Bite)

1. **तुत्थ भस्म** - आँखों में आँजने से निद्रा और बेहोशी नहीं आने पाती। जल मिश्रित कर नाक में टपकाने अथवा सुँघाने से मस्तक में गया हुआ विष नाक से टपक-टपक कर दूर हो जाता है। मुख द्वारा सेवन कराने से वमन द्वारा विष का निष्कासन होता है। विरेचनार्थ इसे 360 - 720 mg तक रोटी या बाटी में रखकर निगलवा दें। ऊपर से 50 - 100 gm तक घी पिला दें। लगभग दो घण्टे बाद विरेचन होगा। 50 gm घी पुनः पिला दें। फिर विरेचन होगा। 50 gm घी

Scanned with CamScanner

पुनः पिला दें। इस क्रम को तब तक जारी रखें जब तक रोगी सहन कर सके अथवा जब तक मल में मात्र साफ घी ही न निकलने लगे। इससे उदर की शुद्धि होकर विषविकार का शमन हो जाता हे। बेचैनी मिट जाती है। उदर-शुद्धि के बाद रोगी को दो दिनों तक मात्र मूँग की खिचड़ी ही दें। तदनन्तर प्रकृति के अनुकूल सुपाच्य भोजन दें।

1. **संजीवनी वटी** - 3-3 गोली, 2-2 घण्टे पर 3-4 बार दें।
2. पातालगरुडी अथवा ईश्वरमूल जड़ (6 gm) को 20 ml जल में पीसकर 1-1 घण्टे पर 6-7 बार पिलायें और कान में डालें। जड़ को ही घिसकर उसका अंजन करें।
3. चौकिया सुहागे का 3 ग्राम चूर्ण जल के साथ पिलायें।
4. तगर और कूठ के 3-3 ग्राम चूर्ण को 6-6 ग्राम मधु और घृत में मिलाकर 1-1 घण्टे पर चटायें।
5. घृत, मधु, मक्खन, पिप्पली, शुण्ठी, मरिच और सैन्धव लवण - इन्हें एकत्र मर्दन कर सेवन करायें।
6. गृहधूम, हरिद्रा, दारुहरिद्रा और चौलाई के पञ्चांग को पीसकर दही और घी में घोलकर पिलायें।
7. जमालगोटे के बीजों को घी में पीसकर शीतल जल के साथ पान करायें।
8. अर्क मूल को पानी के साथ पीसकर सेवन करायें।
9. श्वेत मरिच अथवा सहजन के बीजों को शिरीष पुष्प के स्वरस में एक सप्ताह तक भावित कर, सुखाकर चूर्णित कर लें। 1-1 ग्राम चूर्ण जल के साथ दें। तथा उसी का नस्य दें और अञ्जन करें।
10. नागदमन की जड़ को पानी में पीसकर अथवा कुचले की जड़ को पानी में पीसकर, अथवा जंगली ककोड़े की जड़ के बकरी के मूत्र में भावित चूर्ण को कांजी में पीसकर, अथवा कलिहारी की जड़ को पानी के साथ पीसकर, उसका स्वरस निकाल कर नस्य दें।
11. प्रसिद्ध योग -
    a. कूलकादि वटी (भै.र.)
    b. विषवज्रपात रस (र.सा.सं.)
    c. भीमरुद्र रस
    d. मृत्युपाशच्छेदी घृत (सा.सं.)
    e. गरुडाञ्जन (यो.र.) आदि का आवश्यकतानुसार व्यवहार करें।

विषय	दर्वीकर सर्प	मण्डली सर्प	राजिमान् सर्प
संख्या	26	22	10
दोषप्रकोप	• विष कटु रसवाला और रूक्ष होने के कारण वायु को प्रकुपित करता है।	• विष अम्लरस और उष्णवीर्य होने के कारण पित्त को प्रकुपित करता है।	• विष मधुर रस और शीतवीर्य होने के कारण कफ को प्रकुपित करता है।
स्वरूप	• फणवाले सर्पों को फणी या दर्वीकर कहते हैं। • शिरोभाग (hood) पर रथांग (चक्रम), लांगल (हल), छत्र, स्वस्तिक, अंकुश के सदृश निशान से युक्त। • फणयुक्त। • तेज भागने वाले।	• जिन सर्पों का फण मण्डलाकार होता है, उन्हें मण्डली कहते हैं। • नाना प्रकार के मण्डलों से चित्रित। • भारी शरीर वाले • मन्द गति वाले। • अग्नि-सूर्य प्रभायुक्त।	• जो सर्प बिन्दु-बिन्दु चिह्न वाले होते हैं। वे राजिमान कहलाते हैं। • स्निग्ध। • विविध वर्ण की तिर्यक् एवं ऊर्ध्व रेखाओं वाले। • चित्रित-से।
विचरण काल	• दिन में	• रात्रि के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय प्रहर में	• रात्रि के चतुर्थ प्रहर में
वयानुसार मारकता	• तरुणावस्था में	• वृद्धावस्था में	• मध्यम आयु में
विष के गुण	• रूक्ष + कटु	• अम्ल + उष्ण अम्ल	• मधुर + शीतल

Scanned with CamScanner

विषय	दर्वीकर सर्प	मण्डली सर्प	राजिमान् सर्प
संख्या	26	22	10
दंश के स्थानिक लक्षण	• सूक्ष्म एवं असित • निरुद्धक्त • कूर्माभ	• पृथु • शोथयुक्त • पीताभ • पीतरक्त	• पचपबब्सं पिच्छिल • स्थिरशोफयुक्त • स्निग्ध • पाण्डु • सान्द्र रक्त
दंश के सार्वदैहिक लक्षण	1. त्वचा,आँखें,नाखून,दाँत,मुख, मूत्र, पुरीष और दंश (bite) का रंग कृष्णवर्ण (blackish discoloration) होना 2. शरीर में रूक्षता (dryness) 3. शिर में भारीपन (heaviness) 4. सन्धियों में वेदना (arthralgia) 5. कमर, पीठ और ग्रीवा में दुर्बलता (weakness in waist, back and neck) 6. जम्भाइयाँ आना (yawning) 7. शरीर में कम्प (tremors) 8. स्वरभंग (hoarseness of voice) 9. गले में घुर-घुर शब्द होना (gurgling sound in neck) 10. शरीर का जकड़ जाना (stiffness) 11. सूखे डकार आना (dry belching) 12. कास (cough) 13. श्वास (dyspnea) 14. हिक्का (hiccough) 15. वायु का ऊपर की ओर गमन (misperistalsis) 16. शूल के कारण ऐंठन होना (cramps) 17. तृष्णा (thirst) 18. लालास्राव (salivation)	1. आदि का रंग पीला पड़ना (yellowish discoloration) 2. ठण्डी वस्तुओं की अभिलाषा (craving for cold articles) 3. सारे शरीर में जलन (generalized burning sensation) 4. दाह (burning sensation - localized) 5. तृष्णा (thirst) 6. मद (intoxication) 7. मूर्च्छा (fainting) 8. ज्वर (hyperpyrexia) 9. ऊर्ध्व और अधो मार्गों में रक्तस्राव (hemorrhage) 10. मांस का अवशातन (putrefaction of muscle tissues) 11. शोथ (edema) 12. दंश स्थान का गलना (putrefaction/ gangrene at the site) 13. रोगी को सभी वस्तुएँ पीली नजर आना (yellowish colored vision) 14. क्रोध शीघ्र आना (short temperedness) 15. ओष-चोषादि पित्तजन्य वेदनाएँ (pain with burning sensation etc.)	1. त्वचा आदि का रंग सफेद पड़ जाना (whitish discoloration) 2. ठण्ड लगकर ज्वर होना (fever with chills) 3. रोमाञ्च (horripilation) 4. स्तब्धता (stiffness´) 5. दंशस्थल का सूज जाना (edema at the site) 6. गाढ़े कफ का आना (thick mucus) 7. वमन (vomiting) 8. ऑखों में बार-बार कण्डू होना (itching in eyes) 9. कण्ड में सूजन (edema in throat region) 10. आवाज में घुर्धुराहट (hoareseness of voice) 11. उच्छवास में रुकावट (difficulty in breathing) 12. अन्धकार में घिरने जैसी प्रतीति होना (black outs) 13. कण्डू आदि श्लैष्मिक वेदनाएँ (itching etc.)

Scanned with CamScanner

विषय	दर्वीकर सर्प	मण्डली सर्प	राजिमान् सर्प
संख्या	26	22	10
	19. मुख से झाग आना 'frothing through oral cavity' 20. स्रोतों का अवरोध 'obstruction of bodily channels' 21. तोदन-भेदनादि वातवेदनाएँ (numerous types of pain/ colic etc.		
		वेगानुसार लक्षण	
प्रथम वेग (विष का रक्त में प्रवेश)	रक्त दूषित और काला, मुख, नख, त्वचा आदि में कालिमा, शरीर पर चीटियों के चलने की-सी प्रतीति।	रक्त पीला अंगों में पीलापन और दाह।	रक्त पीतश्वेत वर्णी, अंगों में पाण्डुता।
द्वितीय वेग (विष का मांस में प्रवेश)	मांस दूषित, अतिशय कृष्णता, सूजन और अंगों में गाँठें।	अतिशय पीलापन, दाह और दंशस्थान में सूजन।	अतिशय पाण्डुता, जड़ता और सिर में सूजन।
तृतीय वेग (विष का मेद में प्रवेश)	मेद धातु दूषित, दंश स्थान में सड़न-गलन, सिर में भारीपन तथा दृष्टि-हानि।	दंशस्थान पर सड़ना, स्वेद और प्यास।	दंशस्थान का सड़ना, अन्धत्व, स्वेदागम नासिका, नेत्र तथा मुख से स्राव।
चतुर्थ वेग (विष का कोष्ठ में प्रवेश)	कोष्ठगत कफ दूषित, मुख से लालास्राव, वमन, सन्धियों की शिथिलता और तन्द्रा।	ज्वर और दाह।	सिर में भारीपन और मन्यास्तम्भ।
पञ्चम वेग (विष का अस्थि में प्रवेश)	प्राण और अग्नि दूषित, फलतः पर्व-सन्धियों में शिथिलता दाह और हिक्का।	सभी अंगों में दाह।	वाणी का अवरोध और शीतज्वर
षष्ठ वेग (विष का मज्जा में प्रवेश)	ग्रहणी (पित्तधराकला) अत्यधिक दूषित, फलतः हृदय में पीड़ा, शरीर में भारीपन मूर्च्छा अविपाक और अतिसार।	दर्वीकर के समान।	दर्वीकर के समान
सप्तम वेग (विष का शुक्र शोणित में प्रवेश)	मुख से घट्ट कफ निकलना, कन्धे, पीठ और कटि में टूटन, उनका निश्चेष्ट होकर लटक जाना; सभी चेष्टाओं में अवरोध, लालास्राव, पसीना आना और उच्छ्वास का रुक जाना।	दर्वीकर के समान।	दर्वीकर के समान
		वेगानुसार चिकित्सा	
प्रथम विष वेग	रक्तमोक्षण	दर्वीकर के सन्दर्भ में कही गई चिकित्सा बरतें।	तुम्बी द्वारा रक्तमोक्षण कराकर मधु-घृत मिश्रित अगद का पान करायें।

Scanned with CamScanner

विषय	दर्वीकर सर्प	मण्डली सर्प	राजिमान् सर्प
संख्या	26	22	10
द्वितीय विष वेग	मधु और मिश्री के साथ अगदो का सेवन मधु	घी और मधु के साथ अगद का पान कराने उपरान्त पूर्वोक्त यवागू पिलायें।	वमन कराकर विषनाशक अगद का सेवन करायें।
तृतीय विष वेग	विषनाशक नस्यकर्म और अञ्जन	तीक्ष्ण विरेचनों द्वारा शोधन कराकर यवागू का सेवन करायें।	दर्वीकर साँपों के प्रसंग में कही गई चिकित्सा बरतें।
चतुर्थ विष वेग	वमन कराकर स्थावर विषवेग में कही गयी यवागू का पान करायें।	दर्वीकर के सन्दर्भ में निर्दिष्ट चिकित्सा का उपयोग करें।	दर्वीकर साँपों के प्रसंग में कही गई चिकित्सा बरतें।
पञ्चम विष वेग	प्रथमत: शीतल उपचार करें, फिर तीक्ष्ण विरोचन देकर पूर्वोक्त यवागू का ही पान करायें।	दर्वीकर के सन्दर्भ में निर्दिष्ट चिकित्सा का उपयोग करें।	दर्वीकर साँपों के प्रसंग में कही गई चिकित्सा बरतें।
षष्ठ विष वेग	प्रथमत: शीतल उपचार करें, फिर तीक्ष्ण विरोचन देकर पूर्वोक्त यवागू का ही पान करायें।	काकोल्यादि मधुर-गण की औषधियों का अगद का पान करायें।	तीक्ष्ण अञ्जन करें।
सप्तम विष वेग	तीक्ष्ण अवपीडन नस्य से सिर का शोधन करे, आँखों में तीक्ष्ण अञ्जन लगायें और सिर पर तीक्ष्ण शस्त्र से काकपद के आकार का चीरा लगाकार उस पर रक्तयुक्त ताजे मांस का टुकड़ा या चर्म रख दें। इसमें विष मॉस के टुकड़े या चर्म में उतर जाता है।	विषनाशक अगद का पान करायें और अवपीडन नस्य दें।	अवपीडन नस्य का प्रयोग करें। साथ ही जिसकी संज्ञा नष्ट हो गई हो उसे होश में लाने का उपचार एवं उपक्रम करे।

13.34 Modern Treatment of Snake Bite

Steps in Management of snake bite are -

1. Eradication of doubt, if any, regarding snake bite
2. Arresting spread of snake venom
3. Use of anti-dotes and
4. Symptomatic management.

Eradication of doubt, if any, Regarding Snake Bite

At times the fear of snake bite, rather than the actual bite, causes more harm to the patient. Therefore, it is the duty of attending physician to first eradicate any fear, concern or doubt in the patient's mind. The patient needs to be explained that not all snakes are poisonous and also the amount of venom injected by poisonous snakes, at times, is not sufficient to cause any harm. Some bites may only be superficial.

Arresting Spread of Snake Venom

Once the patient is assured and taken into confidence, the physician should arrange for immediate measures that will arrest the spread of snake venom in the patient's body. For this following measures should be adopted -

1. Immobilization of body part where the snake has bitten
2. Application of tourniquet etc.
3. Local measures

1. Immobilization - Frequent moving of body parts will increase the blood flow and subsequently will only support rapid spreading of the venom. Therefore, the site of bite should be immobilized.

Scanned with CamScanner

2. Application of tourniquet etc. - This is done to arrest the spread of venom through the blood stream.

3. Local Measures

- Site of bite should be cleaned with water.
- Incision should be made at the site for suction of blood.

Use of Anti-Dotes

Antidotes are of two kinds -

1. Specific antidotes and
2. Polyvalent antidotes.

Specific antidotes are used only after the confirmation of the snake that has bitten the patient whereas polyvalent antidotes can be used tackle four major snake bites viz. (a) Cobra, (b) Common Krait, (3) Russell's viper and (4) saw-scaled viper.

Dose - 20 ml intra-venous (can be repeated if symptoms persist)

Pre-requisites

1. **Sensitivity test -** Prior to injecting polyvalent anti-snake venom serum the patient should be tested for sensitivity. For this 0.05 to 0.1 ml of serum (1:10 dilution) should be injected intradermally.
2. **Allergic reactions -** To tackle allergic reactions Adrenaline {(1:1000) 0.25 ml s.c.} and Avil {2ml i.m.} should be given.

Symptomatic Management of Following

1. Localized swelling, burning sensation etc.
2. Convulsions
3. Shock and allergic reactions to antisnake venom serum
4. Renal failure
5. Hemorrhage
6. Respiratory paralysis etc.

Fatal dose

- Cobra venom - 15 mg
- Russells' viper venom - 40 mg
- Echis carinate venom - 8 mg
- Krait venom - 6 mg

Fatal period

- Cobra - Few hours
- Viper - Few days (1 - 2 days)

Medico-Legal Aspects

- Accidental (most common)
- Cattle homicide (occasionally)
- Human Homicide (rarely)
- Suicide (rarely)

Post-Mortem Appearance

- Marks of one or two fangs at the site of bite.
- The depth of bite varies from species to species (in case of Naga it is approximately 1 cm and in Viper it is 2.5 cm deep).
- Oedema, discoloration, blood oozing etc. are not uncommon.
- In case of viper bite bleeding is more pronounced.
- In case of neurotoxic venom signs of respiratory arrest will be visible.
- In case of hemotoxic venom signs of internal bleeding in lungs, omentum, bladder etc. will be seen.

• • •

Scanned with CamScanner

कृताविष

14 जंगम विष (2)
Animal Poison - 2

विषय

- वृश्चिक विष (Scorpion's venom)
- Scorpion bite
- शतपदी (Centipedes)
- Centipede bite
- लूता विष (Spider's venom)
- Spider Venom
- मधुमक्खी, ततैया, हड्डे, भौंरे आदि के दंश (Bee, wasp and hornet stings)
- मूषक विष (Rat bite poisoning)
- Rat-bite Fever
- अलर्क विष (Rabies)
- Rabies

14.1 वृश्चिक विष (Scorpion's Venom)

14.1.1 परिचय (Introduction)

वृश्चिक् या बिच्छू (scorpions) एक अत्यधिक विषैला कीट होता है। ये खेतों में चूहे तथा अन्य प्राणियों के बिलों, ईटों, पत्थरों तथा कूड़े-करकट के ढेरों में दिन भर छिपे रहते हैं और रात में निकल कर अन्य कीटों पर आक्रमण करते हैं। आदमी पर ये दबाव में आकर भयवश ही चोट करते हैं। इसकी आकृति केकड़े के समान होती है। इसके एक लम्बी, मांसल, प्राय: पॉच खण्डों में विभाजित, पुच्छाकार उदरोत्तर वृद्धि होती है, जिसके अन्त में एक चौड़ा कोष्ठ होता है। कोष्ठ पर एक खोखला डंक (sting) होता है, जो एक नलिका के द्वारा उसकी गुदा के पास स्थित दो विष-ग्रन्थियों से जुड़ा होता है। यह डंक सॉप के विषदन्त के समान ही कार्य करता है। बिच्छू के डंक मारने पर इसी के द्वारा उसका विष प्राणी के शरीर में प्रविष्ट हो जाता है।

14.1.2 वृश्चिक के पर्याय (Synonyms of vrshchika)

आचार्य नरहरि पण्डित ने 'राजनिघण्टु' के सिंहादिवर्ग में वृश्चिक के निम्न पर्यायों का उल्लेख किया है -

1. शूककीट
2. अलिद्रोण

14.1.3 वृश्चिक-भेद और उनकी उत्पत्ति (Types and origin of scorpions)

आचार्य सुश्रुत मतेन

- **विषाक्तता के अनुसार (According to toxicity)** - 3

त्रिविधा वृश्चिका: प्रोक्ता मन्दमध्यमहाविषा:।।

गोशकृत्कोथजा मन्दा मध्या: काष्ठेष्टिकोद्भवा:।
सर्पकोथोद्भवास्तीक्ष्णा ये चान्ये विषसंभवा:।। (सु.क. 8/56-57)

Scanned with CamScanner

आचार्य सुश्रुत ने बिच्छुओं की विषाक्तता के आधार पर उनके तीन भेद माने हैं-

1. मन्द विषवाले,
2. मध्यम विषवाले और
3. तीव्र विषवाले।

मन्द विषवाले बिच्छू गाय के गोबर के सड़ने से, मध्यम विषवाले बिच्छू काष्ठ और ईंटों के सड़ने से और तीव्र विषवाले बिच्छू सर्पादि विषाक्त कीटों तथा विष से मृत पशुओं के सड़ने से उत्पन्न होते हैं।

- **आकृति-भेद से (According to shapes)** - 30

आकृति-भेद से आचार्य सुश्रुत ने बिच्छु तीस प्रकार के माने हैं -

मन्दा द्वादश मध्यास्तु त्रयः पञ्चदशोत्तमाः।
दश विंशतिरित्येते संख्यया परिकीर्तिताः।।

(सु.क. 8/58)

इनमें से 12 मंद विषवाले, 3 मध्यम विषवाले और 15 तीव्र विषवाले होते हैं। उन्होंने इनके नाम, इनकी पहचान और इनके दंश से उत्पन्न लक्षणों का विस्तार से वर्णन किया है।

तालिका - आचार्य सुश्रुत के अनुसार वृश्चिक के प्रकार

S. No.	वृश्चिक भेद	उत्पत्ति	संख्या
1.	मन्दविषवाले वृश्चिक	गाय के गोबर के सड़ने से	12
2.	मध्यमविषवाले वृश्चिक	काठ और ईंटों के सड़ने से	3
3.	महाविषवाले वृश्चिक	सर्प आदि विषाक्त कीटों तथा विष से मृत पशुओं के सड़ने से	15

तालिका - आचार्य सुश्रुत के त्रिविध वृश्चिक भेदों के वर्णादि

वृश्चिक भेद	वर्ण	स्वरूप	सामान्य लक्षण
मन्दविषवाले वृश्चिक	1. कृष्ण 2. श्याव 3. कर्बुर 4. पाण्डु 5. गोमूत्र जैसा 6. कर्कश 7. मेचक 8. पीत 9. धूमसदृश वर्ण 10. रोमयुक्त 11. शाद्वल (हरापन लिये) और 12. रक्तवर्ण	श्वेतवर्ण के उदरवाले अन्य वृश्चिकों की अपेक्षा इनके पुच्छप्रदेश में पर्व (जोड़) बहुत होते हैं	• वेदना (pain) • कम्प (tremors) • शरीर का अकड़ जाना (stiffness) • काले रंग के रुधिर का आना (blackish colored blood) • शाखा में काटने से वेदना ऊपर की ओर को जाती है (upward moving pain) • दाह (burning sensation) • पसीना आना (sweating) • दंशस्थल पर शोथ (edema) • ज्वर (fever)
मध्यमविषवाले वृश्चिक	1. लाल 2. पीत	उदर कपिल वर्ण के होते हैं। इन सब धूम्र वर्ण के तथा ये तीन पर्वों वाले होते हैं। ये सर्पों के मूत्र, मल तथा सड़ी हुई जगह एवं अण्डों से उत्पन्न गन्दगी में जन्म लेते हैं। ये वृश्चिक दर्वीकरादि सर्पों के तीन भेदों में से जो जिसके अंस से उत्पन्न होता है वह उसी के अनुसार दोषोत्पत्ति करता है।	• जीभ का सूज जाना (edema of the tongue) • भोजन निगलने में अवरोध (difficulty in swallowing of food) • भयंकर मूर्च्छा (fainting)

Scanned with CamScanner

वृश्चिक भेद	वर्ण	स्वरूप	सामान्य लक्षण
महाविषवाले वृश्चिक	1. सफेद 2. चित्र 3. श्यामल 4. लोहित 5. रक्त-श्वेत और रक्त-नील वर्ण के उदर वाले; पीत-रक्त, नील-पीत, रक्त-नील, नील-शुक्ल, रक्त-बभ्रु (पिंगलवर्ण) 'बभ्रुर्ना पिंगले त्रिषु' - अ.को.),	मध्यविष वाले बिच्छुओं की तरह एक पर्व वाले या पर्वरहित अथवा दो पर्व वाले होते हैं। इस प्रकार ये तीक्ष्ण विष वाले वृश्चिक नाना रूप-रंग वाले, अतिभयानक एवं प्राणों का हरण करने वाले होते हैं। इनका जन्म कोथ युक्त सर्पों के शरीर से अथवा विष से मृत प्राणियों के शरीर से होता है।	• सर्पविष के वेग सदृश लक्षण • स्फोटों की उत्पत्ति (blisters) • मनोविभ्रम (mental confusion) • दाह (burning sensation) • ज्वर (fever) • स्रोतों से कृष्णवर्ण रक्त का तीव्रता से आना (profuse bleeding of blackish color) • शीघ्र ही प्राणत्याग (immediate death)

यथा -

मन्दविषवाले वृश्चिक -

कृष्णः श्यावः कर्बुरः पाण्डुवर्णो गोमूत्राभः कर्कशो मेचकश्च। पीतो धूम्रो रोमशः शाड्वलाभो रक्तः श्वेतेनोदरेणेति मन्दाः।।

युक्ताश्चैते वृश्चिकाः पुच्छदेशे स्युर्भूयोभिः पर्वभिश्चेतरेभ्यः। एभिर्दष्टे वेदना वेपथुश्च गात्रस्तम्भः कृष्णरक्तागमश्च।।

शाखादष्टे वेदना चोर्ध्वमेति दाहस्वेदौ दंशशोफो ज्वरश्च।

मध्यमविषवाले वृश्चिक -

रक्तः पीतः कापिलेनोदरेण सर्वे धूम्राः पर्वभिश्च त्रिभिः स्युः।।

एते मूत्रोच्चारपूत्यण्डजाता मध्या ज्ञेयास्त्रिप्रकारोरगाणाम्। यस्यैतेषामन्वयाद्यः प्रसूतो दोषोत्पत्तिं तत्स्वरूपां स कुर्यात्।।

जिह्वाशोफो भोजनस्यावरोधो मूर्च्छा चोग्रा मध्यवीर्याभिदष्टे।

महाविषवाले वृश्चिक -

श्वेतश्चित्रः श्यामलो लोहिताभो रक्तः श्वेतो रक्तनीलोदरौ च।।

पीतोऽरक्तो नीलपीतोऽपरस्तु रक्तो नीलो नीलशुक्लस्तथा च। रक्तो बभ्रुः पूर्ववच्चैकपर्वा यश्चापर्वा पर्वणी द्वे च यस्य।।

नानारूपा वर्णतश्चापि घोरा ज्ञेयाश्चैते वृश्चिकाः प्राणचौराः। जन्मैतेषां सर्पकोथात् प्रदिष्टं देहेभ्यो वा घातितानां विषेण।।

एभिर्दष्टे सर्पवेगप्रवृत्तिः स्फोटोत्पत्तिर्भ्रान्तिदाहौ ज्वरश्च। खेभ्यः कृष्णं शोणितं याति तीव्रं तस्मात् प्राणैस्त्यज्यते शीघ्रमेव।। (सु.क. 8/59-66)

तालिका - आचार्य सुश्रुत के त्रिविध वृश्चिक भेदों के वर्णादि

वृश्चिक भेद	वर्ण	सामान्य लक्षण
मन्दविषवाले वृश्चिक	1. कृष्ण 2. श्याव 3. कर्बुर 4. पाण्डु 5. गोमूत्र जैसा 6. कर्कश 7. मेचक 8. पीत 9. धूमसदृश वर्ण 10. रोमयुक्त 11. शाद्वल (हरापन लिये) और 12. रक्तवर्ण	• वेदना • कम्प • शरीर का अकड़ जाना • काले रंग के रुधिर का आना • शाखा में काटने से वेदना ऊपर की ओर को जाती है • दाह • पसीना आना • दंशस्थल पर शोथ • ज्वर

Scanned with CamScanner

वृश्चिक भेद	वर्ण	सामान्य लक्षण
मध्यमविषवाले वृश्चिक	1. लाल 2. पीत	• जीभ का सूज जाना • भोजन निगलने में अवरोध • भयंकर मूर्च्छा • सर्पविष के वेग सदृश लक्षण • स्फोटों की उत्पत्ति • मनोविभ्रम • दाह • ज्वर • स्रोतों से कृष्णवर्ण रक्त का तीव्रता से आना • शीघ्र ही प्राणत्याग
महाविषवाले वृश्चिक	1. सफेद 2. चित्र 3. श्यामल 4. लोहित 5. रक्त-श्वेत	

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार इनका संक्षिप्त वर्णन नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है -

मन्दाः पीताः सिताः श्यावा रूक्षाः कर्बुरमेचकाः।
रोमशा बहुपर्वाणो लोहिताः पाण्डुरोदराः।
धूम्रोदरास्त्रिपर्वाणो मध्यास्तु कपिलारुणाः।।
पिशंगाः शबलाश्चित्राः शोणिताभा महाविषाः।

(अ.सं.उ. 43/14)

- **मन्दविषवाले वृश्चिक**→ उनके अनुसार मन्द विषवाले बिच्छू पीले, श्वेत, श्याव, रूक्ष, नाना वर्ण के अथवा गाढ़े काले होते हैं। इनका उदरप्रदेश लाल अथवा पाण्डुर होता है। ये ऊपर रोमों से युक्त और अनेक पर्वोंवाले होते हैं।
- **मध्यमविषवाले वृश्चिक** →मध्यम विषवाले बिच्छू भूरे अथवा लालवर्ण के और तीन पर्वोंवाले होते हैं। इनका उदरप्रदेश काला होता है।
- **महाविष वाले वृश्चिक**→ महाविष बिच्छू ताम्र वर्ण के, नाना रंग के चित्र-विचित्र, लाल झाँई और दो पर्वों वाले होते हैं। इनका उदरप्रदेश लाल, काला या श्वेत होता है।

चिकित्सात्मक दृष्टि से बिच्छुओं के दो भेद माने जा सकते हैं -

1. रुजाकर या वेदनोत्पादक
2. सद्योघातक।

इनमें से प्रथम कोटि के बिच्छुओं के दंश से वेदना तो असह्य होती है, परन्तु प्रायः प्राणों के जाने का भय नहीं रहता। कहा भी गया है - 'साँप का काटा सोवै और बिच्छू का काटा रोवै'। सद्योमारक या प्राणघातक बिच्छू के दंश से शरीर का मांस गल-गल कर गिरने लगता है और रोगी की शीघ्र ही मृत्यु हो जाती है।

14.1.4 वृश्चिक दंश के सामान्य लक्षण (General symptoms)

वृश्चिकदंश में स्थानिक वेदना बड़ी ही तीव्र और गम्भीर प्रकार की होती है। दंशस्थान के चारों ओर एक लाल घेरा-सा बन जाता है, जिसमें असह्य दाहक वेदना होती है। यह वेदना दंशस्थान से उठकर ऊपर की ओर फैलती-सी प्रतीत होती है।

आचार्य वृद्धवाग्भट ने वृश्चिकदंश के स्थानिक लक्षणों का सविस्तार वर्णन किया है -

वृश्चिकस्य विषं तीक्ष्णमादौ दहति वह्निवत्।
ऊर्ध्वमारोहति क्षिप्रं दंशे पश्चात्तु तिष्ठति।।

दंशः सद्योतिरुक् श्यावस्तुद्यते स्फुटतीव च।

(अ.सं.उ. 43/14)

बिच्छू का तीक्ष्ण विष प्रारम्भ में अग्नि के समान जलाता है - ऐसा प्रतीत होता है जैसे दंशस्थान पर जलता हुआ अंगारा रख दिया गया हो; फिर शीघ्र ही ऊपर की ओर चढ़ता है। तदनन्तर दंशस्थान में स्थिर हो जाता है। दंशस्थान काला पड़ जाता है। वहाँ पर असह्य दाहक वेदना होती है। ऐसा लगता है जैसे वहाँ पर कोई चीज चुभोई जा रही हो या उसे फाड़ा जा रहा हो।

14.1.5 वृश्चिकदंश की साध्यता-असाध्यता के लक्षण (Prognosis of vrshchika bite)

आचार्य चरक ने असाध्य वृश्चिक-दंश के निम्न लक्षण बतलाये हैं -

दष्टोऽसाध्यस्तु दृग्घ्राणरसनोपहतो नरः।
मांसैः पतद्भिरत्यर्थं वेदनार्तो जहात्यसून्।।

(च.चि. 23/151)

प्राणहारक बिच्छू के डस लेने पर प्राणी का हृदय (heart), नासिका (nose) और जिह्वा (tongue) अपना काम करना बन्द कर देते हैं (loss of function)। दंशस्थान से मांस कट-कटकर गिरने लगता है (loss of muscle tissues)

Scanned with CamScanner

तथा वहाँ इतनी तीव्र पीड़ा (excruciating pain) होती है कि प्राणी अपने प्राणों को त्याग देता है।

14.1.6 वृश्चिक दंश का उपचार (Treatment of scorpion bite)

सामान्य चिकित्सा (General treatment)

वृश्चिके स्वेदमभ्यंगं घृतेन लवणेन च।
सेकांश्चोष्णान् प्रयुञ्जीत भोज्यं पानं च सर्पिषः।।

(च.चि. 23/173)

- **बाह्य प्रयोग→**
  - सर्वप्रथम दंशस्थान पर स्वेदन (sudation) कर, सम्पूर्ण शरीर पर घृत और सैन्धव का अभ्यंग (massage) करें।
  - उष्ण औषधि-जलों द्वारा परिषेक (irrigation), अवगाहन (tub bath) और स्नान (bath) कराये।
- **आभ्यन्तर प्रयोग→**
  - रोगी की पाचनशक्ति के अनुसार उसे घृतपान कराये।

विशिष्ट चिकित्सा (Specific treatment) -

उग्र एवं मध्यम विषवाले वृश्चिक दंश की चिकित्सा -

आचार्य सुश्रुत ने उग्र और मध्यम विषवाले वृश्चिकदंशों के उपचार का पृथक्-पृथक् वर्णन करते हुए कहा है -

उग्रमध्यविषैर्दष्टं चिकित्सेत् सर्पदष्टवत्।
आदंशं स्वेदितं चूर्णैः प्रच्छितं प्रतिसारयेत्।।
रजनीसैन्धवव्योषशिरीषफलपुष्पजैः।
मातुलुंगाम्लगोमूत्रपिष्टं च सुरसाग्रजम्।।
लेपे, स्वेदे सुखोष्णं च गोमयं हितमिष्यते।
पाने क्षौद्रयुतं सर्पिः क्षीरं वा बहुशर्करम्।।

(सु.क. 8/67-69)

- **चिकित्सा सिद्धान्त→** उग्र और मध्यम विषवाले बिच्छुओं के डंक मारने पर सर्पदष्ट (snake-bite) की भाँति चिकित्सा करनी चाहिए।
- **बाह्योपक्रम→**
  - दंशस्थान के चारों ओर स्वेदन (sudation) करके, उस स्थान पर पाछें (superficial and multiple incision) लगाकर उस पर हरिद्रा, सैन्धव, त्रिकटु, शिरीष के फल और पुष्प के चूर्ण का प्रतिसारण (local application) करें।
  - तुलसी के पत्रों को बिजौरा नींबू के रस और गोमूत्र में पीसकर लेप (external application) करे।
  - स्वेदन के लिए सूखे गोबर से सुहाता हुआ गर्म सेंक (fomentation) करें।
- **आभ्यन्तर प्रयोग→**
  - पीने के लिए घी और मधु से युक्त प्रचुर मात्रा में शर्करा मिश्रित दूध दें।

मन्द विषवाले वृश्चिक दंश की चिकित्सा-

दंशं मन्दविषाणां तु चक्रतैलेन सेचयेत्।
विदारीगणसिद्धेन सुखोष्णेनाथवा पुनः।।
कुर्याच्चोत्कारिकास्वेदं विषघ्नैरुपनाहयेत्।
गुडोदकं वा सुहिमं चातुर्जातकसंयुतम्।।
पानमस्मै प्रदातव्यं क्षीरं वा सगुडं हिमम्।
शिखिकुक्कुटबर्हाणि सैन्धवं तैलसर्पिषी।।
धूमो हन्ति प्रयुक्तस्तु शीघ्रं वृश्चिकजं विषम्।
कुसुम्भपुष्पं रजनी निशा वा कोद्रवं तृणम्।।
एभिर्घृताक्तैर्धूपस्तु पायुदेशे प्रयोजितः।
नाशयेदाशु कीटोत्थं वृश्चिकस्य च यद्विषम्।।

(सु.क. 8/70-74)

- **बाह्य प्रयोग→**
  - मन्द विषवाले बिच्छुओं के दंश में कोल्हू के तेल से परिषेक (irrigation) करे अथवा विदारीगण की औषधियों से सिद्ध तेल से सुहाता हुआ गर्म सेंक (hot application करे।
  - शिरीष आदि विषहर द्रव्यों से बनाई गई उत्कारिका से स्वेदन (sudation) करे।
  - विषघ्न द्रव्यों से उपनाह (poultice) बाँधे।
  - मोर और मुर्गों के पंख, सेंधा नमक, तेल और घृत; अथवा कुसुम्भ के पुष्प और हल्दी अथवा हल्दी और कोदों को घी में मिलाकर उससे धूपन (smoking) करे।
- **आभ्यन्तर प्रयोग→**
  - दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेसर के चूर्ण से युक्त गुड़ के शरबत को अथवा गुड़ को दूध में घोलकर ठण्डा करके पीने को दें।
- **कुछ अन्य परीक्षित प्रयोग -**

1. रीठे को चबायें, महीन पीसकर दंशस्थान पर लगायें तथा चिलम में भरकर तम्बाकू की भांति पियें।

Scanned with CamScanner

2. जमालगोटे के बीज को घिसकर आँखों में आँजें तथा दंशस्थान पर लगायें।
3. गाय का घी और सेंधा नमक मिलाकर पिलायें और दंशस्थान पर लगायें।
4. शिलादि वटी को चूसें और पानी में पीसकर दंशस्थान पर लगायें।
5. नागरमोथे को पीसकर, पानी में घोलकर पियें और दंशस्थान पर लगायें।
6. अपामार्ग की जड़ को चबायें, उसका रस चूसें और पानी में घिसकर लगायें।
7. चूना और नौसादर अथवा हरताल और नौसादर, अथवा आक का दूध, अथवा पीपल और सिरस के चूर्ण को आक के दूध की तीन भावनाएँ देकर, अथवा पलाश के बीजों को आक के दूध में पीसकर दंशस्थान पर लगायें।
8. जीरा और सेंधा नमक के कल्क में घी और मधु मिलाकर सुहाता गर्म लगायें।
9. तुलसी की जड़ को पीसकर, गोली बनाकर दंशस्थान पर फेरें।
10. दंशस्थान को गुग्गुलु से धूपित करके, मदार के पत्तों को पीसकर लेप करें।

14.2 Scorpion Bite

Facts

- More than 1250 species of scorpions are found worldwide.
- Scorpions are more poisonous than snakes.
- Scorpion venom has both neurotoxic and hemotoxic actions.

Signs and Symptoms

- Severe localized pain and burning sensation
- Edema
- Reddening of the bite-site
- Nausea
- Vomiting
- Restlessness
- Profuse sweating
- Convulsions

Treatment

- Application of tourniquet
- Incision (if required)
- Washing of the bite-site
- Injection of local anaesthetic agents
- Calcium gluconate i.v.
- Barbiturates etc.

Medico-Legal Aspects

- Accidental

Post-Mortem Appearance

- Signs of hemorrhage in nose, mouth etc.

14.3 शतपदी (Centipedes)

14.3.1 परिचय (Introduction)

लोकभाषा में इन्हें कनगोजर या कनखजूरा कहते हैं। इनका शरीर समान आकार के 25 खण्डों में विभाजित रहता है और प्रत्येक खण्ड में 4 पैर होते हैं। सिर स्पष्ट होता है। उसके सिरे पर दो ऐण्टिनी निकलते हैं। इसके जबड़ों में विष रहता है। शरीर अधर तल से चपटा रहता है।

14.3.2 भेद (Classification)

आचार्य सुश्रुत ने इनके 8 प्रकार बतलाये हैं

शतपद्यस्तु - परुषा, कृष्णा, चित्रा, कपिला, पीतिका, रक्ता, श्वेता, अग्निप्रभा, इत्यष्टौ। (सु.क. 8/30)

1. परुषा
2. कृष्णा
3. चित्रा
4. कपिला
5. पीतिका
6. रक्ता
7. श्वेता और
8. अग्निप्रभा

ये त्वचा में अपने पैर गड़ाकर इस प्रकार चिमट जाते हैं कि फिर चिमटी से खींचने या गर्मागर्म लोहे के स्पर्श से भी नहीं छूटते। उलटे जितना इसको छुड़ाने का प्रयत्न किया जाता है उतना ही ये अपने पैर और गहरे गड़ाते जाते हैं।

14.3.3 लक्षण (Symptoms)

इनकी विषाक्तता के लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है -

ताभिर्दष्टे शोफो वेदना दाहश्च हृदये, श्वेताग्नि-प्रभाभ्यामेतदेव दाहो मूर्च्छा चातिमात्रं श्वेतपिड-कोत्पत्तिश्च।। (सु.क. 8/30)

Scanned with CamScanner

अर्थात् इनके दंश से शोफ (edema), वेदना (pain) और हृदय में दाह (burning sensation in the cardiac region) होती है। श्वेता और अग्निप्रभा के दंश में दाह (burning sensation) और मूर्च्छा (fainting) अति मात्रा में होते हैं और दंशस्थान पर श्वेत पिडिकाएँ (whitish blisters) उत्पन्न हो जाती हैं।

आचार्य वृद्धवाग्भट ने स्थानीय लक्षणों का अधिक स्पष्ट वर्णन किया है –

पीतः शतपदीदंशः स्वेदरुग्रागशोफवान्
अतसीपुष्पवर्णो वा पिटकावन्भ्रमप्रदः।।

(अ.सं.उ. 43/12)

शतपदी का दंश पीला होता है। दंशस्थान में लाली (redness), सूजन (edema) और पीड़ा (pain) होती है। अथवा वह अलसी के फूल के वर्ण का और पिडिकायुक्त हो जाता है। रोगी को पसीना (sweating) और चक्कर (giddiness) आने लगते हैं।

14.3.4 चिकित्सा (Treatment)

उसके मुँह के आगे ताजे मांस का टुकड़ा या गुड़ में भीगा हुआ कपड़ा रख दें। वह रोगी को छोड़कर उसमें चिमट जायेगा। उस पर चीनी डाल देने से वह छूट जाता है। छूटने के बाद दंशस्थान पर निम्न लेपों में से किसी एक का प्रयोग करें –

1. हलदी, दारुहलदी, सेंधा नमक और घी को एकत्र पीसकर,
2. हलदी और दारुहलदी; अथवा हलदी, दारुहलदी, गेरू और मैनसिल को पानी में पीसकर;
3. केसर, तगर, सहजन, पद्माख, हलदी और दारुहलदी को पानी में पीसकर;

कुंकुमं तगरं शिग्रु पद्मकं रजनीद्वयम्।
अगदो जलपिष्टोऽयं शतपद्विषनाशनः।। (सु.क. 8/49)

4. कनखजूरे को ही कूटकर उसकी काटी हुई जगह पर रख दें।
5. आचार्य वाग्भट ने सर्जिक्षार, अजा के मल से निर्मित क्षार, तुलसी, अक्षिपीड़क (शंखिनी) को मदिरा के मण्ड के साथ पीसकर लेप लगाने का आदेश दिया है; यथा –

स्वर्जिकाजशकृत्क्षारः सुरसः साक्षिपीडकः।
मदिरामण्डसंयुक्तो हितः शतीपदीविषे।।

(अ.सं.उ. 43/36)

14.4 Centipede Bite

Signs and Symptoms

- Localized swelling
- Intense pain
- Necrosis (of the bite-site)

Treatment

- Symptomatic treatment

14.5 लूता विष (Spider's Venom)

14.5.1 परिचय (Introduction)

भारत में अनेक प्रकार की लूताएँ (मकड़े-मकड़ियाँ) पाई जाती हैं। कुछ तो घरों में सामान्य रूप से पायी जाती हैं। ये अल्प विषवाली होती हैं। दूसरी वे जो घने जंगलों, उजड़े हुए खण्डहरों, झाड़-झंखाड़ आदि में पायी जाती हैं। ये विभिन्न आकार-प्रकार की होती हैं। इन्हीं में से एक नफीला होती है। यह काफी बड़ी और चमकीली होती है। इसके जाले काफी बड़े आकार के और बहुत ही मजबूत होते हैं। इनके तन्तु रेशम से भी मजबूत होते हैं। बृहत् आकारी मकड़ियों में से ही पक्षी-भक्षी मकड़ी भी होती है। यह बड़े से बड़े कीड़े-मकोड़ों, मेढकों, छिपकलियों तथा पक्षियों तक को अपने जाले में फँसाकर खा जाती हैं। आदमी के लिए भी इसका दंश बड़ा ही जहरीला और पीड़ादायक सिद्ध होता है। आसाम के चाय-बागानों में एक ऐसी विषैली मकड़ी पाई जाती है जो कभी-कभी चाय चुननेवालों के सामान्यतया हाथ के पृष्ठ भाग या अँगुली में काट लेती है। इससे सम्बद्ध अंग में तेजी के साथ रक्त का स्कन्दन होने लगता है। रक्त-सञ्चार के अवरुद्ध हो जाने से प्रभावित अंग अपनी क्षमता खो देता है। संहिताकाल में जबकि जंगल अधिक थे, हो सकता है इससे भी भयानक लूताएँ रही हों।

लूताएँ जाल में फँसे प्राणी में दंश के द्वारा एक प्रकार के विष और पाचक रस का प्रक्षेपण कर देती हैं, जिससे न केवल वह मर जाता है, प्रत्युत अन्दर से गल भी जाता है। बाद में वे आकर उसका समस्त रस चूस लेती हैं। जाल में मात्र बाहरी ढाँचा पड़ा रह जाता है।

घरेलू लूताओं की लार और उनसे स्रवित चिपचिपे पदार्थ (चेप) में भी एक प्रकार का सौम्य विष रहता है। जब ये कपड़ों, भोजन, पेय आदि को अपनी लार और चेप से दूषित कर देती है तो उनका उपयोग करने से अथवा लूताओं के शरीर पर गिरने, चढ़ने एवं रगड़ जाने से भी उनका विष प्राणी में पहुँच कर अथवा उनके

Scanned with CamScanner

शरीर का स्पर्श कर उसे दूषित कर देता है। इससे अनेक प्रकार के स्थानीय और कभी-कभी सार्वदैहिक लक्षण भी उत्पन्न हो जाते हैं।

आयुर्वेद की संहिताओं में जिस प्रकार की लूताओं और उनके विष की भयानकता का वर्णन किया गया है, वह अधिकांशत: दूसरी कोटि की लूताओं की विषाक्तता से ही सम्बद्ध प्रतीत होता है।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार लूताविष अत्यधिक भयानक, कठिनाई से जाना जानेवाला और दुश्चिकित्स्य होता है -

लूताविषं घोरतमं दुर्विज्ञेयतमं च तत्।
दुश्चिकित्स्यतमं चापि भिषग्भिर्मन्दबुद्धिभि:।।

(सु.क. 8/75)

जिस प्रकार मात्र फूटते हुए अंकुर को देखकर यह नहीं कहा जा सकता कि वृक्ष किस जाति का है, उसी प्रकार अल्प रूप में व्यक्त लूताविष को पहचानना अति कठिन होता है -

प्रोद्भिद्यमानस्तु यथाऽंकुरेण न व्यक्तजाति: प्रविभाति वृक्ष:। तद्वददुरालक्ष्यतमं हि तासां विषं शरीरे प्रविकीर्णमात्रम्।। (सु.क. 8/79)

लूताओं का विष व्यक्त होने में 7 दिनों का समय लेता है -

ईषत्सकण्डु प्रचलं सकोठमव्यक्तवर्णं प्रथमेऽहनि स्यात्।
अन्तेषु शूनं परिनिम्नमध्यं प्रव्यक्तरूपं च दिने द्वितीये।।
त्र्यहेण तद्दर्शयतीह रूपं विषं चतुर्थेऽहनि कोपमेति।
अतोऽधिकेऽह्नि प्रकरोति जन्तोर्विषप्रकोपप्रभवान् विकारान्।।
षष्ठे दिने विप्रसृतं तु सर्वान् मर्मप्रदेशान् भृशमावृतोति।
तत् सप्तमेऽत्यर्थपरीतगात्रं व्यापादयेन्मर्त्यमतिप्रवृद्धम्।।

(सु.क. 8/80-82)

1. प्रथम दिवस → पहले दिन वह अल्प कण्डूवाला, प्रचल, कोठयुक्त एवं अव्यक्त वर्ण का होता है।
2. द्वितीय दिवस → दूसरे दिन किनारों पर सूजा हुआ, मध्य में दबा हुआ तथा स्पष्ट लक्षणोंवाला हो जाता है।
3. तृतीय दिवस → तीसरे दिन उभर कर और भी स्पष्ट हो जाता है।
4. चतुर्थ दिवस → चौथे दिन विष प्रकुपित होता है।
5. पञ्चम दिवस → पाँचवे दिन विष-प्रकोपजन्य अन्य विकारों को उत्पन्न करता है।
6. षष्ठ दिवस → छठे दिन विष सम्पूर्ण शरीर में फैलकर मर्मस्थानों को आवृत कर लेता है।
7. सप्तम दिवस → सातवें दिन उग्र रूप धारण कर प्राणी को मार देता है।

प्राइस के कथनानुसार भी - 'लूताओं की कुछ प्रजातियों का दंश इतना तीव्र विषाक्त होता है, जिसके फलस्वरूप दष्ट प्राणी में भयंकर विषाक्तता उत्पन्न हो जाती है और कभी-कभी वह मर भी जाता है।'

14.5.2 लूताओं के भेद (Classification) -

आचार्य सुश्रुत मतेन

कृच्छ्रध्साध्यास्तथाऽसाध्या लूतास्तु द्विविधा: स्मृता:।
तासामष्टौ कृच्छ्रध्साध्या वर्ज्यास्तावत्य एव तु।।
त्रिमण्डला तथा श्वेता कपिला पीतिका तथा।
आलमूत्रविषा रक्ता कसना चाष्टमी स्मृता।।
सौवर्णिका लाजवर्णा जालिन्येणीपदी तथा।
कृष्णाऽग्निवर्णा काकाण्डा मालागुणाऽष्टमी तथा।।

(सु.क. 8/94-95,97)

आचार्य सुश्रुत ने चिकित्सात्मक दृष्टि से लूताओं के दो भेद माने हैं -

1. कृच्छ्रसाध्य
2. असाध्य।

इनमें से प्रत्येक के 8 प्रकार बतलाये गये हैं।

इन लूताओं के नाम हैं -

कष्टसाध्य लूताएँ	असाध्य लूताएँ
1. त्रिमण्डला	1. सावर्णिका
2. श्वेता	2. लाजवर्णी
3. कपिला	3. जालिनी
4. पीतिका	4. एणीपदी
5. आलविषा	5. कृष्णाक्र
6. मूत्रविषा	6. अग्निवर्णा
7. रक्ता और	7. काकाण्डा और
8. कसना।	8. मालागुणा।

आचार्य सुश्रुत ने इन सभी के दंश से उत्पन्न सामान्य एवं विशिष्ट लक्षणों का पृथक्-पृथक् विस्तार से वर्णन किया है -

सु.क. 8/94-120

आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन

तत्र घोरतमा लूता भिद्यन्ते ता अपि त्रिधा।
तीक्ष्णमध्यावरत्वेन घ्नन्ति चाश्वचिकित्सिता:।
सप्ताहेन दशाहेन पक्षेण च परं क्रमात्।। अ.सं.उ. 44/4

Scanned with CamScanner

आचार्य वृद्धवाग्भट ने विषाक्तता की दृष्टि से इनके तीन भेद बतलाये हैं -

1. तीक्ष्ण
2. मध्य
3. अवर।

शीघ्र चिकित्सा न करने से ये रोगी को क्रमशः 7, 10 और 15 दिनों में मार देती हैं। आगे उन्होंने प्रभाव की दृष्टि से विस्तृत नामोल्लेख के साथ 7-7 प्रकार की आग्नेय, सौम्य, वायव्य और मिश्र लूताओं का वर्णन प्रस्तुत किया है। इनमें से आग्नेय प्रधान रूप से पैत्तिक, सौम्य कफज, वायव्य वातज और मिश्र सन्निपातज विकारों को उत्पन्न करती हैं। यथा -

कपिलाग्निमुखी पीता पद्मा मूत्रा सिताऽसिता।
आग्नेय्यः स्वेदजाः सप्त लूताः पित्तविकारदाः।।

पाण्डुरा रक्तपदिका भृंगा पिंगा त्रिमण्डला।
पूतिर्वीराऽण्डजाः सप्त सौम्याः श्लेष्मविकारदाः।।

कुमुदाऽलविषा रक्ताश्चित्रा सन्तानिमेचका।
कसना चोद्भिदाः सप्त वायव्या वायुरोगदाः।।

काकाण्ड्येणपदी लाजा वैदेही जालिनी तथा।
मालागुणा सुवर्णा च मिश्राः सप्तोपपादिकाः।।

व्याप्नुवन्त्याशु गात्राणि ज्वलत्पावकसन्निभाः।
सन्निपातकृतोऽसाध्याः साध्याः कृच्छ्रेण चेतराः।।

(अ.सं.उ. 44/5-9)

14.5.3 कष्टसाध्य लूताविष के सामान्य लक्षण (Symptoms of bite of difficult to cure luta)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

ताभिर्दष्टे शिरोदुःखं कण्डूर्दंशे च वेदना।
भवन्ति च विशेषेण गदाः श्लैष्मिकवातिकाः।।

(सु.क. 8/96)

दंश-स्थान पर कण्डू (itching), वेदना (pain) तथा वातकफजन्य अन्य विकार।

14.5.4 असाध्य लूताविष के लक्षण (Symptoms of bite of incurable luta)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

ताभिर्दष्टे दंशकोथः प्रवृत्तिः क्षतजस्य च।
ज्वरो दाहोऽतिसारश्च गदाः स्युश्च त्रिदोषजाः।।
पिडका विविधाकारा मण्डलानि महान्ति च।
महान्तो मृदवः शोफा रक्ताः श्यावाश्चलास्तथा।।
सामान्यं सर्वलूतानामेतदादंशलक्षणम्।

(सु.क. 8/98-100)

दंश-स्थान का सड़ना (putrefaction), रक्तस्राव (hemorrhage), विविध प्रकार की पिड़िकाएँ (blisters), बड़े-बड़े चकत्ते (rashes), लाल, श्याव, कोमल तथा फैलनेवाली सूजन (edema), वेदना (pain), दाह (burning sensation), ज्वर (fever), अतिसार (diarrhea) तथा त्रिदोषजन्य अन्य लक्षण।

14.5.5 विशिष्ट लक्षण (Specific symptoms)

1. त्रिमण्डला नामक लूता -

त्रिमण्डलाया दंशेऽसृक् कृष्णं स्रवति दीर्यते।
बाधिर्यं कलुषा दृष्टिस्तथा दाहश्च नेत्रयोः।।

(सु.क. 8/101)

त्रिमण्डला नामक लूता के दंश में दंशस्थल से कृष्णवर्ण का रक्तस्राव होता है, व्रण विदीर्ण हो जाता है, बाधिर्य, दृष्टि धुँधली तथा नेत्रों में दाह होता है।

2. श्वेता नामक लूता -

श्वेतायाः पिडका दंशे श्वेता कण्डूमती भवेत्।
दाहमूर्च्छाज्वरवती विसर्पक्लेदरुक्करी।।

(सु.क. 8/103)

श्वेता नामक लूता के दंश में दंशस्थान पर श्वेतवर्ण की कण्डूयुक्त पिडका निकल आती है। इसमें दाह, मूर्च्छा, ज्वर, विसर्प, क्लेद और वेदना होते हैं।

3. कपिला नामक लूता -

आदंशे पिडका ताम्रा कपिलायाः स्थिरा भवेत्।
शिरसो गौरवं दाहस्तिमिरं भ्रम एव च।।

(सु.क. 8/105)

कपिला नामक लूता के दंश में दंशस्थान पर ताम्र वर्ण की पिड़का जो स्थिर होती है, निकल आती है। इसमें शिर का भारीपन, दंशस्थल पर दाह, तिमिर और भ्रम होते हैं।

4. पीतिका नामक लूता -

आदंशे पीतिकायास्तु पिडका पीतिका स्थिरा।
भवेच्छर्दिर्ज्वरः शूलं मूर्ध्नि रक्ते तथाऽक्षिणी।।

(सु.क. 8/107)

पीतिका नामक लूता के दंशविष से दंशस्थान पर स्थिर पिडका निकल आती है और वमन, ज्वर, शिरःशूल, और नेत्र रक्तवर्ण की होती हैं।

Scanned with CamScanner

5. आलविषा नामक लूता -

रक्तमण्डनिभे दंशे पिडकाः सर्षपा इव।
जायन्ते तालुशोषश्च दाहश्चालविषार्दिते।।

(सु.क. 8/109)

आलविषा नामक लूता के दंश में रक्तवर्ण की पिडका दंशस्थान पर निकल आती है जो सर्षप के आकार की होती है। इसमें तालुशोष और दाह होते हैं।

6. मूत्रविषा नामक लूता -

पूतिर्मूत्रविषादंशो विसर्पी कृष्णशोणितः।
कासश्वासवमीमूर्च्छाज्वरदाहसमन्वितः।।

(सु.क. 8/111)

मूत्रविषा नामक लूता के दंश में पूति, विसर्प,कृष्णवर्णीय रक्तस्राव, कास, श्वास, वमन, मूर्च्छा, ज्वर और दाह ये लक्षण उत्पन्न होते हैं।

7. रक्ता नामक लूता -

आपाण्डुपिडको दंशो दाहक्लेदसमन्वितः।
रक्ताया रक्तपर्यन्तो विज्ञेयो रक्तसंयुतः।।

(सु.क. 8/113)

रक्ता नामक लूता के दंश में दंशस्थान के चारों ओर पाण्डुवर्ण की पिडकायें निकल आती हैं, दाह और क्लेद होते हैं तथा इसके किनारे रक्तवर्ण और रक्तयुक्त होते हैं।

8. कसना नामक लूता -

पिच्छिलं कसनादंशादुधिरं शीतलं स्रवेत्।
कासश्वासौ च तत्रोक्तं रक्तलूताचिकित्सितम्।।

(सु.क. 8/115)

कसना नामक लूता के दंश से पिच्छिल और शीतल रक्त निकलता है और कास एवं श्वास ये लक्षण उत्पन्न होते हैं।

9. कृष्णा नामक लूता -

पुरीषगन्धिरल्पासृक् कृष्णाया दंश एव तु।
ज्वरमूर्च्छावमीदाहकासश्वाससमन्वितः।।

(सु.क. 8/116)

कृष्णा नामक लूता के दंश में दंशस्थान से पुरीष की गन्ध आती है और अल्पमात्रा में रक्तस्राव होता है। साथ ही ज्वर, मूर्च्छा, वमन, दाह, कास और श्वास ये लक्षण उत्पन्न होते हैं।

10. लाज नामक लूता -

दंशे दाहोऽग्निवत्क्रायाः स्रावोऽत्यर्थं ज्वरस्तथा।
चोषकण्डूरोमहर्षा दाहविस्फोटसंयुतः।। (सु.क. 8/118)

लाज या अग्निवर्णा नामक लूता के दंश में दाह, अत्यधिक स्राव, ज्वर, चोष, कण्डू, रोमहर्ष, दाह और स्फोट उत्पन्न होते हैं।

11. सौवर्णिका नामक लूता -

ध्यामः सौवर्णिकादंशः सफेनो मत्स्यगन्धकः।
श्वासः कासो ज्वरस्तृष्णा मूर्च्छा चात्र सुदारुणा।।

(सु.क. 8/122)

सौवर्णिका नामक लूता के दंश का वर्ण ध्याम अर्थात् पकी ईंट के रंग जैसे, फेनयुक्त और मत्स्यगन्धि होता है तथा श्वास, कास, ज्वर, तृष्णा एवं दारुण मूर्च्छा ये लक्षण पाये जाते हैं।

12. लाजवर्णा नामक लूता -

आदंशे लाजवर्णाया ध्यामं पूति स्रवेदसृक्।
दाहो मूर्च्छाऽतिसारश्च शिरोदुःखं च जायते।।

(सु.क. 8/123)

लाजवर्णा नामक लूता के दंश का वर्ण पकी ईंट के वर्ण के समान, दुर्गन्धयुक्त, रक्तस्रावयुक्त तथा दाह, मूर्च्छा, अतिसार और शिरोवेदना युक्त होता है।

13. जालिनी नामक लूता -

घोरो दंशस्तु जालिन्या राजिमानवदीर्यते।
स्तम्भः श्वासतमोवृद्धिस्तालुशोषश्च जायते।।

(सु.क. 8/124)

जालिनी नामक लूता के दंश के लक्षणों में भायनक, धारियों से युक्त, विदीर्ण हुआ, जकड़ाहट लिये तथा श्वास, अन्धकार का बार-बार दिखना और तालुशोष पाये जाते हैं।

14. एणीपदी नामक लूता -

एणीपद्यास्तथा दंशो भवेत् कृष्णतिलाकृतिः।
तृष्णामूर्च्छाज्वरच्छर्दिकासश्वाससमन्वितः।।

(सु.क. 8/125)

एणीपदी नामक लूता के दंश में दंश की आकृति काले तिल जैसी और साथ में तृष्णा, मूर्च्छा, ज्वर, वमन, कास और श्वास होते हैं।

15. काकाण्डा नामक लूता -

दंशः काकाण्डिकादष्टे पाण्डुरक्तोऽतिवेदनः।
तृण्मूर्च्छाश्वासहृद्रोगहिक्काकासाः स्युरुच्छ्रिताः।।

(सु.क. 8/126)

काकाण्डा नामक लूता का दंश वर्ण में पाण्डुरक्त, अतिवेदना युक्त तथा तृष्णा, मूर्च्छा, श्वास, हृद्रोग, हिक्का और कास अधिक: इन लक्षणों से युक्त होता है।

Scanned with CamScanner

16. मालागुणा नामक लूता -

रक्तो मालागुणादंशो धूमगन्धोऽतिवेदनः।
बहुधा च विशीर्येत दाहमूर्च्छाज्वरान्वितः।।

(सु.क. 8/127)

मालागुणा नामक लूता का दंश रक्तवर्ण का, धूमगन्धी और तीव्र वेदनायुक्त होता है, कई स्थानों से विदीर्ण हुआ होता है तथा साथ में दाह, मूर्च्छा एवं ज्वर होते हैं।

प्राइस ने लूतादंश के लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए कहा है - 'सामान्यतया लूतादंश में स्थानीय रूप से अल्प मात्रा में चुभनभरी पीड़ा, शोथ और त्वगरक्तिमा के लक्षण देखे जाते हैं। परन्तु गम्भीर दंश में स्थानीय लक्षणों के बाद ही सार्वदैहिक लक्षण भी उत्पन्न होने लगते हैं। दंश-स्थान से पीड़ा का दंश के चारों ओर प्रसार होने लगता है। कभी-कभी वह वक्ष एवं उदर तक फैल जाती है। पेशियों, विशेषरूप से आकुंचनी पेशियों (flexor muscles) में इतनी गम्भीर पीड़ा और उद्वेष्टन होने लगता है कि प्राणी दर्द से दोहरा हो जाता है। पसीना और लार अत्यधिक मात्रा में आने लगते हैं। अधिजठर में गम्भीर पीड़ा होने लगती है। उदर में स्तब्धता, ज्वर और हृद्क्षिप्रता (tachycardia) के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। बच्चों में संचरणपात में मृत्यु तक हो सकती है। - Price: Textbook of the Practice of Medicine, p. 304.

14.5.6 लूताओं द्वारा विष का प्रक्षेपण (Induction of visha by luta)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

श्वासदंष्ट्राशकृन्मूत्रशुक्रलालानखार्त्तवैः।
अष्टाभिरुद्वमन्त्येता विषं वक्त्राद्विशेषतः।।

(अ.सं.उ. 44/12)

लूताएँ श्वास (breathe), दंष्ट्रा (bite/ sting), मल (feces), मूत्र (urine), शुक्र (semen), लालास्राव (saliva), नख (nails) और आर्तव (menstrual blood) द्वारा विष को प्रक्षेपित करती हैं। विशेषरूप से मुख से ही विष-वमन करती हैं।

14.5.7 विभिन्न अंगों द्वारा प्रक्षेपित विष के लक्षण (Symptoms of luta visha - as per the site of induction)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

श्वासेन दंशः सहसा सूयते ज्वरदाहवान्।
दंष्ट्राकृतस्तूग्रतरो विवर्णः कठिनः स्थिरः।।
गम्भीरशोफवांस्तोदवेदनादाहसंयुतः।
दुर्गन्धी शकृता दाहकण्डूचिमिचिमान्वितः।।
पच्यते चाशु पक्वश्च पाण्डुः पीलुफलोपमः।
मूत्रेण रक्तपर्यन्तो मध्ये कृष्णो विशीर्यते।।
आवर्त्तसदृशः शूनः पूतिः सर्पति दह्यते।
शुक्रेन ग्रन्थिसंस्थानः कठिनस्तीव्रवेदनः।।
अल्पमूलोऽल्परुक्कोठो लालया कण्डुरो मृदुः।
नखेन चोषपिटकाकण्डूधूमायनान्वितः।
किंशुकोदरवर्णस्तु रजसा चञ्चुमालवान्।।

(अ.सं.उ. 44/13)

1. श्वास द्वारा प्रक्षेपित विष के प्रभाव से दंश-स्थान सहजा सूज (edema) जाता है। दाह (burning sensation) होती है और रोगी ज्वरग्रस्त (fever) हो जाता है।
2. दंष्ट्राविष के फलस्वरूप दंश-स्थान उग्र, विवर्ण, कठोर, गम्भीर सूजनवाला, तोद और चुभन की पीड़ा तथा दाहयुक्त होता है।
3. मल के संसर्ग से उत्पन्न दंश दुर्गन्धित; दाह, कण्डू और चिमचिमाहट से युक्त, शीघ्रपाकी, पाण्डुवर्ण का और पीलु के फल के समान होता है।
4. मूत्र के संसर्ग से उत्पन्न दंश किनारों पर लाल, बीच में काला, गमनशील, दुर्गन्धित, सूजन और दाह से युक्त तथा प्रसरणशील होता है।
5. शुक्र के संसर्ग से उत्पन्न दंश गाँठ के समान, कठोर, तीव्र वेदनावाला होता है।
6. लाला से उत्पन्न दंश अल्पमूल, अल्प वेदनावाला, लालिमायुक्त, लाल, कोमल और कण्डूयुक्त होता है।
7. नख से उत्पन्न दंश चोष, पिड़िका, कण्डू से युक्त तथा धूम के वर्ण वाला होता है।
8. आर्तव से उत्पन्न दंश अन्दर से पलाशपुष्प के समान और बाहर से नुकीला होता है।

आयुर्वेद की संहिताओं में जिन भयंकर लूताओं और उनके दुर्दमनीय एवं मारक लक्षणों का वर्णन किया गया है, उस प्रकार की लूताएँ सघन जंगलों और पुराने, परित्यक्त और झाड़-झंखाड़ युक्त खण्डहरों में पाई जाती हैं। घरों में सामान्य रूप से जो मकड़ियाँ पाई जाती हैं, उनमें एक सौम्य स्वरूप का शीघ्र प्रभावकारी विष पाया जाता हे। जिसका संसर्ग सामान्यतया स्थानीय रूप से क्षोभ, दाह, कण्डू और लाल किनारोंवाली, पूययुक्त तथा फैलनेवाली पिड़िकाओं को उत्पन्न करता है। जहाँ-जहाँ इन पिडिकाओं का स्राव लगता है, वहाँ उसी आकार-प्रकार की नई फुंसियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

Scanned with CamScanner

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार प्रायः सभी लूताएँ त्रिदोषात्मक होती हैं, उनमें पित्त और कफ की प्रधानता होती है –

त्रिदोषाः प्रायशः सर्वा लूताः पित्तकफाधिकाः।।

(अ.सं.उ 44/19)

14.5.8 लूताविष का उपचार
(Treatment of spider's venom)

समस्त लूताओं की सामान्य चिकित्सा –

नस्याञ्जनाभ्यञ्जनपानधूमं तथाऽवपीडं कवलग्रहं च।
संशोधनं चोभयतः प्रगाढं कुर्यात्सिरामोक्षणमेव चात्र।

(सु.क. 8/134)

लूतादंश की चिकित्सा में निम्नलिखित दश उपक्रम प्रयुक्त होते हैं –

1. नस्य, 2. अञ्जन, 3. अभ्यंग,
4. पान, 5. धूम, 6. अवपीड (नस्यभेद),
7. कवलग्रह, 8. तीव्र वमन 9. विरेचन तथा
10. सिरावेध द्वारा रक्त निकालना

सर्वासामेव युञ्जीत विषे श्लेष्मातकत्वचम्।
भिषक् सर्वप्रकारेण तथा चाक्षीवपिप्पलम्।।

(सु.क. 8/120)

सभी प्रकार लूताओं की सामान्य चिकित्सा में लिसोड़े की छाल और क्षीरपिप्पल का पानाभ्यञ्जनादि में प्रयोग करना चाहिए।

असाध्यास्वप्यभिहितं प्रत्याख्यायाशु योजयेत्।
दोषोच्छ्रयविशेषेण दाहच्छेदविवर्जितम्।।

(सु.क. 8/128)

असाध्य लूताओं की दोषों की अधिकाता के अनुसार प्रत्याख्येय (असाध्य कह) कर शीघ्र चिकित्सा करनी चाहिए। परन्तु असाध्यों में दहन एवं छेदन कर्म नहीं करने चाहिए।

आचार्य वृद्ध वाग्भट के अनुसार लूता से दष्ट रोगी में दंश को मूलसहित मण्डलाग्र नामक यन्त्र से निकाल कर जाम्ब्वोष्ठ आदि शस्त्र से जलायें। परन्तु पित्तप्रधान दंश को नहीं जलाना चाहिए।कर्कश, नष्टरोम, मर्म या सन्धि आदि में स्थित तथा सब तरफ फैले दंश को न जलाये और न काटे। उस पर मधु और सैन्धव आदि मिश्रित विषनाशक अगदों का लेप करे। अनन्तर बरगद आदि क्षीरी वृक्षों के अतिशीतल कषायों से परिषेक करे। सींग आदि या सिरावेध द्वारा रक्तमोक्षण करायें। दूषित रक्त के निकल जाने पर घी, दूध आदि से परिषेक करे।

14.5.9 लूताविष नाशक कुछ योग
(Formulations for treating luta poison)

1. मालकंगनी, अर्जुन की छाल, कटसरैया, लिसोढ़े की छाल तथा अन्य क्षीरी वृक्षों की छाल के कषाय, कल्क, चूर्ण आदि का मुख द्वारा सेवन करने; कषाय से घाव को धोने, उस पर कल्क को लगाने और चूर्ण को छिड़कने आदि से लूताविष तथा अन्य कीटदंशजन्य विष नष्ट होते हैं।
2. हल्दी, दारुहल्दी, पतंग, मजीठ और नागकेसर को ठण्डे जल में पीसकर लेप करें।
3. लाल चन्दन, सफेद चन्दन और मुर्दाशंख को पीसकर लगायें।
4. करञ्ज, आक का दूध, कनेर, अतीस, चित्रक और अखरोट – इनके स्वरस से सिद्ध तैल लगायें।
5. श्वेत पुनर्नवा अथवा अपामार्ग की जड़ को महीन पीस कर मक्खन में मिलाकर लगायें।
6. मण्डला अथवा सोंठ और जीरे को पानी में पीसकर लगायें।
7. चूने को नीबू के रस में खरल करके; अथवा तिल के तेल और चिरौंजी के साथ पीसकर लेप करें।
8. खली और हल्दी को पानी में पीसकर लेप करें।
9. कत्था 20 ग्राम, कपूर 10 ग्राम और सिन्दूर 6 ग्राम – इन तीनों को बारीक पीसकर, कपड़े से छानकर शतधौत घृत या मक्खन में मिलाकर लगायें।
10. बिगड़े हुए केसों में त्रैलोक्यचिन्तामणि, स्वर्णभूपति, गन्धक रसायन, अश्वकञ्चुकी रस आदि का भी आवश्यकतानुसार अन्तः प्रयोग करें।

चिकित्सा – दंश-स्थान से थोड़ा ऊपर अरिष्टा-बन्धन करें। दंश-स्थान पर चीरा लगाकर उसे पोटैशियम परमैंगनेट के घोल से धोयें। सूजन हो तो लेड-लोशन में कपड़ा भिगोकर उस पर रखें। परीक्षित प्रतिविषों का प्रयोग करें। वेदना अधिक हो तो मार्फीन का इञ्जेक्शन दें। पेशीय उद्वेष्टन को कम करने के लिए 10 प्रतिशत कैल्शियम-ग्लूकोनेट और ग्लूकोज सेलाइन का अन्तःशिरा द्वारा उपयोग करें।

14.6 Spider Venom

Facts

- Spider venoms are either cytotoxic or neurotoxic.

Signs and Symptoms

- Localized swelling

Scanned with CamScanner

- Pain at the site
- Reddening at the site
- Muscle cramps
- Delirium
- Convulsions

Treatment

- Anti-venin
- Adrenaline
- Symptomatic treatment etc.

14.7 मधुमक्खी, ततैया, हड्डे, भौंरे आदि के दंश (Bee, Wasp and Hornet Stings)

14.7.1 परिचय (Introduction)

इनमें से कुछ का दंश बड़ा ही कष्टदायक होता है। दंशस्थान में सूजन और लाली आ जाती है। तीव्र दाह एवं वेदना होती है। सिर चकराने लगता है। कभी-कभी ज्वर भी हो जाता है।

14.7.2 चिकित्सा (Treatment)

- दंशस्थान को दबाकर डंक को निकालने का प्रयास न करें। उसे नाखूनों या चाकू की नोक के सहारे निकालें।
- तीव्रग्राही प्रतिक्रिया के लक्षणों में बृहद् योगराज गुग्गुल, शिर:शूलादि वज्र रस तथा शिर:शूलादि लेप का उपयोग करें।

14.7.3 Modern Treatment

- Adrenaline 0.5 ml s.c.
- Prednisolone 20 mg

14.7.4 बाह्य प्रयोग (External applications)

दंशस्थान पर निम्न योगों में से किसी एक का लेप करें या लगायें -

1. घी, सेंधा नमक और तुलसी के पत्तों को एकत्र पीसकर;
2. काली मिर्च, सेंधा नमक, सोंचर नमक और सोंठ को नागर पान के रस में घोटकर;
3. पीपल को पानी में पीसकर;
4. मकोय की पत्तियों को सिरके में पीसकर;
5. हरी धनिया के रस, तिल कल्क या कपूर को सिरके में मिलाकर;
6. गन्धक को पानी में पीसकर;
7. ताजा गोबर;
8. 21 या 100 बार धोया हुआ घी;
9. आक का दूध;
10. दंशाग लेप;
11. कपड़े को सिरके में भिगोकर बरफ पर ठण्डा करके;
12. अलकोहल, स्पिरिट या पेट्रोल।

14.8 मूषक विष (Rat Bite Poisoning)

14.8.1 परिचय (Introduction)

जंगम विष के सोलह अधिष्ठानों में शुक्र (semen) को भी सम्मिल्लित किया गया है। मूषिक (rat) के शुक्र में विष होता है -

मूषिका: शुक्रविषा:। (सु.क. 3/5)

आचार्य सुश्रुत ने कल्पस्थान के 7वें अध्याय (मूषिककल्प अध्याय) में इसका विस्तार से वर्णन किया है।

14.8.2 मूषिक के पर्याय (Synonyms of mushika)

आचार्य नरहरि पण्डित ने 'राजनिघण्टु' के सिंहादिवर्ग में मूषिक के निम्न पर्यायों का उल्लेख किया है-

1. मूषिक	2. मूषक	3. पिंग
4. आखु	5. उन्दुरुक	6. नखी
7. खनक	8. विलकार	9. धान्यारि
10. बहुप्रज		

14.8.3 सन्दर्भ (References)

आचार्य सुश्रुत ने कल्पस्थान के सातवें अध्याय (मूषिककल्पाध्याय), आचार्य वृद्धवाग्भट ने उत्तरस्थान के 46वें अध्याय (मूषिकालर्क-प्रतिषेधाध्याय) तथा आचार्य वाग्भट ने उत्तरस्थान के 38वें अध्याय (मूषिकालर्कविषप्रतिषेधाध्याय) में मूषिक विष का उल्लेख किया है।

14.8.4 संख्या (Numbers)

आचार्य सुश्रुत, आचार्य वृद्धवाग्भट एवं आचार्य वाग्भट के मूषक के 18 भेदों/जातियों का उल्लेख किया है। इन भेदों में किञ्चित् नामों का अन्तर है।

आचार्य सुश्रुत मतेन

पूर्वं शुक्रविषा उक्ता मूषिका ये समासत:।
नामलक्षणभैषज्यैरष्टादश निबोध मे।।

लालन: पुत्रक: कृष्णो हंसिरश्चिक्वि(क्कि)रस्तथा।
छुच्छुन्दरोऽलसश्चैव कषायदशनोऽपि च।।

Scanned with CamScanner

कुलिंगश्चाजितश्चैव चपलः कपिलस्तथा।
कोकिलोऽरुणसंज्ञश्च महाकृष्णास्तथोन्दुरः।।
श्वेतेन महता सार्धं कपिलेनाखुना तथा।
मूषिकश्च कपोताभस्तथैवाष्टादश स्मृताः।।

(सु.क. 7/3-6)

शुक्रविष वाले मूषिकों की कुल संख्या अठारह हैं। इनके नाम हैं -

1. लालन,	2. पुत्रक,	3. कृष्ण,
4. हंसिर,	5. चिक्किर,	6. छुछुन्दर,
7. अलस,	8. कषायदशन,	9. कुलिंग,
10. अजित,	11. चपल,	12. कपिल,
13. कोकिल,	14. अरुण,	15. महाकृष्ण,
16. महाश्वेत,	17. कपिलमूषक	18. कपोत

आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन

आचार्य वृद्धवाग्भट ने चूहों के 18 भेद बतलाये हैं। इनके नाम हैं -

1. लालन,	2. चपल,	3. पुत्रक,
4. हसिर,	5. चिकिर,	6. अजिन,
7. कषायदन्त,	8. कुलक,	9. कोकिल,
10. कपिल,	11. असित,	12. अरुण,
13. शबल,	14. श्वेत,	15. कपोताभ
16. पलित उन्दुरु	17. छुछुन्दर	18. रसाला

आचार्य वाग्भट मतेन

लालनश्चपलः पुत्रो हसिरश्चिक्किरोऽजिरः।
कषायदन्तः कुलकः कोकिलः कपिलोऽसितः।।
अरुणः शबलः श्वेतः कपोतः पलितोन्दुरः।
छुच्छुन्दरो रसालाख्यो दशाष्टौ चेति मूषिकाः।।

(अ.ह.उ. 38/1-2)

मूषक (चूहा) की 18 जातियों के नाम

1. लालन,	2. चपल,	3. पुत्रक,
4. हसिर,	5. चिक्किर,	6. अजिर,
7. कषायदन्त,	8. कुलक,	9. कोकिल
10. कपिल,	11. असित,	12. अरुण,
13. शबल,	14. श्वेत,	15. कपोत,
16. पतितोन्दुर(रु),	17. छुछुन्दर (छछून्दर)	18. रसाल

तालिका - आचार्य सुश्रुत, आचार्य वृद्धवाग्भट एवं आचार्य वाग्भट मतेन मूषक भेद

क्र.	आचार्य सुश्रुत मतेन	आचार्य वृद्धवाग्भट मतेन	आचार्य वाग्भट मतेन
1	लालन	लालन	लालन
2	पुत्रक	चपल	चपल
3.	कृष्ण	पुत्रक	पुत्रक
4.	हंसिर	हसिर	हसिर
5.	चिक्किर	चिकिर	चिक्किर
6.	छुछुन्दर	अजिन	अजिर
7	अलस	कषायदन्त	कषायदन्त
8	कषायदशन	कुलक	कुलक
9	कुलिंग	कोकिल	कोकिल
10	अजित	कपिल	कपिल
11	चपल	असित	असित
12	कपिल	अरुण	अरुण
13	कोकिल	शबल	शबल
14	अरुण	श्वेत	श्वेत
15	महाकृष्ण	कपोताभ	कपोत
16	महाश्वेत	पलित उन्दुरु	पतितोन्दुर(रु)
17	कपिलमूषक	छुछुन्दर	छुछुन्दर
18	कपोत	रसाला	रसाल

14.8.5 मूषकों में विष का अधिष्ठान (Abode of poison in mushakas)

आयुर्वेद में मूषकों में विष का अधिष्ठान शुक्र माना गया है। शरीर के जिस भाग पर इनका शुक्र लग जाता है अथवा शुक्र लगे हुए नख-दन्त आदि जिन अंगों से ये मनुष्य के जिस अंग का भी स्पर्श करते हैं, वहाँ पर रक्त के दूषित हो जाने से वह पीला पड़ जाता है। इससे अनेकानेक प्रकार के स्थानीय और सार्वदैहिक लक्षण उत्पन्न होते हैं। यथा -

मूषिकाः शुक्रविषाः। (सु.क. 3/5)
पूर्वं शुक्रविषा उक्ता मूषिका ये समासतः।

(सु.क 7/3)

शुक्रं पतति यत्रैषां शुक्रदिग्धैः स्पृशन्ति वा।
यदंगमंगैस्तत्रास्रे दूषिते पाण्डुतां गते।। (अ.ह.उ. 38/3)

Scanned with CamScanner

14.8.6 मूषकदंश के लक्षण (Signs and symptoms of rat-bite)

आचार्य चरक मतेन

आदंशाच्छोणितं पाण्डु मण्डलानि ज्वरोऽरुचिः।
लोमहर्षश्च दाहश्चाप्याखुदूषीविषार्दिते।।

(च.चि. 23/147)

मूषक के दूषीविष से पीड़ित व्यक्ति के दंश स्थान से पाण्डुवर्ण का रक्त निकलता है, वहाँ चकत्ते निकल जाते हैं, ज्वर होता है और भोजन में अरुचि होती है।

आचार्य सुश्रुत मतेन

सामान्य लक्षण (General symptoms)

जायन्ते ग्रन्थयः शोफाः कर्णिका मण्डलानि च।
पीडकोपचयश्चोग्रो विसर्पाः किटिभानि च।।
पर्वभेदो रुजस्तीव्रा मूर्च्छाऽंगसदनं ज्वरः।
दौर्बल्यमरुचिः श्वासो वमथुर्लोमहर्षणम्।।
दष्टरूपं समासोक्तमेतद्व्यासमतः शृणु।

(सु.क. 7/8-10)

मूषिकदंश से उत्पन्न विषाक्त लक्षण इस प्रकार हैं -

1. शरीर पर ग्रन्थियाँ (nodules)
2. शोफ (edema)
3. कर्णिका ('कमलमध्यबीजकोशाकृतिः')
4. मण्डल (गोल चकत्ते)
5. पिडकाओं के भयंकर उपचय (समूह) का शरीर पर निकल आना
6. विसर्प (cellulitis)
7. किटिभ (सदृश) उभारों का होना (psoriasis like patches)
8. जोड़ों में दर्द (arthralgia)
9. तीव्र वेदनाएँ (excruciating pain)
10. मूर्च्छा (fainting)
11. अंगसदन (fatigueness)
12. ज्वर (pyrexia)
13. दुर्बलता (weakness)
14. भोजन में अनिच्छा (anorexia)
15. श्वास (dyspnea)
16. वमन (vomiting)
17. रोमांच होना (horripilation)

ये मूषिकदंश के संक्षेप में सामान्य लक्षण हैं।

आचार्य सुश्रुत ने पुनः सामान्य लक्षणों का वर्णन करते हुए स्पष्ट कहा है

भवन्ति चैषां दंशेषु ग्रन्थिमण्डलकर्णिकाः।
पिडकोपचयश्चोग्रः शोफश्च भृशदारुणः।।

(सु.क. 7/27)

इन सभी के दंश से ग्रन्थियाँ, मण्डल और कर्णिकाएँ उत्पन्न होती हैं और पिडकाओं का तीव्र समूह एवं अतिदुःखद शोफ पाया जाता है।

विशिष्ट लक्षण (Specific symptoms)

लालास्रावो लालनेन हिक्का छर्दिश्च जायते।।
तण्डुलीयककल्कं तु लिह्यात्तत्र समाक्षिकम्।
पुत्रकेणांगसादश्च पाण्डुवर्णश्च जायते।।
चीयते ग्रन्थिभिश्चांगमाखुशावकसन्निभैः।
शिरीषेंगुदकल्कं तु लिह्यात्तत्र समाक्षिकम्।।
कृष्णेन दंशे शोफोऽसृक्छर्दिः प्रायश्च दुर्दिने।
शिरीषफलकुष्ठं तु पिबेत् किंशुकभस्मना।।
हंसिरेणान्नविद्वेषो जृम्भा रोम्णां च हर्षणम्।
पिबेदारग्वधादिं तु सुवान्तस्तत्र मानवः।।
चिक्वि (क्वि क) रेण शिरोदुःखं शोफो हिक्का वमिस्तथा।
जालिनीमदनांकोठकषायैर्वामयेत्तु तम्।।
यवनालर्षभीक्षारं बृहत्योश्चात्र दापयेत्।
छुच्छुन्दरेण तृट् छर्दिर्ज्वरो दौर्बल्यमेव च।।
ग्रीवास्तम्भः पृष्ठशोफो गन्धाज्ञानं विसूचिका।
चव्यं हरीतकी शुण्ठी विडंगं पिप्पली मधु।।
अंकोठबीजं च तथा पिबेदत्र विषापहम्।
ग्रीवास्तम्भोऽलसेनोर्ध्ववायुर्दंशे रुजा ज्वरः।।
महागदं ससर्पिष्कं लिह्यात्तत्र समाक्षिकम्।
निद्रा कषायदन्तेन हृच्छोषः कार्श्यमेव च।।
क्षौद्रोपेताः शिरीषस्य लिह्यात् सारफलत्वचः।
कुलिंगेन रुजः शोफो राज्यश्च दंशमण्डले।।
सहे ससिन्धुवारे च लिह्यात्तत्र समाक्षिके।
अजितेनांगकृष्णत्वं छर्दिर्मूर्च्छा च हृद्ग्रहः।।
स्नुक्क्षीरपिष्टां पालिन्दीं मञ्जिष्ठां मधुना लिहेत्।
चपलेन भवेच्छर्दिर्मूर्च्छा च सह तृष्णया।।
क्षौद्रेण त्रिफलां लिह्याद्भद्रकाष्ठजटान्विताम्।
कपिलेन व्रणे कोथो ज्वरो ग्रन्थ्युद्गमः सतृद्।।
लिह्यान्मधुयुतां श्वेतां श्वेतां चापि पुनर्नवाम्।
ग्रन्थयः कोकिलेनोग्रा ज्वरो दाहश्च दारुणः।।

Scanned with CamScanner

वर्षाभूनीलिनीक्वाथकल्कसिद्धं घृतं पिबेत्।
अरुणेनानिलः क्रुद्धो वातजान् कुरुते गदान्।।

महाकृष्णेन पित्तं च श्वेतेन कफ एव च।
महता कपिलेनासृक् कपोतेन चतुष्टयम्।।
(सु.क. 7/10-26)

क्र.	मूषक भेद	लक्षण	चिकित्सा
1	लालन	• लालास्राव (salivation) • हिक्का (hiccough) • छर्दि (vomiting)	मधु के साथ तण्डुलीयक अर्थात् चौलाई के कल्क को चाटना।
2	पुत्रक	• अंगसाद (malaise) • पाण्डुवर्णता (anemia) • शरीर पर चूहे के नवजात शावक (पुत्रक) सदृश पिडकाएँ व्याप्त होना (wart like growth)	शिरीष और इंगुदी कल्क को मधु के साथ चाटना।
3	कृष्ण	• शोफ (edema) • दुर्दिन में रक्तवमन (hematemesis)	पलाश पुष्प क्षार के साथ शिरीष के फल और कुष्ठ के चूर्ण का पान।
4	हंसिर	• अरुचि (anorexia) • जृम्भा (yawning) • रोमहर्ष (horripilation)	वमन पश्चात् आरग्वधादि कषाय का पान।
5	चिक्किर	• शिरोवेदना (headache) • शोफ (edema) • हिक्का (hiccough) • वमन (vomiting)	वमनार्थ कोशातकी (तुरई), मदनफल और अंकोठ के कषाय का पान। जौ (नाल), कौंच और छोटी-बड़ी कटेरी के क्षार का प्रयोग।
6	छुछुन्दर	• तृष्णा (thirst) • ज्वर (fever) • वमन (vomiting) • दुर्बलता (weakness) • ग्रीवास्तम्भ (stiffness of the neck) • पीठ में सूजन (swelling at the back) • गन्ध का ज्ञान न होना (anosmia) • विसूचिका (gastro-enteritis)	चव्य, हरीतकी, सोंठ, विडंग, पीपल और अंकोठबीजों का विषहर क्वाथ मधु मिलाकर पान।
7	अलस	• ग्रीवास्तम्भ (stiffness of neck) • ऊर्ध्ववायु (डकार)(belching) • शरीर में वेदना (body pain) • ज्वर (fever)	महागद को घृत और मधु मिलाकर चाटना।

Scanned with CamScanner

क्र.	मूषक भेद	लक्षण	चिकित्सा
8.	कषायदशन	• निद्रा (sleep) • हृदयशोष (wasting in cardiac region) • शरीर का कृश होना (leanness)	शिरीष के सार, फल और त्वचा के चूर्ण को मधु मिलाकर पान।
9.	कुलिंग	• वेदना (pain) • शोफ (edema) • दंशस्थल पर रेखाएँ उभर आना (striations at the site)	मुद्गपर्णी, माषपर्णी को निर्गुण्डी और मधु के साथ प्रयुक्त करना।
10	अजित	• शरीर का वर्ण कृष्ण होना (blackish discoloration) • वमन (vomiting) • बेहोशी (loss of consciousness) • हृत्प्रदेश में जकड़ाहट (stiffness in cardiac region)	पालिन्दी अर्थात् त्रिवृत् और मंजीठ के चूर्ण को थोहर के दूध में पीसकर चाटना।
11	चपल	• वमन (vomiting) • मूर्च्छा (fainting) • प्यास (thirst)	देवदारु, जटामांसी और त्रिफला के चूर्ण को मधु के साथ चाटना।
12.	कपिल	• व्रणस्थान में कोथ (gangrene) • ज्वर (fever) • शरीर पर ग्रन्थियों का निकल आना (blisters) • प्यास (thirst)	श्वेतस्यन्दा (अथवा 'श्रेष्ठाम्' इति पाठान्तरम् - गयदासः) और श्वेतपुनर्नवा के चूर्ण को मधु के साथ चाटना।
13	कोकिल	• शरीर पर उग्र ग्रन्थियों का निकल आना (blisters of painful nature) • ज्वर (fever) • भयंकर जलन (दाह)(burning sensation)	पुनर्नवा और नील (नीलिनी) के क्वाथ और कल्क से सिद्ध घृत का पान।
14	अरुण	• प्रकुपित वात से वातव्याधियाँ	**दधिक्षीरघृतप्रस्थास्त्रयः प्रत्येकशो मताः। करञ्जारग्वधव्योषबृहत्यंशुमतीस्थिरा।। निष्क्वाथ्य चैषां क्वाथस्य चतुर्थोऽशः पुनर्भवेत्। त्रिवृद्गोज्यमृतावक्रसर्पगन्धाः समृत्तिकाः।। कपित्थदाडिमत्वक् च श्लक्ष्णपिष्टाः प्रदापयेत्। तत् सर्वमेकतः कृत्वाशनैर्मृद्वग्निना पचेत्।। पञ्चानामरुणादीनां विषमेतद्व्यपोहति।** (सु.क. 7/28-31)
15	महाकृष्ण	• पित्तदोष प्रकुपित होकर पैत्तिक व्याधियाँ	
16	महाश्वेत	• कफज विकार	
17	कपिलमूषक	• रक्तविकार	
18	कपोत	• तीनों दोष और रक्त इन चारों के रोग	

Scanned with CamScanner

मूषक विष विशेषरूप से व्यवायी एवं कृच्छ्रसाध्य होता है। यह रह-रह कर बार-बार उभरता है।

14.8.7 मूषक विष के असाध्य लक्षण (Incurable symptoms of rat-bite)

आचार्य चरक के अनुसार

मूर्च्छांगशोथवैवर्ण्यक्लेदशब्दाश्रुतिज्वराः।
शिरोगुरुत्वं लालासृक्छर्दिश्चासाध्यमूषिकैः।।

(च.चि. 23/148)

जब असाध्य (प्राणहर) चूहा किसी व्यक्ति को काटता है तब उसे-

1 मूर्च्छा (fainting)
2 दंश में शोथ (edema)
3. विवर्णता (pallor)
4. गीलापन (secretions)
5. बहरापन (deafness)
6. ज्वर (fever)
7 शिर में भारीपन (heaviness of head)
8. लालास्राव(profuse salivation)
9. रक्तवमन (hematemesis) होना

ये सब लक्षण होते हैं।

आचार्य वाग्भट के अनुसार

मूर्च्छांगशोफवैवर्ण्यक्लेदशब्दाश्रुतिज्वराः।।
शिरोगुरुत्वं लालासृक्छर्दिश्चासाध्यलक्षणम्।

(अ.हृ.उ. 38/6-7)

1. मूर्च्छा (fainting),
2. अंगों में शोथ (edema),
3. विवर्णता (pallor),
4. क्लेद (secretions),
5. शब्द का न सुनाई देना (loss of hearing),
6. ज्वर (fever),
7. शिर का भारीपन (heaviness of head),
8. लालास्राव (salivation) तथा
9. रक्तच्छर्दि (hemate-mesis) होना

ये असाध्य लक्षण हैं।

शूनबस्तिं विवर्णौष्ठमाख्वाभैर्ग्रन्थिभिश्चितम्।।
छुच्छुन्दरसगन्धं च वर्जयेदाखुदूषितम्।

(अ.हृ.उ. 38/7-8)

जब मूषक के विष से बस्ति (मूत्राशय (bladder)) में शोथ (edema) हो जाय, होठों का स्वाभाविक रूप विकृत हो जाय (discoloration of lips), चूहा के आकार की गाँठें उत्पन्न हो जाय (elevations similar to rat) तथा उसमें से छछून्दर की जैसी गन्ध (rat-like odour) आने लगे तो इस रोगी को असाध्य समझ कर छोड दें।

आचार्य वृद्धवाग्भट के शब्दों में -मूर्च्छा (fainting), अंगों में सूजन (edema), विवर्णता (pallor), क्लेद (secretions), बहरापन (deafness), ज्वर (fever), सिर में भारीपन (heaviness of head), लालास्राव (profuse salivation), रक्तस्राव (bleeding), वमन (vomiting), मूत्राशय में सूजन (swelling in bladder region), ओठों में विवर्णता (discoloration of lips), चूहों के समान ग्रन्थियाँ (elevations similar to rat) और छुछुन्दर के समान गन्ध (rat-like odour) - ये आखुविष से आक्रान्त रोगी के असाध्य लक्षण हैं।

तालिका - विविध आचार्यों के अनुसार मूषक विष के असाध्य लक्षण

आचार्य चरक के अनुसार	आचार्य वाग्भट के अनुसार	आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार
• मूर्च्छा (fainting) • दंश में शोथ (edema) • विवर्णता (pallor) • गीलापन (secretions)	• मूर्च्छा (fainting) • अंगों में शोथ (edema) • विवर्णता (pallor) • क्लेद (secretions) • शब्द का न सुनाई देना (loss of hearing)	• मूर्च्छा (fainting) • अंगों में सूजन (edema) • विवर्णता (pallor) • क्लेद (secretions) • बहरापन (deafness)

Scanned with CamScanner

आचार्य चरक के अनुसार	आचार्य वाग्भट के अनुसार	आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार
• बहरापन (deafness) • ज्वर (fever) • शिर में भारीपन (heaviness of head) • लालास्राव (profuse saliva-tion) • रक्तवमन (hematemesis)	• ज्वर (fever) • शिर का भारीपन (heaviness of head) • लालास्राव (salivation) • रक्तच्छर्दि (hematemesis) • बस्ति (मूत्राशय)(bladder) में शोथ (एडएम) • होठों का स्वाभाविक रूप विकृत हो जाना (discoloration of lips) • चूहा के आकार की गाँठें उत्पन्न हो जाना (elevations similar to rat) • दंशस्थान से छछून्दर की जैसी गन्ध (rat-like odour) आने लगना	• ज्वर (fever) • सिर में भारीपन (heaviness of head) • लालास्राव (profuse saliva-tion) • रक्तस्राव (bleeding) • वमन (vomiting) • मूत्राशय में सूजन (swelling in bladder region) • ओठों में विवर्णता (discolo-ration of lips) • चूहों के समान ग्रन्थियाँ (eleva-tions similar to rat) • छुछुन्दर के समान गन्ध (rat-like odour)

14.8.8 मूषकविष की चिकित्सा (Treatment of rat-bite poisoning)

आयुर्वेद की संहिताओं में मूषकविष के सामान्य और विशिष्ट दोनों ही चिकित्सा-क्रमों का विस्तार के साथ वर्णन किया गया है।

14.8.9 चिकित्सा सिद्धान्त (Principles of treatment)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

सिराश्च स्रावयेत् प्राप्ताः कुर्यात् संशोधनानि च।
सर्वेषां च विधिः कार्यो मूषिकाणां विषेष्वयम्।।
दग्ध्वा विस्रावयेद्दंशं प्रच्छितं च प्रलेपयेत्।
(सु.क. 7/32-33)

मूषक विष की चिकित्सा में प्रयुक्त विधियों निम्न सूची द्वारा स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है -

1. सिरावेध (venepun-cture)
2. दहनकर्म (cauterization)
3. लेपन (application)
4. वमन (emesis)
5. विरेचन (purgation)
6. शिरोविरेचन (nasal medications)
7. अञ्जन (collyrium)

14.8.10 स्थानिक उपचार (Local applications)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

दग्ध्वा विस्रावयेद्दंशं प्रच्छितं च प्रलेपयेत्।
शिरीषरजनीकुष्ठकुंकुमैरमृतायुतैः।। (सु.क. 7/33)

दंशस्थल का अग्नितप्त घृत से दहन कर प्रच्छान लगा दें और रक्तविस्रावण कर विष को बाहर निकाल दें तथा उस स्थान पर शिरीष, हरिद्रा, कुष्ठ, कुंकुम और गुडूची के कल्क का लेप कर देना चाहिए।

आचार्य वाग्भट के अनुसार

आखुना दष्टमात्रस्य दंशं काण्डेन दाहयेत्।।
दर्पणेनाथवा, तीव्ररुजा स्यात्कर्णिकाऽन्यथा।
दग्धं विस्रावयेद्दंशं प्रच्छितं च प्रलेपयेत्।।
शिरीषरजनीवक्रकुंकुमामृतवल्लिभिः।
(अ.ह.उ. 38/16-18)

मूषक के डसते ही दंशस्थान को सरपत के डण्डा को जला कर या शीशा (कॉच) को तपाकर जला दें। ऐसा न करने से उस स्थान पर अत्यन्त पीड़ा होती है तथा कर्णिका (मांस के अंकुर) पैदा हो जाते हैं। दाहकर्म कर देने के बाद भी यदि दंशस्थान में विष शेष है, ऐसा लगे तो उस स्थान पर प्रच्छान लगाकर दूषित (विषयुक्त) रक्त को सिंगी, तुम्बी आदि विधियों से निकलवा दें। तदनन्तर निम्नलिखित द्रव्यों का लेप लगायें - सिरीष के बीज, हल्दी, तगर, केशर और गुरुच।

सारांश -

- दहनकर्म - अग्नितप्त घृत से/काण्ड से/दर्पण से
- रक्तमोक्षण - प्रच्छान द्वारा
- लेपन -
  - शिरीष + हरिद्रा + कुष्ठ + कुंकुम + गुडूची (सुश्रुत)

Scanned with CamScanner

- शिरीष के बीज + हरिद्रा + तगर + कुंकुम + गुडूची (वाग्भट)

14.8.11 कर्णिका चिकित्सा

स्थिराणां रुजतां वाऽपि व्रणानां कर्णिकां भिषक्।
पाटयित्वा यथादोषं व्रणवच्चापि शोधयेत्।।

(सु.क. 7/42)

स्थिर (कठोर) और वेदनायुक्त व्रणों की कर्णिका ('कणीम्') का पाटन कर्म कर दोषानुसार व्रण की तरह शोधन-चिकित्सा करें।

स्थिर और मन्द पीड़ावाली कर्णिका में

- शस्त्र से उच्छेदन करें अथवा निम्न लेपों में से किसी एक का प्रयोग कर उसे गिरायें
  - कलिहारी, दन्ती अथवा अपामार्ग या कोयल - इनमें से किसी एक का लेप;
  - आखुवृक्ष, स्नुही, निशोथ, नलिनी अथवा स्नुही
- इनमें से किसी एक का तिलकल्क की भाँति लेप करें।

कर्णिका के गिर जाने के बाद व्रणरोपण के लिए -

- क्षीरी वृक्षों के पत्र, मजीठ, बला, दारुहल्दी और कनेर का कल्क, अथवा इन्हीं द्रव्यों से सिद्ध घृत या तेल, अथवा
- हल्दी, दारुहल्दी, तिल, मुलेठी, तगर, खस और पद्माख से सिद्ध घृत या तेल का उपयोग करें।

14.8.12 सार्वदैहिक उपचार

संशोधनकर्म की अनिवार्यता -

मूषिकाणां विषं प्रायः कुप्यत्यभ्रेष्वनिर्हृतम्।
तत्राप्येष विधिः कार्यो यश्च दूषीविषापहः।।

(सु.क. 7/41)

मूषिकविष का प्रकोप शान्त हो गया हो तो भी वमनादि के द्वारा संशोधन करना चाहिए, क्योंकि निर्हरण न किया हुआ यह विष आकाश में बादल होने के समय कुपित होता है। ऐसी स्थिति में भी वमन, विरेचन, नयनाञ्जन आदि के द्वारा तथा दूषीविष को नष्ट करने के उपायों से चिकित्सा करनी चाहिए (**'एतेन दूषीविषतुल्यता मूषिकविषस्योक्ता'** ड.)।

वमनकर्म -

छर्दनं जालिनीक्वाथैः शुकाख्यांकोठयोरपि।
शुकाख्याकोषवत्योश्च मूलं मदन एव च।।
देवदालीफलं चैव दध्ना पीत्वा विषं वमेत्।
सर्वमूषिकदष्टानामेष योगः सुखावहः।।
फलं वचा देवदाली कुष्ठं गोमूत्रपेषितम्।
पूर्वकल्पेन योज्याः स्युः सर्वोन्दुरुविषच्छिदः।।

(सु.क. 7/34-36)

सामान्य वमन योग -

1. कड़वी तोरई, शिरीष और अंकोठ का क्वाथ
2. कोशवती, शिरीष, जीमूतक और मदनफल का चूर्ण दही के साथ
3. वचा, मदनफल, तोरई और कुष्ठ को गोमूत्र में पीसकर दही के साथ।

तीव्र वमन योग -

1. सेम, कदलीमूल और दुपहरिया के फल,
2. हुलहुल, हींग, सज्जीखार तथा कटु एवं मधुर अतीस, तथा
3. काली निशोथ, कोयल की जड़।

वमन द्वारा शरीर-शोधन के क्रम में यदि शूल, हिक्का, अरुचि, मिचली एवं उष्णोद्गार आदि के लक्षण प्रकट हो जायें तो निम्न योग का सेवन करायें

जीरा, त्रिकटु, कूठ, नागकेसर, हल्दी, दारुहल्दी, सेंधा नमक, खस, मुलेठी, हुलहुल और मधुरगण की औषधियों को बिजौरा नीबू और कैथ के रस में पीसकर, उसमें मधु और राब मिलाकर रोगी को पिलायें।

पिप्पली, गजपिप्पली, शालपर्णी और पृश्निपर्णी के क्वाथ में बनायी गयी पेया भी उक्त योग के समान ही गुणकारी है।

विरेचनकर्म -

विरेचने त्रिवृद्दन्तीत्रिफलाकल्क इष्यते। (सु.क. 7/37)

विरेचनार्थ निशोथ, दन्ती और त्रिफला के कल्क का सेवन करायें।

विरेचनोपरान्त यदि नाभि में पीड़ा, मलावरोध अथवा गुदा में कर्तनवत् पीड़ा उत्पन्न हो जाये तो

1. पिप्पली, पिप्पलीमूल, सारिवा, त्रिकटु, बला, मजीठ और सोंठ के साथ बनायी गई पेया में शर्करा और मधु मिलाकर उसे ठण्डा कर पिलायें।
2. बालछड़, कत्तृण, त्रिकटु, लोध्र, चित्रक और अजवायन को तिलनाल के क्षारोदक के साथ पीसकर मधु और घी अथवा दही के साथ दें।
3. मधु, यवक्षार, दूध, दही, राब, तेल और घृत - सब मिलाकर सेवन करायें।

शिरोविरेचन -

शिरोविरेचने सारः शिरीषस्य फलानि च।।

(सु.क. 7/37)

Scanned with CamScanner

शिरोविरेचनार्थ शिरीष काष्ठ और फल का बारीक कपड़छन चूर्ण व्यवहार में लायें।

अञ्जनकर्म -

हितस्त्रिकटुकाढ्यच गोमयस्वरसोऽञ्जने। (सु.क. 7/38)

अञ्जनार्थ त्रिकटु का बारीक चूर्ण गोवर के रस के साथ पीसकर आँखों में लगायें।

14.8.13 मुख-सेव्य औषधि-योग -

कपित्थगोमयरसौ लिह्यान्माक्षिकसंयुतौ।।

रसाञ्जनहरिद्रेन्द्रयवकट्वीषु वा कृतम्।
प्रातः सातिविषं कल्कं लिह्यान्माक्षिकसंयुतम्।।

तण्डुलीयकमूलेषु सर्पिः सिद्धं पिबेन्नरः।
आस्फोतमूलसिद्धं वा पञ्चकापित्थमेव वा।।

(सु.क. 7/38-40)

- कपित्थ और गोमयरस को मधु के साथ लेह बनाकर लेना चाहिए।
- रसाञ्जन (रसौत), हलदी, इन्द्रजौ, कटुरोहिणी और अतीस के कल्क को प्रातःकाल मधु से चाटना चाहिए।
- चौलाई (जंगली) के मूल से सिद्ध घृत पीने को देना चाहिए।
- आस्फोता (सारिवा या आक) के मूल से सिद्ध घृत या पञ्चकापित्थ घृत सभी प्रकार के मूषिकविष को दूर करता है।
- ज्वर आ जाने पर चिरायता और गुडूची का क्वाथ दें।

आचार्य चरक के अनुसार

त्वचं च नागरं चैव समांशं श्लक्ष्णपेषितम्।
पेयमुष्णाम्बुना सर्वं मूषिकाणां विषापहम्।।

(च.चि. 23/205)

दालचीनी और सोंठ, दोनों को बराबर-बराबर (2-2 ग्राम) लेकर, बारीक पीसकर गरम जल से पीने से सभी प्रकार के चूहों का विष नष्ट हो जाता है।

14.8.14 प्रसिद्ध योग -

आचार्य वृद्धवाग्भट (अ सं उ 46।15), आचार्य वाग्भट (अ ह उ 38।18-19), आचार्य चक्रपाणिदत्त (च.द. विषचिकित्सा।19), आचार्य गोविन्ददास सेन (भै.र. 72।24), आचार्य वृन्द (वृन्दमाधव 68।39) आदि आचार्यों ने मूषक विष तथा तज्जन्य कर्णिका की चिकित्सा के लिए निम्न योग प्रसिद्ध किया है -

अगारधूममञ्जिष्ठारजनीलवणोत्तमैः।
लेपो जयत्याखुविषं कर्णिकायाश्च पातनः।।

(अ.ह.उ. 38/18-19)

गृहधूम, मंजीठ, हल्दी एवं सैन्धवलवण को समभाग लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर आवश्यकतानुसार जल से पीसकर मूषिकदंश स्थान पर लेप लगाने से कुछ दिनों में मूषिकविष नष्ट हो जाता है और कर्णिका को भी गिरा देता है।

गृहधूम + मञ्जिष्ठा + रजनी + लवण ⇒ लेपन

14.8.15 विविध योग -

1. अश्वकञ्चुकी रस
2. बृहद् योगराज गुग्गुलु
3. आखुविषान्तक रस तथा
4. मृत्युपाशच्छेदी घृत

इनका आवश्यकतानुसार व्यवहार करें।

14.8.16 आखुविषान्तक रस (Akhuvishantaka Rasa)

सन्दर्भ - योगरत्नाकर विषचिकित्सा

सूत्र -

रसं गन्धं विषं चैव व्यूषणं टंकरोहिणी।
पुनर्नवारसैर्मर्द्यं गोमूत्रे च द्विगुञ्जकम्।।

पिबेदाखुविषार्तानां सर्वं हरति तद्विषम्।
विषदष्टोद्भवानन्यान्हन्यादाखुविषान्तकः।। (यो.र.)

घटक द्रव्य -

1. शुद्ध पारद
2. शुद्ध गन्धक
3. शुद्ध वत्सनाभ
4. शुण्ठी
5. मरिच
6. पिप्पली
7. शुद्ध टंकण और
8. कुटकी - सभी द्रव्य समभाग।

भावना द्रव्य - पुनर्नवा स्वरस

अनुपान - गोमूत्र

मात्रा - 2 गुञ्जा (250 mg)

14.9 Rat-Bite Fever

Introduction - Rat-bite fever is a disease caused by infected rodents.

Causes - Caused by two bacterias which are found in the mouths of rodents; viz.

- Streptobacillus moniliformis
- Spirillum minus

Scanned with CamScanner

Signs and Symptoms

- Fever with chills
- Arthralgia
- Redness at the site of bite
- Swelling at the site of bite
- Rash
- Lymphadenopathy near the site of bite

Treatment

- Antibiotics (Penicillin/Tetracyclines x 7 - 14 days)

14.10 अलर्क विष (Rabies)

14.10.1 पर्याय (Synonyms)

- जलसंत्रास
- जलत्रास

14.10.2 परिचय (Introduction)

इस पद का प्रयोग सामान्यतया कुत्ते के काटने से उत्पन्न विषाक्तता के लिए किया जाता है, परन्तु व्यापक दृष्टि से हिंसक आक्रमण में रदनकों (canines) का व्यवहार करने वाले जितने भी पशु हैं, यथा - गीदड़, भेड़िया, भालू, चीता, व्याघ्र आदि - इन सभी के काटने से उत्पन्न विषाक्तता का इसमें समावेश हो जाता है। अंग्रेजी में इस विकृति के लिए Hydrophobia or Lyssa शब्द का व्यवहार किया जाता है।

प्रस्तुत सन्दर्भ में हम भी इस शब्द का व्यवहार कुत्ते के काटने से उत्पन्न विषाक्तता के लिए ही करेंगे।

सामान्यतया सभी कुत्तों का दंश विषाक्त नहीं होता। जो कुत्ते स्वत: इस विष से ग्रस्त हो जाते हैं, उन्हीं के काटने से यह विषाक्तता उत्पन्न होती है। बोलचाल की भाषा में ऐसे कुत्ते को पागल कुत्ता कहा जाता है। इन कुत्तों की पहचान और उनके काटने से उत्पन्न विषाक्तता पर आयुर्वेद की संहिताओं में पर्याप्त प्रकाश डाला गया है।

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार

शुन: श्लेष्मोल्बणा दोषा: संज्ञां संज्ञावहाश्रिता:।
मुष्णन्त: कुर्वते क्षोभं धातूनामतिदारुणम्।।
लालावनन्धबधिर: सर्वत: सोऽभिधावति।
स्रस्तपुच्छहनुस्कन्ध: शिरो दु:खी नताननः।।
(अ.सं.उ. 46/7)

कफ-प्रधान वातादि दोष जब कुत्ते के संज्ञावह स्रोतों में आश्रित होकर उसकी संज्ञा को नष्ट करते हुए रस आदि धातुओं में अत्यधिक क्षोभ उत्पन्न करते हैं तो उसमें निम्न लक्षण देखने को मिलते हैं - लालास्राव, अन्धत्व, बधिरता, पशु का निष्प्रयोजन-सा छटपटाते हुए चारों ओर दौड़ना, उसकी पूँछ, हनु, कन्धा और सिर का लटक जाना; मुख लटकाये रहना और अत्यधिक व्याकुल एवं दु:खी रहना।

आधुनिक मतानुसार रैबीज से संक्रमित होने के बाद कुत्तों में मानव के समान जलसंत्रास (hydrophobia) के लक्षण नहीं उत्पन्न होते। सर्वप्रथम उनके स्वभाव में परिवर्तन देखने को मिलता है। तदनन्तर अत्यधिक क्षोभ और क्रोधोन्माद की-सी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। क्रोध के आवेग में वह इधर-उधर भागता है और जो भी वस्तु रास्ते में आती है उसे खूब किटकिटाकर काट लेता है। बाद में उसे निगलने में कठिनाई होने लगती है। भौंकने का स्वर बदल जाता है। नीचे का जबड़ा लटक जाता है और वह सामान्य पक्षाघात से आक्रान्त हो जाता है। लक्षणों के व्यक्त होने के 2 से 5 दिनों के अन्दर उसकी मृत्यु हो जाती है। मूक अलर्क (Dumb rabies) में उत्तेजना की अवस्था का प्रभाव पाया जाता है।

इस संक्रामक रोग का कारण एक प्रकार का निस्यंदी विषाणु (Filtrable virus) है, जो प्रभावित पशु की लालाग्रन्थियों और तन्त्रिका-तन्त्र में पाया जाता है। ऐसा पशु जब किसी को काटता है तो उसके लालास्राव द्वारा यह विषाणु दष्ट प्राणी में प्रविष्ट हो जाता है।

इस संक्रमण की उद्भवन अवधि (incubation period) लम्बी एवं परिवर्तनशील होती है; परन्तु रोग का आक्रमण आकस्मिक एवं छोटी अवधि का होता है। एक बार लक्षण यदि अपने उग्र रूप में व्यक्त हो जायें तो रोगी का बचना प्राय: कठिन होता है।

14.10.3 लक्षण एवं चिह्न (Signs and symptoms)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

सुप्तता जायते दंशे कृष्णं चातिस्रवत्यसृक्।।
(सु.क. 7/45)

- दंशस्थान पर सुप्तता
- अधिक मात्रा में कृष्णवर्णीय रक्तस्राव

आचार्य वृद्धवाग्भट ने अलर्क विष के लक्षणों एवं चिह्नों का वर्णन निम्न शब्दों में प्रस्तुत किया है-

दंशस्तेन विदष्टस्य सुप्त: कृष्णं क्षरत्यसृक्।।
हृच्छिरोरुग्ज्वरस्तम्भतृष्णामूर्च्छोद्भवोऽनु च।
(अ.सं.उ. 46/8)

Scanned with CamScanner

स्थानीय रूप में दंशस्थान सुन्न हो जाता है। घावों से काला खून रिसता – बहता है। सार्वदैहिक लक्षणों के रूप में हृदय में पीड़ा, सिरदर्द, ज्वर, अंगों में जकड़ाहट, प्यास और संज्ञानाश के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। आगे उन्होंने इस कोटि के अन्य पशुओं के दंश से उत्पन्न जिन लक्षणों का वर्णन किया है उनमें से अधिकांश अलर्क विष पर भी लागू होते हैं।

स्थानीय लक्षण (Local symptoms)

- दंशस्थान में कण्डू, चुभन जैसी पीड़ा, विवर्णता, संज्ञानाश और क्लेद
- दंशस्थान का फटना, छाले, मांसांकुर तथा पूरे शरीर पर चकत्ते उत्पन्न हो जाना।

सार्वदैहिक लक्षण (Generalized symptoms)

ज्वर, भ्रम, दाह, लाली, सूजन, ग्रन्थियाँ तथा एक आँख का अपेक्षाकृत सिकुड़ जाना।

14.10.4 असाध्य लक्षण (Signs of incurability)

आचार्य वृद्धवाग्भट के अनुसार प्राणी को जिस पशु ने काटा है यदि वह उसी के समान चेष्टाएँ करने लगे, यथा – अलर्क विष से पीड़ित रोगी का कुत्ते के भौंकने के समान आवाज करना अथवा उसकी छाया अकस्मात् पानी या दर्पण में देखे तो अवश्य ही वह मृत्यु को प्राप्त होता है। इस रोग की असाध्यता का प्रधान लक्षण है – जलसंत्रास (hydrophobia)।

14.10.5 जलसंत्रास के लक्षण

त्रस्यत्यकस्माद्योऽभीक्ष्णं दृष्ट्वा स्पृष्ट्वाऽपि वा जलम्।।

जलत्रासं तु विद्यात्तं रिष्टं तदपि कीर्तितम्।

(सु.क. 7/48-49)

पागल पशु द्वारा काटे जाने पर दष्ट मनुष्य यदि जल को छूकर अथवा देखकर अकस्मात् बार-बार डर जाता है तो यह व्याधि **जलसंत्रास** (त्रास) (Hydrophobia/Rabies) कहलाती है। यह भी मरणलक्षण (रिष्ट) है।

मनोवैज्ञानिक कारणों से उत्पन्न जलसन्त्रास मनश्चिकित्सा (psychotherapy) द्वारा साध्य माना जाता है।

14.10.6 अलर्क विष-चिकित्सा (Treatment of Rabies)

- दंशस्थान को दबाकर उसका रक्त निकालें। फिर उसका गर्म घी से दहन करें। दहन के उपरान्त उस पर अगदों का लेप करें या अपामार्ग का रस निचोड़ें। पुराना घी पिलायें।

अलर्क विषनाशक लेप

(Local applications for alarka visha)

1. तिल, गुग्गुलु, दूर्वा, अनारदाना और गुड़ को पीसकर
2. नरसार की जड़ को पानी में पीसकर,
3. लहसुन, मिर्च, पिप्पली और त्रिफला को गाय के पित्त में पीसकर (इसी का नस्य और अञ्जन भी)
4. लहसुन को सिरका में पीसकर;
5. प्याज के रस को मधु में मिलाकर;
6. कुचले को नरमूत्र या शराब में पीसकर;
7. प्याज, नमक, मधु, पपड़िया नमक और सिरके को पीसकर;
8. आक का दूध;
9. कायफल, शाल, गावजवाँ, हंसराज, हरिद्रा, दारुहरिद्रा और स्वर्णगैरिक को जल के साथ पीसकर;
10. शिरीष के बीजों को थूहर के दूध के साथ पीसकर।

अलर्क विषनाशक घृत

(Medicated ghrtas for alarka visha)

1. जलवेतस के पत्र, छाल और मूल के क्वाथ से सिद्ध घृत;
2. जौ, उड़द, कुलथी और बृहत्पञ्चमूल के क्वाथ और दुग्ध से सिद्ध घृत;
3. असगन्ध, मुद्गपर्णी, कूठ, बड़ी कटेरी, हलदी, दारुहल्दी विदारीकन्द, तगर, श्योनाक, सरालकन्द, निर्गुण्डी, सर्पगन्धा नख, शतावरी, शर्करा और लाल चन्दन के कल्क से सिद्ध घृत। इसी का पान, अभ्यंग और नस्य भी।

मुख-सेव्य योग (Oral drugs)

1. श्वेत पुनर्नवा और धतूरे के बीज;
2. धतूरे के बीज और अंकोट की जड़;
3. धतूरा और कठगूलर की जड़ को सीधु अथवा तण्डुलोदक से;
4. तिल-तेल, कल्क, आक का दूध और गुड़;
5. धतूरे के शुद्ध बीज पहले दिन एक से शुरू कर, 1-1 बीज प्रतिदिन बढ़ाते हुए 21 दिन तक ले जायें। फिर क्रमशः 1-1 बीज घटाते हुए पुनः एक तक ले आयें।
6. शुद्ध कुचला, शुद्ध तेलिया विष और शुद्ध चौकिया सुहागा समभाग में चूर्ण कर लें और इसे 125 मि.ग्रा. की मात्रा में 21 दिनों तक खिलायें।
7. धतूरे के पत्तों का स्वरस, घी, गुड़ और दूध का मिश्रणः
8. अग्नितुण्डी वटी, भीमरुद्र रस (र.सा.सं.)।

श्वेत पुनर्नवा

Scanned with CamScanner

आचार्य सुश्रुत ने इस सम्बन्ध में एक सुन्दर योग दिया है।

मूलस्य शरपुंखायाः कर्षं धत्तूरकार्धिकम्।।
तण्डुलोदकमादाय पेषयेत्तण्डुलैः सह।
उन्मत्तकस्य पत्रैस्तु संवेष्ट्यापूपकं पचेत्।।
खादेदौषधकाले तमलर्कविषदूषितः।
करोति श्वविकारांस्तु तस्मिञ्जीर्यति चौषधे।।
विकाराः शिशिरे याप्या गृहे वारिविवर्जिते।
ततः शान्तविकारस्तु स्नात्वा चैवापरेऽहनि।।
शालिषष्टिकयोर्भक्तं क्षीरेणोष्णेन भोजयेत्।
दिनत्रये पञ्चमे वा विधिरेषोऽर्धमात्रया।।
कर्तव्यो भिषजाऽवश्यमलर्कविषनाशनः।
कुप्येत् स्वयं विषं यस्य न स जीवति मानवः।।
तस्मात् प्रकोपयेदाशु स्वयं यावत् प्रकुप्यति।

(सु.क. 7/53-59)

शरफुंके की जड़ (10 gm), धतूरा (5 gm) तथा चावल (5 gm) - तीनों को पीसकर, पिट्ठी की तरह धतूरे के पत्तों में भरकर, कचौड़ी की तरह पका लें। इसे अलर्क विष से दूषित प्राणि को खिलायें। इस औषधि के पचने पर यदि रोगी उन्नत होकर पागल कुत्ते की सी चेष्टाएँ करने लगे तो तुरन्त उसे जलविहीन शीतल गृह में ले जायें। उक्त विकार के शान्त हो जाने पर दूसरे दिन स्नान कराकर साँठी के चावल गर्म दूध के साथ भोजनार्थ दें। तीसरे और पाँचवें दिन पुनः इसी प्रयोग की औषधि की आधी मात्रा में देते हुए दोहरायें। पागल कुत्ते आदि के विष को नष्ट करने के लिए इस विधि को उपयोगी बतलाया गया है। इसके पीछे तर्क यह है कि जिस मनुष्य में अलर्क विष स्वयं कुपित होकर उग्र रूप में व्यक्त होता है, वह नहीं बचता। अतः विष स्वयं उग्र रूप धारण कर कुपित हो, इसके पहले ही वैद्य को उसे स्वयं कुपित कर शरीर से बाहर निकाल देना चाहिए।

आयुर्वेद की संहिताओं में अलर्क विष में तीक्ष्ण वमन, विरेचन आदि द्वारा तीव्र संशोधन का आदेश दिया गया है। क्योंकि अशुद्ध व्यक्ति में व्रण के भर जाने पर भी विष पुनः कुपित हो जाता है।

मन्त्र चिकित्सा (Mantra therapy)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

बीजरत्नौषधीगर्भैः कुम्भैः शीताम्बुपूरितैः।।
स्नापयेत्तं नदीतीरे समन्त्रैर्वा चतुष्पथे।
बलिं निवेद्य तत्रापि पिण्याकं पललं दधि।।
माल्यानि च विचित्राणि मांसं पक्वामकं तथा।
अलकाधिपते यक्ष सारमेयगणाधिप!।।
अलर्कजुष्टमेतन्मे निर्विषं कुरु माचिरात्।

(सु.क. 7/59-62)

विषघ्न बीज, रत्न, विषहर औषध तथा शीतल जल से पूर्ण घड़ों से रोगी को नदी के किनारे या चौराहे पर मन्त्रों के साथ स्नान करावें और वहाँ पर तिलखली, सस्नेह तिलकल्क, दधि, विचित्र मालायें तथा कच्चे-पके मांस की बली देनी चाहिए। मन्त्र इस प्रकार है - 'हे अलका नामक नगरी के मालिक! सारमेयसमूह के अधिपति! यक्ष!(देवयोनिः) अलर्कविष पीड़ित मुझको शीघ्र विषमुक्त कर दो'।

14.11 Rabies

Definition

Rabies is a viral disease that causes acute inflammation of the brain in humans and other warm-blooded animals

Facts

- The word is derived from a Latin word which means 'madness'.
- Causes about 30,000 to 40,000 deaths worldwide per year.
- World Rabies day: 28th September.

Causative agent - Lyssa virus

Incubation period - 4 days - many years

Transmission - Through the saliva of infected animal

Signs and Symptoms

- Flu-like symptoms (initially for few days)
- Anxiety
- Loss of sleep
- Mental confusion
- Agitation
- Altered behavior
- Paranoia
- Hallucinations
- Delirium
- Hydrophobia

Hydrophobia

- It means 'fear of water'.
- It is a set of symptoms that manifest in the later stages of infection in during which patient has -
  - difficulty in swallowing
  - panics when given liquids
  - failure to quench his thirst

Treatment

- Washing of the bite site (with soap and water)
- Human rabies immunoglobulin (HRIG) (5 doses)

Scanned with CamScanner

An Initiative By Technofiesta
AyuTech®
Technologically Driven Ancient Science !

15 आहार विष एवं आहार विषाक्तता Food Poisoning

विषय

- परिचय (Introduction)
- Food-Poisoning
- Non-bacterial food poisoning
- Bacterial food poisoning
- विष मिश्रित अन्न के लक्षण (Signs of poisoned food articles)
- विषाक्त अन्न के भाप से उत्पन्न विकार (Signs and symptoms exhibited by poisonous vapours)
- विषाक्त भोजन के स्पर्श से उत्पन्न विकार (Signs and symptoms of contact with poisonous food articles)
- विषाक्त अन्न-भक्षण के लक्षण (Signs and symptoms of consumption of poisonous food articles)
- आमाशयगत विषाक्त अन्न से उत्पन्न लक्षण (Signs and symptoms exhibited by poisonous food localized in amashaya)
- पक्वाशयगत विषाक्त अन्न से उत्पन्न लक्षण (Signs and symptoms exhibited by poisonous food localized in pakwashaya)
- सविष द्रव-द्रव्य के लक्षण (Signs and symptoms of poisonous liquid substances)
- सविष भोज्य पदार्थों के लक्षण (Signs & symptoms of poisonous food articles)
- विषाक्त भोजन से उत्पन्न विकारों की चिकित्सा (Treatment of diseases caused by poisonous foods)

15.1 परिचय (Introduction)

आचार्य चरक के अनुसार

प्राणाः प्राणभृतामन्नं तदयुक्त्या निहन्त्यसून्।
विषं प्राणहरं तच्च युक्तियुक्तं रसायनम्।। (च.चि. 24/60)

अन्न प्राणियों के प्राण हैं, परन्तु अयुक्ति से सेवन करने पर वह विषरूप होकर प्राणों का नाश करता है और युक्तिपूर्वक सेवन करने पर रसायन का फल देता है।

कारणवश भोजन से या भोजन के द्वारा उत्पन्न तीव्र विषाद या विषाक्तता को भोजन-विषाक्तता कहते हैं। व्यापक अर्थ में इस शब्द का प्रयोग किसी भी प्रकार के सविष या निर्विष भोजन के अविवेकपूर्ण उपयोग से उत्पन्न रोग-समूह के लिए किया जा सकता है परन्तु सीमित अर्थ में यह विषाक्त आहार से उत्पन्न विकृति का ही बोधक है। आयुर्वेद की संहिताओं में उक्त दोनों ही पक्षों का विस्तार से विवेचन किया गया है।

15.2 Food-Poisoning

Food poisoning, in modern medical system, can be of two kinds -

1. Non-bacterial food poisoning and
2. Bacterial food poisoning.

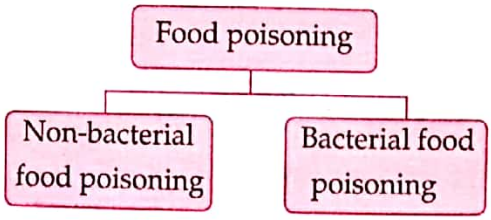

Non-bacterial food poisoning is due to toxins and certain chemicals present in the food articles; whereas bacterial food poisoning is due to contamination with bacteria or their toxins.

Scanned with CamScanner

Food poisoning, on most occasions, affects large number of individuals. This type of food poisoning has three peculiarities -

1. Simultaneous poisoning of many individuals,
2. Ingestion of similar food articles by all those affected and
3. Presentation of similar signs and symptoms among all those affected.

E.g. using spurious cooking oil during an event or consumption of contaminated alcohol etc.

15.3 Non-Bacterial Food Poisoning

Three types of poisoning occur under this -

1. Irrational consumption of food
2. Metallic contamination
3. Food allergy

15.3.1 विरुद्ध द्रव्य सेवन (Taking incompatible food)

जिन द्रव्यों को परस्पर मिलाकर खाने-पीने से वे शरीर के अन्दर जाकर प्रतिकूल या विषाक्त प्रभाव उत्पन्न करते हैं, उन्हें विरुद्ध कहते हैं। 'विरुद्ध' के सामान्य लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए आचार्य वृद्धवाग्भट ने कहा है -

उत्क्लेश्य दोषान्न हरेद् द्रव्यं यत्तत्समासतः।
विरुद्धं तद्धि धातूनां प्रत्यनीकतया स्थितम्।।

(अ.सं.सू. 9/25)

अर्थात् जो द्रव्य या द्रव्यसमूह दोषों को अपने-अपने स्थान से विचलित या निकलने के लिए उन्मुख तो कर देता है पर बाहर नहीं निकलता, उसे 'विरुद्ध' द्रव्य कहते हैं। यह द्रव्य शरीर की धातुओं के प्रतिकूल होने पर भी शरीर में बना रहता है।

आचार्य चरक ने इस पर और विस्तार से प्रकाश डालते हुए कहा है

देहधातुप्रत्यनीकभूतानि द्रव्याणि देहधातुभिर्विरोधमापद्यन्ते; परस्परगुणविरुद्धानि कानिचित्, कानिचित् संयोगात्, संस्कारादपराणि, देशकालमात्रादिभिश्चापराणि, तथा स्वभावादपराणि।।

(च.सू. 26/81)

शरीर-स्थित धातुओं से विपरीत गुणवाले द्रव्य देह की धातुओं (वातादि, रस-रक्तादि तथा मूत्र-पुरीषादि) के विरोधी होते हैं। इनमें से कुछ द्रव्य परस्पर गुण-विरुद्ध, कुछ संयोग-विरुद्ध, कुछ संस्कार-विरुद्ध; कुछ देश, काल और मात्रा आदि के विरुद्ध; तथा कुछ स्वभाव-विरुद्ध होते हैं।

1 **गुण-विरुद्ध** - इसके तीन रूप होते हैं

(a) विषमता में

(b) समता में

(c) विषम-समता में।

- **विषमता विरोध** - यथा दूध और कुलथी। दूध रस एव विपाक में मधुर, गुण में स्निग्ध, वीर्य में शीतल और गुरु तथा मन्द होता है। कुलथी रस में कषाय, विपाक में अम्ल, गुण में रूक्ष, लघु एवं तीक्ष्ण तथा वीर्य में उष्ण होती है। दूध रेचक एवं वृष्य होता है; ठीक इसके विपरीत कुलथी ग्राही एवं शुक्रनाशक होती है। सभी भावों में एक-दूसरे के विरुद्ध होने के कारण इनका एक साथ सेवन परिणामतः हानिकारक होता है।
- **समता-विरोध** - गुणों में साम्य होते हुए भी कुछ द्रव्य परस्पर मिलकर प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं; यथा दूध और कटहल। दोनों ही रस एवं विपाक में मधुर तथा शीतवीर्य होते हुए भी एक साथ खाये जाने पर विपरीत प्रभाव उत्पन्न करते हैं। शीतल भोजन पर शीतल जल सेवन उदरशूल को जन्म दे सकता है।
- **विषम-सम विरोध** - यथा दूध और मछली का मांस। दूध शीतवीर्य किन्तु मछली उष्णवीर्य है, पर दोनों ही मधुरविपाकी हैं।

2. **संयोग-विरुद्ध** - जिन खाद्य वस्तुओं या औषधि द्रव्यों को परस्पर मिलाकर अथवा ठीक एक के बाद दूसरे का सेवन करने से दोषों का प्रकोप एवं स्वास्थ्य की हानि होती है, उन्हें संयोग-विरुद्ध कहते हैं; यथा - दूध के साथ अम्ल रसवाले पदार्थ (कॉजी, मद्य, इमली आदि) अथवा सत्तू खाने के पहले या बाद में जल का सेवन करना।

3. **संस्कार-विरुद्ध** - जिन वस्तुओं को पकाकर अथवा गर्म करके खाने से स्वास्थ्य की हानि होती है उन्हें संस्कार-विरुद्ध कहते हैं; यथा - दही को अग्नि पर पकाकर या धूप में रखकर गर्म करके खाना। इसी प्रकार कम पकी, या अधिक पकी अथवा जली हुई वस्तुएँ भी संस्कार-विरुद्ध हो जाती हैं।

4 **देश-विरुद्ध** हर प्रदेश की जलवायुगत विशेषताएँ अलग-अलग होती हैं। उन विशेषताओं की अवहेलना कर खाद्य पदार्थों का सेवन करना देश-विरुद्ध कहलाता है। यथा - मरुप्रदेश में रूक्ष एवं तीक्ष्ण तथा आनूपदेश में स्निग्ध एवं शीतवीर्य द्रव्यों का सेवन हानिकारक होता है।

5 **काल-विरुद्ध** अहोरात्रि: ऋतुओं भुक्त-अभुक्त के

Scanned with CamScanner

अनुसार हमारे शरीर में दोषों की स्थिति भिन्न-भिन्न होती है। उसकी अवहेलना कर भोजन को ग्रहण करना काल-विरुद्ध कहलाता है, यथा - रात्रि में सत्तू खाना; शीतकाल में शीत एवं रूक्ष द्रव्यों का सेवन करना तथा उष्णकाल में कटु एवं उष्ण पदार्थों का सेवन करना हानिकारक होता है। काल के उपस्थित हुए बिना अथवा काल के बीत जाने पर भोजन करना भी काल-विरुद्ध होने के कारण हानिकारक सिद्ध होता है। आचार्य वृद्धवाग्भट के शब्दों में

अजीर्णेऽपि पूर्वस्याहारस्यापरिणतो रस उत्तरेणोपसंसृज्यमानः सर्वान् दोषान् प्रकोपयत्याशु। (अ.सं.सू.10/10)

अर्थात् पूर्वाहार के जीर्ण हुए बिना उसी पर फिर से भोजन कर लेने पर - पूर्वाहार का अपरिपक्व रस उत्तराहार के रस से मिलकर सभी दोषों को प्रकुपित कर आमदोष, विसूचिका तथा अजीर्णजन्य अनेक रोगों को उत्पन्न करता है।

अतीतकालं पुनस्तद्वातविष्टब्धं कृच्छ्राद्विपच्यते कर्शयत्यन्नरुचिं च पुनरुपहन्ति। (अ.सं.सू. 10/12)

अर्थात् काल के व्यतीत हो जाने पर बिना भूख के खाया हुआ आहार वायु द्वारा विष्टब्ध हो जाता है, कष्ट के साथ पचता है, शरीर को कृश करता है और भोजन में अरुचि उत्पन्न करता है।

6 **मात्रा-विरुद्ध** भोजन की मात्रा का निर्धारण प्राणी के अग्निबल और आहार द्रव्यों के स्वरूप दोनों की अपेक्षा रखता है। इन दोनों की अवहेलना करके किया हुआ भोजन मात्रा-विरुद्ध कहलाता है। आचार्य वृद्धवाग्भट ने मात्रा का लक्षण निर्धारित करते हुए कहा है -

कुक्षेरप्रतिपीडनमाहारेण, हृदयस्यासंरोधः, पार्श्वयोरविपाटनमनतिगौरवमुदरस्य, प्रीणनमिन्द्रियाणां, क्षुत्पिपासोपरतिः, स्थानासनशयनागमनोच्छ्वासप्रश्वासभाष्यसंकथासु सुखानुवृत्तिः, सायं प्रातश्च सुखेन परिणमनम्, बलवर्णोपचयकरत्वञ्चेति मात्राया लक्षणम्।

(अ.सं.सू. 11/3)

आहार से आमाशय का पीड़ित न होना, हृदय पर भार या दबाव न अनुभव करना, पार्श्वों का बाहर को न निकलना, उदर का भारी न होना, चक्षु आदि इन्द्रियों का पुष्ट होना, भूख और प्यास की शान्ति-तृप्ति; खड़े होने, बैठने, लेटने, चलने, साँस लेने, बोलने और बातचीत करने में सुख का अनुभव होना; सायंकाल के भोजन का प्रातःकाल तक और प्रातःकालीन भोजन का सायंकाल तक सुखपूर्वक पच जाना; बल, वर्ण और पुष्टि का होना - ये आहार की उचित मात्रा के लक्षण हैं।

भोजन की हीनता और भोजन की अधिकता दोनों ही अमात्रा या मात्राविरुद्ध हैं। भोजन की हीन मात्रा से होनेवाले दोषों का वर्णन करते हुए आचार्य वृद्धवाग्भट ने कहा है -

तत्र हीनमात्रमशनं बलवर्णोपचयमनोबुद्धीन्द्रियोपघातकरं विबन्धकृदवृष्यमनायुष्यमनौजस्यं सारविध्मापनमलक्ष्मीजननमशीतेश्च वातविकाराणामायतनम्।

(अ.सं.सू. 11/5)

हीन मात्रा में भोजन बल, वर्ण, पुष्टि, मन, बुद्धि और इन्द्रियों का नाश करता है। विबन्ध करता है। अवृष्य है। अनायुष्य है। ओज को नहीं उत्पन्न करता। त्वक् आदि आठ सारों का नाश करता है। दारिद्र्य उत्पन्न करता है। और अस्सी प्रकार के वात रोगों को जन्म देता है।

अतिमात्रं पुनः सर्वदोषप्रकोपनमाहुः अर्थात् भोजन की अति मात्रा सभी दोषों को प्रकुपित करनेवाली होती है। इससे अलसक और विशूचिका जैसे भयानक रोगों की उत्पत्ति होती है। आगे उन्होंने पुनः कहा है

विरुद्धाध्यशनाजीर्णशीलिनः पुनरामदोषमामविषमामनन्ति विषसदृशलिंगत्वात्।
तत्परमसाध्यानाम्। आशुकारितया विरुद्धोपक्रमत्वाच्च।

(अ.सं.सू. 11/14)

विरुद्ध भोजन करनेवाले, अध्यशन करनेवाले (पूर्व के भोजन के जीर्ण हुए बिना ऊपर से पुनः खा लेनेवाले) तथा अजीर्ण में भोजन कर लेने के स्वभाववाले व्यक्तियों में आमदोष को आमविष के समान माना जाता है। क्योंकि इसके लक्षण विष के समान होते हैं। शीघ्र मारक और चिकित्सा में भी विरोधी होने के कारण यह आमदोष अत्यन्त असाध्य माना जाता है।

अग्नि के मन्द होने से आहार के जिस भाग का परिपाक नहीं हो पाता उसे 'आम' कहते हैं। आम विष के स्वभाव वाला होता है। इसीलिए इसे आम, विष भी कहते हैं। इसे पचाने के लिए उष्ण उपचार की आवश्यकता है और उष्णोपचार विष-चिकित्सा में वर्जित है। विष की चिकित्सा में शीतोपचार चाहिए, किन्तु शीतोपचार से आमदोष का पाचन नहीं होता। इसीलिए इसे परम असाध्य कहा गया है।

इस सन्दर्भ में आगे उन्होंने और भी कहा है -

गुरुरूक्षशुष्कशीतद्विष्टविष्टम्भिविदाह्यशुचिविरुद्धात्यम्बुपानद्रवमकाले काले वा कामक्रोधलोभेर्ष्याह्रीशोकोद्वेगभयक्षुदुपतप्तेन वा यदन्नपानमुपयुज्यते तदप्याममेव प्रदूषयति। (अ.सं.सू. 11/15)

Scanned with CamScanner

साथ ही गुरु, रूक्ष, शुष्क, शीत, दूषित, विष्टम्भी, विदाही, अपवित्र विरुद्ध भोजन से; अति द्रव पदार्थ या जलपान से; अकाल में भोजन करने से; अथवा समय पर भी भोजन करते हुए काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, लज्जा, शोक, उद्वेग, भय अथवा अत्यधिक भूख से पीड़ित होने पर भी एकबारगी भोजन करने से वह भी आमदोष को ही दूषित करता है।

7 **स्वभाव-विरुद्ध** – कुछ आहार द्रव्य स्वभाव से ही गुरु एव दुष्पाच्य होते हैं; यथा – मलाई, रबड़ी आदि दूध के विकार; गुड़, राब आदि इक्षु के विकार; बेसन के बने एवं तले हुए पदार्थ; ब्रीहि धान, उड़द, कटहल, सुअर का मांस आदि। इनके अधिक मात्रा में सेवन करने से भी अजीर्णादि रोगों की उत्पत्ति होती है।

कुछ खाद्यान्न तथा जलीय जन्तु भी स्वभावत: न्यूनाधिक मात्रा में विष से युक्त होते हैं। उदाहरणार्थ वनस्पतियों में खेसारी, खुम्भ, कोदो, मक्का, लाल मिर्च, जिमीकन्द, कड़वे बादाम, स्वर्णक्षीरी या सत्यानाशी आदि; तथा जल-जन्तुओं में कवक मत्स्य (shell fish), कवल मत्स्यों में भी विशेष रूप से शंखमीन (mussel) सर्वाधिक विषैला होता है। कुछ मछलियॉ और सीपियॉ भी जहरीली होती हैं। इनको असंस्कारित रूप में या अतिमात्रा में सेवन करने से विषाक्तता के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

15.3.2 विरुद्धाहार सेवन से उत्पन्न आमविष का उपचार (Management of Ama-Visha Due to Consumption of Incompatible Food Articles)

1 **वमनकर्म** → साध्य आमदोष में उष्ण जल में सैन्धव लवण मिलाकर, उसे रोगी को पिलाकर वमन करायें। यदि दोषों के अति लीन (deep-seated) होने के कारण वमन न आये तो

1 पिप्पली और नागदन्ती का चूर्ण लवण-मिश्रित उष्ण जल से पिलायें।

2 पिप्पली और सरसों के कल्क को मदनफल के कषाय में घोलकर दें। अथवा

3 दन्ती और पिप्पली के चूर्ण को अथवा कड़वी तोरई के रस को उष्ण जल और लवण के साथ मिलाकर दें।

अथवा रोगी की अवस्था का विचार कर कोई अन्य तीव्र वामक योग दें।

2. **स्वेदन एवं वर्तिप्रयोग**→ वमन के उपरान्त स्वेदन तथा स्वेदन के उपरान्त वर्तिप्रणिधान (suppository) द्वारा मल-शुद्धि करायें। शरीर के भली प्रकार शुद्ध हो जाने पर आमदोष जनित उपद्रव शीघ्र ही शान्त हो जाते हैं।

3. **दीपनादि प्रयोग एवं लाक्षणिक चिकित्सा**→ उसके बाद दीपन-पाचन अथवा अन्य जो लक्षण शेष रह गये हों; यथा – तृष्णा, शूल; आध्मान, मल-मूत्र में अवरोध, अंगों में संकोच आदि; उनका यथोचित लाक्षणिक उपचार करना चाहिए।

15.3.3 धातु-संदूषण (Poisoning due to metallic contamination)

धातु-संदूषण आज के जीवन की अनिवार्यता बन गया है। तांबे, कांसे, पीतल या अल्युमिनियम के बर्तनों को खाना पकाने या खाद्य पदार्थों को रखने के लिए व्यवहार में लाया जाता है। बर्तनों पर कलई करने में रांगे के साथ-साथ सीसे का भी उपयोग किया जाता है। व्यावासायिक दृष्टि से खाद्य पदार्थों को डिब्बा-बंद करने के लिए उपयोग में लाये जानेवाले डिब्बे टीन के बनाये जाते हैं। उनके अन्दर की पालिश, धातुज-पैक, ड्राप्स, टाफी, मिठाई के वेष्टन आदि सभी में धातु का योग रहता है। खाद्य पदार्थों में डाले जानेवाले रंग, उनके परिरक्षी, कीट-नाशक, फलों को पकाने, पेयों को अम्ल बनाने, चीनी को साफ करने में धातुज रसायनों का ही उपयोग किया जाता है। आसवों, सुराओं, लेमनेड तथा अन्य अनेक विलायक तरलों को जिन टैंकों में भण्डारित किया जाता है या जिन नलों में रखा जाता है, उनमें सीसे की फिटिंग लगी रहती है। बर्तनों को साफ करनेवाले पाउडरों में रसायनों का योग होता है। अत: इन सभी परिस्थितियों में आवश्यक सावधानी न बरतने, रख-रखाव के नियमों का यथोचित पालन न करने, खाद्य या पेय पदार्थों के समय से अधिक उनके सम्पर्क में रह जाने आदि से संदूषण की घटनाएँ होती ही रहती हैं। इन सन्दूषित वस्तुओं का सेवन करने से लोगों में विषाक्तता के लक्षण उत्पन्न हो जाना एक सामान्य बात है। खैरियत यही है कि यह विषाक्तता सामान्यतया अधिक खतरनाक नहीं होती।

15.3.4 आहार-प्रत्यूर्जता (Food allergy)

कुछ लोग आहार द्रव्यों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते हैं। वे उन्हें रंचमात्र भी सहन नहीं कर सकते। उन द्रव्यों के सम्पर्क में आते ही अथवा उनका सेवन करते ही उनमें तीव्र प्रतिक्रिया होने लगती है। फलस्वरूप उनमें मिचली, वमन, अतिसार, अस्थाई संधिशोथ, संधिवेदना तथा शीतपित्त आदि के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। कुछ में इसके बाद गलग्रन्थिशोथ और तमक श्वास के दौरे भी आने लगते हैं। इसी को भोजन-प्रत्यूर्जी (allergins) कहते हैं। आयुर्वेद में ऐसे द्रव्यों को असात्म्य और असात्म्य द्रव्यों के सेवन से उत्पन्न विकार को असात्म्यता कहते हैं। इस प्रकार के आहार द्रव्यों के निर्धारण में वैयक्तिक कारक विशेष महत्त्व रखते

Scanned with CamScanner

हैं। इनमें अण्डे, घोंघे, केकड़े, टमाटर, रसभरी, वनस्पति-घी आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इसका निदान प्रत्यूर्जता परीक्षणों के द्वारा आसानी से किया जा सकता है। भोजन-प्रत्यूर्जता की चिकित्सा में निदान-परिवर्जन और प्रत्यूर्जतारोधी (anti-allergic) औषधियों का सेवन प्रमुख हैं।

15.4 Bacterial Food Poisoning

Bacterial food poisoning is categorized into

1. Food poisoning due to infection
2. Food poisoning due to toxins

1. Food Poisoning Due to Infection

Causative agents

- Salmonella group of organisms (e.g. S. enteritidis, S. newport, S. thompson, S Suipestifier, S. thyphimurium etc.)
- Shigella etc.

Signs and Symptoms

- Varies person to person
- Variation is also due to causative agents
- Diarrhea
- Fever
- Headache
- Nausea
- Vomiting
- Colic
- Shivering
- Malaise etc

Treatment

- Gastric lavage
- Colonic irrigation (in absence of diarrhea)
- Bed rest
- Antibiotics
- Fluids
- Symptomatic management

2. Food Poisoning Due to Toxins

Introduction

- It is due to the presence of enterotoxins formed by Staphylococcus, E coli or Vibrio

Incubation period

- One to six hours

Signs and Symptoms

- Headache
- Nausea
- Vomiting
- Abdominal pain
- Cramps
- Coma etc

Treatment

- Gastric lavage
- Bed rest
- Antibiotics
- Fluids
- Symptomatic management

Post-Mortem Appearance

- Congestion of all organs

Medico-Legal Aspects

- Usually affecting a group
- Sporadic poisoning

15.5 विष मिश्रित अन्न के लक्षण (Signs of Poisoned Food Articles)

आचार्य सुश्रुत मतेन

नृपभक्ताद्बलिं न्यस्तं सविषं भक्षयन्ति ये।
तत्रैव ते विनश्यन्ति मक्षिकावायसादयः।।

हुतभुक् तेन चान्नेन भृशं चटचटायते।
मयूरकण्ठप्रतिमो जायते चापि दुःसहः।।

भिन्नार्चिस्तीक्ष्णधूमश्च नचिराच्चोपशाम्यति।
चकोरस्याक्षिवैराग्यं जायते क्षिप्रमेव तु।।

दृष्ट्वाऽन्नं विषसंसृष्टं म्रियन्ते जीवजीवकाः।
कोकिलः स्वरवैकृत्यं क्रौञ्चस्तु मदमृच्छति।।

हृष्येन्मयूर उद्विग्नः क्रोशतः शुकसारिके।
हंसः क्ष्वेडति चात्यर्थं भृंगराजस्तु कूजति।।

पृषतो विसृजत्यश्रुं विष्ठां मुञ्चति मर्कटः।
सन्निकृष्टांस्ततः कुर्याद्राज्ञस्तान् मृगपक्षिणः।।

वेश्मनोऽथ विभूषार्थं रक्षार्थं चात्मनः सदा।

(सु.क 1/28-34)

Scanned with CamScanner

विषयुक्त अन्नादि की पहचान –

- यदि भोजन में से कुछ अंश मक्खियाँ, कौवे आदि को खिलाया जाय तो (भोजन के विषयुक्त होने पर) ये खाते ही वहीं मर जाते हैं।

अग्नि द्वारा विष की पहचान –

- विषाक्त अन्नादि को आग में डाला जाय तो 'चट-चट' जैसा शब्द होता है और उसका (अग्नि का) स्वरूप मयूरकण्ठ सदृश होता है, जो सहन नहीं होता है।
- अग्नि की लपटें विभक्त हुई होती हैं, उससे निकलने वाला धुआँ तीक्ष्ण होता है और आग शीघ्र ही बुझ जाती है।
- इस विषाक्त अन्न के खाने से शीघ्र ही चकोर की आँखों का रंग विकृत हो जाता है।

कोयल आदि पक्षियों द्वारा विष की पहचान – इसी प्रकार विषैले भोजन को देखकर –

- जीवजीवक पक्षी (क्रुरि च इति लोके) की मृत्यु हो जाती है,
- कोयल की आवाज में विकार आ जाता है,
- क्रौञ्च पक्षी हर्षित होता है,
- मयूर उद्विग्न होकर प्रसन्न होता है,
- तोता और सारिका (मैना) रुदन करने लगते हैं,
- हंस अधिक बोलने लगते हैं,
- भृंगराज (भ्रमरक:) अव्यक्त शब्द करता है,
- पृषत (चित्रबिन्दु, चीतल) की आँखों से अश्रु आने लगते हैं,
- बन्दर का मल (पुरीष) निकलने लगता है।

अत: (चिकित्सक को चाहिए कि वह) इन मृग-पक्षियों को राजा के प्रसाद के समीप ही रखने की व्यवस्था करे। इससे सदा (महल की) शोभा बढ़ती है और राजा के प्राणों की रक्षा के लिए भी ये आवश्यक हैं।

आचार्य चरक मतेन

पात्रस्थं च विवर्णं भोज्यं स्यान्मक्षिकांश्च मारयति।
क्षामस्वरांश्च काकान् कुर्याद्विरजेच्चकोराक्षि।।

(च.चि. 23/110)

- यदि भोजन विषमिश्रित है, तो पात्र में रखने पर वह विकृत वर्ण का हो जाता है।
- विषाक्त भोजन पर बैठने वाली मक्खियाँ मर जाती हैं।
- सविष अन्न को देखकर या खाकर कौआ मन्द स्वरवाला हो जाता है।
- चकोर की आँखें लाल हो जाती हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में सम्पन्न लोग पशु-पक्षियों को मात्र घर की शोभा बढ़ाने या मनोरंजन के लिए ही नहीं, बल्कि इस उद्देश्य से भी पालते थे।

15.6 विषाक्त अन्न के भाप से उत्पन्न विकार (Signs and symptoms exhibited by poisonous vapours)

आचार्य सुश्रुत मतेन

हृत्पीडा भ्रान्तनेत्रत्वं शिरोदु:खं च जायते।
तत्र नस्याञ्जने कुष्ठं लामज्जं नलदं मधु।।
कुर्याच्छिरीषरजनीचन्दनैश्च प्रलेपनम्।
हृदि चन्दनलेपस्तु तथा सुखमवाप्नुयात्।।

(सु.क. 1/35-36)

विकार (Signs and symptoms)→ खाने के लिए परोसे गये विषैले अन्न से ऊपर को उठने वाले बाष्प (भाप) को सूँघने से

- हृदय में वेदना (discomfort/ pain in cardiac region),
- नेत्रदृष्टि का विकृत होना (visual disturbances)
- शिरोवेदना (headache) होने लगते हैं।

चिकित्सा(Treatment)→ इसके उपचार में नस्य और अञ्जन के लिए कूठ, लामज्जक, नलद (खश) और मधु, शिरीष, हरिद्रा तथा चन्दन का प्रलेप करना चाहिए। हृदय पर चन्दन का लेप करने से आराम मिलता है।

आचार्य चरक मतेन

पानान्नयो: सविषयोर्गन्धेन शिरोरुजा हृदि च मूर्च्छा।
स्पर्शेन पाणिशोथ: सुप्त्यंगुलिदाहतोदनखभेदा:।।

(च.चि. 23/112)

यदि पेय या खाद्य पदार्थ में विष मिश्रित हो, तो उसकी गन्ध से शिर में पीड़ा और हृदय में पीड़ा तथा मूर्च्छा होती है। उसके स्पर्श से हाथों में शोथ हो जाता है, सुप्तता होती है, अंगुलियों में दाह होता है और सुई चुभाने जैसी पीड़ा होती है तथा नख गिरने लगते हैं।

Scanned with CamScanner

15.7 विषाक्त भोजन के स्पर्श से उत्पन्न विकार (Signs and Symptoms of Contact with Poisonous Food Articles)

आचार्य सुश्रुत मतेन

पाणिप्राप्तं पाणिदाहं नखशातं करोति च।
अत्र प्रलेपः श्यामेन्द्रगोपासोमोत्पलानि च।।

(सु.क. 1/37)

विकार → विष-मिश्रित अन्न के स्पर्श से हाथों में सूजन, अँगुलियों में संज्ञाशून्यता, दाह और सूई की-सी चुभन प्रतीत होने लगती है। नख टूट कर गिरने लगते हैं।

चिकित्सा → इसके निवारणार्थ प्रियंगु, अनन्तमूल, कट्फल और कमल को पीसकर उसका लेप करना चाहिए।

15.8 विषाक्त अन्न-भक्षण के लक्षण (Signs and Symptoms of Consumption of Poisonous Food Articles)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

स चेत् प्रमादान्मोहाद्वा तदन्नमुपसेवते।
अष्ठीलावत्ततो जिह्वा भवत्यरसवेदिनी।।

तुद्यते दह्यते चापि श्लेष्मा चास्यात् प्रसिच्यते।
तत्र बाष्पेरितं कर्म यच्च स्याद्दान्तकाष्ठिकम्।।

(सु.क. 1/38-39)

आचार्य चरक के अनुसार

मुखगेत्वोष्ठचिमिचिमा जिह्वा शूना जडा विवर्णा च।
द्विजहर्षहनुस्तम्भास्यदाहलालागलविकाराः।।

(च.चि. 23/113)

आवश्यक सतर्कता एवं सावधानी न बरतने के कारण यदि कोई प्रमादवश विष-मिश्रित अन्न खा लेता है तो उसमें निम्न लक्षण प्रकट होते हैं - ओठों में चिमचिमाहट होने लगती है। जिह्वा शोथ युक्त, प्रदाहित एवं ऐंठकर अकड़ जाती है। दाँत खट्टे हो जाते हैं। हनु स्तम्भित हो जाती है। मुँह से प्रचुर मात्रा में श्लेष्मा या लालास्राव आने लगता है। गले के अन्य रोग हो जाते हैं।

विष जैसे-जैसे अन्न-प्रणाली में आगे की ओर बढ़ता हुआ वहाँ की श्लैष्मिक कला द्वारा अवशोषित होता जाता है, वैसे ही वैसे अन्य लक्षण भी प्रकट होने लगते हैं। मुख-गह्वर से चलकर अन्न का अगला पड़ाव आमाशय होता है। आमाशय में जाकर भोजन कुछ काल तक ठहरता है। विषाक्त भोजन के वहाँ पहुँचने पर आमाशय की श्लैष्मिककला विष का अवशोषण करती है। फलतः तदनुकूल लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

15.9 आमाशयगत विषाक्त अन्न से उत्पन्न लक्षण (Signs and Symptoms Exhibited by Poisonous Food Localized in Amashaya)

आचार्य चरक के अनुसार

आमाशयं प्रविष्टे वैवर्ण्यं स्वेदसदनमुत्क्लेदः।
दृष्टिहृदयोपरोधो बिन्दुशतैश्चीयते चांगम्।।

(च.चि. 23/114)

आमाशय को प्राप्त विष निम्न लक्षणों को उत्पन्न करता है -

1. वैवर्ण्य (शरीर के वर्ण का बदल जाना),
2. स्वेद (पसीना आना),
3. सदन (अंग-प्रत्यंगों का ढीला पड़ जाना),
4. उत्क्लेद (जी मिचलाना),
5. दृष्टि उपरोध (आँखों से ठीक-ठीक दिखलाई न पड़ना),
6. हृदयोपरोध (हृदय की गति में अवरोध)
7. शरीर पर छोटी-छोटी बिन्दुओं (फुंसियों) की उत्पत्ति।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

मूर्च्छां छर्दिमतीसारमाध्मानं दाहवेपथू।
इन्द्रियाणां च वैकृत्यं कुर्यादामाशयं गतम्।।

तत्राशु मदनालाबुबिम्बीकोशातकीफलैः।
छर्दनं दध्युदश्विद्भ्यामथवा तण्डुलाम्बुना।।

(सु.क. 1/40-41)

1. मूर्च्छा (fainting),
2. वमन (vomiting),
3. अतिसार (diarrhea),
4. तृष्णा (thirst),
5. आध्मान (abdominal distension),
6. पाण्डुता (pallor),
7. कृशता (leanness),
8. दुर्बलता (weakness)
9. इन्द्रियों की शक्ति में ह्रास (frailness of sensory faculties)

आचार्य सुश्रुत द्वारा प्रस्तुत लक्षण आचार्य चरक की अपेक्षा उग्रतर हैं। ऐसा लगता है कि आचार्य चरक ने - विषाक्त अन्न के आमाशय में पहुँचने पर प्रारम्भिक अवस्था में जो लक्षण उत्पन्न होते हैं, उनका उल्लेख किया है और आचार्य सुश्रुत ने जब उसका

Scanned with CamScanner

प्रभाव पूर्णतः व्यक्त हो जाता है, उस अवस्था के लक्षणों का उल्लेख किया है।

चिकित्सा (Treatment)

- **वमनकर्म (Emesis)**→ तत्काल मैनफल, कड़वी तोरई आदि फल, दही के पानी, तक्र अथवा तण्डुलोदक से वमन करायें।

15.10 पक्वाशयगत विषाक्त अन्न से उत्पन्न लक्षण (Signs and Symptoms Exhibited by Poisonous Food Localized in Pakwashaya)

आचार्य चरक के अनुसार

पक्वाशयं तु याते मूर्च्छामदमोहदाहबलनाशाः।
तन्द्रा कार्श्यं च विषे पाण्डुत्वं चोदरस्थे स्यात्।।

(च.चि. 23/115)

जब विषयुक्त आहार द्रव्य आमाशय से आगे बढ़कर पक्वाशय में पहुँच जाता है तो निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं –

1. मूर्च्छा (fainting),
2. मद (intoxication),
3. मोह (stupor),
4. सम्पूर्ण शरीर में दाह (burning sensation)
5. बल का नाश (loss of strength)।

उदरगत विष के लक्षण हैं –

1. तन्द्रा (lassitude),
2. कृशता (leanness)
3. शरीरावयवों में पीलापन (yellowish discoloration)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

दाहं मूर्च्छामतीसारं तृष्णामिन्द्रियवैकृतम्।
आटोपं पाण्डुतां कार्श्यं कुर्यात् पक्वाशयं गतम्।।

विरेचनं ससर्पिष्कं तत्रोक्तं नीलिनीफलम्।
दध्ना दूषीविषारिश्च पेयो वा मधुसंयुतः।।

(सु.क. 1/42-43)

1. दाह (burning sen-sation),
2. मूर्च्छा (fainting),
3. अतिसार (diarrhea),
4. तृष्णा (thirst),
5. इन्द्रियों में विकार (malfunctioning of sensory faculties),
6. आध्मान (abdominal distension),
7. पाण्डुता (pallor)
8. कृशता (leanness)

चिकित्सा (Treatment)

- विरेचन→ घृत के साथ नलिनीफल का विरेचन देना चाहिए।
- अगद प्रयोग→ दही एवं मधु के साथ दूषित विषारि अगद का सेवन करायें।

15.11 सविष द्रव-द्रव्य के लक्षण (Signs and Symptoms of Poisonous Liquid Substances)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

द्रवद्रव्येषु सर्वेषु क्षीरमद्योदकादिषु।
भवन्ति विविधा राज्य फेनबुद्बुदजन्म च।।

छायाश्चात्र न दृश्यन्ते दृश्यन्ते यदि वा पुनः।
भवन्ति यमलाश्छिद्रास्तन्व्यो वा विकृतास्तथा।।

(सु.क. 1/44-45)

आचार्य चरक के अनुसार

पाने नीला राजी वैवर्ण्यं स्वां च नेक्षते छायाम्।
पश्यति विकृतामथवा लवणाक्ते फेनमाला स्यात्।।

(च.चि. 23/111)

दूध, जल, मद्य आदि में विष मिला होने पर उनका स्वाभाविक वर्ण बदल जाता है। उसमें नीलवर्ण की रेखाएँ और द्रव्य के लवणयुक्त होने पर फेन, बुद्बुद् आदि उठते दिखलाई पड़ते हैं। देखने पर उसमें अपनी छाया नहीं दिखलाई पड़ती। यदि दिखलाई भी पड़ती है तो युग्मित, छिद्रित, पतली अथवा विकृत।

15.12 सविष भोज्य पदार्थों के लक्षण (Signs & Symptoms of Poisonous Food Articles)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

लक्षण (Signs and symptoms)

शाकसूपान्नमांसानि क्लिन्नानि विरसानि च।
सद्यः पर्युषितानीव विगन्धानि भवन्ति च।।

गन्धवर्णरसैर्हीनाः सर्वे भक्ष्याः फलानि च।
पक्वान्याशु विशीर्यन्ते पाकमामानि यान्ति च।।

(सु.क. 1/46-47)

Scanned with CamScanner

शाक, दाल अथवा मांस आदि आहार द्रव्यों के विष-मिश्रित होने की स्थिति में वे क्लिन्न, स्वादरहित और ताजे होने पर भी बासी प्रतीत होते हैं। इनकी गन्ध नष्ट हो जाती है। इसी प्रकार विष से युक्त फल भी गन्ध, वर्ण और रस से हीन हो जाते हैं। कच्चे होने पर वे शीघ्र ही पके हुए-से दिखलाई पड़ते हैं और पके होने पर भी शीघ्र ही सड़ जाते हैं।

इसी प्रकार आगे उन्होंने सविष दातुन, जीभी, उत्सादन, परिषेक, कषाय, अनुलेपन, शय्या, वस्त्र, तेल, अभ्यंग माला, पगड़ी, आलेप, वाहन, नस्य, धूम, पुष्प, अंजन, उपनाह, भूषण आदि के लक्षण और उनके उपयोग से उत्पन्न विषाक्तता की सविस्तार चर्चा की है -

विशीर्यते कूर्चकस्तु दन्तकाष्ठगते विषे।
जिह्वादन्तौष्ठमांसानां श्वयथुश्चोपजायते।।
.....।
स्वानि स्थानानि हन्युश्च दाहपाकावदारणैः।।

(सु.क. 1/48-74)

15.13 विषाक्त भोजन से उत्पन्न विकारों की चिकित्सा (Treatment of Diseases Caused by Poisonous Foods)

विषोपसर्गो बाष्पादिर्भूषणान्तो य ईरितः।।
समीक्ष्योपद्रवांस्तस्य विदधीत चिकित्सितम्।
महासुगन्धिमगदं यं प्रवक्ष्यामि तं भिषक्।।
पानालेपननस्येषु विदधीताञ्जनेषु च।
विरेचनानि तीक्ष्णानि कुर्यात् प्रच्छर्दनानि च।।
सिराश्च व्यधयेत् क्षिप्रं प्राप्तं विस्रावणं यदि।

(सु.क. 1/75-78)

1. **उपद्रवों की यथावश्यक चिकित्सा** → भोजन की बाष्प से आरम्भ कर आभूषण-पर्यन्त विष के उपद्रवों की जो चर्चा की गई है, उन उपद्रवों को भली प्रकार देख और सोच-समझ कर उनकी चिकित्सा करे।
2. **शोधनकर्म** → आवश्यकतानुसार तीक्ष्ण वमन और विरेचन द्वारा शरीर की शुद्धि करे।
3. **रक्तमोक्षण** → यदि रोगी की अवस्था इस योग्य हो और वह सहन कर सके तो सिरावेध द्वारा तुरन्त रक्तमोक्षण कराना चाहिए।
4. **अगद प्रयोग** → महासुगन्धित अगद (देखें - ग्रन्थान्त में संलग्न परिशिष्ट 1) का पान करायें। उसी का आलेपन, नस्य, अञ्जन आदि का प्रयोग करे।
5. **हृदय की रक्षा** → विष-पीड़ित रोगी के हृदय की रक्षा परमावश्यक है। उसे अन्य सभी उपायों में प्राथमिकता देनी चाहिए। उसका विधान करते हुए आगे पुनः आचार्य सुश्रुत ने कहा है -

पिबेद्घृतमजेयाख्यममृताख्यं च बुद्धिमान्।
सर्पिर्दधि पयः क्षौद्रं पिबेद्वा शीतलं जलम्।।
मयूरान्नकुलान् गोधाः पृषतान् हरिणानपि।
सततं भक्षयेच्चापि रसांस्तेषां पिबेदपि।।

(सु.क. 1/80-81)

1. अजेय घृत अथवा अमृत घृत का पान करायें।
2. घृत, दधि, दुग्ध, मधु अथवा शीतल जल का पान करायें।
3. मोर, नेवला, गोह, चित्तीदार हिरण के मांस अथवा मांसरस का निरन्तर सेवन कराते रहें।

आचार्य चरक ने भी इस सन्दर्भ में कहा है कि विष-रोगी पर अन्य उपायों का प्रयोग करने के पूर्व सर्वप्रथम उसके हृदय की रक्षा की ओर ही ध्यान देना चाहिए। इसके लिए तात्कालिक रूप से निम्न औषधियों में से जो भी उपलब्ध हो तत्काल उसका पान कराना चाहिए - मज्जा, मधु, घी, शुद्ध गैरिक का घोल, ताजे गोबर का रस, पकी हुई ईख का रस, कौवे के संस्विन्न मांस का निचोड़ा हुआ रस, बकरे आदि का का ताजा रुधिर; यदि इनमें से कुछ भी न मिले तो कण्डों की राख अथवा वल्मीक की मिट्टी को ही जल में घोलकर पिला दें। स्वयं उन्हीं के शब्दों में -

आदौ हृदयं रक्ष्यं तस्यावरणं पिबेद्यथालाभम्।
मधुसर्पिर्मज्जपयोगैरिकमथ गोमयरसं वा।।
इक्षुं सुपक्वमथवा काकं निष्पीड्य तद्रसं वरणम्।
छागादीनां वाऽसृग्भस्म मृदं वा पिबेदाशु।।

(च.चि. 23/46-47)

• • •

Scanned with CamScanner

16 भारत में विषाक्तता Poisoning in India

विषय

- परिचय (Introduction)
- भारत में विषाक्तता की घटनाओं में वृद्धि (Rise in incidences of poisoning in India)
- मानव विषाक्तता (Human poisoning)
- पशु विषाक्तता (Animal poisoning)
- विष के भण्डारण एवं संचालन में सावधानी (Storage and maintenance of Poisonous articles)
- विष सम्बन्धी विधि (कानून) (Law relating to poison)
- प्राचीन भारत में सामरिक विष प्रयोग और उसका प्रतिकार (Community poisoning in ancient India and its management)
- प्रदूषित जल के लक्षण एवं उसका प्रतिकार (Signs of polluted water and its management)
- प्रदूषित तृण एवं अन्नादि के लक्षण और उनका प्रतिकार (Signs of polluted fodder etc. and their management)
- प्रदूषित भूमि के लक्षण एवं उसका प्रतिकार (Signs of polluted land and its management)
- प्रदूषित वायुमण्डल के लक्षण एवं उसका प्रतिकार (Signs of polluted atmosphere and its management)
- विषाक्त शस्त्र से विद्ध रोगी के लक्षण एवं उसका प्रतिकार (Symptoms exhibited by injuries caused by poisonous weapons and their management)

16.1 परिचय (Introduction)

भारत में विषाक्तता का इतिहास अति प्राचीन है। स्वयं अगदतन्त्र इस बात का प्रमाण है कि भारत में भी चिकित्सात्मक उपयोग के अतिरिक्त आत्महत्यार्थ, परहत्यार्थ और पशुहत्यार्थ भी विष का प्रयोग प्राचीन काल से ही होता चला आ रहा है। गत पृष्ठों में विष के अवचारण के माध्यमों के विवेचन के क्रम में आपने देखा कि भोजन, पेय, दातून, मंजन, अंजन, नस्य, सौन्दर्य-प्रसाधनों आदि में विष मिलाकर, वस्त्रों को विष में रंगकर लोगों को पहनाकर; विष-बुझे अस्त्र-शस्त्रों, विशेष रूप से तीरों से लोगों को मारकर, विषकन्याओं से साहचर्य-सम्भोग कराकर आदि अनेक उपायों से मानव-वध के प्रयास किये जाते थे। सामूहिक हत्यार्थ जलाशयों, कुआ-बावड़ी आदि के जल को, पृथ्वी को, फसलों को, वायु को, परिवेश को विषाक्त बनाया जाता था। कौटिल्य का अर्थशास्त्र भी इस सन्दर्भ में विशेष रूप से दर्शनीय है।

16.2 भारत में विषाक्तता की घटनाओं में वृद्धि (Rise in Incidences of Poisoning in India)

आज भी भारतवर्ष में विषाक्तता की घटनाएँ दिनों-दिन बढ़ती जा रही हैं। इसका मुख्य कारण यहाँ विष एवं विषाक्त वस्तुओं की सरल उपलब्धि; विषाक्त वस्तुओं के भण्डारण एवं रख-रखाव में असावधानी, लोगों की विषाक्त वस्तुओं के प्रति अज्ञानता; अशिक्षित, अर्धशिक्षित एवं छद्म चिकित्सकों द्वारा विषौधियों का अविवेकपूर्ण दुरुपयोग तथा शासन द्वारा विष एवं विषाक्तता से सम्बन्धित कानूनों के पालन में ढिलाई एवं भ्रष्टाचार है।

16.3 मानव विषाक्तता (Human Poisoning)

भारत में आत्महत्यार्थ जिन विषों का प्रयोग किया जाता है, उनमें प्रमुख हैं -

- अफीम,
- संखिया,
- धतूरा,
- ताम्र,
- कनेर,
- पोटैशियम सायनाइड (Potassium cyanide),

Scanned with CamScanner

- हाइड्रोसायनिक एसिड (hydrocyanic acid),
- बारबिट्यूरेट्स (barbiturates),
- आर्गेनो फॉस्फोरस (organo phosphorus) के यौगिक,
- ऑग्जेलिक एसिड (oxalic acid) आदि।

इस सम्बन्ध में भी देश-काल का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है। कुछ वर्षों पूर्व तक जबकि आधुनिक विष एवं विषौधियाँ उपलब्ध नहीं थीं, आत्महत्या के लिए अफीम का ही सर्वाधिक प्रयोग होता था। लगभग 60 प्रतिशत घटनाएँ अफीम द्वारा आत्महत्या के प्रयास की ही होती थीं। किन्तु जबसे अफीम पर नियन्त्रण के कारण उसका मिलना दुर्लभ हो गया है, अन्य साधनों का भी उपयोग किया जाने लगा है। जहाँ या जिन प्रदेशों में जो विष सरलता से उपलब्ध होते हैं वहाँ उन्हीं का उपयोग अधिक किया जाता है। उदाहरण के लिए बिहार, उत्तर प्रदेश एवं मध्य प्रदेश में अफीम, संखिया, धतूरा, पोटैशियम साइनाइड, मद्यसार और यशद फॉस्फेट; बंगाल में कीटनाशी औषधियाँ, अफीम, संखिया, धतूरा, कनेर, मद्यसार तथा नाइट्रिक अम्ल (nitric acid); मद्रास और आन्ध्र प्रदेश में कनेर, धतूरा, ताम्र, पैराथायोन, मिट्टी का तेल और मद्यसार आदि के द्वारा आत्महत्या के केस अधिक पाये जाते हैं। आजकल तो बार्बिटोन वर्ग की स्वापी गोलियों द्वारा आत्महत्या के प्रयास के केस भी अधिक होने लगते हैं। कोल-गैस द्वारा आत्महत्या के प्रयास की छुटपुट घटनाएँ भी होती हैं।

दूसरों से शत्रुतावश या उनकी सम्पत्ति हड़पने के लिए अथवा उन्हें अपने किसी भी स्वार्थ की पूर्ति में बाधा समझकर सर्वदा के लिए अपने मार्ग से हटाने के लिए परहत्यार्थ या मानव-वध के लिए जिन विषों का उपयोग किया जाता है, उनमें प्रमुख हैं -

- संखिया,
- कनेर,
- पारद,
- एण्टिमनी (antimony),
- आर्गेनो फॉस्फोरस (organo phosphorus) के यौगिक,
- कॉच का चूर्ण,
- वत्सनाभ,
- ताम्र,
- कुचला,
- थैलियम (thallium),
- स्वापक औषधियाँ,

कभी-कभी इन्सुलिन और बिरले ही सक्षम रोगजीवाणु या साँप से डसाना आदि युक्तियों को भी काम में लाया जाता है। इनमें भी सबसे अधिक उपयोग संखिया और वत्सनाभ का किया जाता है। संखिया स्वादहीन, गन्धहीन, वर्णहीन एवं अल्प मात्रा में सद्य: मारक है। इसके लक्षण भी विसूचिका के लक्षणों से बहुत साम्य रखते हैं। इसी प्रकार वत्सनाभ भी अल्प मात्रा में घातक और सरलता से खाद्य वस्तुओं में मिला दिया जानेवाला है। इसका मरणोत्तर स्वरूप आसानी से पकड़ में आनेवाला नहीं होता और मृत शरीर के अपजनन के साथ ही साथ शीघ्रता से नष्ट भी हो जाता है। शिशु-हत्यार्थ प्राय: अफीम को ही उपयोग में लाया जाता है।

कुछ विषों का उपयोग मात्र सामयिक रूप से कुछ समय के लिए प्राणी को मूढ़ बनाकर उसे लूटने, ठगने, यौनशोषण करने अथवा उससे कोई अन्य गलत काम करवाने के लिए किया जाता है। इनमें सर्वप्रमुख है - धतूरा; उसके बाद भाँग और क्लोरल हाइड्रेट (chloral hydrate) का स्थान आता है। क्लोरल हाइड्रेट को मदिरा में मिलाकर आसानी से दिया जा सकता है। कभी-कभी एट्रोपा बेलाडोना (Atropa belladona), हायोसायमस (hyoscyamus) अथवा संखिया के योग से बनी बीड़ी-सिगरेटें आदि का भी प्रयोग किया जाता है।

16.4 पशु विषाक्तता (Animal Poisoning)

अज्ञान, अंधविश्वास, विष के रख-रखाव में असावधानी, धोखे से गलत दवा ले लेने, विषाक्त औषधियों के गलत मात्रा में मिश्रित हो जाने आदि के कारण आकस्मिक विषाक्तता की घटनाएँ घटित होती रहती हैं। साँप, बिच्छू तथा अन्य जहरीले कीड़ों के दंश से भी अनेक लोग विषाक्तता के शिकार होते हैं। ऐसे उद्योगों एवं कारखानों में जिनमें पारद, ताम्र, यशद, फॉस्फोरस आदि का उपयोग होता है, वहाँ काम करनेवाले लोग भी जाने-अनजाने विषाक्तता के शिकार होते रहते हैं। गर्भस्राव या गर्भपात के लिए दी गई विषाक्त औषधियाँ भी कभी-कभी विषाक्तता का कारण बन जाती हैं।

शत्रुतावश अथवा खाल-सींग आदि प्राप्त करने के उद्देश्य से लोग दूसरों के पशुओं को प्राय: जहर देकर मार दिया करते हैं। कभी-कभी पशुओं के पागल अथवा अनुपयोगी हो जाने के कारण उनके मालिक स्वयं उन्हें जहर देकर मार दिया करते हैं। पशु धोखे में विषाक्त वनस्पतियों को खाकर मर सकते हैं। पशुहत्या के लिए हमारे देश में सबसे अधिक सफेद संखिया, फिर उसके बाद वत्सनाभ, कुचले के बीज, पीली कनेर, घुँघची, पैराथायोन आदि का उपयोग किया जाता है। साँपों से डसवाकर भी पशुहत्या के प्रयास की कुछ घटनाएँ घटती रहती हैं। पशुओं में विष के अवचारण की अपनी अलग विधियाँ हैं। उदाहरण के लिए घुँघची को रात में पानी में भिगो, सुबह उसका छिलका उतार, बारीक पीसकर उसकी नुकीली सुइयाँ बनाकर पशुओं के

Scanned with CamScanner

शरीर में घुसा दी जाती हैं। इसी प्रकार संखिया की भी बारीक सुइयाँ बनाकर पशुओं के शरीर में घुसा दी जाती हैं या उसे चारे में मिलाकर खिला दिया जाता है। साँप को हाँडी में बन्द कर उसमें एक केला डाल दिया जाता है, फिर हांडी को गर्म किया जाता है। इससे साँप क्रुद्ध होकर केले पर अपना दंश गड़ा देता है; बाद में इसी केले को पशु की योनि, गुदा या अन्य किसी अंग में घुसा दिया जाता है।

आत्महत्या, परहत्या एवं पशुहत्या में प्रयुक्त उपर्युक्त विषों में से अधिकांश का विस्तृत वर्णन, यथा - उनकी विषाक्तता से उत्पन्न लक्षण एवं चिह्न, निदान तथा चिकित्सा आदि का विवरण गत पृष्ठों में प्रस्तुत किया जा चुका है। मानव में उत्पन्न विष-वेगों के साथ-साथ पशु और पक्षियों में भी उत्पन्न विष-वेगों का उल्लेख किया जा चुका है। चिकित्सा-विधियाँ और औषधियाँ भी प्रायः वे ही उपयोग में लायी जाती हैं जो मानव के लिए अभिप्रेत हैं। प्रक्रम और मात्रा में अवश्य अन्तर रहता है। उस पर प्रकाश डालते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है -

विषार्तानां यथोद्दिष्टं विधानं शस्यते मृदु।
रक्तावसेकाञ्जनानि नरतुल्यान्यजाविके।।

त्रिगुणं महिषे सोष्ट्रे गवाश्वे द्विगुणं तु तत्।
चतुर्गुणं तु नागानां, केवलं सर्वपक्षिणाम्।।

परिषेकान् प्रदेहांश्च सुशीतानवचारयेत्।
माषकं त्वञ्जनस्येष्टं द्विगुणं नस्यतो हितम्।
पाने चतुर्गुणं पथ्यं वमनेऽष्टगुणं पुनः।।

(सु.क. 5/31-33)

बकरी और भेड़ में रक्तावसेचन और अञ्जन की क्रिया मनुष्य के समान ही करनी चाहिए। (उनसे क्रमशः बड़े पशुओं में -) गाय और घोड़े में दो गुनी, भैंस और ऊँट में तीन गुनी तथा हाथी में चार गुनी मात्रा में औषधि का प्रयोग करना चाहिए। पक्षियों में सम्पूर्ण परिषेक और प्रदाह अति शीतल द्रव्यों से ही करना चाहिए। अन्य पशु-पक्षियों में भी स्वविवेकानुसार उनके आकार को ध्यान में रखते हुए इसी क्रम में औषधि का प्रयोग करना चाहिए।

16.5 विष के भण्डारण एवं संचालन में सावधानी (Storage and Maintenance of Poisonous Articles)

विषाक्त पदार्थों के रख-रखाव एवं उपयोग में असावधानी भी, जिससे किसी को क्षति पहुँच जाये, एक दण्डनीय अपराध माना जाता है। इसीलिए घर-बाहर सभी स्थानों पर इनके रख-रखाव में पूरी सावधानी बरतना आवश्यक है। विषाक्त पदार्थों में औषधियों (drugs), पूतिरोधियों (antiseptics), विसंक्रमणों (disinfectants), कीटनाशकों (insecticides), कवक या फफूंदनाशियों (fungicides), अपतृण-नाशियों (weed killers) आदि सभी का समावेश हो जाता है।

पेट्रोल, खाना पकाने की गैस, मिट्टी का तेल, रंगों को पतला करने के लिए उनमें मिलाये जानेवाले तरल, परिमार्जन तरल (cleaning fluids), विभिन्न प्रकार के विरंजक (bleech), विरंजक चूर्ण (bleaching powder), अम्ल (acids) तथा क्षार (alkali) - ये सभी इसी वर्ग में आते हैं। इन्हें बच्चों की पहुँच से दूर ऊँची जगहों पर या ताले-चाभी में बन्द करके रखना चाहिए। मानसिक रोगी (विशेषरूप से अवसादग्रस्त) भी आत्महत्यार्थ इनका उपयोग कर सकते हैं। अतः इस ओर से भी सावधान रहना चाहिए।

विषाक्त तरलों को कभी भी पुरानी लेमनेड, शर्बत या साँश की बोतलों में भरकर नहीं रखना चाहिए। हर बोतल या शीशी में जो भी रखा हो उसपर उसका लेबुल लगाकर रखना चाहिए। औषधि और अनौषधि द्रव्यों को पास पास नहीं रखना चाहिए। बची हुई दवाओं को यूँ ही न पड़ा रहने दें, अनावश्यक या पुरानी होने पर उन्हें फेंक दें। फेंकते समय भी ध्यान रखें कि वे ऐसी जगहों पर न फेंकी जायें जहाँ से बच्चे या अन्य प्राणी उसे उठाकर खा सकें। औषधियों को कभी भी अँधेरे या अपर्याप्त प्रकाश में न लें। लेने अथवा किसी को देने के पूर्व पूर्णतः निश्चित कर लें कि आपने उसका लेबुल और मात्रा ठीक से देख ली है। विषाक्तता के अधिकांश मामले प्रायः असावधानी के कारण आकस्मिक रूप में घटित होते हैं।

इसी प्रकार औषधि-विक्रेताओं एवं मिश्रकों (compounders) एवं परिचारिकाओं (nurses) को भी अपने काम में पूरी सावधानी बरतनी चाहिए।

16.6 विष सम्बन्धी विधि (कानून) (Law Relating to Poison)

वैधानिक दृष्टि से विष के अन्तर्गत उन पदार्थों का समावेश किया जाता है जिनके निगलने, अभिश्वसन या अन्य विधियों द्वारा रक्त में प्रविष्ट हो जाने पर शरीर को क्षति पहुँचने की आशंका या प्राणों के नष्ट हो जाने का खतरा हो।

भारतीय दण्ड संहिता (Indian Penal Code) के अनुसार आत्महत्या, मानव-वध तथा पशुहत्या के उद्देश्य से अथवा इनमें से किसी को भी शारीरिक क्षति पहुँचाने के उद्देश्य से विष का प्रयोग एक दण्डनीय अपराध है। इस सम्बन्ध में भा.द.संहिता की धाराएँ 299, 304-क, 324, 326 और 328 लागू होती हैं।

Scanned with CamScanner

इसी प्रकार विष या विषैले पदार्थों के रख-रखाव, संचालन एवं प्रबन्धन में किसी प्रकार की असावधानी या प्रमादवश किसी दूसरे व्यक्ति को शारीरिक क्षति पहुँच जाये या पहुँचने की आशंका हो तो उसे भी दण्डनीय अपराध माना जाता है। इस मामले में भा.द. सं. की धारा 284 लागू होती है।

16.7 प्राचीन भारत में सामरिक विष प्रयोग और उसका प्रतिकार (Community Poisoning in Ancient India and its Management)

जिस प्रकार आधुनिक काल में युद्धों में विषैले रसायनों, गैसों आदि का प्रयोग कर शत्रु-सेना में भाँति-भाँति के रोगों, विकलांगताओं आदि को उत्पन्न किया जाता है; शत्रु के क्षेत्र के जलाशयों, फसलों, भोजन-सामग्रियों, वायुमण्डल आदि को विषाक्त बनाया जाता है, उसी प्रकार प्राचीन भारत में भी शत्रुओं के वैयक्तिक एवं सामूहिक विनाश के लिए विषयोगों का प्रयोग किया जाता था। कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में ऐसे अनेक प्रयोगों का वर्णन किया है जिनके द्वारा शत्रु-सेना में सामूहिक रूप से कुष्ठ, प्रमेह, क्षय, हैजा, ज्वर, उन्माद आदि रोगों का प्रसार किया जा सकता है; सैनिकों को अंधा, बहिरा या गूँगा बनाया जा सकता है; तथा शत्रु-क्षेत्र की भूमि, जलाशयों तथा वहाँ के वायुमण्डल को विषाक्त बनाया जा सकता है। (देखें - कौटिल्य अर्थशास्त्र प्रकरण 177।1)। इसीलिए उस काल में भी सेना के साथ ऐसे विष-वैद्य भी चलते थे जो सामरिक विष-प्रयोगों के प्रतिकार में विशेषरूप से कुशल होते थे। आयुर्वेद की संहिताओं में इस प्रकार के प्रतिकारात्मक योगों का वर्णन स्वयं इस तथ्य का साक्ष्य उपस्थित करता है। आचार्य सुश्रुत के शब्दों में -

राज्ञोऽरिदेशे रिपवस्तृणाम्बुमार्गान्निधूमश्वसनान् विषेण।
संदूषयन्त्येभिरतिप्रदुष्टान् विज्ञाय लिंगैरभिशोधयेत्तान्।
(सु.क. 3/6)

शत्रु देश में प्रविष्ट राजा के तृण (घास, भूसा आदि पशुओं का चारा); जल (जलाशय आदि), मार्ग (भूमि), अन्न एवं वायु को शत्रु विष से दूषित कर देते हैं। शत्रुओं द्वारा दूषित की गई इन वस्तुओं को निम्न लक्षणों से पहचान कर उनका शोधन कर लेना चाहिए।

16.8 प्रदूषित जल के लक्षण एवं उसका प्रतिकार (Signs of Polluted water and its Management)

प्रदूषित जल के लक्षण -

दुष्टं जलं पिच्छिलमुग्रगन्धि फेनान्वितं राजिभिरावृतं च।
मण्डूकमत्स्यं म्रियते विहंगा मत्ताश्च सानूपचरा भ्रमन्ति।।
मज्जन्ति ये चात्र नराश्वनागास्ते छर्दिमोहज्वरदाह-शोफान्। ऋ(ग)च्छन्ति तेषामपहृत्य दोषान् दुष्टं जलं शोधयितुं यतेत।। (सु.क. 3/7-8)

- विष से प्रदूषित जल पिच्छिल, उग्र गन्ध से युक्त, फेनिल तथा रेखाओं से युक्त होता है।
- उस जल में रहनेवाले मेढक, मछलियाँ आदि मर जाती हैं।
- पक्षी उस जल को पीकर उन्मत्त हो जाते हैं।
- मनुष्य, घोड़े, हाथी आदि जो भी उसमें स्नान करते हैं अथवा उस जल का पान करते हैं वे वमन, अतिसार, मोह, ज्वर, दाह, शोफ आदि से ग्रस्त हो जाते हैं।

प्रदूषित जल का प्रतिकार -

धवाश्वकर्णासनपारिभद्रान् सपाटलान् सिद्धकमोक्षकौ च। दग्ध्वा सराजदुमसोमवल्कां स्तद्भस्म शीतं वितरेत् सरःसु।।
भस्माञ्जलिं चापि घटे निधाय विशोधयेदीप्सित-मेवमम्भः। (सु.क. 3/9-10)

- धव (वाकली/Anogeissus latifolia), अश्वकर्ण, असन (बीजक:/विजयसार), पारिभद्र, पाटला (पाढल), सिद्धक (स्यन्दन), मोक्षक (मुष्कक), आरग्वध और सोमवल्क (कट्फल) - इनको जलाकर इनकी शीतल भस्म को तालाबों में डाल दें। इस भस्म को एक अञ्जलि प्रमाण लेकर घड़े में डाल दें और अपनी इच्छानुसार जलशोधन करें।

16.9 प्रदूषित तृण एवं अन्नादि के लक्षण और उनका प्रतिकार (Signs of Polluted Fodder etc. and their Management)

तृणेषु भक्तेषु च दूषितेषु सीदन्ति मूर्च्छन्ति वमन्ति चान्ये। विड्भेदमृच्छन्त्यथवा म्रियन्ते तेषां चिकित्सां प्रणयेद्यथोक्ताम्।।
विषापहैर्वाऽप्यगदैर्विलिप्य वाद्यानि चित्राण्यपि वादयेत्। तारः सुतारः ससुरेन्द्रगोपः सर्वैश्च तुल्यः कुरुविन्द-भागः।।
पित्तेन युक्तः कपिलान्वयेन वाद्यप्रलेपो विहितः प्रशस्तः। वाद्यस्य शब्देन हि यान्ति नाशं विषाणि घोराण्यपि यानि सन्ति।। (सु.क. 3/13-15)

Scanned with CamScanner

प्रदूषित तृण एवं अन्नादि के लक्षण

विष से प्रदूषित घास-भूसा आदि खाने से पशु और विष से प्रदूषित अन्न तथा अन्य खाद्य सामग्रियों को ग्रहण करने से मनुष्य वमन, अतिसार आदि से पीड़ित हो जाते हैं। उनके अंगों में शिथिलता एवं स्तब्धता आने लगती है। संज्ञा का विनाश होने लगता है और अन्ततोगत्वा वे मृत्यु का ग्रास बन जाते हैं।

प्रदूषित तृण, अन्नादि का शोधन

विषनाशक अगदों को नाना प्रकार के मृदंग, नगाड़े आदि वाद्य-यन्त्रों पर लेप कर उन्हें बजायें। चाँदी, पारा, स्वर्ण और सारिवा - समभाग; इन सबके बराबर कुरुविन्द लेकर सबको कपिल वर्ण की गाय के पित्त में मिलाकर बाजों पर लेप कर बजाएँ। वाद्य यन्त्रों के तीव्र निनाद से घोर विष भी प्रभावहीन एवं नष्ट हो जाते हैं।

16.10 प्रदूषित भूमि के लक्षण एवं उसका प्रतिकार (Signs of Polluted Land and its Management)

क्षितिप्रदेशं विषदूषितं तु शिलातलं तीर्थमथेरिणं वा।।
स्पृशन्ति गात्रेण तु येन येन गोवाजिनागोष्टध्खरा नरा वा। तच्छूनतां यात्यथ दह्यते च विशीर्यते रोमनखं तथैव।।
तत्राप्यनन्तां सह सर्वगन्धैः पिष्ट्वा सुराभिर्विनियोज्य मार्गम्। सिञ्चेत् पयोभिः सुमृदन्वितैस्तं विडंगपाठाकटभीजलैर्वा।। (सु.क. 3/10-12)

प्रदूषित भूमि के लक्षण -

- विष से दूषित भूमि-प्रदेश, शिलातल, घाट तथा मैदान आदि के सम्पर्क में आने पर गाय, बैल, हाथी, घोड़े, गधे आदि पशुओं तथा मनुष्यों के जो भी अंग सम्पर्क में आते हैं, वे शोथ एवं दाह से युक्त हो जाते हैं। वहाँ के रोम और नख झड़ जाते हैं।

प्रदूषित भूमि का शोधन -

- सारिवा को एलादिगण की औषधियों के साथ सुरा में पीसकर, दूध एवं काली मिट्टी या वल्मीक की मिट्टी के साथ मिलाकर प्रदूषित भूमि पर छिड़काव करें।

प्रदूषित अंग का उपचार -

- उक्त औषधि का प्रदूषित अंगों पर भी छिड़काव करें; अथवा - वायविडंग, पाठा और कटभी (अपराजिता) आदि द्रव्यों के कषाय से परिषेक करे।

16.11 प्रदूषित वायुमण्डल के लक्षण एवं उसका प्रतिकार (Signs of Polluted Atmosphere and its Management)

धूमेऽनिले वा विषसंप्रयुक्ते खगाः श्रमार्ताः प्रपतन्ति भूमौ।
कासप्रतिश्यायशिरोरुजश्च भवन्ति तीव्रा नयना-मयाश्च।।
लाक्षाहरिद्रातिविषाभयाब्दहरेणुकैलादलवक्रकुष्ठम्।
प्रियंगुकां चाप्यनले निधाय धूमानिलौ चापि विशोधयेत्।। (सु.क. 3/16-17)

- धूम अथवा वायु विषाक्त हो तो उसमें साँस लेने वाले पक्षी श्रान्त होकर पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं।
- मनुष्यों में इससे कास (cough), प्रतिश्याय (coryza), शिरोवेदना (headache) और तीव्र नेत्ररोग (severe ophthalmic disorders) हो जाते हैं।

वायुमण्डल का शोधन (Shodhana of atmosphere)

प्रदूषित धूम एवं वायुमण्डल के प्रतिकार के लिए निम्न चूर्ण को आग में डालना चाहिए -

लाक्षा + हरिद्रा + अतिविषा + हरीतकी + मुस्तक + हरेणु + एला + दल (तेजपात) + वक्र (तगर) + कुष्ठ + प्रियंगु

16.12 विषाक्त शस्त्र से विद्ध रोगी के लक्षण एवं उसका प्रतिकार (Symptoms Exhibited by injuries caused by Poisonous Weapons and their Management)

विषाक्त शस्त्र से विद्ध रोगी के लक्षण (Symptoms)

- फेन का वमन होता है। संज्ञा का लोप होने लगता है। हाथ, पैर, मुख, नख आदि काले पड़ जाते हैं। नाक बैठ जाती है। अंग टूटने लगते हैं। सन्धियाँ ढीली पड़ जाती हैं। अतिसरण होने लगता है।

उपचार (Treatment)

- रोगी की विषाक्त रोगी के समान और व्रण की विषाक्त व्रणवत् चिकित्सा करें।

• • •

Scanned with CamScanner

परिशिष्ट
Appendix

कुछ प्रमुख शास्त्रोक्त अगद (Certain important Agadas - from the Classics)

क्रम	योग का नाम	प्रभाव क्षेत्र	अ.सं.उ.	च.चि.	सु.क.
1	अजित अगद	सर्वविष नाशक	40.76		5.63-65
2	अजेय घृत	सर्वविष नाशक	40.73		
3	अमृत घृत	सर्वविष नाशक	40.99	23.242-49	
4	अमृत सर्पि	सर्पविष			6.12-13
5	ऋषभ अगद	सर्पादि उपद्रव	42.62	23.95	5.68-73
6	औशनस् अगद	सर्व विष	40.49		
7	कल्याणक सर्पि	सर्प विष			6.8-11
8	काकाण्डादि योग	सर्प विष		23.53	
9	क्षारागद	सर्व विष	41.38	23.101-4	6.1-3
10	गंधहस्ती अगद	सर्व विष		23.70-76	
11	चन्दनादि योग	सर्व विष एवं शोथ		23.191-93	
12	तार्क्ष्य अगद	सर्प विष	42.58		5.65-68
13	दशांग अगद	विषोपद्रव	40.49		
14	दूषीविषारि अगद	दूषी विष	40.107		2.50-51
15	नागदन्त्यादि घृत	गरविष, कीटादि		23.241	
16	पञ्चशिरीष अगद	सर्वविष		23.218	
17	प्राजापत्य अगद	सर्वविष	40.62		
18	बालसूर्य अगद	सर्वविष	40.57		
19	ब्राह्म अगद	सर्वविष	40.61		
20	महा अगद	सर्प विष	42.61		5.61-63
21	महागंधहस्ती अगद	सर्व विष		23.77-94	
22	महासुगन्धि अगद	सर्प विष	47.40		6.14-27
23	मांस्यादि योग	सर्वविष, शोथ		23.190	

Scanned with CamScanner

क्रम	योग का नाम	प्रभाव क्षेत्र	अ.सं.उ.	च.चि.	सु.क.
24	माहेश्वर अगद	सर्वविष	40.78		
25	मृतसंजीवन अगद	सर्वविष	40.58	23.54-60	
26	यापनाख्य आगद	सर्वविष	40.56		
27	वंशत्वगादि आगद	लूता आदि			5.78-80
28	शिव अगद	सर्व विष	40.49		
29	संजीवन अगद	सर्व विष	40.55		5.73-75
30	सुगन्धाख्य अगद	सर्व विष	47.22		
31	सुरसादि अगद	सर्प विष		23.52	
32	सूर्योदय अगद	सर्व विष	40.48		
33	हिंग्वादि योग	विषोपद्रव		23.96	

1. अजित अगद (Ajita Agada)

सन्दर्भ-सु.क. 5/63-65

सूत्र -

विडंगपाठात्रिफलाजमोदाहिंगूनि वक्रं त्रिकटूनि चैव।।

सर्वश्च वर्गो लवणः सुसूक्ष्मः सचित्रकः क्षौद्रयुतो निधेयः। शृंगे गवां शृंगमयेन चैव प्रच्छादितः पक्षमुपेक्षितश्च।।

एषोऽगदः स्थावरजंगमानां जेता विषाणामजितो हि नाम्ना। (सु.क. 5/63-65)

घटक द्रव्य -

- विडंग
- पाठा
- त्रिफला
- अजमोदा
- हिंगु
- वक्र अर्थात् तगर
- त्रिकटू
- पञ्च लवण
- चित्रक

विधि - उपरोक्त सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण को मधु में मिलाकर गोशृंग में भरकर शृंग के ढक्कन से आच्छादित कर पन्द्रह दिन तक रख दें।

फलश्रुति - यह स्थावर और जंगम विषों को नष्ट करता है।

2. अजेय घृत (Ajeya Ghrta)

सन्दर्भ- अ.सं.उ 40/73

सूत्र -

मधुकं तगरं कुष्ठं भद्रदारु हरेणवः।
मञ्जिष्ठैलैलवालूनि नागपुष्पोत्पलं प्लवम्।।

विडंगं चन्दनं पत्रं प्रियंगुर्ध्यामकं बला।
अंशुमत्यौ हरिद्रे द्वे बृहत्यौ सारिवाद्वयम्।।

एषां कल्कैर्घृतं सिद्धमजेयं नाम विश्रुतम्।
विषाणि हन्ति सर्वाणि शीघ्रमेव प्रयोजितम्।।

(अ.सं.उ. 40/73)

घटक द्रव्य -

- मधुक
- तगर
- कुष्ठ
- भद्रदारु
- हरेणु
- मञ्जिष्ठा
- एला
- एलवालूक
- नागपुष्प
- उत्पल
- प्लव
- विडंग
- चन्दन
- तेजपत्र
- प्रियंगु
- ध्यामक
- बला
- शालिपर्णी
- पृश्निपर्णी
- हरिद्रा
- दार्वी
- बृहती
- कण्टकारी
- श्वेत सारिवा
- कृष्ण सारिवा

विधि - सभी द्रव्यों के कल्क से घृत सिद्ध करें।

फलश्रुति - यह 'अजेय' नामक घृत प्रयोग करने पर शीघ्र ही सभी विषों को नष्ट कर देता है।

3. अमृत घृत (Amrta Ghrta)

सन्दर्भ- च.चि. 23/242-249

सूत्र -

शिरीषत्वक् त्रिकटुकं त्रिफलां चन्दनोत्पले।।

द्वे बले सारिवास्फोतासुरभीनिम्बपाटलाः।
बन्धुजीवाढकीमूर्वावासासुरसवत्सकान्।।

पाठांकोलाश्वगन्धार्कमूलयष्ट्याह्वपद्मकान्।
विशालां बृहतीं लाक्षां कोविदारं शतावरीम्।।

कटभीदन्त्यपामार्गान् पृश्निपर्णीं रसाञ्जनम्।
श्वेतभण्डाश्वखुरकौ कुष्ठदारुप्रियंगुकान्।।

Scanned with CamScanner

विदारीं मधुकात् सारं करञ्जस्य फलत्वचौ।
रजन्यौ लोध्रमक्षांशं पिष्ट्वा साध्यं घृताढकम्।।
तुल्याम्बुच्छागगोमूत्रत्र्याढके तद्विषापहम्।
अपस्मारक्षयोन्मादभूतग्रहगरोदरम्।।
पाण्डुरोगक्रिमीगुल्मप्लीहोरुस्तम्भकामलाः।
हनुस्कन्धग्रहादींश्च पानाभ्यञ्जननावनैः।।
हन्यात् संजीवयेच्चापि विषोद्बन्धमृतान्नरान्।
नाम्नेदममृतं सर्वविषाणां स्याद्धतोत्तमम्।।

(च.चि. 23/242-249)

घटक द्रव्य –

- शिरीत्वक
- त्रिकटु
- त्रिफला
- चन्दन
- उत्पल
- बला
- अतिबला
- सारिवा
- आस्फोता
- सुरभी
- निम्ब
- पाटला
- कोविदार
- आढकी
- मूर्वा
- लोध्र
- वासा
- सुरस
- वत्सक
- पाठा
- अंकोल
- अश्वगन्धा
- अर्कमूल
- यष्ट्याह्व अर्थात् यष्टीमधु
- विशाला
- बृहती
- लाक्षा
- शतावरी
- पद्मक
- कटभी
- दन्ती
- अपामार्ग
- पृश्निपर्णी
- रसाञ्जन
- श्वेतभण्डा
- अश्वखुरक
- कुष्ठ
- देवदारु
- प्रियंगु
- विदारी
- मधुक सार
- करञ्ज फल एवं त्वक्
- रजनी
- दार्वी

विधि – उपरोक्त सभी द्रव्यों को 1 कर्ष की मात्रा में लेकर, 1 आढक गोघृत, 1 आढक जल और 3 आढक गोमूत्र या अजामूत्र के साथ स्नेहपाक विधि से सिद्ध कर सुरक्षित रख लें।

फलश्रुति – यह अगद अपस्मार, क्षय, उन्माद, भूतग्रह, गर, उदररोग, पाण्डुरोग, लिमी, गुल्म, प्लीहारोग, उरुस्तम्भ, कामला, हनुग्रह, स्कन्धग्रह आदि रोगों में उपयोगी है।

प्रयोग विधि –

- आभ्यन्तर पान
- अभ्यञ्जन
- नावन।

4. अमृत सर्पि (Amrta Sarpi)

सन्दर्भ– सु.क. 6/12-13

सूत्र –

अपामार्गस्य बीजानि शिरीषस्य च माषकान्।
श्वेते द्वे काकमाचीं च गवां मूत्रेण पेषयेत्।।
सर्पिरेतैस्तु संसिद्धं विषसंशमनं परम्।
अमृतं नाम विख्यातमपि संजीवयेन्मृतम्।।

(सु.क. 6/12-13)

घटक द्रव्य –

- अपामार्ग बीज
- माषक बीज
- महाश्वेता
- शिरीष बीज
- श्वेता
- काकमाची

विधि – उपरोक्त द्रव्यों को गोमूत्र में पीसकर घृत सिद्ध करें।

फलश्रुति – यह 'अमृत' नामक घृत परम विषशामक (best anti-toxic) है और मृत सदृश व्यक्ति को भी जीवित करने में समर्थ है।

5. ऋषभ अगद (Rshabha Agada)

सन्दर्भ– च.चि. 23/95

सूत्र –

ऋषभकजीवकभार्गीमधुकोत्पलधान्यकेशराजाज्यः।
ससितगिरिकोलमध्याः पेयाः श्वासज्वरादिहराः।।

(च.चि. 23/95)

घटक द्रव्य –

- ऋषभक
- उत्पल
- अजाजी
- जीवक
- धान्यक
- सितगिरि
- भार्गी
- केशर
- कोलमध्य
- मधुक

विधि – सभी द्रव्यों को समभाग लेकर पीसकर सुरक्षित रख लेना चाहिए।

फलश्रुति – यह योग विषजन्य श्वास ज्वरादि का नाशक है।

6. औशनस् अगद (Aushanas Agada)

सन्दर्भ– अ.सं.उ. 40/49

सूत्र –

सुरालापावकीसोमाभोगवत्यमृतानतम्।
आढकीकिणिहीसोमराजी चौशनसोऽगदः।।

(अ.सं.उ 40/49)

घटक द्रव्य –

- सुराला
- भोगवती
- आढकी
- पावकी
- अमृता
- किणिही
- सोमा
- नत
- सोमराजी

विधि – इन सभी को एकत्रित कर 'औशनस् अगद' बनता है।

Scanned with CamScanner

7. कल्याणक सर्पि (Kalyanaka Sarpi)

सन्दर्भ- सु.क. 6/8-11

सूत्र -

विडंगत्रिफलादन्तीभद्रदारुहरेणवः।
तालीशपत्रमञ्जिष्ठाकेशरोत्पलपद्मकम्।।
दाडिमं मालतीपुष्पं रजन्यौ सारिवे स्थिरे।
प्रियंगुस्तगरं कुष्ठं बृहत्यौ चैलवालुकम्।।
सचन्दनगवाक्षीभिरेतैः सिद्धं विषापहम्।
सर्पिः कल्याणकं ह्येतद्ग्रहापस्मारनाशनम्।।
पाण्ड्वामयगरश्वासमन्दाग्निज्वरकासनुत्।
शोषिणामल्पशुक्राणां वन्ध्यानां च प्रशस्यते।।

(सु.क. 6/8-11)

घटक द्रव्य -

- विडंग
- त्रिफला
- दन्ती
- भद्रदारु
- हरेणु
- तालीशपत्र
- मञ्जिष्ठा
- केशर
- उत्पल
- पद्मक
- दाडिम
- मालतीपुष्प
- हरिद्रा
- दार्वी
- श्वेत सारिवा
- कृष्ण सारिवा
- शालिपर्णी
- पृश्निपर्णी
- प्रियंगु
- तगर
- कुष्ठ
- बृहती
- कण्टकारी
- एलवालुक
- चन्दन
- गवाक्षी

विधि - उपरोक्त सभी द्रव्यों से घृत सिद्ध करें।

फलश्रुति - यह 'कल्याणक' नामक घृत विषहर है। यह घृत ग्रह अपस्मार, पाण्ड्वामय अर्थात् पाण्डुरोग, गरविष, श्वासरोग, मन्दाग्नि, ज्वर और कासनाशक है। यह शोष, अल्पशुक्रता और वन्ध्यत्व से पीड़ित रोगियों के लिए प्रशस्त है।

8. काकाण्डादि योग (Kakandadi Yoga)

सन्दर्भ- च.चि. 23/53

सूत्र -

काकाण्डसुरसगवाक्षीपुनर्नवावायसीशिरीषफलैः।
उद्बन्धविषजलमृते लेपौपधिनस्यपानानि।।

(च.चि. 23/53)

घटक द्रव्य -

- काकाण्ड
- सुरस
- गवाक्षी
- पुनर्नवा
- वायसी
- शिरीषफल

प्रयोग विधि -

- लेप
- पान
- नस्य

फलश्रुति - यह अगद गले में फन्दा लगाने विषपान करने या विषाक्त कीट के काटने पर या जल में डूबने से जो व्यक्ति मरणासन्न हो उसके लिए लाभप्रद है।

9. क्षारागद (Ksharagada)

सन्दर्भ- च.चि. 23/101-104

सूत्र -

तरुणपलाशक्षारं स्रुतं पचेच्चूर्णितैः सह समांशैः।
लोहितमृद्रजनीद्वयशुक्लसुरसमञ्जरीमधुकैः।।
लाक्षासैन्धवमांसीहरेणुहिंगुद्विसारिवाकुष्ठैः।
सव्योषैर्बाह्लीकैर्दर्वीविलेपनं घट्टयेद्यावत्।।
सर्वविषशोथगुल्मत्वग्दोषार्शोभगन्दरप्लीह्नः।
शोथापस्मारक्रिमिभूतस्वरभेदपाण्डुगदान्।।
मन्दाग्नित्वं कासं सोन्मादं नाशयेयुरथ पुंसाम्।
गुटिकाश्छायाशुष्काः कोलसमास्ताः समुपयुक्ताः।।

(च.चि. 23/101-104)

घटक द्रव्य -

- तरुणपलाशक्षार
- लोहितमृद् अर्थात् गैरीक
- रजनी
- दार्वी
- शुक्लसुरसमञ्जरी
- मधुक
- लाक्षा
- सैन्धव
- मांसी
- हरेणु
- हिंगु
- श्वेत सारिवा
- कृष्ण सारिवा
- कुष्ठ
- व्योष
- बाह्लीक अर्थात् शुद्ध हिंगु

विधि - तरूण पलाश क्षार में गैरीक आदि द्रव्यों में डालकर पकायें। जब करछुल में लगने लगे तो ठीक से चलाकर गाढ़ा पका लें और ठण्डा होने पर कोल अर्थात् छोटी बेर के समान गोलियाँ बना लें।

फलश्रुति - यह अगद सर्वविष, शोथ, गुल्म, त्वग्दोष, अर्शोरोग, भगन्दर, प्लीहारोग, शोथ, अपस्मार, क्रिमि, भूतबाधा, स्वरभेद, पाण्डुगद, मन्दाग्नि, कास और उन्माद को नष्ट करता है।

10. गंधहस्ती अगद (Gandhahasti Agada)

सन्दर्भ- च.चि. 23/70-76

सूत्र -

श्वेता वचाऽश्वगन्धा हिंग्वमृता कुष्ठसैन्धवे लशुनम्।
सर्षपकपित्थमध्यं टुण्टुककरञ्जबीजानि।।
व्योषं शिरीषपुष्पं द्विरजन्यौ वंशलोचनं च समम्।
पिष्ट्वाऽजस्य मूत्रेण गोश्वपित्तेन सप्ताहम्।।

Scanned with CamScanner

व्यत्यासभावितोऽयं निहन्ति शिरसि स्थितं विषं क्षिप्रम्।
सर्वज्वरभूतग्रहविसूचिकाजीर्णमूर्च्छार्तीः।।

उन्मादापस्मारौ काचपटलनीलिकाशिरोदोषान्।
शुष्काक्षिपाकपिल्लार्बुदार्मकण्डूतमोदोषान्।।

क्षयदौर्बल्यमदात्ययपाण्डुगदांश्चाञ्जनात्तथा मोहान्।
लेपाद्विषदिग्धक्षतलीढदष्टपीतविषघाती।।

अर्शःस्वानद्धेषु च गुदलेपो योनिलेपनं स्त्रीणाम्।
मूढे गर्भे दुष्टे ललाटलेपः प्रतिश्याये।।

वृद्धौ किटिमे कुष्ठे श्वित्रविचर्चिकादिषु लेपः।
गज इव तरून् विषगदान्निहन्त्यगदगन्धहस्त्येषः।।

(च.चि. 23/70-76)

घटक द्रव्य -

- श्वेता
- वचा
- अश्वगन्धा
- हिंगु
- अमृता
- कुष्ठ
- सैन्धव
- लशुन
- सर्षप
- कपित्थमध्य
- टुण्टुक
- करञ्जबीज
- व्योष
- शिरीषपुष्प
- हरिद्रा
- दार्वी
- वंशलोचन

विधि - सभी द्रव्यों को एकत्रित करके बारीक चूर्ण बना लें। फिर अजामूत्र मिलाकर पीस लें। तत्पश्चात् एक सप्ताह पर्यन्त गोपित्त की और अश्वपित्त की क्रमशः भावना देकर सुखाकर सुरक्षित रख लें।

फलश्रुति - यह अगद शिरोप्रदेश में व्याप्त विष को शीघ्रता से नष्ट करता है। यह सभी प्रकार के ज्वर, भूतबाधा, ग्रहबाधा, विसूचिका, अजीर्ण, मूर्च्छा, उन्माद, अपस्मार, काचदोष, पटलदोष, नीलिका, शिरोदोष, शुष्काक्षिपाक, पिल्ल, अर्बुद, अर्म, कण्डू, तमोदोष, क्षय, दौर्बल्य, मदात्यय, पाण्डुगद को नष्ट करता है। आदि।

11. चन्दनादि योग (Chandanadi Yoga)

सन्दर्भ- च.चि. 23/191-192

सूत्र -

चन्दनं तगरं कुष्ठं हरिद्रे द्वे त्वगेव च।।
मनःशिला तमालश्च रसः कैशर एव च।
शार्दूलस्य नखश्चैव सुपिष्टं तण्डुलाम्बुना।।
हन्ति सर्वविषाण्येव वज्रिवज्रमिवासुरान्।

(च.चि. 23/191-192)

घटक द्रव्य -

- चन्दन
- तगर
- दार्वी
- त्वक्
- रस अर्थात् पारद
- नागकेशर
- कुष्ठ
- हरिद्रा
- मनःशिला
- तमाल
- शार्दूलनख

विधि - उपरोक्त सभी द्रव्यों को तण्डुलाम्बु से पीसकर सुरक्षित रख लेना चाहिए।

फलश्रुति - यह योग सभी प्रकार की विषाक्तता को उसी प्रकार नष्ट कर देता है जिस प्रकार इन्द्र का वज्र असुरों को।

12. तार्क्ष्य अगद (Tarkshya Agada)

सन्दर्भ- सु.क. 5/65-68

सूत्र -

प्रपौण्डरीकं सुरदारु मुस्ता कालानुसार्या कटुरोहिणी च।।
स्थौणेयकध्यामकगुग्गुलूनि पुन्नागतालीशसुवर्चिकाश्च।
कुटन्नटैलासितसिन्धुवाराः शैलेयकुष्ठे तगरं प्रियंगुः।।
रोध्रं जलं काञ्चनगैरिकं च समागधं चन्दनसैन्धवं च।
सूक्ष्माणि चूर्णानि समानि कृत्वा शृंगे निदध्यान्मधु-संयुतानि।।
एषोऽगदस्तार्क्ष्य इति प्रदिष्टो विषं निहन्यादपि तक्षकस्य।

(सु.क. 5/65-68)

घटक द्रव्य -

- प्रपौण्डरीक
- सुरदारु
- मुस्ता
- कालानुसारी
- कटुरोहिणी
- स्थौणेयक
- ध्यामक
- शैलेय
- कुष्ठ
- मागध अर्थात् पीपल
- पुन्नाग
- गुग्गुलु
- तालीश
- सुवर्चिका
- कुटन्नट
- एला
- सितसिन्धुवार अर्थात् श्वेत निर्गुण्डी
- तगर
- प्रियंगु
- रोध्र
- जल अर्थात् सुगन्धबाला
- काञ्चनगैरिक अर्थात् स्वर्ण गैरिक
- सैन्धव
- रक्तचन्दन

विधि - उपरोक्त सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण बनाकर और मधु मिलाकर गोशृंग में भर लें। यह 'तार्क्ष्य अगद' है।

फलश्रुति - यह अगद तक्षक जैसे विषैले सर्प के विष को भी नष्ट करने में समर्थ है।

13. दशांग अगद (Dashanga Agada)

सन्दर्भ- अ.सं.उ. 40/49

सूत्र -

मांसीत्वक्पत्रसुरसमनोह्वा शीतकुंकुमम्।
निशा व्याघ्रनखं शुण्ठी दशांगोऽयं विषापहः।।

(अ.सं.उ. 40/49)

Scanned with CamScanner

घटक द्रव्य –

- मांसी
- त्वक्
- तेजपत्र
- सुरस अर्थात् तुलसी
- मनोह्वा
- शीतकुंकुम
- निशा
- व्याघ्रनख
- शुण्ठी

फलश्रुति – यह 'दशांग' नामक अगद विषनाशक है।

14. दूषीविषारि अगद (Dushivishari Agada)

सन्दर्भ– सु.क. 2/50–52

सूत्र –

दूषीविषार्तं सुस्विन्नमूर्ध्वं चाधश्च शोधितम्।
पाययेतागदं नित्यमिमं दूषीविषापहम्।।
पिप्पल्यो ध्यामकं मांसी शावरः परिपेलवम्।
सुवर्चिका ससूक्ष्मैला तोयं कनकगैरिकम्।।
क्षौद्रयुक्तोऽगदो ह्येष दूषीविषमपोहति।
नाम्ना दूषीविषारिस्तु न चान्यत्रापि वार्यते।।

(सु.क. 2/50–52)

घटक द्रव्य –

- पिप्पल अर्थात् पीपल
- मांसी
- सुवर्चिका
- तोय अर्थात् सुगन्धबाला
- शावर लोध्र
- परिपेलव
- सूक्ष्मैला
- ध्यामक
- कनकगैरिक

विधि – सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करके सुरक्षित रख लें।

पूर्वकर्म – इस योग को सेवन करने से पूर्व शरीर का वमन एव विरेचन द्वारा ऊर्ध्व-अधो संशोधन करना चाहिए।

अनुपान – मधु।

फलश्रुति – यह योग दूषीविष को नष्ट करता है तथा ज्वरादि रोगों में भी इसका उपयोग कर सकते हैं।

15. नागदन्त्यादि घृत (Nagadantyadi Ghrta)

सन्दर्भ– च.चि. 23/241–242

सूत्र –

नागदन्तीत्रिवृद्दन्तीद्रवन्तीस्नुक्पयःफलैः।
साधितं माहिषं सर्पिः सगोमूत्राढकं हितम्।।
सर्पकीटविषार्तानां गरार्तानां च शान्तये।

(च.चि. 23/241–242)

घटक द्रव्य –

- नागदन्ती
- त्रिवृत्
- द्रवन्ती
- दन्ती
- स्नुक्पयः अर्थात् स्नुहीक्षीर
- मदनफल

विधि – सभी द्रव्यों को एकत्रित कर बारीक पीसकर कल्क बना लें। उसे एक प्रस्थ गोघृत और एक आढक गोमूत्र के साथ स्नेहपाक विधि से सिद्ध करें।

फलश्रुति – यह योग सर्पविष, कीटविष, गरविष को शान्त करता है।

16. पञ्चशिरीष अगद (Panchashirisha Agada)

सन्दर्भ– च.चि. 23/218

सूत्र –

शिरीषफलमूलत्वक्पुष्पपत्रैः समैर्धृतैः।
श्रेष्ठः पञ्चशिरीषोऽयं विषाणां प्रवरो वधे।।

(च.चि. 23/218)

घटक द्रव्य –

- शिरीष फल
- शिरीष मूल
- शिरीष त्वक्
- शिरीष पत्र
- शिरीष पुष्प

विधि – सभी को पीसकर लेप के रूप में प्रयोग करना चाहिए।

फलश्रुति – यह अगद सभी विषों को नष्ट करने में श्रेष्ठतम है।

17. बालसूर्य अगद (Balasurya Agada)

सन्दर्भ– अ.सं.उ 40/57

सूत्र –

मनोह्वा रोचना चण्डा त्वगेलासितसर्षपैः।
स्पृक्काहिंगुलकाश्मीरकान्ताभिः कल्कितोऽगदः।
विषघ्नो बालसूर्योऽयं श्रीरक्षाविजयर्द्धिदः।।

(अ.सं.उ. 40/57)

घटक द्रव्य –

- मनोह्वा
- गोरोचन
- चण्डा
- त्वक्
- एला
- सितसर्षप
- स्पृक्का
- काश्मीर अर्थात् गम्भारी
- हिंगुल
- कान्ता अर्थात् प्रियंगु

फलश्रुति – यह 'बालसूर्य' नामक अगद विषनाशक, लक्ष्मीदाता, विजय और ऐश्वर्य प्रदान करने वाला है।

18. महा अगद (Maha Agada)

सन्दर्भ– सु.क. 5/61–63

सूत्र –

त्रिवृद्विशल्ये मधुकं हरिद्रे रक्ता नरेन्द्रो लवणश्च वर्गः।।

Scanned with CamScanner

कटुत्रिकं चैव सुचूर्णितानि शृंगे निदध्यान्मधुसंयुतानि।
एषोऽगदो हन्ति विषं प्रयुक्तः पानाञ्जनाभ्यञ्जन-नस्ययोगैः।।
अवार्यवीर्यो विषवेगहन्ता महागदो नाम महाप्रभावः।
(सु.क. 5/61-63)

घटक द्रव्य -

- त्रिवृत्
- हरिद्रा
- दार्वी
- विशल्या
- मधुक
- पञ्चलवण
- रक्ता अर्थात् मञ्जिष्ठा
- नरेन्द्र अर्थात् अमलतास
- कटुत्रिकअर्थात् त्रिकटु

विधि - सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण को मधु मिलाकर शृंग में भरकर रख लें।

प्रयोगविधि - इस अगद का प्रयोग पान, अञ्जन, अभ्यंग और नस्य द्वारा करना चाहिए।

फलश्रुति - यह विषनाशक है तथा अवार्यवीर्य अर्थात् अजेय शक्ति से युक्त, विष के वेग को नष्ट करने वाला, महाप्रभाव वाला महान् अगद है।

19. महागंधहस्ती अगद (Mahagandhahasti Agada)

सन्दर्भ- च.चि. 23/77-94

सूत्र -

पत्रागुरुमुस्तैला निर्यासाः पञ्च चन्दनं स्पृक्का।
त्वङ्नलदोत्पलबालकहरेणुकोशीरवन्यनखाः।।
सुरदारुकनककुंकुमध्यामककुष्ठप्रियंगवस्तगरम्।
पञ्चांगानि शिरीषाद्व्योषालमनःशिलाजाज्यः।।
श्वेटकटभीकरञ्जौ रक्षोघ्नी सिन्धुवारिका रजनी।
सुरसाञ्जनगैरिकमञ्जिष्ठानिम्बनिर्यासाः।।
वंशत्वगश्वगन्धाहिंगुदधित्थाम्लवेतसं लाक्षा।
मधुमधुकसोमराजीवचारुहारोचनातगरम्।।
अगदोऽयं वैश्रवणायाख्यातस्त्र्यम्बकेण षष्ट्यंगः।
अप्रतिहतप्रभावः ख्यातो महागन्धहस्तीति।।
पित्तेन गवां पेष्यो गुटिकाः कार्यास्तु पुष्ययोगेन।
पानाञ्जनप्रलेपैः प्रसाधयेत् सर्वकर्माणि।।
पिल्लं कण्डूं तिमिरं राज्यान्ध्यं काचमर्बुदं पटलम्।
हन्ति सततप्रयोगाद्धितमितपथ्याशिनां पुंसाम्।।
विषमज्वरानजीर्णान्दद्रुं कण्डूं विसूचिकां पामाम्।
विषमूषिकलूतानां सर्वेषां पन्नगानां च।
आशु विषं नाशयति समूलजमथ कन्दजं सर्वम्।।
एतेन लिप्तगात्रः सर्पान् गृह्णाति भक्षयेच्च विषम्।
कालपरीतोऽपि नरो जीवति नित्यं निरातंकः।।
आनद्धे गुदलेपो योनौ लेपश्च मूढगर्भाणाम्।
मूर्च्छार्तिषु च ललाटे प्रलेपनमाहुः प्रधानतमम्।।
भेरीमृदंगपटहाञ्छत्राण्यमुना तथा ध्वजपताकाः।
लिप्त्वाऽहिविषनिरस्त्यै प्रध्वनयेद्दर्शयेन्मतिमान्।।
यत्र च सन्निहितोऽयं न तत्र बालग्रहा न रक्षांसि।
न च कार्मणवेताला वहन्ति नाथर्वणा मन्त्राः।।
सर्वग्रहा न तत्र प्रभवन्ति न चाग्निशस्त्रनृपचौराः।
लक्ष्मीश्च तत्र भजते यत्र महागन्धहस्त्यस्ति।।
पिष्यमाण इमं चात्र सिद्धं मन्त्रमुदीरयेत्।
'मम माता जया नाम जयो नामेति मे पिता।।
सोऽहं जयजयापुत्रो विजयोऽथ जयामि च।
नमः पुरुषसिंहाय विष्णवे विश्वकर्मणे।।
सनातनाय कृष्णाय भवाय विभवाय च।
तेजो वृषाकपेः साक्षात्तेजो ब्रह्मेन्द्रयोर्यमे।।
यथाऽहं नाभिजानामि वासुदेवपराजयम्।
मातुश्च पाणिग्रहणं समुद्रस्य च शोषणम्।।
अनेन सत्यवाक्येन सिध्यतामगदो ह्ययम्।
हिलिमिलिसंस्पृष्टे रक्ष सर्वभेषजोत्तमे स्वाहा।।
(च.चि. 23/77-94)

घटक द्रव्य -

- पत्र
- अगुरु
- मुस्ता
- एला
- पञ्च निर्यास
- चन्दन
- स्पृक्का
- त्वक्
- नलद
- उत्पल
- बालक
- हरेणुक
- उशीर
- वन्य
- नख
- सुरदारु
- कनक
- कुंकुम
- ध्यामक
- कुष्ठ
- प्रियंगु
- तगर
- शिरीष पञ्चांग
- व्योष
- मनःशिला
- अजाजी
- श्वेता
- कटभी
- करञ्ज
- रक्षोघ्नी
- सिन्धुवारिका
- रजनी
- सुरसा
- अञ्जन
- गैरिक
- मञ्जिष्ठा
- निम्बनिर्यास
- वंशत्वक्
- अश्वगन्धा
- हिंगु
- दधित्थ
- अम्लवेतस
- लाक्षा
- मधु
- मधुक

Scanned with CamScanner

- सोमराजी
- वचा
- रुहा
- गोरोचन
- तगर
- आल अर्थात् हरताल

पर्याय नाम - षष्ट्यंग।

वैशिष्ट्य - इस अगद को भगवान् शिव ने कुबेर के लिए उपदेश किया था।

विधि - सभी द्रव्यों को पुष्य नक्षत्र में गोपित्त में पीसकर वटी बना कर सुरक्षित रख लें।

प्रयोग विधि - इस अगद का प्रयोग पान, अञ्जन, लेप के लिए करना चाहिए।

20. महासुगन्धि अगद (Mahasugandhi Agada)

सन्दर्भ- सु.क. 6/14-27

सूत्र -

चन्दनागुरुणी कुष्ठं तगरं तिलपर्णिकम्।
प्रपौण्डरीकं नलदं सरलं देवदारु च।।

भद्रश्रियं यवफलां भार्गीं नीलीं सुगन्धिकाम्।
कालेयकं पद्मकं च मधुकं नागरं जटाम्।।

पुन्नागैलैलवालूनि गैरिकं ध्यामकं बलाम्।
तोयं सर्जरसं मांसीं शतपुष्पां हरेणुकाम्।।

तालीशपत्रं क्षुद्रैलां प्रियंगुं सकुटन्नटम्।
शिलापुष्पं सशैलेयं पत्रं कालानुसारिवाम्।।

कटुत्रिकं शीतशिवं काश्मर्यं कटुरोहिणीम्।
सोमराजीमतिविषां पृथ्विकामिन्द्रवारुणीम्।।

उशीरं वरुणं मुस्तं कुस्तुम्बुरु नखं तथा।
श्वेते हरिद्रे स्थौणेयं लाक्षां च लवणानि च।।

कुमुदोत्पलपद्मानि पुष्पं चापि तथाऽर्जकम्।
चम्पकाशोकसुमनस्तिल्वकप्रसवानि च।।

पाटलीशाल्मलीशैलुशिरीषाणां तथैव च।
कुसुमं तृणमूल्याश्च सुरभीसिन्धुवारजम्।।

धवाश्वकर्णपार्थानां पुष्पाणि तिनिशस्य च।
गुग्गुलुं कुंकुमं बिम्बीं सर्पाक्षीं गन्धनाकुलीम्।।

एतत् संभृत्य संभारं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्।
गोपित्तमधुसर्पिर्भिर्युक्तं शृंगे निधापयेत्।।

भग्नस्कन्धं विवृताक्षं मृत्योर्दंष्ट्रान्तरं गतम्।
अनेनागदमुख्येन मनुष्यं पुनराहरेत्।।

एषोऽग्निकल्पं दुर्वारं क्रुद्धस्यामिततेजसः।
विषं नागपतेर्हन्यात् प्रसभं वासुकेरपि।।

महासुगन्धिनामाऽयं पञ्चाशीत्यंगसंयुतः।
राजाऽगदानां सर्वेषां राज्ञो हस्ते भवेत् सदा।।

स्नातानुलिप्तस्तु नृपो भवेत् सर्वजनप्रियः।
भ्राजिष्णुतां च लभते शत्रुमध्यगतोऽपि सन्।।

(सु.क. 6/14-27)

घटक द्रव्य

- चन्दन
- अगुरु
- कुष्ठ
- तगर
- तिलपर्णी
- प्रपौण्डरीक
- नलद अर्थात् खस
- सरल
- देवदारु
- यवफला
- भार्गी
- नीली
- सुगन्धिका
- पद्मक
- मधुक
- नागर
- पुन्नाग
- एला
- एलवालुक
- गैरिक
- ध्यामक
- बला
- सर्जरस
- मांसी
- शतपुष्पा
- हरेणुका
- तालीशपत्र
- क्षुद्रैला
- प्रियंगु
- कुटन्नट
- मनःशिला
- तेजपत्र
- कालानुसारिवा
- कटुत्रिक
- काश्मरी
- कटुरोहिणी
- सोमराजी
- अतिविषा
- पृथ्विका
- इन्द्रवारुणी
- उशीर
- वरुण
- मुस्त
- कुस्तुम्बुरु
- नख
- श्वेता
- हरिद्रा
- दार्वी
- स्थौणेय
- लाक्षा
- पञ्चलवण
- कुमुद
- उत्पल
- पद्म
- अर्कपुष्प
- चम्पक
- अशोकसुमन
- सुरभी
- सिन्धुवार
- धव पुष्प
- अश्वकर्ण पुष्प
- तिनिश पुष्प
- गुग्गुलु
- कुंकुम
- बिम्बी
- सर्पाक्षी
- गन्धनाकुली
- भद्रश्रिय अर्थात् चन्दन
- कालेयक अर्थात् पीतचन्दन
- जटा अर्थात् जटामांसी
- तोय अर्थात् सुगन्धबाला
- पुष्प अर्थात् पुष्प कासीस
- शैलेय अर्थात् शिलारस
- शीतशिव अर्थात् कर्पूर
- तिल्वकप्रसव अर्थात् पुष्प और फल
- पाटली पुष्प और फल
- शाल्मली पुष्प और फल
- शैलु पुष्प और फल
- शिरीष पुष्प और फल

Scanned with CamScanner

- तृणमूल्या अर्थात् केतकी
- पार्थ अर्थात् अर्जुन पुष्प

विधि – इन सबको एकत्रित कर चूर्ण बना लें तथा गोपित्त मधु और घृत मिलाकर गोशृंग में भरकर रख दें।

फलश्रुति – इस अगद के प्रयोग से स्कन्ध/भग्न होने पर, नेत्रों के फैल जाने पर तथा मृत्यु के मुख में गये व्यक्ति भी पुनर्जीवित हो जाते हैं। यह अगद क्रुद्ध नागपति वासुकि के अग्नि के समान दुर्निवार्य विष को भी बलपूर्वक नष्ट कर देता है। पचासी औषधियों से बना यह 'महासुगन्धि' नामक अगद सभी अगदों का राजा है। अतः राजा को इसे सदा हस्त में धारण करना चाहिए। स्नान करने के बाद इस अगद का शरीर पर लेप करने पर राजा सभी जनों का प्रिय हो जाता है और शत्रुओं के मध्य स्थित होने पर भी देदीप्यमान होता है।

21. मांस्यादि योग (Mamsyadi Yoga)

सन्दर्भ- च.चि. 23/190-191

सूत्र

मांसीकुंकुमपत्रत्वग्रजनीनतचन्दनैः।
मनःशिलाव्याघ्रनखसुरसैरम्बुपेषितैः।।

पाननस्याञ्जनालेपाः सर्वशोथविषापहाः।

(च.चि. 23/190-191)

घटक द्रव्य

- मांसी
- कुंकुम
- तेजपत्र
- त्वक्
- रजनी
- नत
- चन्दन
- सुरस अर्थात् तुलसी
- मनःशिला
- व्याघ्रनख

विधि - इन सभी द्रव्यों को समानभाग लेकर जल से पीसकर उपयोग में लाना चाहिए।

प्रयोग विधि - इस अगद का उपयोग पान, नस्य, अञ्जन और लेप के रूप में करना चाहिए।

फलश्रुति - यह अगद शोथ और विषविकार को नष्ट करता है।

22. मृतसंजीवन अगद (Mrtasanjivana Agada)

सन्दर्भ- च.चि. 23/54-60

सूत्र

स्पृक्काप्लवस्थौणेयकांक्षीशैलेयरोचनातगरम्।
ध्यामककुंकुममांसीसुरसाग्रैलालकुष्ठघ्नम्।।

बृहती शिरीषपुष्पं श्रीवेष्टकपद्मचारटिविशालाः।
सुरदारुपद्मकेशरसावरकमनःशिलाकौन्त्यः।।

जात्यर्कपुष्परसरजनीद्वयहिंगुपिप्पलीलाक्षाः।
जलमुद्गपर्णिचन्दनमधुकमदनसिन्धुवाराश्च।।

शम्पाकलोध्रमयूरकगन्धफलानाकुलीविडंगाश्च।
पुष्पे संहृत्य समं पिष्ट्वा गुटिका विधेयाः स्युः।।

सर्वविषघ्नो जयकृदद्विषमृतसंजीवनो ज्वरनिहन्ता।
घ्रेयविलेपनधारणधूमग्रहणैर्गृहस्थश्च।।

भूतविषजन्त्वलक्ष्मीकार्मणमन्त्राग्न्यशन्यरीन् हन्यात्।
दुःस्वप्नस्त्रीदोषानकालमरणाम्बुचौरभयम्।।

धनधान्यकार्यसिद्धिः श्रीपुष्ट्यायुर्विवर्धनो धन्यः।
मृतसंजीवन एष प्रागमृताद्ब्रह्मणा विहितः।।

(च.चि. 23/54-60)

घटक द्रव्य

- स्पृक्का
- कांक्षी
- तगर
- मांसी
- बृहती
- पद्म
- सुरदारु
- मनःशिला
- अर्कपुष्प
- हिंगु
- जल अर्थात् उशीर
- मधुक
- शम्पाक
- मयूरक
- आल अर्थात् हरताल
- कुष्ठघ्न अर्थात् खदिर
- प्लव
- शैलेय
- ध्यामक
- सुरसाग्र
- शिरीषपुष्प
- चारटि
- पद्मकेशर
- कौन्त्य
- सर्जरस
- पिप्पली
- मुद्गपर्णी
- मदन
- लोध्र
- गन्धफला
- स्थौणेयक
- गोरोचन
- कुंकुम
- एल
- श्रीवेष्टक
- विशाला
- सावर लोध्र
- जाती
- रजनीद्वय
- लाक्षा
- चन्दन
- सिन्धुवार
- विडंग
- नाकुली

विधि – इन सभी द्रव्यों को सम मात्रा में पुष्य नक्षत्र में संग्रह कर वटी बना लेनी चाहिए।

प्रयोग विधि -

सर्वविषघ्नो जयकृदद्विषमृतसंजीवनो ज्वरनिहन्ता।
घ्रेयविलेपनधारणधूमग्रहणैर्गृहस्थश्च।।

भूतविषजन्त्वलक्ष्मीकार्मणमन्त्राग्न्यशन्यरीन् हन्यात्।
दुःस्वप्नस्त्रीदोषानकालमरणाम्बुचौरभयम्।।

धनधान्यकार्यसिद्धिः श्रीपुष्ट्यायुर्विवर्धनो धन्यः।
मृतसंजीवन एष प्रागमृताद्ब्रह्मणा विहितः।।

इस अगद का उपयोग सूँघने के लिए नस्य के लिए धारण करने

Scanned with CamScanner

के लिए धूम अर्थात् धूपन के लिए ग्रहण अर्थात् बाँधने के लिए और गृह में रखने के लिए करना चाहिए।

फलश्रुति – यह अगद विष के प्रभाव से मृततुल्य व्यक्तियों को भी जीवित करने का सामर्थ्य रखता है। यह सभी विषों का नाशक है। आदि।

23. वंशत्वगादि अगद (Vamshatvagadi Agada)

सन्दर्भ- सु.क. 5/78-80

सूत्र -

वंशत्वगार्द्राऽऽमलकं कपित्थं कटुत्रिकं हैमवती सकुष्ठा।।

करञ्जबीजं तगरं शिरीषपुष्पं च गोपित्तयुतं निहन्ति।
विषाणि लूतोन्दुरपन्नगानां कैटं च लेपाञ्जननस्यपानैः।।

पुरीषमूत्रानिलगर्भसंगान्निहन्ति वर्त्यञ्जनाभिलेपैः।
काचार्मकोथान् पटलांश्च घोरान् पुष्पं च हन्त्यञ्जन-नस्ययोगैः।। (सु.क. 5/78-80)

घटक द्रव्य -

- आर्द्र वंश त्वक्
- आमलकी
- कपित्थ
- कटुत्रिक
- हैमवती
- करञ्जबीज
- शिरीषपुष्प
- कुष्ठ
- तगर
- गोपित्त

विधि – इस सबको चूर्ण कर परस्पर मिलाकर रख लें।

प्रयोग विधि – इस अगद का प्रयोग लेप अञ्जन नस्य एवं पान के रूप में प्रयुक्त करना चाहिए।

फलश्रुति - यह अगद लूता (मकड़ी) उन्दुर (चूहा), पन्नग (साँप) और बिल्ली के विष को नष्ट करता हैं। पुरीष, मूत्र, अधोवायु और गर्भसंग की स्थिति में इस अगद का वर्ति, अञ्जन और नाभिक्षेत्र पर लेप करने से लाभ होता है। इसी प्रकार काच, अर्म, अक्षिकोथ और पटल के भयानक रोग तथा पुष्प अर्थात नेत्र में फोला पड़ने की स्थिति में अञ्जन एवं नस्य के लिए इस अगद का प्रयोग करना चाहिए।

24. शिव अगद (Shiva Agada)

सन्दर्भ- अ.सं.उ. 40/49

सूत्र -

गजपिप्पलिकासीसक्षारयष्टीमयूरकम्।
रक्ता नतं वचा दन्ती शिवः शिवकृतोऽगदः।।

(अ.सं.उ. 40/49)

घटक द्रव्य -

- गजपिप्पली
- यष्टीमधु
- वचा
- मयूरक अर्थात् अपामार्ग
- कासीस
- रक्ता
- दन्ती
- यवक्षार
- नत

फलश्रुति - यह शिवजी द्वारा निर्मित 'शिव अगद' है।

25. संजीवन अगद (Sanjivana Agada)

सन्दर्भ- सु.क. 5/73-75

सूत्र -

लाक्षा हरेणुर्नलदं प्रियंगुः शिग्रुद्वयं यष्टिकपृथ्विकाश्च।।

चूर्णीकृतोऽयं रजनीविमिश्रो सर्पिर्मधुभ्यां सहितो निधेयः।
शृंगे गवां पूर्ववदापिधानस्ततः प्रयोज्योऽञ्जननस्य-पानैः।।

संजीवनो नाम गतासुकल्पानेषोऽगदो जीवयतीह मर्त्यान्।
(सु.क. 5/73-75)

घटक द्रव्य

- लाक्षा
- प्रियंगु
- पृथ्विका
- हरेणु
- शिग्रुद्वय
- नलद
- यष्टिक

विधि - इनके सूक्ष्म चूर्ण में हरिद्रा और घृत-मधु मिलाकर गोशृंग में भरकर गोशृंग का ढक्कन लगा दें।

प्रयोगविधि - इसका उपयोग पान, अञ्जन और नस्य के लिए प्रयुक्त करना चाहिए।

फलश्रुति - यह 'सञ्जीवन अगद' मृत-सदृश व्यक्ति को भी जीवित कर देता है।

26. सुगन्धाख्य अगद (Sugandhakhya Agada)

सन्दर्भ- अ.सं.उ 47/22

सूत्र -

श्रीवेष्टकमनोह्वालं ससर्जरसवालकम्।
कर्षांशं नागपुष्पस्य प्रकुञ्चं त्रुटि विंशकम्।।

हरेणवः चतुःषष्टिः कुटन्नटचतुष्टयम्।
शताह्वां षोडशैतानि पुष्ये सम्भृत्य पेषयेत्।।

आश्लेषासु गवां मध्ये शस्त्रमन्त्राभिरक्षितम्।
कुमार्या स्नातया तत्र मन्त्रोऽयं विष्णुनिर्मितः।
माता मे विजया नाम जयो नाम पिता मम।
अजय्यस्य च पुत्रोऽसौ जये च विजयामि च।।

Scanned with CamScanner

सुगन्धाख्योऽयमगदो नित्यं देहविलेपनात्।
अभंगकरणो युद्धे विवादे च जयावहः।।

अनेन लेपिताश्छत्रदुन्दुभिध्वजतोरणाः।
दृष्टस्पृष्टश्रुता घ्नन्ति विषं स्थावरजंगमम्।
भूतबालग्रहोन्मादान् गेहस्थोऽपि निवारयेत्।।

(अ.सं.उ. 47/22)

घटक द्रव्य

- श्रीवेष्टक (1 पल)
- मनोह्वा (1 पल)
- आल अर्थात् हरताल (1 पल)
- सर्जरस (1 पल)
- वालक (1 पल)
- नागपुष्प (1 कर्ष)
- त्रुटि अर्थात् इलायची (ह्य20 पल)
- हरेणु (64 पल)
- कुटन्नट (4 पल)
- शताह्वा (16 पल)

विधि – इन सबको पुष्य नक्षत्र में एकत्र करके आश्लेषा नक्षत्र में गायों के बीच में शस्त्र और मन्त्रों से रक्षा करते हुए स्नान की हुई कुमारी से पिसवायें। उच्चारणार्थ मन्त्र

माता मे विजया नाम जयो नाम पिता मम।
अजय्यस्य च पुत्रोऽसौ जये च विजयामि च।।

फलश्रुति यह 'सुगन्धाख्य' नामक अगद है। इस अगद का नित्य प्रति देह में लेप करने से युद्ध में अंग-भंग नहीं होता है; विवाद में सर्वदा विजय होती है। इस अगद से लिप्त छत्र, दुन्दुभि, ध्वजा, तोरणों को देखकर छूकर, सुनकर स्थावर और जांगम विष नष्ट होते हैं। घर में रखने से भूतबाधा, ग्रहबाधा, बालग्रह, उन्माद शान्त होते हैं।

27. सुरसादि अगद (Surasadi Agada)

सन्दर्भ- च.चि 23/52

सूत्र

गोपित्तयुतैर्गुटिकाः सुरसाग्रन्थिद्विरजनीमधुककुष्ठैः।
शस्ताऽमृतेन तुल्या शिरीषपुष्पकाकाण्डकरसैर्वा।।

(च.चि. 23/52)

घटक द्रव्य

- सुरसा
- ग्रन्थि
- हरिद्रा
- दार्वी
- मधुक
- कुष्ठ
- गोपित्त

- इनको पीसकर वटी बनाकर उपयोग में लाना चाहिए
- सुरसादि को शिरीषपुष्प के स्वरस और काकाण्डक पत्र के स्वरस में पीसकर वटी बना कर उपयोग में लाना चाहिए।

फलश्रुति – यह अमृततुल्य विषघ्न योग है।

28. सूर्योदय अगद (Suryodaya Agada)

सन्दर्भ- अ.सं.उ. 40/48

सूत्र -

श्रीवेष्टकं हरिद्रे द्वे कोविदारं मनश्शिलाम्।
पिप्पलीं पाटलीं पद्मां श्वेताञ्च गिरिकर्णिकाम्।।

मञ्जिष्ठां बृहतीं वक्रं यष्टी मरिचकेसरम्।
फलिनीं किणिहीं चेति गवां पित्तेन भावयेत्।
सूर्योदयो हन्ति विषं तमः सूर्योदयो यथा।।

(अ.सं.उ. 40/48)

घटक द्रव्य

- श्रीवेष्टक
- हरिद्रा
- दार्वी
- कोविदार
- मन:शिला
- पिप्पली
- पाटली
- पद्मा
- श्वेता
- गिरिकर्णिका
- मञ्जिष्ठा
- बृहती
- वक्र अर्थात् तगर
- यष्टीमधु
- मरिच
- नागकेसर
- फलिनी
- किणिही अर्थात् अपामार्ग

विधि – इन सबके चूर्ण को गोपित्त की भावना दे कर सुरक्षित रख लें।

फलश्रुति – जिस प्रकार सूर्य तम (अन्धकार) को दूर करता है उसी प्रकार से यह 'सूर्योदय' नामक अगद सभी विषों का नाश करता है।

29. हिंग्वादि योग (Hingvadi Yoga)

सन्दर्भ- च.चि. 23/96

सूत्र

हिंगु च कृष्णायुक्तं कपित्थरसयुक्तमग्र्यलवणं च।
समधुसितौ पातव्यौ ज्वरहिक्काश्वासकासघ्नौ।।

(च.चि. 23/96)

घटक द्रव्य

हिंग्वादि योग	कपित्थादि योग
• शुद्ध हिंगु	• कपित्थ स्वरस
• कृष्णा अर्थात् पिप्पली	• सैन्धव लवण

Scanned with CamScanner

हिंग्वादि योग	कपित्थादि योग
• मधु • शर्करा	• मधु • शर्करा

फलश्रुति – ये दोनों योग विषजन्य ज्वर, हिक्का, श्वास और कास को नष्ट करते हैं।

भैषज्यरत्नावली में वर्णित कतिपय महत्त्वपूर्ण योग

30. कूलिकादिवटी (Kulikadi Vati)

सूत्र -

कूलिकः सप्तपर्णश्च कुष्ठं तोलकसम्मितम्।
माषमानं तथा दारु मर्दयेदर्कवारिणा।।
सर्षपाभां वटीं कृत्वा योजयेत्पयसा सह।
अपि तक्षकदष्टञ्च मृतकल्पं हतस्वरम्।।
पुनः सञ्जीवयेदाशु सर्वक्ष्वेडनाशिनी।
कूलिकादिर्वटी हन्ति ज्वरांश्च विषमांस्तथा।

(भै.र. 72/49-51)

घटक द्रव्य

- कूलिक
- सप्तपर्ण
- कुष्ठ
- सोमलविष
- अर्कदुग्ध

विधि – कूलिक, सप्तपर्ण और कुष्ठ का सूक्ष्म चूर्ण तथा सोमलविष मिलाकर अर्कदुग्ध के साथ मर्दन कर सर्षप के आकार की वटी बना लें।

अनुपान – दुग्ध।

फलश्रुति – यह योग भयंकर सर्प द्वारा दष्ट अथवा तक्षक सर्प द्वारा दष्ट व्यक्ति जो मृतक जैसा अथवा दुर्बल स्वर से युक्त को स्वस्थ कर देता है। साथ यह विषमज्वर नाशक भी है।

31. भीमरुद्ररस – 1 (Bhimarudra Rasa - 1)

सूत्र -

सूतराजस्य तोलैकं गन्धकस्य तथैव च।
अभ्रात् कर्षं ततो देयं तोलैकं कान्तलौहकम्।।
परोक्तेनौषधेनैव भावयेच्च पृथक् पृथक्।
विशालाबृहतीब्राह्मी सौगन्धिकसुदाडिमैः।।
मर्कट्याश्चात्मगुप्तायाः स्वरसेन पृथक् पृथक्।
एकरक्तिकमानेन वटिकां कारयेद् भिषक्।।
वटीमेकां भक्षयित्वा पिबेच्छीतजलन्ततः।
भीमरुद्रो रसो नाम चासाध्यमपि साधयेत्।
कुक्कुरस्य शृगालस्य विषं हन्ति सुदुस्तरम्।।

(भै.र 72/52-55)

घटक द्रव्य

- सूतराज अर्थात् शुद्ध पारद
- शुद्ध गन्धक
- अभ्रक भस्म
- कान्तलौह भस्म
- भावना द्रव्य -
  - विशाला स्वरस
  - बृहती स्वरस
  - ब्राह्मी स्वरस
  - सौगन्धिक स्वरस
  - दाड़िम स्वरस
  - मर्कटी स्वरस
  - आत्मगुप्ता स्वरस

विधि – सभी द्रव्यों के स्वरस से पृथक्-पृथक् 1-1 भावना देकर 125 mg की गोलियाँ बनाकर सुरक्षित रख लें।

फलश्रुति – यह योग असाध्य एवं भयानक कुत्ते तथा शृगाल का विष नष्ट कर देता है।

32. भीमरुद्र रस – 2 (Bhimarudra Rasa - 2)

सूत्र

मनःशिलालमरिचैर्दारुणा दरदेन च।
अपामार्गस्य हेम्नश्च हयमारशिरीषयोः।।
मूलै रुद्राक्षतोयेन विष्णुक्रान्ताऽम्बुना ततः।
शतधा भावितैः कुर्याद् वटिका मुद्गसम्मिताः।।
व्यालदष्टं पीतविषं निरिन्द्रियमचेतनम्।
पुनः सञ्जीवयेदेष भीमरुद्राभिधाद्धे रसः।।

(भै.र. 72/56-58)

घटक द्रव्य -

- मनःशिला
- आल अर्थात् हरताल
- मरिच
- शुद्ध संखिया
- शुद्ध हिंगुल
- अपामार्गमूल चूर्ण
- हेम्न अर्थात् धत्तूरमूल चूर्ण
- हयमार मूलचूर्ण
- शिरीष मूलत्वक् चूर्ण
- भावना द्रव्य -
  - रुद्राक्षतोय अर्थात् कषाय (50 भावना)
  - विष्णुक्रान्ता कषाय (50 भावना)

विधि – सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण को रूद्राक्ष कषाय की पचास और विष्णुक्रान्ता कषाय की पचास भावना देकर मुद्ग के समान वटी बना लें।

फलश्रुति – सर्पदष्ट और विषपान के पश्चात् अचेतन और इन्द्रिय ज्ञान शून्य होने पर यह 1 वटी गोदुग्ध के साथ लेने से मनुष्य स्वस्थ और जीवित हो जाता है।

Scanned with CamScanner

33. विषवज्रपात रस (Vishavajrapata Rasa)

सूत्र -

निशां सटंगञ्च सजातिकोषं तुत्थं समांशं कुरु देवदाल्याः।
रसेन पिष्ट्वा विषवज्रपातो रसो भवेत् सर्वविषापहन्ता।।
निष्कोऽस्य सञ्जीवयति प्रयुक्तो नृमूत्रयोगेन च कालदष्टम्। जटाविषेणाकुलितं तथाऽन्यैर्विषैर्नरं चाशु तथाऽऽतुरं च।। (भै.र. 72/59-60)

घटक द्रव्य -

- निशा अर्थात् हरिद्रा
- शुद्ध टंग अर्थात् टंकण
- जातिकोष
- तुत्थ
- भावना द्रव्य -
  - देवदाली स्वरस

विधि – हरिद्रा आदि सभी द्रव्यों को समभाग लेकर उन्हें देवदाली स्वरस की एक दिन तक भावना देकर मर्दन करें।

फलश्रुति - यह योग सभी विषों का नाशक है (अनुपान - नरमूत्र)। कालरूपी सर्पदष्ट करने पर तथा मूल या कन्द विष के सेवन कर लेने पर विषार्त मनुष्य शीघ्र ही स्वस्थ हो जाता है।

34. तण्डुलीयघृत (Tanduliya Ghrta)

सूत्र -

तण्डुलीयकमूलेन गृहधूमेन चैकतः।
क्षीरेण च घृतं सिद्धं समस्तविषरोगनुत्।।

(भै.र. 72/61)

विधि - तण्डुलीय स्वरस (3 liter) गोघृत (750 gm) और गोदुग्ध (3 liter)। कल्क के लिए तण्डुलीयक मूल और गृहधूम। इन सभी को स्नेहपाक विधि से सिद्ध कर घृत बना लें तथा सुरक्षित पात्र में रख दें।

फलश्रुति - यह घृत समस्त विषरोगों को नष्ट कर देता है।

35. मृत्युपाश्चछेदि घृत (Mrtyupashchedi Ghrta)

सूत्र -

अभयां रोचनां कुष्ठमर्कपत्रं तथोत्पलम्।
नलवेतसमूलानि गरलं सुरसां तथा।।
सकलिंगा समञ्जिष्ठामनन्ताञ्च शतावरीम्।
शृंगाटकं समंगाञ्च पद्मकेशरमित्यपि।।

कल्कीकृत्य पचेत्सर्पिः पयो दद्याच्चतुर्गुणम्।
सम्यक् पक्वेऽवतीर्णे च शीते मधु विनिक्षिपेत्।।
सर्पिस्तुल्यं भिषक् क्षौद्रं कृतरक्षं निधापयेत्।
विषाणि हन्ति दुर्गाणि गरदोषकृतानि च।।

स्पर्शाद्धन्ति विषं सर्वं गरैरुपहतां त्वचम्।
योगजं तमकं कण्डूं मांससादं विसंज्ञताम्।।

नाशयत्यञ्जनाभ्यंगपानबस्तिषु योजितम्।
सर्पकीटाखुलूतादिदष्टानां विषहृत्परम्।।

(भै.र. 72/62-67)

घटक द्रव्य -

- कल्क द्रव्य
  - अभया
  - अर्कपत्र
  - मञ्जिष्ठा
  - शृंगाटक
  - वेतसमूल
  - गरलअर्थात् वत्सनाभ
  - सुरसा अर्थात् तुलसी
  - कलिंग अर्थात् इन्द्रयव
  - रोचना
  - उत्पल
  - अनन्ता
  - समंगा
  - कुष्ठ
  - नल
  - शतावरी
  - पद्मकेशर
- गोघृत
- गोदुग्ध
- मधु
- जल

विधि - सभी द्रव्यों को स्नेहपाक विधि से सिद्ध कर घृत तैयार कर लें।

फलश्रुति -

सर्पिस्तुल्यं भिषक् क्षौद्रं कृतरक्षं निधापयेत्।
विषाणि हन्ति दुर्गाणि गरदोषकृतानि च।।

स्पर्शाद्धन्ति विषं सर्वं गरैरुपहतां त्वचम्।
योगजं तमकं कण्डूं मांससादं विसंज्ञताम्।।

नाशयत्यञ्जनाभ्यंगपानबस्तिषु योजितम्।
सर्पकीटाखुलूतादिदष्टानां विषहृत्परम्।।

इस घृत का अञ्जन, पान, बस्ति एवं अभ्यंग के रूप में प्रयोग करने से भयंकर विषाक्त व्यक्ति एवं गरविष से पीड़ित व्यक्ति स्वस्थ हो जाता है। इस घृत का स्पर्श करने मात्र से विषसंसर्ग से उपहत हुई त्वचा स्वस्थ हो जाती है। योगज विषजन्य तमकश्वास, कण्डू, मांससाद, विसंज्ञता आदि इसके प्रयोग से नष्ट हो जाते हैं। सर्पदष्ट, अन्य कीटदष्ट, मूषक और लूता आदि के काटने से उत्पन्न विष नष्ट हो जाते हैं।

Scanned with CamScanner

36. शिखरि घृत (Shikhari Ghrta)

सूत्र

शिखरिस्वरसेनैव कल्कान् दत्त्वा च दाडिमम्।
कुष्ठमेलाद्वयं शृंगढीं शिरीषममृतं वचाम्।।

परशू पारिभद्रञ्च चन्दनं तगरं मुराम्।
पचेत्सर्पिस्त्वसलिलं मन्दमन्देन वह्निना।।

घृतमेतन्निहन्त्याशु निखिलान् विषजान् गदान्।
सन्निपातज्वरं घोरं ज्वरांश्च विषमांस्तथा।।

(भै.र. 72/68–70)

घटक द्रव्य

- गोघृत
- अपामार्ग स्वरस
- कल्क द्रव्य -
  - दाडिम
  - कुष्ठ
  - सूक्ष्म एला
  - बृहत् एला
  - शृंगी
  - शिरीष
  - वचा
  - परशू
  - पारिभद्र
  - चन्दन
  - तगर
  - मुरा
  - अमृत अर्थात् वत्सनाभ

विधि – सभी द्रव्यों को लेकर स्नेहपाक विधि से घृत सिद्ध कर सुरक्षित रख लें।

फलश्रुति – यह घृत सभी प्रकार के विषों को नष्ट करता है। साथ ही विषजन्य अन्य विकार, सन्निपातज ज्वर, गम्भीर ज्वर और विषम ज्वर को भी नष्ट करता है।

37. शिरीषाद्यरिष्ट (Shirishadyarishta)

सूत्र

पचेत्तुलाऽर्द्धं द्विद्रोणे शिरीषस्य जले सुधीः।
पादशेषे कषायेऽस्मिन् क्षिपेद् गुडतुलाद्वयम्।।

कृष्णाप्रियंगुकुष्ठैलानीलिनीनागकेशरम्।
रजन्यौ पलमानेन दद्यादत्र च नागरम्।।

मासादूर्ध्वं जातरसं यथामात्रं प्रयोजयेत्।
शिरीषारिष्टमित्येतद् विषव्याधिविनाशनम्।।

(भै.र. 72/71–73)

घटक द्रव्य

- शिरीष मूल त्वक्
- जल
- गुड़
- प्रक्षेप द्रव्य
  - कृष्णा
  - प्रियंगु
  - कुष्ठ
  - एला
  - नीलिनी
  - नागकेशर
  - रजनी
  - दार्वी
  - नागर

विधि – सभी द्रव्यों को एकत्र कर सन्धान विधि से सन्धान कर 'शिरीषाद्यरिष्ट' बना लें।

फलश्रुति – यह सभी विष और विषजन्य विकारों को नष्ट करने में सक्षम है।

आयुर्वेदोऽमृतानाम्

• • •

Scanned with CamScanner

2

परिशिष्ट
Appendix

सामान्य घरेलु विष
(Common Household Poisons)

हम अपने घरेलू जीवन में जाने-अनजाने अनेक ऐसी वस्तुओं का उपयोग करते रहते हैं जिनके उत्पादन में विषाक्त द्रव्यों का भी योग होता है। इन्हें हम मुख्यतया तीन वर्गों में बॉट सकते हैं -

1. सामान्य रूप से गृह-परिवार में प्रयुक्त,
2. व्यापक रूप से प्रयुक्त घरेलू औषधियॉ तथा
3. खेती-बाड़ी या बागवानी में प्रयुक्त द्रव्य।

इनमें से प्रमुख द्रव्यों और उनमें प्रयुक्त विषों को नीचे की तालिका में देखा जा सकता है -

उत्पाद	प्रयुक्त विषाक्त द्रव्य
(1) सामान्य उपयोग की वस्तुएँ	
(क) बच्चों के उपयोगार्थ -	
1. अंकन मसि (marking ink)	ऐनिलीन
2. कीटनाशक छिड़काव (insecticide spray)	डी.डी.टी.
3. खिलौनों के रंग	लेड (सीसा)
4. चित्रांकनी कार्बन-वर्तिका (crayons) (चाक)	संखिया, ताम्र और सीसे के लवणों से रंजित
5. चित्रांकनी कार्बन-वर्तिका (मोम)	पैरा-नाइट्रो-ऐनिलीन
6. जलरंग (water color)	कम्बोजिया नामक वृक्ष की गोंद
7. पटाखे/आतिशबाजी (fire works)	हरताल, संखिया, पारद, सुरमा (एण्टीमनी), सीसा, थियोसाइनेट तथा फास्फोरस
8. वस्त्र-कीटनाशक गोलियॉ (moth balls)	नैपिथलीन
(ख) प्रसाधन-सामग्री -	
9. उपत्वचा प्रसाधन निवारक (cuticle remover)	पोटैशियम हाइड्रो-ऑक्साइड तथा ट्रिसोडियम फास्फेट
10. केश-तरंगक (hair wave)	थियोग्लाइकोलेट-लवण, पर्बोरेट तथा ब्रोमेट
11. धूम ताम्रता घोल (suntan lotions)	विकृतीकृत मद्यसार, मिथाइल सेलिसीलेट
12. नखलेप निवारक (nail polish remover)	एसिटोन
13. लोमशातक (depilatories)	बेरियम सल्फाइड, थैलियम

Scanned with CamScanner

उत्पाद	प्रयुक्त विषाक्त द्रव्य
(ग) रसोई-घर में प्रयोगार्थ -	
14. अग्निशामक तरल (fire extinguishing liquids)	कार्बन टेट्राक्लोराइड, सोडियम कार्बोनेट, मिथाइल ब्रोमाइड
15. माचिस	सुरमा, फॉस्फोरस, पोटैशियम क्लोरेट
16. बेकिंग-पाउडर	टारटैरिक एसिड
17. बेकिंग-सोडा	सोडियम बाइ-कार्बोनेट, सोडियम सिलीसेट
18. पात्रधोवक यौगिक/उपकरण	सोडियम पोलिफॉस्फेट, सोडियम कार्बोनेट, सोडियम सिलीसेट
(घ) सफाई में उपयोगार्थ -	
19. गन्धहर टिकिया (deodorant tablets)	फार्मल डिहाइड, नैफ्थिलीन
20. नाली (drain cleaners)	सोडियम हाइड्रो-ऑक्साइड
21. जूँ-चीलर-नाशक	फिनायल
22. चूहा-नाशक (rat poisons)	फॉस्फोरस, जिंक फास्फाइड, थैलियम, जंगली प्याज आदि
अन्यान्य -	
23. जंगरोधी उत्पाद (antirust products)	एमोनियम सल्फाइड, हाइड्रोक्लोरिक एसिड, ऑग्जेलिक एसिड
24. जूते की पालिश	ऐनिलीन, नाइट्रोबेञ्जीन
25. पेण्ट-निवारक	सोडियम हाइड्रो-ऑक्साइड, लेड एसिटेट
26. फर्निचर की पालिश	तारपीन, पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन
27. मसि-निवारक (ink remover)	सोडियम हाइड्रोक्लोराइड
(2) गृह-परिवार में व्यापक रूप से प्रयुक्त औषधियाँ	
28. अवसादरोधी (anti-depressants)	एमिट्रिप्टीलीन, इमिप्रेमीन
29. कासनाशी (cough remedies)	Codeine
30. टानिक टिकिया	लौह
31. टानिक पेय	मद्यसार, कुचला आदि
32. निद्राकर	बार्बिट्युरेट
33. शामक (tranquillisers)	क्लोरप्रोमेजीन, मेप्रोबेमेट, रिजरपीन
34. सिरदर्द-निवारक	ऐस्पिरीन
(3) खेती-बाड़ी तथा बागबानी में प्रयुक्त योग	
35. कवक/फफूँदनाशी (fungicides)	लेड ऑर्सेनिक, ताम्र के यौगिक, कार्बनिक पारदीय, चूना, गन्धक
36. कीट-पतंग नाशक (insecticides, pesticides)	निकोटीन, क्लोरिनेटेड हाइड्रोकार्बन, कार्बनिक फॉस्फोरस के यौगिक, साइनाइड आदि
37. शाक/अपतृण नाशी (weed killers)	सोडियम क्लोरेट, आर्सेनिक ऑक्साइड, आर्सेनाइट, डीनाइट्रोक्रीसोल

• • •

Scanned with CamScanner

3 परिशिष्ट Appendix

भैषज्य बन्धन (Bhaishajya Bandhana)

औषधि को शरीर के किसी अंग विशेष पर बाँधने अथवा मणि, रत्न आदि की भाँति शरीर पर धारण करने को भैषज्य-बन्धन कहते हैं; यथा भुजा पर बाँधना, गले में लटकाना आदि। उदाहरणार्थ -

मूषिकाऽऽजरुहा वाऽपि हस्ते बद्धा तु भूषते।।
करोति निर्विषं सर्वमन्नं विषसमायुतम्।

(सु.क. 1/78-79)

अर्थात् राजा के हाथ में बाँधी हुई अजरुहा नामक मूषिका सभी विषाक्त अन्नों को निर्विष बना देती है।

आस्थापन (Asthapana)

आस्थापन का अर्थ है - स्थापित करना, लगाना, बाँधना आदि; यथा - सिर पर काकपद के आकार का चीरा लगाकर उस पर ताजे रक्त मिश्रित मांस को रखना।

लेप (Lepa)

शोथ, व्रण तथा दुन्दुभि आदि पर बाह्य प्रयोग अथवा आलेपन करने के लिए विषनाशक औषधियों अथवा औषधि योगों (अगदों) के सान्द्र (गाढ़े) घोल को लेप कहते हैं।

• • •

Scanned with CamScanner

S. No.	द्रव्य	Latin name	English name	Family	पर्याय	प्रयोज्यांग	शोधन	गुणकर्म	विष प्रभाव	प्रतिविष
1	वत्सनाभ	Aconitum ferox	Aconite/ Monk's Hood	Ranunculaceae	विष अमृत	मूल	वत्सनाभ के चने के बराबर टुकड़ों को गोमूत्र में तीन दिन धूप में भीगने दें, फिर धोकर सुखा लें।	वेदनास्थापक शोथघ्न शूलप्रशमन ज्वरघ्न स्वेदजनन	'ग्रीवास्तम्भो वत्सनाभे पीतविण्मूत्रनेत्रता।' सु	टंकण
2	कुचला	Strychnos nux-vomica	Nux vomica/ Poison nut tree/ Nux vomica tree	Loganiaceae	तिन्दुक जलद दीर्घपत्रक काकतिन्दुक विषतिन्दु मर्कटतिन्दुक	बीजमज्जा	7 दिन तक गोमूत्र में रखने के बाद गोदुग्ध में उबालकर	मदकृत् व्यथाहर रक्तविकारहर शोथघ्न पूतिहर वेदनास्थापन आक्षेपजनन शूलप्रशमन हृदयोत्तेजक रक्तभारवर्द्धक स्वेदापनयन	Bitter taste in mouth Feeling of uneasiness Restlessness Difficulty in swallowing Convulsions Increased rigidity of muscles Ophisthotonous Emprosthotonous Muscular twitchings etc	नागवल्ली पत्र स्वरस एवं गोघृत
3	अहिफेन	Papaver somniferum	Opium	Papaveraceae	खसफलक्षीर आफूक	खसफल क्षीर	अहिफेन को पानी मे घोलकर, कपड़े से छानकर अग्नि पर घन कर लें। तत्पश्चात् आर्द्रक स्वरस की 21 भावना दें।	शोषण ग्राही मादक	अहिफेने मूर्धगुरुता भ्रमाध्मानमेव च। कृच्छ्रश्वासो भवेदोष्ठमुखनेत्रेषु कृष्णता। अतिस्वेदोऽगंशैथिल्य शैत्यं स्याद्धस्तपादयो:।।	आर्द्रक स्वरस या सौराष्ट्री चूर्ण
4	जयपाल	Croton tiglium	Purging croton	Euphorbiaceae	द्रवन्तीबीज जयपाल जेपाल दन्तिबीज तिन्तिडीफल	बीज	दोलायन्त्र विधि से स्वेदन	रेचन वातकफघ्न वामक जलोदरादि नाशक जन्तुघ्न	दन्तीविषातियोगे तु वान्तिर्भ्रान्तिश्च रेचनम्। शूलाटोपौ भृशं स्वेद: भवेद्दौर्बल्यमेव च।।	उष्ण जल निम्बु स्वरस गोघृत दधि शर्करा
5	धत्तूर	Datura metel	Thorn apple	Solanaceae	कनक मातुल उन्मत्त शिवप्रिय	पत्र पुष्प बीज	दोलायन्त्र विधि से गो दुग्ध में 3 घण्टे तक स्वेदन कर तत्पश्चात् गर्म जल से प्रक्षालन	कफवातघ्न जन्तुघ्न वेदनास्थापन शूलप्रशमन श्वासरोग नाशक स्वेदावरोधक	धूर्तबीजेऽतितृष्णास्याद् भ्रम: स्वेद: प्रलापक:। मूर्च्छातिकृच्छ्रश्वासश्च मोह आक्षेपकस्तथा।।	शर्करा मिश्रित दुग्ध

Scanned with CamScanner

S. No.	द्रव्य	Latin name	English name	Family	पर्याय	प्रयोज्यांग	शोधन	गुणकर्म	विष प्रभाव	प्रतिविष
6.	भंगा	Cannabis indica	Indian Hemp	Cannabinaceae	- बूटी - सिद्धि - भंगा - भंगी - मातुलानी - मादिनी - मातिका - मातुली - विजया - तन्द्राकारिणी बहुवादिनी	भॉग - पत्र-पुष्प-फलयुक्त कोमल शाखा। गॉजा - स्त्री जाति के क्षुप की रालयुक्त पुष्पमञ्जरी। चरस - पत्र-शाखों पर जमें हुए निर्यास।	गोदुग्ध में दोलायन्त्र विधि से 1 प्रहर तक स्वेदन कर तत्पश्चात् गोघृत में भर्जन	रस - तिक्त गुण - लघु, तीक्ष्ण वीर्य - उष्ण विपाक - कटु प्रभाव - मादक	विजयायां तु तैमिर्यं मनोविभ्रम एव च। अपस्मृतिः प्रलापश्च वान्तिः कण्ठे विशुष्कता।।	- तक्र - दधि - इमली
7	गुञ्जा	Abrus precatorius	Indian liquorice	Fabaceae	रक्ता - रक्तिका - ताम्रिका - कृष्णचूर्णिका - उच्चटा - शीतपाकी भिल्लभूषणिका - अरुणा	- बीज - मूल पत्र	काञ्जी/गोदुग्ध में 1 प्रहर पर्यन्त स्वेदन	कुष्ठघ्न - व्रणरोपण - बीज → विष केश्य	गुञ्जाविषेण दौर्बल्यं खेभ्यो रक्तसृतिर्भवेत्। तन्द्रा मोहश्च गात्रेषु संभवेयुर्व्रणा भृशम्।।	
8	भल्लातक	Semecarpus anacardium	Marking nut	Anacardiaceae	- अरुष्कर - अग्निक - वीरवृक्ष शोफकृत्	फल	ईष्टिका चूण	कुष्ठघ्न - अर्शोघ्न - श्वित्रघ्न कृमिघ्न	भल्लातकस्य विषे तापो कोष्ठे भवति सव्रण:। त्वचि स्फोटे भवद्भिन्ने स्राव: कुर्याद् व्रणं पुन:।।	- धान्यक - कल्क - नवनीत - कासमर्द आदि
9	करवीर	Nerium indicum	Indian oleander	Apocynaceae	हयारि - हयमार - अश्वमार - अश्वान्तक - अश्वहा - अश्वघ्न चण्डातक	मूल मूलत्वक्		कफवातघ्न श्वासहर - कुष्ठघ्न - विष विषमज्वर प्रतिबन्धक	करवीरविषे तापो कोष्ठे भवति दारुण:। स शूलौ वांतिरेकौ च भवेदाक्षेपको गद:।।	

Scanned with CamScanner

S. No.	द्रव्य	Latin name	English name	Family	पर्याय	प्रयोज्यांग	शोधन	गुणकर्म	विष प्रभाव	प्रतिविष
10	लांगली	Gloriosa superba	Malabar Glory Lily	Liliaceae	- लांगुलि विषलांगली अग्निशिखा स्वर्णपुष्पा दीप्ता विद्युज्ज्वाला गर्भपातिनी	कन्द	गोमूत्र में एक दिन रखने से	- कफवातघ्न रक्तोत्क्लेशक गर्भाशय संकोचक विषमज्वरघ्न गर्भपातन	Burning and numbness in the mouth and throat Nausea Vomiting Purging Ataxia Spasm Convulsions Profuse sweating etc	
11	अर्क	Calotropis procera	Madar/ Gigantic Swallow wort	Asclepiadiaceae	गणरूप मन्दार सदापुष्प अलर्क प्रतापस	मूलत्वक्/ क्षीर/ पुष्प/ पत्र		विषघ्न व्रणनाशक प्लीहघ्न अर्शोघ्न	On application: Localized redness, vesication etc. On ingestion: Burning pain in throat and stomach, salivation, stomatitis, vomiting, diarrhea, dilated pupils, tetanic convulsions etc.	गोघृत एवं चिञ्चा-कल्क
12	स्नुही	Euphorbia neriifolia	Common milk hedge	Euphorbiaceae	गुडा सुधा समन्तदुग्धा वज्री निस्त्रिंशपत्र	मूल काण्ड पत्र क्षीर		कफवातघ्न रेचन त्वक् दोषहर विषघ्न	स्नुहीक्षीरातियोगेन कुक्षौ तापो भवेत् भृशम्। विरेकवमने स्यात्तां तत्र दीप्ताश्यवत्क्रिया।।	

• • •

Scanned with CamScanner

5

परिशिष्ट
Appendix

सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. चरकसंहिता पूर्वार्द्ध - डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
2. चरकसंहिता उत्तरार्ध - डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
3. चरकसंहिता पूर्वार्द्ध - डॉ. रविदत्त त्रिपाठी
4. चरकसंहिता उत्तरार्ध - डॉ. रविदत्त त्रिपाठी
5. सुश्रुतसंहिता (भाग 1, 2 एवं 3)- डॉ. अनन्तराम शर्मा
6. अष्टांगहृदय - डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
7. अष्टांगसंग्रह
8. माधवनिदान - डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
9. भावप्रकाश
10. शार्गंधरसंहिता - डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
11. काश्यपसंहिता
12. षोडशांगहृदयम् - प्रियवत्त शर्मा
13. अगदतन्त्र - डॉ. नितिन शर्मा
14. अगदतन्त्र - विषचिकित्सा - प्रो. अजयकुमार शर्मा
15. अगदतन्त्र (विषघ्न औषधि विज्ञान)- डॉ. एच.सी. गुप्ता एवं डॉ. वी.के. वर्मा
16. अगदतन्त्र, व्यवहारायुर्वेद एवं विधिवैद्यक वैद्य विद्या उंडारे–नेवासकर
17. A Textbook of Agadatantra - Dr. U.R. Sekhar Namburi
18. Agada-Tantra and Vyavahara Ayurveda Prof. K. Nishteswar and Dr. A. Anil Kumar
19. Textbook of Agada Tantra Dr. Nitin Urmaliya
20. Textbook of Agada Tantra - Dr. Ashwinkumar S. Bharati
21. Illustrated Agada Tantra - Dr. PVNR Prasad
22. Forensic Medicine Under Indian System of Medicine (Ayurveda) - UN Prasad
23. Toxicology At a Glance - SK Singhal
24. Forensic Medicine & Jurisprudence - SK Singhal
25. The Essentials of Forensic Medicine and Toxicology - Dr. K.S. Narayan Reddy

आयुर्वेदोऽमृतानाम्

• • •

Scanned with CamScanner

वत्सनाभ [Aconitum ferox]

हरताल [Orpiment]

Phosphorus

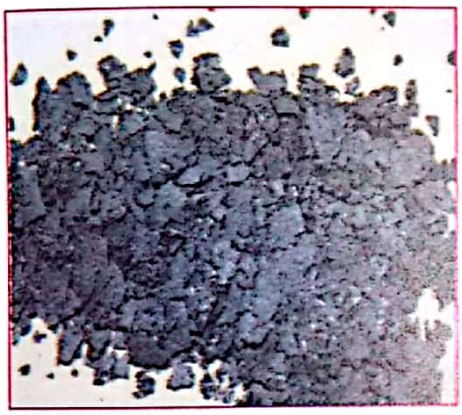

Iodine

Aluminium phosphide

कुचला [Strychnos nuxvomica]

जयपाल [Croton tiglium]

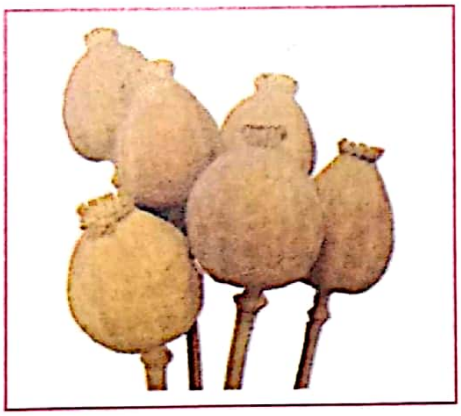

अहिफेन [Papaver somniferum]

गुञ्जा [Abrus precatorius]

Scanned with CamScanner

अर्क [Calotropis procera]

करवीर [Nerium indicum]

कनेर [Oleander]

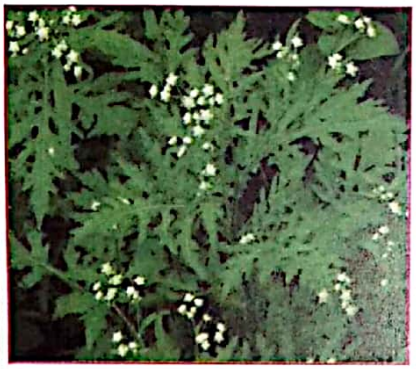

Parthenium hysterophorus

तम्बाकू [Dried Tobacco]

चित्रक [Plumbago zeylanica]

एरण्ड [Ricinus communis]

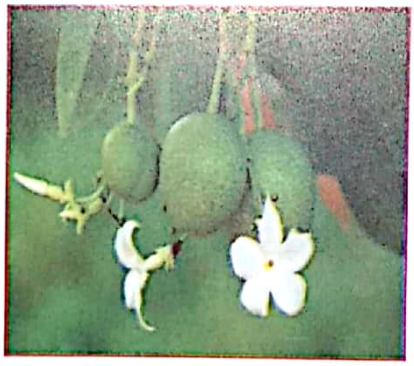

Cerbera odollam/suicide tree

हत्पत्री [Digitalis purpurea]

White Oleander

Colocynth plant with fruits

Zinc Phosphide

Scanned with CamScanner

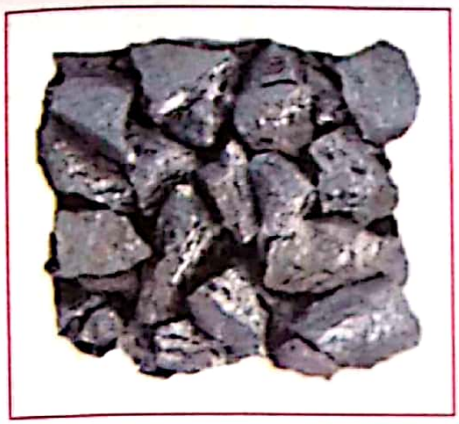

वंग [Tin]

ताम्र [Copper]

यशद [Zinc]

नाग [Lead]

पारद [Mercury]

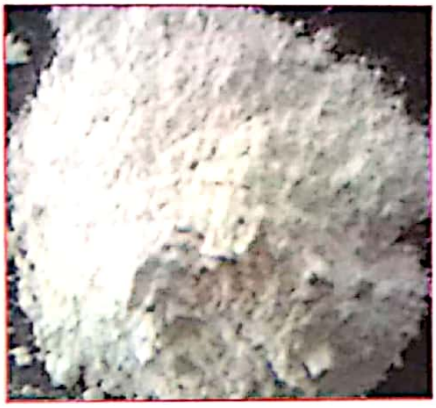

संखिया [Arsenious oxide]

Lead Carbonate

Lead Acetate

Coper Sulphate

Alcohol Beverages

Gastric Lavage Tube

शतपदी [Centipede]

Scanned with CamScanner

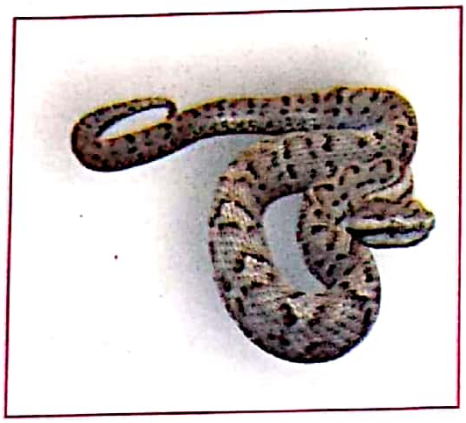

Acistrodon himalayanus

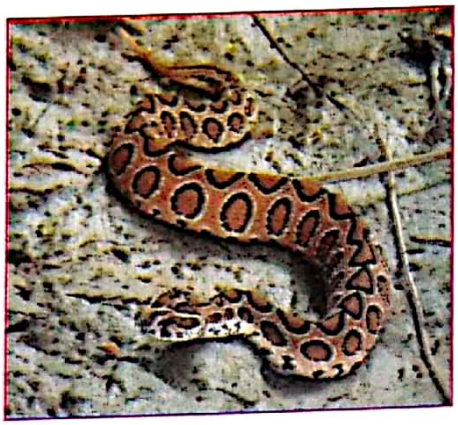

कान्दर [Russell's viper]

शेषनाग [King Cobra]

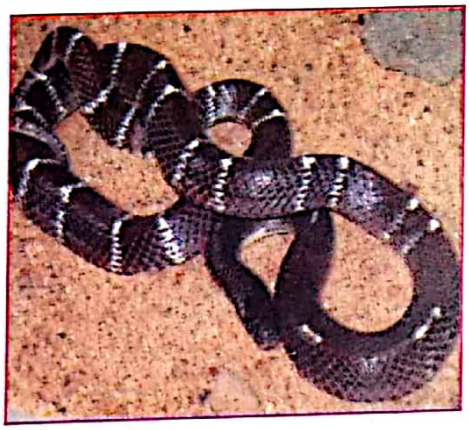

Common Indian Krait

Oriental Rat Snake

वृश्चिक [Scorpion]

Wasp

लूता [Spider]

Honey bee

Hornet

Scanned with CamScanner